

श्री
धवला-टीका-समन्वितः

षट्खंडागमः

जीवस्थान - सत्प्ररूपणा २

खंड १

भाग १

पुस्तक २



सम्पादक
हीरालाल जैन

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलि-प्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद-संस्मृति-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः सम्पादिता

सत्प्ररूपणा २



सम्पादकः

अमरावतीस्थ-किंग-एडवर्ड-कालेज-संस्कृताध्यापकः एम्. ए., एल्. एल्. बी., इत्युपाधिधारी
हीरालालो जैनः

सहसम्पादकौ

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री * पं. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

संशोधने सहायकौ

व्या. वा., सा. सू., पं. देवकीनन्दनः * डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः
सिद्धान्तशास्त्री उपाध्यायः; एम्. ए., डी. लिट्.

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ शितावराय लक्ष्मीचन्द्र

जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालयः

अमरावती (बरार)

त्रि. सं. १९९७]

वीर-निर्वाण-संवत् २४६६

[ई. स. १९४०

मूल्यं रूप्यक-दशकम्

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ शितावराय लक्ष्मीचन्द्र,
जैन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय
अमरावती (बरार)



मुद्रक-

टी. एम्. पाटील,
मॅनेजर

सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती (बरार)

THE
ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF

PUṢPADANTA AND BHŪTABALĪ

WITH

THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VIRASENA

VOL. II

SATPRARŪPAṆĀ

Edited

with introduction, translation, notes, and indexes

BY

HIRALAL JAIN, M. A., LL. B.

C. P. Educational Service, King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY

Pandit Phoolchandra
Siddhānta Shāstri

*

Pandit Hiralal Siddhānta Shastri,
Nyāyatīrtha.

With the cooperation of

Pandit Devakinandana
Siddhānta Shastri

*

Dr. A. N. Upadhye,
M. A., D. Litt.

Published by

Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,

Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Karyālaya.

AMRAOTI (Berar).

1940

Price rupees ten only.

Published by—
Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Karyālaya,
AMRAOTI (Berar).



Printed by—
T. M. Patil, Manager,
Saraswati Printing Press,
AMRAOTI (Berar).

विषय सूची

विषय	पृष्ठ नं.	विषय	पृष्ठ नं.
प्राक् कथन	१-३	५ बारहवें श्रुतांग दृष्टिवादका	
प्रस्तावना		परिचय	४१-६८
ग्रंथकी प्रस्तावना (अंग्रेजीमें)	I-VI	१ परिकर्म	४३
१ ताड़पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय	१-१४	२ सूत्र	४६
१ सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति	१	३ पूर्वगत	४८
२ धवलाके अन्तकी प्रशस्ति	७	४ प्रथमानुयोग	५६
२ सत्प्ररूपणा विभाग	१४	५ चूलिका	५९
३ वर्गणाखंड विचार	१५-३३	महाकम्मपयडिपाहुड	६०
१ वेयणकसिण पाहुड और वेदनाखंड	१६	कसायपाहुड	६७
२ वर्गणा नामपर खंडसंज्ञा	१७	६ ग्रंथका विषय	६८
३ वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण	१९	७ रचना और भाषाशैली	७०
४ वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका	२१		
५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता	२२	विषय-सूची	
६ मूडविद्गीसे प्रतिलिपि करनेवालेकी प्रामाणिकता	२३	१ सत्प्ररूपणा-आलापसूची	७२
७ वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ	२५	२ आलापगत विशेष-विषयसूची	८२
१ वेदना और वर्गणाखंडोंकी सीमाओंका निर्णय	३०	शुद्धिपत्र	८४
२ वर्गणा निर्णय	३१	सत्प्ररूपणा २	
४ णमोकार मंत्रके आदिकर्ता	३३-४१	मूल, अनुवाद और संदृष्टियां	४११-८५५
१ धवलाकारका मत	३३	परिशिष्ट	
२ श्वेताम्बर मान्यता विचार	३५	१ पारिभाषिक शब्दसूची	१
		२ अवतरण गाथासूची	६
		३ प्रतियोंके पाठभेद	७
		४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठ	१३
		५ विशेष टिप्पण	१५

प्राक् कथन

श्रीधवलसिद्धान्त प्रथम विभागके प्रकाशित होनेसे हमें जो आशा थी, उसकी सोलहों आने पूर्ति हुई। हमें यह प्रकट करते हुए अत्यन्त हर्ष और संतोष है कि मूडबिंद्री मठको भेंट की हुई शाखाकार और पुस्तकाकार प्रतियोंके वहां पहुंचनेपर उन्हें विमानमें विराजमान करके जुद्धस निकाला गया, श्रुतपूजन किया गया और सभा की गई, जिसमें वहांके प्रमुख सज्जनों और विद्वानोंद्वारा हमारी संशोधन, सम्पादन और प्रकाशन व्यवस्थाकी बहुत प्रशंसा की गई और यह मत प्रकट किया गया कि आगे इस सम्पादन कार्यमें वहांकी मूल प्रतिसे मिलानकी सुविधा दी जाना चाहिये, नहीं तो ज्ञानावरणीय कर्मका बंध होगा। यह सभा मूडबिंद्री मठके भट्टारकजी श्री चारुकीर्ति पंडिताचार्यवर्यके ही समापतित्वमें हुई थी।

उक्त समारंभके पश्चात् स्वयं भट्टारकजीने अपना अभिप्राय हमें सूचित किया और प्रति मिलानकी व्यवस्थादिके लिये हमें वहां आनेके लिये आमंत्रित किया। इसी बीच गोम्मटस्वामीके महासस्तकाभिषेकका सुअवसर आ उपस्थित हुआ। यद्यपि छुट्टियां न होनेके कारण हम उक्त महोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये नहीं जा सके, किंतु हमारे कार्यमें अभिसूचि रखने और सहायता पहुंचानेवाले अनेक श्रीमान् और धीमान् वहां पहुंचे और उनमेंसे कुछने मूडबिंद्री जाकर ग्रंथराज महाधवलकी भी प्रतिलिपि कराकर प्रकाशित करानेके लिये भट्टारकजी व पंचोंकी अनुमति प्राप्त कर ली। समयोचित उदारता और सद्भावनाके लिये मूडबिंद्री मठका अधिकारी वर्ग अभिनन्दनीय है और उस दिशामें प्रयत्न करनेवाले सज्जन भी धन्यवादके पात्र हैं। अब हम उस सम्बंधमें पत्र-व्यवहार कर रहे हैं, और यदि सब सुविधाएं मिल सकीं, जिनके लिये हम प्रयत्नशील हैं, तो हम शीघ्र ही मूडबिंद्रीकी समस्त धवलादि श्रुतोंकी प्रतियोंकी (फोटोस्टाट मशीन या माइक्रो फिलिमिंग मशीन द्वारा) प्रतिलिपियां कराकर ग्रंथराजका चिरस्थायी उद्धार करनेमें सफलीभूत हो सकेंगे। इस महान् कार्यके लिये समस्त धर्मिष्ठ और साहित्यप्रेमी सज्जनोंकी सहानुभूति और क्रियात्मक सहायताकी आवश्यकता है, जिसके लिये हम समाजभर का आह्वान करते हैं

प्रथम विभागका प्रकाशनोत्सव ४ नवम्बर सन् १९३९ को किया गया था। तबसे आज ठीक आठ मास हुए हैं। इतने अल्पकालमें द्वितीय विभागका संशोधन सम्पादन होकर मुद्रण भी पूरा हो रहा है, यद्यपि कार्यमें कठिनाइयां अनेक उपस्थित होती रहती हैं। इस सफलतामें समाजकी सद्भावना और दैवी प्रेरणा बहुत कुछ कार्यकारी दिखाई देती है। यदि समय अनुकूल रहा तो आगे प्रायः वर्षमें दो भागोंका प्रकाशन करानेका प्रयत्न किया जायगा।

इस विभागके सम्पादनमें भी पूर्वोक्त सहयोग पूर्ववत् ही चलता रहा है, अर्थात्

पं. कूलचंद्रजी शास्त्री और पं. हीरालालजी शास्त्री स्थायी रूपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ संलग्न रहे, तथा पं. देवकीनन्दनजी शास्त्री और डा. आदिनाथजी उपाध्यायसे हमें संशोधनमें यथावसर वाञ्छित साहाय्य मिलता रहा। धवलाकी जो प्रशस्तियां इस विभागके साथ प्रकाशित हो रही हैं, उनका सहारनपुरकी प्रतिसे अक्षरशः मिलान वीरसेवामंदिरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी ने करके भेजनेकी कृपा की। उन्हीं प्रशस्तियोंके कनाड़ी पाठोंके संशोधनका अत्यन्त कठिन कार्य डा. उपाध्येके सहयोगी, राजाराम कालेज, कोल्हापुरमें कनाड़ीके प्रोफेसर श्रीयुत कुन्दनगारजी द्वारा किया गया है। वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने प्रस्तुत विभागमें आई हुई अवतरण-गाथाओंके प्राकृत पंचसंप्रहमें होने न होने की हमें सूचना दी। बीनाके पं. वंशीधरजी व्याकरणाचार्यने पृ. ४४१-४४३ पर आये हुए व्याकरण संबंधी कठिन प्रकरणपर अपनी सम्मति विस्तारसे हमें लिख भेजनेकी कृपा की। पं. महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यने इस भागके प्रथम फार्मका प्रूफ देखकर मुद्रण-संबंधी अनेक सूचनाएं देनेकी कृपा की। इस सब सहायताके लिये हम इन विद्वानोंके बहुत ही अनुगृहीत हैं। और भी अनेक विद्वानोंने अपनी बहुमूल्य सम्मतियां हमें या तो व्यक्तिगत पत्र द्वारा या समालोचनाके रूपमें पत्रोंमें प्रकाशित कराकर देनेकी कृपा की। उन सबसे भी हमने लाभ उठानेका प्रयत्न किया है। अतएव वे सब हमारे धन्यवादके पात्र हैं। उन सम्मतियों आदि परसे जो संशोधन या सूचनाएं प्रथम खंडके विषयमें हमें आवश्यक प्रतीत हुईं, उनका भी समावेश इस विभागके शुद्धिपत्रमें किया जाता है। पाठक उससे प्रथम खंडमें उचित सुधार कर लें।

हमारे अनेक प्रेमी पाठकोंने कुछ सूचनाएं ऐसी भी भेजी थीं जिनका, खेद है, हम पालन करनेमें असमर्थ रहे। इनमें एक सूचना तो प्राकृत अंशोंका या उनके कठिन स्थलोंका संस्कृत रूपान्तर देते जानेके सम्बंधमें थी। इसको स्वीकार न कर सकने का कारण हम प्रथम जिल्दके प्राक्कथनमें ही दे चुके हैं और हमारा वह मत अब भी कायम है। दूसरी सूचना हमारे वयोवृद्ध पाठकोंकी ओर से यह थी कि भाषान्तरका टाइप छोटा पड़ता है, उसे और भी बड़ा कर दिया जाय तो उन्हें पढ़नेमें सुविधा होगी। हम बहुत चाहते थे कि अपने वृद्ध पाठकोंका इस मूर्तिमान् कठिनाई को दूर करें। किन्तु पाठक देखेंगे कि मूलके टाइपसे अनुवादका टाइप बहुत कुछ छोटा होते हुए भी उसमें मूलसे कहीं अधिक स्थान लगता है। अब हम यदि उसे और भी बड़े टाइपमें लें तो हमारी निश्चित की हुई खंड-व्यवस्था और ब्हाल्यूममें बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होती है। अतएव विवश होकर हमें अपनी पूर्व पद्धति ही कायम रखना पड़ी। आशा है हमारे वृद्ध पाठक प्रकाशन संबंधी इस कठिनाईको समझकर हमें क्षमा करेंगे।

इस विभागके संशोधनमें भी हमें अमरावती जैनमन्दिरकी प्रतिके अतिरिक्त आराके सिद्धान्त भवन तथा कारंजाके महावीरब्रह्मचर्याश्रमकी प्रतियोंका लाभ मिलता रहा तथा सहारनपुरकी प्रतिके जो कुछ पाठभेद पहलेसे नोट थे उनसे लाभ उठाया गया है। अतएव इन सब प्रतियोंके अधिकारियोंके हम अनुगृहीत हैं।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी और जैन साहित्योद्धारक फंडकी ट्रस्ट कमेटीके अन्य सब सदस्योंका इस कार्यको प्रगतिशील बनाये रखनेमें पूरा उत्साह है, और इस कारण हमें व्यवस्थामें किसी विशेष कठिनाईका अनुभव नहीं हुआ, बल्कि आगे सफलताकी पूरी आशा है।

यूरोपीय महासमरके कारण इस खंडके लिये यथेष्ट कागज आदिका प्रबंध करनेमें बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई, जिसको हल करनेमें हमारे निरन्तर सहायक पंडित नाथूरामजी प्रेमीका हमपर ब्रह्म उपकार है।

साहित्यकी कदर करनेवाले मर्मज्ञ पाठकोंने प्रथम जिल्दका जो स्वागत किया है और उसके लिये हमारी ओर जो प्रशंसाके भाव व्यक्त किये हैं, उसके लिये हम उनकी गुणग्राहकताके कृतज्ञ हैं। पर हम यह फिर भी व्यक्त कर देते हैं कि इस महान् कठिन कार्यमें यदि हमें सचमुच कुछ सफलता मिल रही है तो उसका श्रेय हमें नहीं, किन्तु समाजकी उसी सद्भावना और समयकी प्रेरणाको है जो उचित कालमें उचित कार्य किसी न किसीसे करा लेती है। इस सम्बंधमें हमारी तो, महाकवि कालिदासके शब्दोंमें, यही धारणा है कि—

सिध्यन्ति कर्मसु महस्त्वपि यन्नियोज्याः सम्भावनागुणमवेहि तमीश्वराणाम् ।
किं वाऽभविष्यद्गुणस्तमसां विभेत्ता तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत् ॥

किंग एडवर्ड कालेज,
अमरावती
१५।७।४०

हीरालाल जैन

प्रस्तावना

INTRODUCTION

1. Age of the palm-leaf manuscript of Dhavala at Mudbidri.

In the introduction to Vol. 1 we had conjectured that the palm-leaf manuscript of Dhavalā deposited at Mudbidri was at least five or six hundred years old. We are now in a position to throw some more light on the subject of the manuscript tradition. At the end of Satprarupaṇā after the colophon we find some text which, when reconstructed, yields three verses in Kanarese in praise of Padmanandi, Kulabhūṣaṇa and Kulacandra respectively. The relation between these three notabilities has not been mentioned here, but there is no doubt that they are identical with the teachers of the same names mentioned in the Sravaṇa Belgola inscription No. 40 (64) as successively related to each other in a spiritual geneological order. There is similarity in the adjectives used for them at both the places. The inscription also tells us that the teachers belonged to the brilliant line of Desigaṇa, a branch of the Nandigaṇa of Mulasamgha which had owned, amongst others, Kundakunda, Umāsvāti, Samantabhadra, Puṣyapāda and Akalamka. One of the pupils of Padmanandi was Prabhācandra who is said to have been the author of a celebrated work on Logic. He, thus, appears to be identical with the author of Prameyakamala-mārtanda and Nyāya-kumuda-candrodaya. This inscription is not dated, but the line extends upto the third generation beyond Kulacandra, and there we find Devakirti Muni who, according to inscription No. 39 (63), attained heaven in 1163 A. D. The immediate successor of Kulacandra Muni was Māghanandi whose lay disciple Nimbadeva Sāmanta has also found mention in the Sukrabara Basti inscription of Kolhapur as a feudatory of the Silāhāra king Gaṇḍarādityadeva for whom there are mentions from 1108 to 1136 A. D. Taking all these factors into consideration we may safely conclude that the persons mentioned in the Satprarupaṇā Praśasti flourished probably during the eleventh century A. D. The Kanarese verses being obviously the interpolations of the scribe who may have been the pupil of the last teacher, we might infer that a copy of the Dhavala was made about this period.

The Praśasti found at the end of the Dhavala Ms. throws still more light on the subject. The text of this long Prasasti is partly in Kanarese and partly in Sanskrit, and the Kanarese portion is very corrupt. But the fact that emerges from it prominently is that the Ms. of Dhavala was presented to the famous teacher Subhacandra Siddhāntadeva of the Banniyakere temple on the occasion of the completion of her Srutapancami vow by Demiyakka who was the aunt of Bhujabalaganga Permadideva of Mandali Nadu. Subhacandradeva is said to have belonged to the Desigaṇa. His line begins from Kundakunda, and the other names of teachers mentioned are Gridhpiccha, Balākapiccha, Guṇanandi, Devendra, Vasunandi, Ravicandra, Dāmanandi, Viranandi, Sridharadeva, Maladhārideva, Candrakirti, Divākaranandi and, lastly, Subhacandradeva. On scrutinizing these facts in the light of epigraphic references that

are available to us, we find that the Subhacandradeva to whom the Ms. of Dhavala was given is identical with that Subhacandradeva whose death is commemorated in Sravana Belgola inscription No. 45 (117) of 1123 A. D., because the spiritual genealogy of Subhacandra as given at the two places agrees entirely. We even find three verses that are common between our Praśasti and the inscription, the numbers of these verses in the inscription being 12, 13 and 21. The Banniyakere temple with which Subhacandradeva, the recipient of the Ms., has been associated, was built, according to Shimoga inscription No. 97 (Ep. Carna. Vol. VII) in 1113 A. D. In this inscription Bhujabalaganga Permadideva, also mentioned in our Praśasti, makes a grant to the temple, and at the close of the record Subhacandradeva of Desigana is praised. Thus, the temple of Banniyakere with which Subhacandradeva was associated was built in 1113 A. D., while he died in 1123 A. D. The Ms. of Dhavala was, therefore, presented to Subhacandradeva by Demiyakka between 1113 and 1123 A. D.

We also get some light about the donor of the Ms. from epigraphic records. Sravana Belgola Inscription No. 49(129) is in commemoration of a lady variously named as Demati, Demavati Devamati and Demiyakka, who is said to have been a pupil of Subhacandradeva of Desigana and to have died by the Jaina form of renunciation on the 11th day of the dark fortnight in Saka 1042 (A. D. 1120). In the inscription the lady is highly eulogised for her four forms of charity which included gifts of shastras or holy books. These mentions leave no doubt in our mind that this lady is the same as the donor of the Dhavala Ms. The date of the gift is, therefore, brought within closer limits i. e. between 1113 and 1120 A. D.

The upshot of the above discussion is that we are confronted with three facts about Dhavalā Ms. namely—

1. A copy of the Dhavalā was made probably about three generations prior to the death of Devakirti Muni in 1163 A. D., i. e. about 1100 A. D.
2. A Ms. of Dhavalā was presented to Subhacandradeva by lady Demiyakka sometime between 1113 and 1120 A. D.
3. A palm-leaf Ms. of Dhavalā making mention of the above fact and indicating fact No. 1 exists at Mudbidri.

The probability in my mind is that it was the present palm leaf Ms. at Mudbidri which was copied by a pupil of Kulacandra and presented by Demiyakka to Subhacandradeva. But the possibility of the object of Demiyakka's gift being a later copy of the first Ms. and the present Ms. being a still more subsequent copy of the second, mechanically reproducing the eulogistic verses and the Praśastis of the former ones, cannot be entirely precluded until the present palm-leaf Ms. at Mudbidri is thoroughly examined from all points of view internally as well as externally.

2. Is Vargana Khanda included in the available Mss. of Dhavala ?

The six main divisions of the present work, on account of which it acquired the title of Saṅkhaṇḍāgama, were Jivatṭhaṇa, Khuddabandha, Bandhasamitta-vicaya,

Vedana, Vaggana and Mahabandha. We had already stated in the previous volume that of these six Khaṇḍas, the last i. e. the Mahabandha exists in a separate manuscript and is not included in the Mss. of Dhavala which contain all the remaining five Khaṇḍas. To this an objection was raised from one quarter that the available Mss. of Dhavala contain not even five, but only the first four Khaṇḍas, Vaggana Khaṇḍa being also missing from them. This view was based upon a misinterpretation of one text and a wrong reading of another text found at the beginning of the Vedana Khaṇḍa and then support was sought for the view by a series of wrong co-relations and a number of allegations against the old reporters like Indranandī and the recent copyist from Mudbidri Ms. These have been critically examined by me from every possible point of view on the basis of all available material, with the result that my previous statements have been fully confirmed. The last word on this subject, as well as on others of a similar nature, however, could only be said when the Mudbidri Ms. have also been thoroughly examined and the whole work has been critically edited.

3. Authorship of the Namokara Mantra

Panca-namokara Mantra is the most sacred formula of Jaina religion. It forms part of the daily prayers of all the Jainas whether Digambara or Svetambara. It has been regarded almost as an eternal revelation and the question of its authorship was never raised. It is this very formula that forms the benedictory text at the beginning of Jivatthāna and the author of Dhavala throws important light upon its authorship. He divides sacred writings into two kinds according as their benedictory text forms their integral part or not. Now, different benedictory texts are found at the beginning of the Jivatthāna Khaṇḍa and that of the Vedana Khaṇḍa. But the author of the Dhavalā places the first Khaṇḍa in one category and the other in the second category on the clearly stated ground that at the second place the benedictory text was not an integral part of the writings because it was not the original composition of the author who had merely borrowed it from elsewhere. But he regards the Namokara formula as integrally connected with the Jivatthāna. This shows that in the opinion of the author of Dhavala the Namokara formula was the original composition of Puspadanta the author of the Satprarūpanā which was the first part of Jivatthāna.

I tried to pursue the inquiry further and found that in the Svetāmbara Āgama, Ajja Vaira is credited with having interpolated the formula in one of the Mūlasūtras. A survey of the Svetāmbara Paṭṭāvalis and equivalent mentions in the Digambara texts revealed a number of points of contact and of difference between them in the names and dates of various notabilities like Ajja Vaira, Ajja Mankhu or Mangu and Nāgahatthi, associated with this sacred formula and with the study and preservation of portions of the lost canon. But a clarification of these and ultimate conclusions on the points raised must await further investigation and study.

4. A comparative review of the contents of Ditthivada

The twelfth Jaina Srutāṅga Ditthivada, according to the traditions of both the Digambaras and the Svetambaras, was irretrievably lost. But a brief resumé of its

contents is found in the literature of both the sects. The Digambara work *Saṅkhandā-gama* of Puṣpadanta and *Bhūtabali* as well as *Kaṣāya-pāhuda* of Guṇadharācārya are claimed to be directly based upon it. It would, therefore, be interesting to take a bird's eye view of the contents of this most important Jain Sṛutāṅga, leading up to the portions that have been preserved.

The *Ditṭhivāda* was divided into five parts, *Parikamma*, *Sutta*, *Paḍhamānioga*, *Puvvagaya* and *Cūḷā*. The Svetāmbaras place *Puvvagaya* first and *Anuoga*, with its subdivisions *Mulapaḍhamānuoga*, and *Gaṇḍiānuoga*, instead of *Paḍhamānioga*, next in the above order. The two schools differ entirely in the matter of the subsections of the first part, *Parikamma*. The Digambaras name five *Paṇṇattis* under it, namely, *Canda*, *Sura*, *Jambudiva*, *Divasāyara* and *Viyāha*; while the Svetāmbaras count under it seven *Seniās*, namely, *Siddha*, *Manussa*, *Puttha*, *Ogāḍha*, *Uvasampajjana*, *Vippajjana* and *Cuācua*, each of which is again divided into fourteen or eleven sections like *Māṅgāpayāim*, *Egattḥiapayāim*, *Aṭṭhapayāim*, *Pāḥoḥmāsapayāim*, *Keubhuam*, *Rāsibaddham*, *Egagunam*, *Dagunam*, *Tigunam*, *Keubhuam*, *Paḍiggaho*, *Samsārapaḍiggaho*, *Nandāvattam* and *Siddhāvattam*. The nature of the subject-matter of these is shrouded in mystery. The Digambara subdivisions, on the other hand, are quite intelligible and their contents are also clearly stated. There is, however, one thing remarkable about the Svetambara subdivision that the first six divisions of *Parikamma* are said to be in accordance with the Jain view which recognised four *Nayas*, while the seventh was an addition of the *Ajivikas* who recognised three *Rāsīs* or *Nayas*. It appears from this that the *Ajivika* view-point was also accommodated in the Jain *Agama* and that at one time the Jains recognised only four instead of seven *Nayas*.

The second division of *Ditṭhivāda* was *Sutta* which, according to the Digambaras, dealt, firstly, with the philosophy of the soul according to their own ideas; and, secondly, with the philosophical theories of others, such as *Terāsiya*, *Niyativāda*, *Saddavāda* and the like. They also speak of eighty-eight divisions of *Sutta* of which, they say, the names have been forgotten. The Svetāmbaras mention twenty-two subdivisions of *Sutta* and point out that they may be studied according to four *Nayas*, namely, *Chinnacheda*, *Achinnacheda*, *Trika* and *Catuṣka*, of which the first and the fourth *Nayas* are followed by the Jains, while the second and the third are adopted by the *Ājivikas*. In this way, *Sutta* is shown to possess eighty-eight subdivisions. Here again, the mention of the *Ajivika* view-point and its accommodation are remarkable.

Paḍhamānioga division of *Ditṭhivāda*, according to the Digambaras, deals with *Paurāṇic* accounts. As mentioned before, the Svetāmbaras give the name of this division as *Anuoga* and subdivide it as *Mula-paḍhamānuoga* dealing with the lives of the *Tirthamkaras*, and *Gaṇḍiānuoga* dealing with the lives of *Kulakaras* and other distinguished persons in separate sections (*Gaṇḍikūs*). Amongst these the account of the *Citrāntara Gaṇḍikā* is very astonishing and staggering.

Puvvagaya was the most important division of *Ditṭhivāda* because its fourteen subdivisions, known as *Puvvas*, contained, in fact, all the essential wisdom of the

Tirthamkaras. There is no substantial difference in the name or in the nature of the contents of the fourteen Puvvas in the Digambara and the Svetāmbara accounts of them, except that the eleventh Puvva is called Kallāpa by one and Avanjham by the other, while there is also some difference in the extent (number of padas) of the twelfth Puvva, Pānāvāya. Both schools agree that some studied the entire Sruta while others stopped at the tenth Puvva. This view, in a way, shows the significance of placing Anuoga or Paḍhamānuoga before Puvvagaya, for, otherwise, those that stopped at the tenth Puvva could have no knowledge of Anuoga.

The fifth and the last division of Diṭṭhivāda is Culiā, which, according to the Digambara school, dealt with the sciences pertaining to Jala, Sthala, Maya, Rupa and Akasa. The other school has no account of the Culikas to give except that they were appendixes of the first four Puvvas and that their number was, in all, thirtyfour. But if they were appended to the Puvvas, it remains unexplained why a separate division for them was thought necessary.

The Puvvas are said to have been divided into Vatthus and each Vatthu was subdivided into twenty Pahuḍas, their total number, according to the Digambara school, being 195 and 3900 respectively. The Kammaṭṭapayādi-Pahuḍa, of which the subject-matter has been preserved with all its twentyfour Adhikaras, in the Saṅkhaṇḍāgama, was one of the 280 Pahuḍas included in the second Puvva Aggeṇiyam. Similarly, the Kaṣāya-Pahuḍa of Guṇadharacarya is based upon one of the Pahuḍas included in the fifth Puvva Nānapavāda. Nothing corresponding to these portions in age and subject-matter is yet found in the Svetāmbara literature.

5. Subject-matter, language and style.

This volume is entirely devoted to the specification of the various soul qualities under different stages of spiritual advancement and under various conditions of life and existence, which have already been dealt with, in a general way, in the first volume. It is entirely the work of the commentator Virasena who takes his stand upon the foregone Sutras; but the idea of the twenty categories that form the basis of his treatment here is borrowed from elsewhere. He starts by quoting an old verse which names the twenty categories. The earliest work where we find the treatment of the subject under the same twenty categories is the Tiloya-panṇatti. It is, however, still a matter for investigation as to who started the idea of the twenty categories first.

We have tabulated the numerical specifications on each page in order to show the subject at a glance and facilitate reference, and the number of tables is in all 546. The various divisions and subdivisions leading to this high number would become clear by a glance at the table of contents.

The language is throughout Prakrit except for a few Sanskrit passages in the beginning, and by the very nature of the subject-matter which consists mostly of enumeration, the style is very indifferent to grammatical forms. In the enumerations

of the soul-qualities words have frequently been used without inflections. In fact, abbreviated forms with dots are also met with all over in the Mss. But since the Mss. used by us were not uniform on the point, we preferred to give the fuller forms, and have also taken the liberty to complete the enumerations where omissions in the Mss. were obvious. But we have not attempted to make the words inflected for fear of changing the entire character of the author's style which is so natural in its own way under the circumstances.

The number of older verses found quoted in this volume is thirteen, all in Prakrit. One of them (No. 228, on page 788) is said to have been taken from 'Pipḍia' a work which is otherwise unknown.

As before, I have, in this brief survey, avoided details which the interested reader would find in the Hindi translation.

१ ताड़पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय

सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति

धवल सिद्धान्तकी प्राप्त हस्तलिखित प्रतियोंमें सत्प्ररूपणा विवरणके अन्तमें निम्न कनाड़ी पाठ पाया जाता है^१—

संततशांतभावनदः पावनभोगनियोग वाक्कांतेय चित्तवृत्तियलविं नललंदनं गरूपं तद्विदं गजं
‘परिपोगेज सोक्षतपद्मणंदिसिद्धान्तमुनीन्द्रचन्द्रनुदयं बुधकैरवषंडमंडनं मंतणमेणोसुद्गुणगणक भेदवृद्धि
अनन्तनोन्त^२ वाक्कांतेय चित्तवल्लीय पदपिण ३दर्पबुधालि ४हृत्सरोजांतररागरंजितदिनं कुलभूषण ५दिव्यसैद्धान्त-
मुनीन्द्रनुज्वलयशोजंगमतीर्थमल्लरु^६ संततकालकायमतिसच्चरितं दिनदिं दिनके वीर्थं तउतिहंदुश्य वियम-
ईमैमेयो लांतवविट्टमोहदाहं तवे कंतु मुन्तुगिदे सच्चरित कुलचन्द्रदेवसैद्धान्तमुनीन्द्ररुजितयशोज्वलजंगमतीर्थ-
मल्लरु^७

मैंने यह कनाड़ी पाठ अपने सहयोगी मित्र डाक्टर ए. एन्. उपाध्याय प्रोफेसर राजाराम कालेज कोल्हापुर, जिनकी मातृभाषा भी कनाड़ी है, के पास संशोधनार्थ भेजा था। उन्होंने यह कार्य अपने कालेजके कनाड़ी भाषाके प्रोफेसर श्री. के. जी. कुंदनगार महोदयके द्वारा करा कर मेरे पास भेजनेकी कृपा की। इसप्रकार जो संशोधित कनाड़ी पाठ और उसका अनुवाद मुझे प्राप्त हुआ, वह निम्न प्रकार है। पाठक देखेंगे कि उक्त पाठ परसे निम्न कनाड़ी पद्य सुसंशोधित-कर निकालनेमें संशोधकोंने कितना अधिक परिश्रम किया है।

१

संततशांतभावनेय पावनभोगनियोग (वाणि) वा-
क्कांतेय चित्तवृत्तियोलविं नल (विं गड मोहनां) गरू-
पं तलेदं गडं प्रचुरपंकजशोभितपद्मणंदिसि-
द्धान्तमुनीन्द्रचन्द्रनुदयं बुधकैरवषंडमंडनम् ॥ १ ॥

२

मंत्रणमोक्षसद्गुणगणाब्धिष्य वृद्धिरो चंद्रनंते वा-
क्कांतेय चित्तवलिपदपंकजदसुधालिहृत्सरो-
जांतररागरंजितमनं कुलभूषणदिव्यसेव्यसै-
द्धान्तमुनीन्द्ररुजितयशोज्वलजंगमतीर्थकल्परु ॥ २ ॥

१ प्राप्त प्रतियोंमें इस प्रशस्तिमें अनेक पाठभेद पाये जाते हैं। यहाँ पर सहारनपुरकी प्रतिके अनुसार पाठ रखा गया है जिसका मिलान हमें वीरसेवा मंदिरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी मुस्तारके द्वारा प्राप्त हो सका। केवल हमारी अ. प्रस्तिमें जो अधिक पाठ पाये जाते हैं वे टिप्पणमें दिये गये हैं। २ अनन्तञ्जनोन्त। ३ पदपिणनदर्प। ४ प्रहत्। ५ दिव्यसेव्य। ६ तीर्थदमल्लयस्त्वे। ७ मल्लरुहृत्।

३

संततकालकायमतिसच्चरितं दिनदिं दिनके वी-
र्यं तलेदुंदु मिह नियमंगळनांशुविवेकबोधदे-
हं तवे कंतु मन्युगिदे सच्चरितं कुलचन्द्रदेवसै-
दांतमुनीन्द्ररुर्जितयशोज्वलजंगमतीर्थरुद्रवम् ॥ ३ ॥

इसका हिन्दीमें सारानुवाद हम इसप्रकार करते हैं—

१

श्रीपद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्ररूपी चन्द्रमाका उदय विद्वद्गणरूपी कुमुदिनी समूहका मंडन था। वे प्रफुल्ल कमलके समान सुशोभित थे, तथा उनके मनमें निरंतर शान्त भावना और पावन सुख-भोगमें निमग्न सरस्वती देवीका निवास होनेसे वे सहज ही सुंदर शरीरके अधिकारी हो गये थे।

२

वे दिव्य और सेव्य कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र अपने ऊर्जित यशसे उज्वल होनेके कारण जंगम तीर्थके समान थे। मंत्रण, मोक्ष और सद्गुणोंके समुद्रको बढ़ानेमें वे चन्द्रके समान थे, तथा सरस्वती देवीके चित्तरूपी वल्लीके पदपंकज (के निवास) से गर्वयुक्त विद्वत्समुदायके हृदयकमलके अंतर रागसे उनका मन रंजायमान था।

३

ऊर्जित यशसे उज्वल कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रका उद्भव जंगमतीर्थके समान था। निरन्तर कालमें काय और मनसे सच्चारित्रवान्, दिनोंदिन शक्तिमान् और नियमवान् होते हुए उन्होंने विवेकबुद्धिद्वारा ज्ञान-दोहन करके कामदेवको दूर रखा। यह सच्चारित्र ही कामदेवके क्रोधसे बचनेका एकमात्र मार्ग है।

इसप्रकार इन तीन कनाड़ी पथोंकी प्रशस्तिमें क्रमशः पद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्र, कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र और कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रकी विद्वत्ता, बुद्धि और चारित्रकी प्रशंसा की गई है। पर उनसे उनके परस्पर सम्बन्ध, समय व धवलग्रंथ या उसकी प्रतिसे किसी प्रकारके सम्बन्धका कोई ज्ञान नहीं होता। अतएव इन बातोंकी जानकारीके लिए अन्यत्र खोज करना आवश्यक प्रतीत हुआ।

श्रवणवेत्सुलके अनेक शिलालेखोंमें पद्मनन्दि मुनिके उल्लेख आये हैं। पर सब जगह एक ही पद्मनन्दिसे तात्पर्य नहीं है। उन लेखोंसे ज्ञात होता है कि भिन्न भिन्न कालमें पद्मनन्दि नाम व उपाधिधारी अनेक मुनि आचार्य हुए हैं। किन्तु लेख नं. ४० (६४) में हमारे प्रस्तुत पद्मनन्दिसे अभिप्राय रखनेवाला उल्लेख ज्ञात होता है, क्योंकि, उसमें पद्मनन्दि सैद्धान्तिकके

शिष्य कुलभूषण और उनके शिष्य कुलचन्द्रका भी उल्लेख पाया जाता है। वह उल्लेख इसप्रकार है—

अविद्धकर्णादिकपद्मनन्दी सैद्धान्तिकाख्योऽजनि यस्य लोके ।
 कौमारदेवव्रतिताप्रासिद्धिर्जीयात्तु सो ज्ञाननिधिः सधीरः ॥
 तच्छिष्यः कुलभूषणाख्ययतिपञ्चारिन्नवारांनिधि-
 म्सिद्धान्ताम्बुधिपारगो नतविनेयस्तत्सधर्मो महान् ।
 शब्दान्भोरुहभास्करः प्रथिततर्कग्रन्थकारः प्रभा-
 चन्द्राख्यो मुनिराजपंडितवरः श्रीकुण्डकुन्दान्वयः ॥
 तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेशिश्यो विनेयस्तुत-
 स्सद्वृत्तः कुलचन्द्रदेवमुनिपस्सिद्धान्तविद्यानिधिः ।

यहां पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उल्लेख है। पद्मनन्दिको सैद्धान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुलभूषणको चारित्रवारांनिधिः और सिद्धान्ताम्बुधिपारग, तथा कुलचन्द्रको विनेय, सद्वृत्त और सिद्धान्तविद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके ध्वला-प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे अभिन्न होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखद्वारा पद्मनन्दिके गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविद्धकर्ण थे अर्थात् कर्णच्छेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत बालपनमें वे दीक्षित होगये थे और इसलिए कौमारदेवव्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दान्भोरुहभास्कर और प्रथित तर्कग्रन्थकार थे।

इसी शिलालेखसे इन मुनियोंके संघ व गण तथा आगे पीछेकी कुछ और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है। लेखमें गौतमादि, भद्रबाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनन्दि, कुन्दकुन्द, उमास्वाति गृद्धपिच्छ, उनके शिष्य बलाकपिच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद्र, फिर देवनन्दि जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलंकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्ततिके उत्पन्न करनेवाले मूलसंघमें फिर नन्दिगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया। इस गणमें गोल्लाचार्य नामके प्रसिद्ध मुनि हुए। ये गोल्लदेशके अधिपति थे। किन्तु, किसी कारण वश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण करली थी। उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अविद्धकर्ण पद्मनन्दि सैद्धान्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूलसंघ नन्दिगणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं।

लेखमें पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है:—

कुलचन्द्रदेवके शिष्य माघनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्लापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्थापित किया। वे भी राद्धान्तार्णवपारगामी और चारित्रचक्रेश्वर थे, तथा उनके श्रावक शिष्य थे

सामन्त केदार नाकरस, सामन्त निम्बदेव और सामन्त कामदेव । माघनन्दिके शिष्य हुए— गंडविमुक्तदेव, जिनके एक छात्र सेनापति भरत थे, व दूसरे शिष्य भानुकीर्ति और देवकीर्ति । गंडविमुक्तदेवके सधर्म भूतकीर्ति त्रैविद्यमुनि थे, जिन्होंने विद्वानोंको भी चमत्कृत करनेवाले अनुलोम—प्रतिलोम काव्य राघव—पांडवीयकी रचना करके निर्मल कीर्ति प्राप्त की थी और देवेन्द्र जैसे विपक्ष वादियोंको परास्त किया था । श्रुतकीर्तिकी प्रशंसाके ये दोनों पद्य कनाडी काव्य पम्परामायणमें भी पाये जाते हैं । विपक्ष सैद्धान्तिकसे संभव है उन्हीं देवेन्द्रसे तात्पर्य हो, जिनके विषयमें श्वेताम्बर ग्रन्थ प्रभावकचरितमें कहा गया है कि उन्होंने वि० सं० ११८१ में दि० आचार्य कुमुदचन्द्रको वाद में परास्त किया था । इन्हींके अग्रज (सधर्म) थे कनकनन्दि और देवचन्द्र । कनकनन्दिने बौद्ध, चार्वाक और मीमांसकों को परास्त किया था, और देवचन्द्र भट्टारकोंके अग्रणी तथा वेताल शोर्टिंग आदि भूत पिशाचोंको वशीभूत करनेवाले बड़े मंत्रवादी थे । उनके अन्य सधर्म थे माघनन्दि त्रैविद्यदेव, देवकीर्ति पंडितदेवके शिष्य शुभचन्द्र त्रैविद्यदेव, गंडविमुक्त वादिचतुर्मुख रामचन्द्र त्रैविद्यदेव और वादिवज्रांकुश अकलंक त्रैविद्यदेव । गंडविमुक्तदेवके अन्य श्रावक शिष्य थे माणिक्य मंडारी मरियाने दंडनायक, महाप्रधान सर्वाधिकारी ज्येष्ठ दंडनायक भरतिमय्य हेगडे बूचिमय्यंगलु और जगदेकदानी हेगडे कौरय्य ।

इन उल्लेखोंसे हमें पद्मनन्दि कुलभूषणके संघ व गणके अतिरिक्त उनकी पूर्वापर सु-विख्यात, विचक्षण और प्रभावशाली गुरुपरम्पराका अच्छा ज्ञान हो जाता है । तथा, जो और भी विशेष बात ज्ञात होती है, वह यह कि, हमारे पद्मनन्दिके एक और शिष्य तथा कुलभूषण सिद्धान्तमुनिके सधर्म जो प्रभाचन्द्र ' शब्दाम्भोरुहभास्कर ' और प्रथित-तर्कग्रन्थकार ' पदोंसे विभूषित किये गए हैं; वे संभवतः अन्य नहीं, हमारे सुप्रसिद्ध तर्कग्रन्थ प्रमेयकमलमार्तण्ड और न्यायकुमुदचन्द्रके कर्ता प्रभाचन्द्राचार्य ही हों ।

यह गुरु परम्परा इस प्रकार पाई जाती है:—

गौतमादि
(उनकी सन्तानमें)
भद्रबाहु
|
चन्द्रगुप्त
(उनके अन्वयमें)
पद्मनन्दि कुन्दकुन्द
(उनके अन्वयमें)

उमास्वाति गृद्धपिच्छ

बलाकपिच्छ

(उनकी परम्परामें)

समन्तभद्र

(उनके पश्चात्)

देवनन्दि, जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद

(उनके पश्चात्)

अकलंक

(उनके पश्चात् मूलसंघ, नन्दिगणके देशीगणमें)

गोह्लाचार्य

त्रैकाल्य योगी

पद्मनन्दि कौमारदेव

कुलभूषण

प्रभाचन्द्र

कुलचन्द्र

माधनन्दिमुनि (कोल्लापुरीय)

गंडविमुक्तदेव,

श्रुतकीर्ति

कनकनन्दि

देवचन्द्र, माधनन्दि

त्रैविद्यदेव, देवकीर्ति पं. दे. के शिष्य

शुभचन्द्र त्रै. दे., रामचन्द्र त्रै. देव.

भानुकीर्ति

देवकीर्ति

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि उक्त पद्मनन्दि आदि आचार्य किस कालमें उत्पन्न हुए ? जिस उपर्युक्त शिलालेखमें उनका उल्लेख आया है, उसमें भी समयका उल्लेख कुछ नहीं पाया जाता । किन्तु वहां उस लेखका यह प्रयोजन अवश्य बतलाया गया है कि महामंडलाचार्य देवकीर्ति पंडितदेवने कोल्लापुरकी रूपनारायण वसतिके अधीन केल्लंगेरेय प्रतापपुरका पुनरुद्धार कराया था, तथा, जिननाथपुरमें एक दानशाला स्थापित की थी । उन्हीं अपने गुरुकी परोक्ष विनयके लिए महाप्रधान सर्वाधिकारी हिरिय भंडारी अभिनव-गंग-दंडनायक श्री हुल्लराजने उनकी निषद्या निर्माण कराई । तथा गुरुके अन्य शिष्य लखनन्दि, माधव और त्रिभुवनदेवने महादान व पूजाभिषेक करके प्रतिष्ठा की । हुल्लराज अपरनाम हुल्लप वाजिर्वंशके यक्षराज और

लोकाम्बिकाके पुत्र तथा यदुवंशी राजा नारसिंहके मंत्री कहे गए हैं। इन यादव व ह्येसलवंशीय राजा नारसिंह तथा उनके मंत्री हुल्लराज या हुल्लपका उल्लेख अन्य अनेक शिलालेखोंमें भी पाया जाता है, जिनसे उनकी जैनधर्म में श्रद्धाका अच्छा परिचय मिलता है। (देखो जैन शिलालेख संग्रह, मू. पृ. ९४ आदि)। पर उक्त विषय पर प्रकाश डालनेवाला शिलालेख नं० ३९ है जिसमें देवकीर्तिकी प्रशस्तिके अतिरिक्त उनके स्वर्गवासका समय शक १०८५ सुभानु संवत्सर आषाढ शुक्ल ९ बुधवार सूर्योदयकाल बतलाया गया है, और कहा गया है कि उनके शिष्य लखनंदि, माधवचन्द्र और त्रिभुवनमल्लने गुरुभक्तिसे उनकी निषद्याकी प्रतिष्ठा कराई।

देवकीर्ति पद्मनन्दिसे पांच पीढी, कुलभूषणसे चार और कुलचन्द्रसे तीन पीढी पश्चात् हुए हैं। अतः इन आचार्योंको उक्त समयसे १००-१२५ वर्ष अर्थात् शक ९५० के लगभग हुए मानना अनुचित न होगा। न्यायकुमुदचन्द्रकी प्रस्तावनाके विद्वान् लेखकने अत्यन्त परिश्रमपूर्वक उस ग्रन्थके कर्ता प्रभाचन्द्रके समयकी सीमा ईस्वी सन ९५० और १०२३ अर्थात् शक ८७२ और ९४५ के बीच निर्धारित की है। और, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, ये प्रभाचन्द्र वे ही प्रतीत होते हैं जो लेख नं० ४० में पद्मनन्दिके शिष्य और कुलभूषणके सधर्म कहे गए हैं। इससे भी उपर्युक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है। उक्त आचार्योंके कालनिर्णयमें सहायक एक और प्रमाण मिलता है। कुलचन्द्रमुनि के उत्तराधिकारी माधनन्दि कोल्लापुरीय कहे गये हैं। उनके एक गृहस्थ शिष्य निम्बदेव सामन्त का उल्लेख मिलता है जो शिलाहार नरेश गंडरादित्यदेवके एक सामन्त थे। शिलाहार गंडरादित्यदेवके उल्लेख शक सं. १०३० से १०५८ तक के लेखोंमें पाये जाते हैं। इससे भी पूर्वोक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है।

पद्मनन्दि आदि आचार्योंकी प्रशस्तिके सम्बन्धमें अब केवल एक ही प्रश्न रह जाता है, और वह यह कि उसका ध्वलाकी प्रतिमें दिये जानेका अभिप्राय क्या है? इसमें तो संदेह नहीं कि वे पद्य मूढविद्दीकी ताडपत्रीय प्रतिमें हैं और उन्हींपरसे प्रचलित प्रतिलिपियोंमें आये हैं। पर वे ध्वलाके मूल अंश या ध्वलाकारके लिखे हुए तो हो ही नहीं सकते। अतः यही अनुमान होता है कि वे उस ताडपत्रवाली प्रतिके लिखे जानेके समय या उससे भी पूर्वकी जिस प्रति परसे वह लिखी गई होगी उसके लिखनेके समय प्रक्षिप्त किये गये होंगे। संभवतः कुलभूषण या कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनिकी देख-रेखमें ही वह प्रतिलिपि की गई होगी। यदि विद्यमान ताडपत्र की प्रति लिखनेके समय ही वे पद्य डाले गये हों, तो कहना पड़ेगा कि वह प्रति शककी दशवीं

१. जैन शिलालेखसंग्रह, लेख नं. ४०

२. Sukrabara Basti Inscription of Kolhapur, in Graham's Statistical Report on Kolhapur.

न्यायकुमुदचन्द्र, भूमिका पृ. ११४ आदि.

शताब्दिके मध्य भागके लगभग लिखी गई है। इन्हीं प्रतियोंमेंसे कहीं एक और कहीं दोके प्रशस्त्यात्मक पद्य धवलाकी प्रतिमें और भी बीच बीचमें पाये जाते हैं जिनका परिचय व संप्रह आगे यथावसर देनेका प्रयत्न किया जायगा।

धवलाके अन्तकी प्रशस्ति

मूडबिद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिके प्रसंगमें हमारी दृष्टि स्वभावतः धवलाकी प्राप्त प्रतियोंके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्ति पर जाती है। धवलाके अन्तमें धवलाकार वीरसेनाचार्यसे सम्बंध रखनेवाली वे नौ गाथाएं पाई जाती हैं जिनको हम प्रथम भागमें प्रकाशित कर चुके हैं। उन गाथाओंके पश्चात् निम्न लम्बी प्रशस्ति पाई जाती है, जिसके कनाड़ी अंश पूर्वोक्त प्रो. कुंदनगार व प्रो. उपाध्याय द्वारा बड़े परिश्रमसे संशोधित किये गये हैं।

१

शब्दब्रह्मेति शब्दैर्गणधरमुनिरित्येव राद्धान्तविद्भिः,
साक्षात्सर्वज्ञ एवेत्यभिहितमतिभिः सूक्ष्मवस्तुप्रणीतः ।
यो दृष्टो विश्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभट्टारकाख्यः,
स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमतध्वान्तभित्तन्त्रकारः ॥ १ ॥

२

श्रीचारित्रसमृद्धिमिहविजयश्रीकर्मविच्छित्तिपूर्वकं ज्ञानावरणीयमूलनिर्नाशनं भूचक्रेशं बेसकेय्ये
संदर्भमुनिवृन्दाधीश्वरकुन्दकुन्दाचार्यधृतधैर्ये [गर्भतेथिने (?)] नाचार्यरोळवर्यरु जितमदविनिर्गतमलर्चतुं-
गुलचारणद्धिनिरतर्गणधर [रैरेकैसिंगे (?)] गुणगणधरर् यत्तिपतिगणधररेनिसिद कुंदकुन्दाचार्यर् । अवरन्वय-
दोळ सिद्धान्तविद्वर्याकरणवेदिगळ षट्त्तर्कप्रवणद्धिसिद्धिसंजुत्तपरिस्तुतरप्य गुष्टपिच्छाचार्यधैर्यपरनैर्गार्दगाभीर्य-
गुणोदधिगळुचितशमदमयमतात्पर्येरेने गृद्धृपिच्छाचार्यर् शिष्यर्षलाकपिच्छाचार्यगुणनन्दिपंडितनिजगुणनन्दि-
पंडितजनंगळं मेखिसि मैगुणद पेसरसेये विद्वद्गणतिलकसकलमुनीन्द्रशिष्यर्षदार्थदोळर्थशास्त्रदोळु जिनागम-
दोळु तंत्रदोळु महाचरितपुराणसंततिगळोळ परमाणमदोळु परसंमं दोरे सरि पाटिपासटि समानमेनळ कृत-
विद्याररेनुत्तिरे बुधकोटिसंदर्भवीतळदोळु । गुणनन्दिपण्डितशिष्यर्षिहितविद्वर्गे सूनूर्वाशिष्यरोळु
तपश्चरणसिद्धान्तपारायणरेणिकेगोळकर्षेदिर्वर्तपोविच्छिन्नानंगरेबी महिमेथिनेसदेवार्थिधैर्यंतुदारस्वच्छादिनकर-
किरणमे बेळगे देवेन्द्रसिद्धान्तरु ॥ अन्तुनेगर्तेवेत्तवर शिष्यकदम्बकदोळु समस्तसिद्धान्तनहापयोनिधियेनिसि
तडंबरेगं तपोबलाक्रान्तमनोजरगि मद्वर्जितरागि पोगर्तेवेत्तरासांतं नेगर्द कीर्त्ति वसुनन्दिमुनीन्द्ररुदात्तवृत्ति-
यितुदधिगे कलाधरं पुष्टिदनेन्तवर्गे शिष्यरादर् गुणदोळेदडे रविचंद्रसिद्धांतदेवर्षेवर् जगद्विशेषकचरितर् ।
अंतु दयावनीधरकृतोदयनादशशांकिन्दि शार्वरिर् गित्तु धरातलमं मत्ते दुर्गयध्वान्तविद्यातमागिरे तदुद्धवर्षि
सळे पूर्णचन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्र निगदितान्तप्रतिशासनम् जैनशासनम् ॥

१ अ. प्रतिमें ' शार्वरिकपराधिगित्तु ' ऐसा पाठ है।

इन्दु शरद्व बेळ् दिंगळ् पुदिदुदु देसेदेसेधोळेनिप जसदोळपं ताळिद दामनन्दिदिसिद्धान्तदेवर-
वरप्रशिष्यरधिगततत्त्वर् ।

शान्तसेवेतचित्त जनोळाद विरोधमिदेत् ? निस्पृहर् ।
स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळितु नेग कते वेत्तिदा ॥
नीतन [रिन्मरा (?)] रेने [जन्य ?] जिनेन्द्रवीरनान्दिसि-
द्धान्तमुनीन्द्रै सुचरितक्रमदोळ् विपरीत वृत्तरो ॥
बोधितभय्यरचित-वर्धमान श्रीधरदेवरैवर वर्गप्रतनूभवरादरा... ।
श्रीधरगादिशिष्यरवरोळनेगळ्दुर् मलधारिदेवरं श्रीधरदेवरं ॥
नननेन्द्रकिरीटतदार्यितक्रमर् अनुवशनागि बर्पनेनगंभुरुहोदरनोदे पूविनं ।
बिनोळे बसके बंदने भवं जलजासननेत्रमीनके ॥
तन मनके.....' करीन्द्रमदोळ्दुत नप्य चित्तज- ।
नमनेनळ [दोरलनने ?] नेमिचन्द्रमलधारिदेव [रंतेरेयेन ?] ॥

श्रुतधर [वलित्तिने ?] मेथ्यनोमैथुं तुरिसुबुदिल्ल निदेवरेमर्गुलनिकुबुदिल्ल वागिलं किरुतेरे
युबुदिल्ल गुर्वदिल्ल (महेन्द्रनु) नेरे [ओण ?] बणिसल्ल गुणगणावळियं मलधारिदेवरं ॥

आमलधारिदेवमुनिमुल्यर शिष्यरोळप्रगण्यरुर्विमहित [कंषायगुर्व ?] जितकषायक्रोध^३ ले;भमान-
मायामदवर्जितनेंगर्दिरिन्दुमरीचिगळ्दुर् (दिं ?) यशः श्री नेमिचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरुदात्तचरित्रवृत्तिथिं ॥
मलधारिदेवरिंदं । बेळगिदुदु जिनेन्द्रशासनं मुळं निमंलमागि मत्तमीगळ् । बेळगिदुपुदु चन्द्रकीर्त्तिभट्टारकरिं ॥

बेळगुव कीर्त्तिचंद्रिके मृदूक्तिसुधारसपूर्णमूर्तयो
ळ्बेळेदमलं पोदुर्द सितळांछनमागिरे चन्द्रनंदमं ॥
तळेदु जनं मनंगोळे दिगंतर.....विकसितो—
ज्वलशुभचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरिंदं विष्णुधाभिवंधरो ॥

(पयितुं ?) प्रसरकिरणारातीयचन्द्रकीर्त्तिमुनोदराशांतवसितकीर्त्तिगळ् मुनिवृन्दवदितरादरा-
शांतचित्तर शिष्यरादर्विवाकरणंदिसिद्धान्तदेवरिंदं जिनागमवार्धिपारगरादरो । इदाबुदरिंदेदिकेयु
सिद्धान्तवारिधिय तळदेवंदरंदोडानेनुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणंदिसिद्धान्तदेवराबिळागममत्तरमागंमंतिम-
सुधांतुप्रचुरपूरनिकरं व्याख्यानघोषं मरुच्छलितोतुंगतरंगघोषमेने मिकौदार्यदिं दोषनिर्मलधर्मांमृतदिन-
लंकरिसि गंभीरस्वमं ताळि भूवलथके पवित्ररागि नेगळ्दरा सिद्धान्तरत्नाकरर् ॥ अवरप्रशिष्यर्

मरेदुमदोम्भे लौकिकदवातंयनाडद केतवागिलं ।
तेरेयद भानुवस्तमितभागिरेपोगद मेथ्यनोम्भेथुं ॥
तुरिसदकुक्कुटासनके सोलद गंडविमुक्तवृत्तियं ।
मरेयदघोरदुश्चरत्तपश्चरितं मलधारिदेवर ॥ अवरप्रशिष्यर्

१

श्रीदः श्रीगणवाधिबर्धनकरश्चन्द्रावदातोत्तवणः स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिनः पुत्रः पवित्रो भुवि ।

१ अ. प्रातिमें यहाँ ' तत्तदेवप्रकर ' ऐसा पाठ है ।

२ स. प्रातिमें ' गुर्वजितकषायक्रोध ' इतना पाठ नहीं है ।

सद्धमैकशिखामणिर्जिनपतेभ्यैकचिन्तामणिः स श्रीमान् शुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तविद्यानिधिः ॥१॥

२

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसस्वाकौलसस्तंभके (?)
साहित्यस्यधिकारमभितिरुचिते (?) ज्योतिर्मथे मंडले ।
सद्रत्नत्रयमूलरत्नकलशे स्याद्वाद्दहर्म्यं मुदा,
यो (?) देवेन्द्रसुरार्चितैर्दिविषदैस्सद्भिर्विरेजुस्तु (?) तत् ॥ २ ॥

३

देवेन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्रपादपंकेजभृंगः शुभचन्द्रदेवः ।
यदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हर्तुमलं समर्थः ॥ ३ ॥

४

परमजिनेश्वरधिरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेदी ।
धरे बणिगसुगुं गुणगणधरं शुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥

५

श्रीमज्जिनेन्द्रपदपद्मपरागतुङ्गः श्रीजेनशासनसमुद्रतवार्षिचन्द्रः ।
सिद्धान्तशास्त्रविहिताङ्कितदिव्यवाणी धर्मप्रबोधप्रकुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥

६

चितोद्भूतमदेभकन्ददलनप्रोत्कण्ठकण्ठीरवो भव्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विद्वज्जनानन्दकृत् ।
स्थेयात्कुन्दहिमेन्दुनिर्मलयशोवल्लीसमालम्बनः स्तम्भः श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तरत्नाकरः ॥ ६ ॥

७

कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातामिच्छे विकसितपुनितस्ये सजनानन्दकृते ।
विदितविमलनानासक्कलान्विद्धमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥ ७ ॥

८

दिग्दंतिदन्तान्तरवर्षिकीर्षिः रत्नत्रयालंकृतचारुमूर्तिः ।
जीयाश्चिरं श्रीशुभचन्द्रदेवो भव्याब्जिनीराजितराजहंसः ॥ ८ ॥

९

श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणज्योतिरुद्योतिताङ्घ्रिः,
भव्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्वकमायामयादिः ।
इयत्कन्दर्पद्वर्षप्रवलितगलितस्तूर्णितश्रार्यशस्यः,
जीयाब्जेनाब्जभास्वाननुपमविनयो नोत्सिद्धान्तदेवः (?) ॥ ९ ॥

१०

जीयादसावनुपमं शुभचन्द्रदेवो भावोद्भवोद्भवविनाशनमूलमंत्रः ।
निस्तन्द्रसान्द्रविशुधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैलोक्यगोहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

११

मूर्तिदशमस्य नियमस्य विनूतपात्रं क्षेत्रं श्रुतस्य यशसोऽनघजन्मभूमिः ।
भूविभुताश्रितवतासुरभोजकल्पानकपायुधाश्रिवसताच्छुभचन्द्रदेवः ॥११॥

स्वस्ति श्रीसमस्तगुणगणालंकृतसत्यशौचाचारचारुचरित्रनयविनयशीलसंपन्नं विबुधप्रसन्नं
 आहाराभयभैषज्यशास्त्रदानविनोदयं गुणगणारूपादेयं जिनस्तवनसमयसमुच्छलितदिव्यगन्धबन्धुरंगंधो-
 दकपवित्रगात्रेयं गोत्रपवित्रेयं सम्यक्त्वचूडामणियुं मण्डलिनादश्रीभुजबलंगंगेर्माडिदेवरतेयस्मप्य रत्नदेवि
 (?) यङ्कं श्रुतपंचमियं नोतुजवणेषामाडवन्नियकेर्युत्तुंगचैत्यालवदाचार्यं भुवनविख्यातरुमेनिसिदत्तम्
 गुरुगलु श्रीशुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर्गे श्रुतपूजेयं माडि बरेथिसि कोट्ट धवलेशं पुस्तकं मंगलमहा ॥

श्रीकृपणं (कोपणं) प्रसिद्धपुरमापुरदोळगे वंशवारिं शोभाकरमूर्जितं निखिलसाक्षरिकास्यधिलासदर्पणं ।
 नाकजनाथवंद्यजिनपादपथोरुहभृङ्गनेन्दु मूलोकमेवं वर्णिषुदु जिज्ञमनं मनुनीतिमार्गं ।

जिनपदपञ्जाराधकमनुपमविनयांशुराशिदानविनोदं मनुनीतिमार्गनसतीजनदूरं लौकिकार्थदागिगजिज्ञम् ।
 वारिनिधियोळगेमुत्तम् नेरिदुवं कौडु कोरेदु वरुणं मुददिं भारतियकोरळोळिकिदहारमननुकरिसलेखेवरेवो जिज्ञम् ॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और संभवतः स्वलन-प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कनाडी दोनों पाये जाते हैं। विना मूडबिंद्रीकी प्रतिके मिळान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतीत होता है। लिपिकारोंने कहीं कहीं कनाडीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पड़ता है जिससे बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होगई है। उदाहरणार्थ—कर्त्ता एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यैर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको विद्वान् संशोधकोंने खूब संभाला है। पर कई स्वलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कनाडी पद्य भी बहुत अष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये हैं जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बातें स्पष्टतः समझमें आती हैं:—

१. धवलाकी प्रति बन्नियकेरे चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवको समर्पित की गई थी।

२. शुभचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरंपरामें उनसे पूर्व कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छ, बलाकपिच्छ, गुणनन्दि, देवेन्द्र, वसुनन्दि, रविचन्द्र, दामनन्दि, वीरनन्दि, श्रीधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनन्दि आचार्य हुए।

३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडलिनाडुके भुजबलंगंगेर्माडिदेवकी काकी देमियक्कने श्रुत-पंचमी व्रतके उद्यापनके समय किया था।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरंपरा परसे उनका पता लगाना सुलभ हो गया। उक्त परम्परा, एक दो नामोंके कुछ भेदके साथ प्रायः वही है, जो श्रवणबल्गुलके शिलालेख नं. ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद्य ज्योंके त्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्य नं. १२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है—

वाणाम्भोधिनभद्रशशांकुलिते जाते शकाब्दे ततो
वर्षे शोभकृताह्वये व्युपनते मासे पुनः श्रावणे ।
पक्षे कृष्णविपक्षवर्तिते सिते वारे दशम्यां तिथौ
स्वर्गगतः शुभचन्द्रदेवगणभृत् सिद्धान्तवारांनिधिः ॥

अर्थात् शुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्ल १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ। उनकी निषद्या पोयसल-नरेश विष्णुवर्धनके मंत्री गंगराजने निर्माण कराई थी।

शिमोगसे मिले हुए एक दूसरे शिलालेखमें वनियकेरे चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं० १०३५ दिया हुआ है और उसमें मन्दिरके लिये भुजब्रह्मगंगपेमाडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है। अन्तमें देशीगणके शुभचन्द्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है। (एपी-ग्राफिया कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख नं० ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली श्राविका देमियकका पता भी श्रवणबेलगुलके शिलालेखोंसे चल जाता है। लेख नं० ४६ में शुभचन्द्र मुनिका जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तति दंडनायकित्ति लकले, देमति और बूचिराजका उल्लेख है और बूचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिग्रह त्याग पूर्वक स्वर्गवासी हुए और उन्हींकी स्मृतिमें सेनापति गंगने पाषाण स्तम्भ आरोपित कराया। लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवके शिष्य बूचणकी निषद्या' ऐसा कहा गया है। इस लेखमें जो बूचणकी ज्येष्ठ भगिनी देमतिका उल्लेख आया है, उसका सविस्तर वर्णन लेख नं० ४९ (१२९) में पाया जाता है जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है। यहां उनके नाम—देमति, देमवती, देवमती तथा दोवार देमियक दिये गये हैं और उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्ठिराज चामुण्डकी पत्नी कहा है। उनकी धर्मबुद्धिकी प्रशंसा तो लेखमें खूब ही की गई है। उन्हें शासन देवताका आकार कहा है, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शालदानकी स्तुति की गई है। उस लेखके कुछ पद्य इस प्रकार हैं:—

१

आहारं त्रिजगज्जनाय विभयं भीताय दिव्यौषधं,
न्याधिग्यापदुपेतदीनपुखिने श्रेत्रे च शास्त्रागमम् ।
एवं देवमतिस्सदेव ददती प्रप्रक्षये स्वायुषा—
मर्हद्देवमतिं विधाय विधिना दिव्यो वधुः प्रोदभृत् ॥ ४ ॥

२

आसीत्परशोभकरप्रतापक्षोषाचनीपालकृतादरस्य ।
चामुण्डनाम्नो वणिजः प्रिया स्त्री मुख्या सती या भुवि देमतीति ॥ ५ ॥

३

भूलोकचैत्यालयचैत्यपूजाख्यापारकृत्यादरतोऽवतीर्णा ।
स्वर्गात्सुरस्त्रीति विलोक्यमाना पुण्येन लावण्यगुणेन यात्र ॥ ६ ॥

४

आहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यलं वर्णचतुष्टयाथ ।
पश्चात्समाधिक्रियया मृदन्ते स्वस्थानवत्स्वः प्रविवेश योद्धेः ॥ ७ ॥

५

सद्धर्मशत्रुं कलिकालराजं जित्वा व्यवस्थापितधर्मवृत्त्या ।
तस्या जयस्तम्भनिभं शिलाया स्तम्भं व्यवस्थापयति स्म लक्ष्मीः ॥ ८ ॥

लेखके अन्तमें उनके संन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है—

श्री मूलसंघद देशिगणद पुस्तकगच्छद शुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर् गुड्डि सक वर्ष १०४२ नेय
विकारि संवत्सरद फाल्गुण व. ११ बृहवार दन्दु संन्यासन विधियि देमियक्क मुडिपिदल्ल ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुस्तकगच्छके शुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियक्कने शक १०४२
विकारिसंवत्सर फाल्गुण व. ११ वृहस्पतिवारको संन्यासविधिसे शरीरत्याग किया ।

उक्त परिचय परसे संभव तो यही जान पड़ता है कि धवलाकी प्रतिका दान करने-
वाली धर्मिष्ठा साध्वी देमियक्क ये ही होंगी, जिन्होंने शक १०४२ में समाधिमरण किया । तथा
उनके भतीजे भुजबलि* गंगेपर्माडिदेव जिनका धवलाकी प्रशस्तिमें उल्लेख है उनके भ्राता
बूचिराजके ही सुपुत्र हों तो आश्चर्य नहीं । उस व्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्गवास हो
चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है । यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी
प्रति जो संभवतः मूडबिंद्रीकी वर्तमान ताड़पत्रीय प्रति ही हो और जो शक ९५० के लगभग
लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्गवासके पश्चात् और देमियक्कके स्वर्गवासके पूर्व अर्थात् शक १०३७
और १०४२ के बीच शुभचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकलता है । पर यह भी
संभव है कि श्रीमती देमियक्कने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर शुभचंद्रको प्रदान की और
उसमें पूर्व प्रतिके बीच-बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हों ।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कनार्डीके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपण' आदिमें
कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और शेष दो पद्यों में जिन्न नामके किसी श्रावकके यशका
वर्णन किया गया है । कोपण प्राचीन कालमें जैनियोंका एक बड़ा तीर्थस्थान रहा है ।

* भुजबलवार होम्सल नरेशोंकी उपाधि पाई जाती है । देखो शिलालेख नं० १३८, १४३, ४९१,
४९४, ४९७.

चामुंडराय पुराणके ' असिधारा व्रतदिदे ' आदि एक पद्यसे अवगत होता है कि तत्कालीन जैनी कोपणमें सल्लेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुण्यप्रद मानते थे । श्रवणबेलगोलके अनेक लेखोंमें इस पुण्य भूमिका उल्लेख पाया जाता है । लेख नं० ४७ (१२७) शक संवत् १०३७ का है । इसके एक पद्यमें कहा गया है कि सेनापति गंगने असंख्य जीर्ण जैनमंदिरोंका उद्धार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेश को ' कोपण ' तीर्थ बना दिया । यथा—

मस्तिन मातवन्तिरलि जीर्ण जिनाश्रयकोर्य्य क्रमं
बेत्तिरे सुभिनन्तिरनिदुर्गलीलं नेरे माडिसुत्तम—
स्युधमपात्रदानदोदवं मेरेवुरिरे गङ्गवाडितो—
म्बचारु सासिरं कोपणमादुदु गङ्गणदण्डनाथनि ॥ ३९ ॥

इससे कोपण तीर्थकी भारी महिमाका परिचय मिलता है ।

लगभग शक सं० १०८७ के लेख नं. १३७ (३४५) में हुल्ल सेनापतिद्वारा कोपण महातीर्थमें जैन मुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिये बहुत सुवर्ण व्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है । यथा—

प्रियदिन्दं हुल्लसेनापति कोपणमहातीर्थदोलधान्त्रियुंवा—
द्वियमुल्लं चतुर्विंशति—जिन—मुनि संघके निश्चिन्तमाग
क्षय दानं सल्लव पाङ्गि बहु—कनक—मना—क्षेत्र—जिर्गातु सद्वृ—
सियनिन्तीलोक मेहम्पोगले विडिसिदं पुण्यपुंजैकधामं ॥ २७ ॥

इससे ज्ञात होता है कि यहां मुनि आचार्योंका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभवतः कोई जैन शिक्षालय भी रहा होगा ।

लगभग १०५७ के लेख नं. १४४ (३८४) के एक पद्यम सेनापति एच द्वारा कोपण व अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है । यथा —

माडिसिदं जिनेन्द्रभवनङ्गलना कोपणादि तीर्थदल्लु
रुद्धिथिनेदो—वेसेसेव बेलगोलदल्लु बहुचित्रभित्तियं ।
नोडिद्वरं मनङ्गोळि पुवेम्बिनमेच—चमूपनस्थि कै—
गूडे धारित्रिकोण्डु कोनेदाडे जसम्नलिदाडे लीलेथि ॥ १३ ॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायचूर जिलेमें एक कोप्पल नामका ग्राम है, यही प्राचीन कोपण सिद्ध होता है । वर्तमानमें वहां एक दुर्ग तथा चहार दीवाली है जो चातुर्व्य कालीन कलाके द्योतक समझे जाते हैं । इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिखाई दे रहा है । एक जगह दीवालमें कोई बीस शिलालेखोंके टुकड़े चुने हुए पाये

जाते हैं। इस स्थानपर व उसके आसपास कोई दस बीस कोसकी इर्दगिर्दमें अशोकके कालसे लगाकर इस तरफके अनेक लेख व अन्य प्राचीन स्मारक पाये जाते हैं।

कोपणके समीप ही पाल्कीगुण्डु नामक पहाड़ी पर, अशोकके शिलालेखके पास वरांग-चरितके कर्ता जटासिंहनन्दि के चरणचिन्ह भी, पुरानी कन्नडमें लेखसहित, अंकित हैं। (वरांग-चरित, भूमिका पृ. १७ आदि)

इसप्रकार यह स्थान बड़ा प्राचीन, इतिहास प्रसिद्ध और जैनधर्म के लिये बहुत महत्वपूर्ण रहा है * ।

२. सत्प्ररूपणा विभाग

षट्खंडागमकी पूर्व प्रकाशित प्रथम पुस्तक तथा अब प्रकाशित होनेवाली द्वितीय पुस्तकको हमने 'सत्प्ररूपणा' के नामसे प्रकट किया है। प्रथम जिल्दके प्रकाशित होनेपर शंका उठाई गई है कि उस ग्रंथको सत्प्ररूपणा न कहकर 'जीवस्थान-प्रथम अंश' ऐसा लिखना चाहिये था। इसके उन्होंने दो कारण बतलाये हैं। एक तो यह कि इस विभागके भीतर जो मंगलाचरण है वह केवल सत्प्ररूपणाका नहीं है बल्कि समस्त जीवस्थान खंडका है और दूसरे यह कि इसके आदिमें जो विषय-विवरण पाया जाता है वह सत्प्ररूपणाके बाहरका है, सत्प्ररूपणाका अंग नहीं ×। इन दोनों आपत्तियोंपर विचार करके भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमने जो इस विभागको 'जीवस्थानका प्रथम अंश' न कहकर 'सत्प्ररूपणा' कहा है वही ठीक है। इसके कारण निम्न प्रकार हैं—

१. यह बात ठीक है कि आदिका मंगलाचरण केवल सत्प्ररूपणाका ही नहीं, किन्तु समस्त जीवस्थानका है। पर, अवान्तर विभागोंकी दृष्टिसे सत्प्ररूपणाके भीतर उसे लेनेसे भी वह समस्त जीवस्थानका बना रहता है। सब ग्रंथोंमें मंगलाचरणकी यही व्यवस्था पायी जाती है कि वह ग्रंथके आदिमें किया जाता है और जो भी खंड, स्कंध, सर्ग, अध्याय व विषयविभाग आदिमें हो उसीके अन्तर्गत किये जाने पर भी वह समस्त ग्रंथका समझा जाता है। समस्त ग्रंथपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिये उसका एक स्वतंत्र विभाग नहीं बनाया जाता। अतएव जीवस्थान ही क्यों, जहांतक ग्रन्थमें सूत्रकारकृत दूसरा मंगलाचरण न पाया जावे वहांतक उसी मंगलाचरणका अधिकार समझना चाहिये, चाहे विषयकी दृष्टिसे ग्रंथमें कितने ही विभाग क्यों न पड़ गये हों। स्वयं धबलाकारने आगे वेदनाखंड व कृति अनुयोगद्वारके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको शेष दोनों खंडों व तेबीस अधिकारोंका भी मंगलाचरण कहा है। यथा—

* देखो जैनसि. मा. ५, २ पृ. ११०

× अल्लेकान्त, वर्ष २, किरण ३, पृ. २०१

उवरि उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु कस्सेदं मंगलं ? तिण्णं खंडाणं । × × × कथं वेयणाए आदीए उच्चं मंगलं सेस-दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिभिह उच्चस्स एदस्स मंगलस्स सेस-तेवीस-अणि योग्हारेसु पउत्ति-दंसणादो ।

ऐसी अवस्थामें णमोकार मंत्ररूप मंगलाचरणके सत्परूपणाके आदिमें होते हुए भी उसके समस्त जीवस्थानके मंगलाचरण समझे जानेमें कोई आपत्ति तो नहीं होना चाहिये ।

२. यथार्थतः तो वह मंगलाचरण सत्परूपणाका ही है । आचार्य पुष्पदन्तने उस मंगलाचरणको आदि लेकर सत्परूपणा मात्रके ही सूत्रोंकी तो रचना की है । यदि हम इसे भूतबलि आचार्यकी आगेकी रचनासे पृथक् कर लें तो पुष्पदन्तकी रचना उस मंगलसूत्र सहित सत्परूपणा ही तो कहलायगी । जीवस्थानका प्रथम अंश यही सत्परूपणा ही तो है ।

३. यदि इस अंशको सत्परूपणा न कह कर जीवस्थानका प्रथम अंश कहते तो पाठक उससे क्या समझते ? इस नामसे उसके विषय पर क्या प्रकाश पड़ता ? वह एक अज्ञात कुलशील और निरूपयोगी शीर्षक सिद्ध होता ।

४. हमने जो ग्रंथका विषय-विभाग किया है वह मूलग्रन्थ पुष्पदन्त और भूतबलिकृत षट्खंडागमकी अपेक्षासे है, और उसमें सत्परूपणासे पूर्व किसी और विषयविभागके लिये स्थान नहीं है । मंगलाचरणके पश्चात् छह सात सूत्रोंमें सत्परूपणाका यथोचित स्थान और कार्य बतलानेके लिये चौदह जीवसमासों और आठ अनुयोगद्वारोंका उल्लेखमात्र करके सत्परूपणाका विवेचन प्रारम्भ कर दिया गया है । धवलाटीकाके कर्ताने उन सूत्रोंकी व्याख्याके प्रसंगसे जीवस्थानकी उत्थानिकाका कुछ विस्तारसे वर्णन कर डाला तो इससे क्या उस विभागको सत्परूपणासे अलग निर्दिष्ट करनेके लिये एक नये शीर्षककी आवश्यकता उत्पन्न होगई ? ऐसा हमें जान नहीं पड़ता । षट्खंडागमके भीतर जो सूत्रकारद्वारा निर्दिष्ट विषय विभाग हैं उन्हींके अनुसार विभाग रखना हमने उचित समझा है । धवलाकारने भी आदिसे लगाकर १७७ सूत्रोंकी क्रमसंख्या लगातार रखी है और उनकी एक ही सिलसिलेसे टीका की है जिसे उन्होंने ' संतसुत्तविवरण ' कहा है जैसा कि प्रस्तुत भागके प्रारंभिक वाक्यसे स्पष्ट है । यथा —

‘ संपहि संत-सुत्त-विवरण-समत्तार्णतरं तेषि परूवणं भणिस्सामो ’ ।

३. वर्गणाखंड—विचार

षट्खंडागमके छह खंडोंका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कराया जा चुका है । वहां यह बतलाया गया है कि उन छह खंडोंमें से प्रथम पांच अर्थात् जीवडाण, खुदाबंध, बंधसा-मित्तविचय, वेदणा और वग्गणा उपलब्ध धवलाकी प्रतियोंमें निबद्ध हैं तथा शेष छठवां अर्थात् महाबंध स्वतंत्र पुस्तकारूढ है, जिसकी प्रतिलिपि अभीतक मूडविद्दी मठके बाहर उपलब्ध नहीं

है। इनमेंसे चार खंडोंके सम्बन्धमें तो कोई मतभेद नहीं है, किन्तु वेदना और वर्णना खंडकी सीमाओंके सम्बन्धमें एक शंका उत्पन्न की गई है जो यह है कि “ धवलग्रंथ वेदना खंडके साथ ही समाप्त हो जाता है—वर्णनाखंड उसके साथमें लगा हुआ नहीं है ”। इस मतकी पुष्टिमें जो युक्तियां दी गई हैं वे संक्षेपतः निम्न प्रकार हैं—

१. जिस कम्मपयडिपाहुडके चौबीस अधिकारोंका पुष्पदन्त-भूतबलिने उद्धार किया है उसका दूसरा नाम ‘ वेयणकसिणपाहुड ’ भी है जिससे उन २४ अधिकारोंका ‘ वेदनाखंड ’ के ही अन्तर्गत होना सिद्ध होता है।

२. चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्णना नामका कोई अनुयोगद्वार भी नहीं है। एक अवान्तर अनुयोगद्वारके भी अवान्तर भेदान्तर्गत संक्षिप्त वर्णना प्ररूपणाको ‘ वर्णनाखंड ’ कैसे कहा जा सकता है ?

३. वेदनाखंडके आदिके मंगलसूत्रोंकी टीकामें वीरसेनाचार्यने उन सूत्रोंको ऊपर कहे हुए वेदना, बंधसामित्तविचय और खुदाबंधका मंगलाचरण बतलाया है और यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्णनाखंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है उपलब्ध धवलाके शेष भागमें सूत्रकारकृत कोई दूसरा मंगलाचरण नहीं देखा जाता, इससे वह वर्णनाखंडकी कल्पना गलत है।

४. धवलामें जो ‘ वेयणाखंड समत्ता ’ पद पाया जाता है वह अशुद्ध है। उसमें पड़ा हुआ ‘ खंड ’ शब्द असंगत है जिसके प्रक्षिप्त होनेमें कोई सन्देह माद्धम नहीं होता।

५. इन्द्रनन्दि व विबुधश्रीधर जैसे ग्रंथकारोंने जो कुछ लिखा है वह प्रायः किंवदन्तियों अथवा सुने सुनाये आधारपर लिखा जान पड़ता है। उनके सामने मूलग्रंथ नहीं थे, अतएव उनकी साक्षीको कोई महत्व नहीं दिया जा सकता।

६. यदि वर्णनाखंड धवलाके अन्तर्गत था तो यह भी हो सकता है कि लिपिकारने शीघ्रता वंश उसकी कापी न की हो और अधूरी प्रतिपर पुरस्कार न मिल सकने की आशंकासे उसने ग्रंथकी अन्तिम प्रशस्तिको जोड़कर ग्रंथको पूरा प्रकट कर दिया हो। ×

अब हम इन युक्तियोंपर क्रमशः विचार कर ठीक निष्कर्ष पर पहुँचनेका प्रयत्न करेंगे।

१. वेयणकसिणपाहुड और वेदनाखंड एक नहीं हैं।

यह बात सत्य है कि कम्मपयडिपाहुडका दूसरा नाम वेयणकसिणपाहुड भी है और यह गुण नाम भी है, क्योंकि वेदना कर्मोंके उदयको कहते हैं और उसका निरवशेषरूपसे जो वर्णन

× जैनसिद्धान्त भास्कर ६, १ पृ. ४२; अनेकान्त ३, १ पृ. ३.

करता है उसका नाम वेयणकसिणपाहुड (वेदनकृत्स्नप्राभृत) है । किन्तु इससे यह आवश्यक नहीं हो जाता कि समस्त वेयणकसिणपाहुड वेदनाखंडके ही अन्तर्गत होना चाहिये, क्योंकि यदि ऐसा माना जावे तब तो छह खंडोंकी अवश्यकता ही नहीं रहेगी और समस्त षट्खंड वेदनाखंड के ही अन्तर्गत मानना पड़ेंगे चूंकि जीवद्वाण आदि सभी खंडोंमें इसी वेयणकसिणपाहुडके अंशों का ही तो संग्रह किया गया है जैसा कि प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये गये मानचित्रों तथा संतपरूवणा पृ. ७४ आदिके उल्लेखोंसे स्पष्ट है । यह खंड—कल्पना कम्मपयडिपाहुड या वेयण-कसिणपाहुडके अवान्तर भेदोंकी अपेक्षासे की गई है किसी एक खंडको समूचे पाहुडका अधिकारी नहीं बनाया गया । स्वयं धवलाकारने वेदनाखंडको महाकम्मपयडिपाहुड समझ लेनेके विरुद्ध पाठकोंको सतर्क कर दिया है । वेदनाखंडके आदिमें मंगलके निबद्ध अनिबद्धका विवेक करते समय वे कहते हैं—

‘ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयडिपाहुडं, अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो’

अर्थात् वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिप्राभृत नहीं है, क्योंकि अवयवको अवयवी मान लेनेमें विरोध उत्पन्न होता है । यदि महाकर्मप्रकृतिप्राभृतके चौबीसों अनुयोगद्वार वेदनाखंडके अन्तर्गत होते तो धवलाकार उन सबके संग्रहको उसका एक अवयव क्यों मानते ? इससे बिलकुल स्पष्ट है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत उक्त चौबीसों अनुयोगद्वार नहीं हैं ।

२. क्या वर्गणा नामका कोई पृथक् अनुयोगद्वार न होनेसे उसके नामपर खंड संज्ञा नहीं हो सकती ?

कम्मपयडिपाहुडके चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्गणा नामका कोई अनुयोगद्वार नहीं है, यह बिलकुल सत्य है, किन्तु किसी उपभेदके नामसे वर्गणाखंड नाम पड़ना कोई असाधारण घटना तो नहीं कही जा सकती । यथार्थतः अन्य खंडोंमें एक वेदनाखंडको छोड़कर अन्य शेष सब खंडोंके नाम या तो विषयानुसार कल्पित हैं, जैसे जीवद्वाण, खुद्दाबंध, व महाबंध । या किसी अनुयोगद्वारके, उपभेदके नामानुसार हैं, जैसे बंधसामित्तविचय । उसीप्रकार यदि वर्गणा नामक उपविभाग पदसे उसके महत्त्वके कारण एक विभागका नाम वर्गणाखंड रखा गया हो तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है । चौबीस अधिकारोंमेंसे जिस अधिकार या उपभेदका प्रधानत्व पाया गया उसके नामसे तो खंड संज्ञा की गई है, जैसा कि धवलाकारने स्वयं प्रश्न उठाकर कहा है कि कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृतिका भी यहाँ प्ररूपण होनेपर भी उनकी खंडग्रंथ संज्ञा न करके केवल तीन ही खंड कहे जाते हैं क्योंकि शेषमें कोई प्रधानता नहीं है और यह उनके संक्षेप प्ररूपणसे जाना जाता है × । इसी संक्षेप प्ररूपणका प्रमाण देकर वर्गणाको भी खंड संज्ञासे

× इहो संतपरूवणा, जिब्द !, भूमिका पृ. ६५ टिप्पणी.

श्रुत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक शब्द हैं, अतएव वर्गणका प्ररूपण षड्खंडमें संक्षेपसे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारोंके विस्तारसे मिलान द्वारा ही जाना जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारोंके प्ररूपण-विस्तार की देखिये। बंधसामित्तविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पश्चात् मंगलाचरण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रोंमें, प्रकृतिका ११५९ से १२०९ तक ५० पत्रोंमें और बंधन के बंध और बंधनीयका १२०९ से १३३२ तक १२३ पत्रोंमें प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रोंमेंसे बंधका प्ररूपण प्रथम १० पत्रोंमें ही समाप्त करदिया गया है, यह कहकर कि—

‘ एत्थ उदहेत्तु खुद्दाबंधस्स एक्कारस-अणियोगहारारणं पररुवणा कायव्वा ’ ।

इसके आगे कहा गया है कि—

‘ वेण बंधणित्त-पररुवणे कीरमाणे वग्गण-पररुवणा णिच्छणं कायव्वा, अण्णहा तेवीस-वग्गणासु इमा चेव वग्गणा बंधपाओग्गा अण्णाओ बंधपाओग्गाओ ण हांति ति अवग्गमाणुववत्तीदो । वग्गणाणमणु-मग्गणट्टदाए तत्थ इमाणि अट्ट अणियोगहारारणि णादव्वाणि भवंति ’ इत्यादि ।

अर्थात् बंधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्गण की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्गणाओंमें ये ही वर्गणाएं बंधके योग्य हैं अन्य वर्गणाएं बंधके योग्य नहीं हैं, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता। उन वर्गणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। इत्यादि।

इस प्रकार पत्र १२१९ से वर्गणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहाँ कहा गया है कि—

‘ एवं विस्सलोवचयपररुवणाए समत्ताए बाहिरिथवग्गणा समत्ता होदि ’ ।

इसप्रकार वर्गणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अधिकारोंमेंसे वेदनाको छोड़कर शेष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुद्दाबंधखंड ७७६ से ५७६ तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५७६ से ६६७ तक ९१ पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगद्वारके अवान्तरके भी अवान्तर भेद वर्गणका विस्तार इन दोनों खंडोंसे अधिक है। ऐसी अवस्थामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त कहना चाहिये या विस्तृत और उससे उसे खंड संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसका या नहीं, यह पाठक विचार करें।

३. वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण और कौन कौन खंडोंका है ?

वेदनाखंडके आदिमें मंगलसूत्र पाये जाते हैं। उनकी टीकामें धवलाकारने खंडविभाग व उनमें मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी जो सूचना दी है उसको निम्न प्रकार उद्धृत किया जाता है—

‘ उवरि उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु कस्तेदं मंगलं ? त्रिणं खंडाणं । कुदो ? वर्गणा-महाबंधभागमाक्षीय मंगलकरणादो । ण च मंगलेण विणा सूदधलिभङ्गारओ गंधस्स पारभदि, तस्स अणाहरिषत्तपसंगादोXX कदि-पास-कम्म-पयडि-अणियोगद्वाराणि वि एत्थ परूविदाणि, तेषिं खंडगंधस्सणमकाऊण त्रिणि चैव खंडाणि सि किमट्टं उच्चदे ? ण, तेषिं पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो णत्तदे ? संखेवेण परूवणादो ’ ।

वर्गणाखंडको धवलान्तर्गत स्वीकार न करनेवाले विद्वान् इस अवतरणको देकर उसका यह अभिप्राय निकालते हैं कि—“ वीरसेनाचार्यने उक्त मंगलसूत्रोंको ऊपर कहे हुए तीनों खंडों वेदना, बंधसामित्तविचओ और खुदाबंधो—का मंगलाचरण बतलाते हुए यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणा-खंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है, मंगलाचरणके विना भूतबलि आचार्य ग्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते हैं। साथ ही यह भी बतलाया है कि जिन कदि, पास, कम्म, पयडि (बंधण) अणुयोगद्वारोंका भी यहाँ (एत्थ)—इस वेदनाखंडमें प्ररूपण किया गया है उन्हें खंडग्रंथ संज्ञा न देनेका कारण उनके प्रधानताका अभाव है, जो कि उनके संक्षेप कथनसे जाना जाता है। उक्त पास आदि अनुयोगद्वारोंमेंसे किसीके भी शुरूमें मंगलाचरण नहीं है और इन अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा वेदनाखंडमें की गई है, तथा इनमेंसे किसीको खंडग्रंथकी संज्ञा नहीं दी गई यह बात ऊपरके शंका समाधानसे स्पष्ट है। ”

अब इस कथनपर विचार कीजिये। ‘ उवरि उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु ’ का अर्थ किया गया है ‘ ऊपर कहे हुए तीन खंड, अर्थात् वेदना, बंधसामित्त और खुदाबंध ’। हमें यहाँपर यह याद रखना चाहिये कि खुदाबंध और बंधसामित्त खंड दूसरे और तीसरे हैं जिनका प्ररूपण हो चुका है, और अभी वेदनाखंडके केवल मंगलाचरणका ही विषय चल रहा है, खंडका विषय आगे कहा जायगा। ‘ उवरि उच्चमाण ’ की संस्कृत छाया, जहाँतक मैं समझता हूँ ‘ उपरि उच्यमान ’ ही हो सकती है, जिसका अर्थ ‘ ऊपर कहे हुए ’ कदापि नहीं हो सकता। ‘ उच्यमान ’ का तात्पर्य केवल प्रस्तुत या आगे कहे जानेवालेसे ही हो सकता है। फिर भी यदि ‘ ऊपर कहे हुए ’ ही मानलें तो उससे ऊपरके दो और आगेके एक का समुच्चय कैसे हो सकता है ? ऊपर कहे हुए तीन खंड तो जीवहाण आदि तीन हैं, बाकी तीन आगे कहे जानेवाले हैं। इसप्रकार उपर्युक्त वाक्यका जो अर्थ लगाया गया है वह बिल्कुल ही असंगत है।

अब आगेका शंका-समाधान देखिये। प्रश्न है यह कैसे जाना कि यह मंगल ‘ उवरि

उच्चमाण' तीनों खंडोंका है ? इसका उत्तर दिया जाता है 'क्योंकि वर्गणा और महाबंध के आदिमें मंगल किया गया है'। यदि यहां जिन खंडोंमें मंगल किया गया है उनको अलग निर्दिष्ट कर देना आचार्यका अभिप्राय था तो उनमें जीवद्वाराणका भी नाम क्यों नहीं लिया, क्योंकि तभी तो तीन खंड शेष रहते, केवल वर्गणा और महाबंधको अलग कर देनेसे तो चार खंड शेष रह गये। फिर आगे कहा गया है कि मंगल किये बिना भूतबलि भट्टारक ग्रंथ प्रारंभ ही नहीं करते, क्योंकि उससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है। पर उक्त व्यवस्थाके अनुसार तो यहां एक नहीं, दो दो खंड मंगलके बिना, केवल प्रारंभ ही नहीं, समाप्त भी किये जा चुके; जिनके मंगलाचरणका प्रबंध अब किया जा रहा है, जहां स्वयं टीकाकार कह रहे हैं कि मंगलाचरण आदिम ही किया जाता है, नहीं तो अनाचार्यत्वका दोष आ जाता है। इससे तो धवलाकारका मत स्पष्ट है कि प्रस्तुत ग्रंथरचनामें आदि मंगलका अनिवार्य रूपसे पालन किया गया है। हमने आदिमंगलके अतिरिक्त मध्यमंगल और अन्तमंगलका भी विधान पढ़ा है। किन्तु इन प्रकारोंमेंसे किसी भी प्रकार द्वारा वेदनाखंडके आदिका मंगल खुदाबंधका भी मंगल सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसप्रकार यह शंका समाधान विषयको समझानेकी अपेक्षा अधिक उलझनमें ही डालने वाला है।

आगेके शंका समाधानकी और भी दुर्दशा की गई है। प्रश्न है कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वारा भी यहां प्ररूपित हैं, उनकी खंडसंज्ञा न करके केवल तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं ? यहां स्वभावतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यहां कौनसे तीन खंडोंका अभिप्राय है ? यदि यहां भी उन्हीं खुदाबंध, बंधसामित्त और वेदनाका अभिप्राय है तो यह बतलानेकी आवश्यकता है कि प्रस्तुतमें उनकी क्या अपेक्षा है। यदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमेंसे उत्पत्तिकी यहां अपेक्षा है तो जीवस्थान, वर्गणा और महाबंध भी तो वहींसे उत्पन्न हुए हैं, फिर उन्हें किस विचारसे अलग किया गया ? और यदि वेदना, वर्गणा और महाबंधसे ही यहां अभिप्राय है तो एक तो उक्त क्रममें मंग पड़ता है और दूसरे वर्गणाखंडके भी इन्हीं अनुयोगद्वारोंमें अन्तर्भावका प्रसंग आता है। जिन अनुयोगद्वारोंकी ओरसे खंड संज्ञा प्राप्त न होनेकी शिक्षायत उठायी गई है उनमें वेदनाका नाम नहीं है। इससे जाना जाता है कि इसी वेदना अनुयोगद्वारा परसे वेदनाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है। पर यदि 'एत्थ' का तात्पर्य "इस वेदनाखंडमें" ऐसा लिया जाता है तब तो यह भी मानना पड़ेगा कि वे तीनों खंड जिनका उल्लेख किया गया है, वेदनाखंडके अन्तर्गत हैं। पयडिके आगे बन्धन और क्यों अपनी तरफसे जोड़ा गया जबकि वह मूलमें नहीं है, यह भी कुछ समझमें नहीं आता। इसप्रकार यह प्रश्न भी बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न करनेवाला सिद्ध होता है।

अतः वेदनाखंडके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको खुदाबंध और बंधसामित्तका भी सिद्ध

करना तथा कृति आदि चौबीसों अनुयोगद्वारोंको वेदनाखंडान्तर्गत बतलाना बड़ा वेतुका, बे आधार और सारे प्रसंगको गड़बड़में डालनेवाला है। यह सब कल्पना किन भूलोंका परिणाम है और उक्त अवतरणोंका सच्चा रहस्य क्या है यह आगे चलकर बतलाया जायगा ! उससे पूर्व शेष तीन युक्तियोंपर और विचार करलेना ठीक होगा।

४. वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका

धवलामें जहां वेदनाका प्ररूपण समाप्त हुआ है वहां यह वाक्य पाया जाता है—

एवं वेयण—अप्याब्रहुगाणिभोगहारे समत्ते वेयणाखंड समत्ता ।

इसके आगे कुछ नमस्कार वाक्योंके पश्चात् पुनः लिखा मिलता है 'वेदनाखंड समाप्तम्'। ये नमस्कार वाक्य और उनकी पुष्पिका तो स्पष्टतः मूलग्रंथके अंग नहीं हैं, वे लिपिकार द्वारा जोड़े गये जान पड़ते हैं। प्रश्न है प्रथम पुष्पिकाका जो मूल ग्रंथका आवश्यक अंग है। पर उसमें भी 'वेयणाखंड समत्ता' वाक्य व्याकरण की दृष्टिसे अशुद्ध है। वहां या तो 'वेयणाखंडो समत्तो' या 'वेयणाखंडं समत्तं' वाक्य होना चाहिये था। समालोचकका यह भी अनुमान गलत नहीं कहा जा सकता कि इस वाक्यमें खंड शब्द संभवतः प्रक्षिप्त है, उस शब्दको निकाल देनेसे 'वेयणा समत्ता' वाक्य भी ठीक बैठ जाता है। हो सकता है वह लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त हुआ हो। पर विचारणीय बात यह है कि वह कब और किस लिये प्रक्षिप्त किया गया होगा। इस प्रश्नको आधुनिक लिपिकारकृत तो समालोचक भी नहीं कहते। यदि वह प्रक्षिप्त है तो उसी लिपिकारकृत हो सकता है जिसने मूडविद्रीकी ताड़पत्रीय प्रति लिखी। हम अन्यत्र बतला चुके हैं कि वह प्रति संभवतः शककी ९ वीं १० वीं शताब्दिकी, अर्थात् आजसे कोई हजार आठसौ वर्ष पुरानी है। उस प्रक्षिप्त वाक्यसे उस समयके कमसे कम एक व्यक्तिका यह मत तो मिलता ही है कि वह वहां वेदनाखंडकी समाप्ति समझता था। उससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस लेखककी जानकारीमें वहाँसे दूसराखंड अर्थात् वर्गणाखंड प्रारंभ हो जाता था, नहीं तो वह वहां वेदनाखंडके समाप्त होनेकी विश्वासपूर्वक दो दो बार सूचना देने की घृष्टता न करता। यदि वहां खंडसमाप्ति होनेका इसके पास कोई आधार न होता तो उसे जबर्दस्ती वहां खंड शब्द डालनेकी प्रवृत्ति ही क्यों होती? समालोचक लिपिकारकी प्रक्षेपक-प्रवृत्ति को दिखलाते हुए कहते हैं कि अनेक अन्य स्थलोंपर भी नानाप्रकारके वाक्य प्रक्षिप्त पाये जाते हैं। यह बात सच है, पर जो उदाहरण उन्होंने बतलाया है वहां, और जहांतक मैं अन्य स्थल ऐसे देख पाया हूं वहां सर्वत्र यही पाया जाता है कि लेखकने अधिकारोंकी संधि आदि पाकर अपने गुरु या देवता का नमस्कार या उनकी प्रशस्ति संबंधी वाक्य या पद्य इधर उधर ढाले हैं। यह पुराने लेखकोंकी शैली सी रही है। पर ऐसा स्थल

एक भी देखनेमें नहीं आता जहां पर लेखकने अधिकार संबंधी सूचना गलत सलत अपनी ओरसे जोड़ या घटा दी हो। अतएव चाहे वह खंड शब्द मौलिक हो और चाहे किसी लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त, उससे वेदना खंडके वहां समाप्त होने की एक पुरानी मान्यता तो प्रमाणित होती ही है।

५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता

इन्द्रनन्दि और विबुध श्रीधरने अपने अपने श्रुतावतार कथानकोंमें षट्खंडागमकी रचना व धवलादि टीकाओंके निर्माणका विवरण दिया है। विबुध श्रीधरका कथानक तो बहुत कुछ काल्पनिक है, पर उसमें भी धवलान्तर्गत पांच या छह खंडोंवाली वार्तामें कुछ अविश्वसनीयता नहीं दिखती। इन्द्रनन्दिने प्रकृत विषयसे संबंध रखनेवाली जो वार्ता दी है उसको हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें पृ. ३० पर लिख चुके हैं। उसका संक्षेप यह है कि वीरसेनने उपरितन निबन्धनादि अठारह अधिकार लिखे और उन्हें ही सक्कर्मनाम छठवां खंड संक्षेपरूप बनाकर छह खंडोंकी बहतर हजार ग्रंथप्रमाण, प्राकृत संस्कृत भाषा मिश्रित धवलाटीका बनाई। उनके शब्दोंका धवलाकारके उन शब्दोंसे मिलान कीजिये जो इसी संबंधके उनके द्वारा कहे गये हैं। निबन्धनादि विभागको यहां भी 'उबरिम ग्रंथ' कहा है और अठारह अनुयोगद्वारोंको संक्षेपमें प्ररूपण करनेकी प्रतिज्ञा की गई है। धरसेन गुरुद्वारा श्रुतोद्धारका जो विवरण इन्द्रनन्दिने दिया है वह प्रायः ज्यों का त्यों धवलाकार के वृत्तान्त से मिलता है। यह बात सच है कि इन्द्रनन्दि द्वारा कही गयीं कुछ बातें धवलान्तर्गत वार्तासे किंचित् भेद रखती हैं। किन्तु उनपरसे इन्द्रनन्दिको सर्वथा अप्रामाणिक नहीं ठहराया जा सकता, विशेषतः खंडविभाग जैसे स्थूल विषयपर। यद्यपि इन्द्रनन्दिका समय निर्णीत नहीं है, पर उनके संबंधमें पं. नाथूरामजी प्रेमीका मत है कि ये वे ही इन्द्रनन्दि हैं जिनका उल्लेख आचार्य नेमिचन्द्रने गोम्मटसार कर्मकाण्डकी ३९६ वीं गाथामें गुरुरूपसे किया है जिससे वे विक्रमकी ११ हवीं शताब्दिके आचार्य ठहरते हैं *। इसमें कोई आश्चर्य भी नहीं है। वीरसेन व धवलाकी रचनाका इतिहास उन्होंने ऐसा दिया है जैसे मानो वे उससे अच्छी तरह निकटतासे सुपरिचित हों। उनके गुरु एलाचार्य कहां रहते थे, वीरसेनने उनके पास सिद्धान्त पढ़कर कहां कहां जाकर, किस मंदिरमें बैठकर, कौनसा ग्रंथ साम्हने रखकर अपनी टीका लिखी यह सब इन्द्रनन्दिने अच्छी तरह बतलाया है जिसमें कोई बनावट व कृत्रिमता दृष्टिगोचर नहीं होती, बल्कि बहुत ही प्रामाणिक इतिहास जंचता है। उन्होंने कदाचित् धवला जयधवलाका सूक्ष्मावलोकन भले ही न किया हो और शायद नोट्स ले रखनेका भी उस समय रिवाज़ न हो, पर उनकी सूचनाओंपरसे यह बात सिद्ध नहीं होती कि धवल

* मा. दि. जै. ग्रंथमाला नं. १३, भूमिका पृ. २

जयधवल ग्रंथ उनके साम्हने मौजूद ही नहीं थे । उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं लिखी जिसकी इन ग्रंथोंकी वार्तासे इतनी विषमता हो जो पढ़कर पीछे स्मृतिके सहारे लिखनेवाले द्वारा न की जा सकती हों । इसके अतिरिक्त उनका ग्रंथ अभीतक प्राचीन प्रतियोंपरसे सुसंपादित भी नहीं हुआ है । किसी एकाध प्रतिपरसे कभी छाप दिया गया था, उसीकी कापी हमारे साम्हने प्रस्तुत है । उन्होंने जो वार्ता किंवदन्तियों व सुने सुनाये आधारपरसे लिखी हो वह भी उन्होंने बहुत सुव्यवस्थित करके, भरसक जांच पड़तालके पश्चात्, लिखी है और इसीतरह वे बहुतसी ऐसी बातोंपर प्रकाश डाल सके जो धवलादिमें भी व्यवस्थित नहीं पायी जाती, जैसे धवलासे पूर्वकी टीकायें व टीकाकार आदि । वे कैसे प्रामाणिक और निर्भीक तथा अपनी कमजोरियों को स्वीकार करलेनवले मिष्णक्ष ऐतिहासिक थे यह उनके उस वाक्य परसे सहज ही ज्ञाना जा सकता है जहां उन्होंने साफ साफ कह दिया है कि गुणधर और धरसेन गुरुओंकी पूर्वापर आचार्य परम्परा हम नहीं जानते क्योंकि न तो हमें वह बात बतलानेवाला कोई आगम मिला और न कोई मुनिजन × । कितनी स्पष्टवादिता, साहित्यिक सचाई और नैतिकबल इस अज्ञानकी स्वीकारतामें भरी हुई है ? क्या इन वाक्योंको लिखनेवालेकी प्रामाणिकतामें सहज ही अविश्वास किया जा सकता है ?

६. मूडविद्रीसे प्रतिलिपि करनेवाले लेखककी प्रामाणिकता

जिस परिस्थितिमें और जिस प्रकारसे धवला और जयधवलाकी प्रतियां मूडविद्रीसे बाहर निकली हैं उसका हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें विवरण दे आये हैं । उस परसे उपलब्ध प्रतियोंकी प्रामाणिकतामें नाना प्रकारके सन्देह करना स्वाभाविक है । अतएव जो धवलाके भीतर वर्गणाखंडका होना नहीं मानते उन्हें यह भी कहनेको मिल जाता है कि यदि मूल धवलामें वर्गणाखंड रहा भी हो तो उक्त लिपिकारने उसे अपना परिश्रम बचानेके लिये जगनबूझकर छोड़ दिया होगा और अन्तिम प्रशस्ति आदि जोड़कर अपने ग्रंथको पूरा प्रकट कर दिया होगा ताकि उसके पुरस्कारादिमें फरक न पड़े । इस कल्पनाकी सचाई झुठाई का पूरा निर्णय तो तभी हो सकता है जब यह ग्रंथ ताड़पत्रीय प्रतिसे मिलाया जा सके । पर उसके अभावमें भी हम इसकी संभावनाकी जांच दो प्रकारसे कर सकते हैं । एक तो उस लेखकके कार्यकी परीक्षा द्वारा और दूसरे विद्यमान धवलाकी रचना की परीक्षा द्वारा । धवलाके संशोधन संपादन संबंधी कार्यमें हमें इस बातका बहुत कुछ परिचय मिला है कि उक्त लेखकने अपना कार्य कहांतक ईमानदारीसे किया है । हमें जो प्रतियां उपलब्ध हुई हैं वे मूडविद्रीसे आई हुई कनाड़ी प्रतिलिपिकी नागरी प्रतिकी कापी की भी कापियां हैं । वे बहुत कुछ खलन-प्रचुर और अनेक प्रकारसे दोष पूर्ण हैं ।

× संतपरुवणा, जिल्द १, भूमिका पृ. १५

पर तो भी तीन प्रतियोंके मिलानसे ही पूरा और ठीक पाठ बैठा लेना संभव हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि जो स्वलन इन आगेकी प्रतियोंमें पाये जाते हैं वे उस कनाड़ी प्रतिलिपिमें नहीं हैं। यद्यपि कुछ स्थल इन सब प्रतियोंके मिलानसे भी पूर्ण या निस्सन्देह निर्णीत नहीं हो पाते और इसलिये संभव है वे स्वलन उसी प्रथम प्रतिलिपिकार द्वारा हुए हों, पर इस ग्रंथकी लिपि, भाषा और विषय संबंधी कठिनाइयोंको देखते हुए हमें आश्चर्य इस बातका नहीं है कि वे स्वलन हैं, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखकके द्वारा अपनी शक्तिभर सावधानी रखनेपर भी, हो सकते हैं। जो लेखक एक खंडके खंडको छोड़कर प्रशस्ति आदि मिलाकर ग्रंथको पूरा प्रकट करनेका दुःसाहस कर सकता है, उसके द्वारा शेष लिखाई भी ईमानदारीके साथ किये जानेकी आशा नहीं की जा सकती। पर उक्त लेखकका अभी तक हम जो परिचय धवलापर परिश्रम करके प्राप्त कर सके हैं, उसपरसे हम दृढ़ताके साथ कह सकते हैं कि उसने अपना कार्य भरसक ईमानदारी और परिश्रमसे किया है। उसपरसे उसके द्वारा एक खंडको छोड़कर ग्रंथको पूरा प्रकट कर देने जैसे छल-कपट किये जानेकी शंका करनेको हमारा जी बिलकुल नहीं चाहता।

पर यदि ऐसा छल कपट हुआ है तो धवलाकी जांच द्वारा उसका पता लगाना भी कठिन नहीं होना चाहिये। धवलाकी कुल टीकाका प्रमाण इन्द्रनन्दिने बहत्तर हजार और ब्रह्महेमने सत्तर हजार बतलाया है। हमारे सन्मुख धवलाकी तीन प्रतियां मौजूद हैं, जिनकी श्लोक संख्याकी हमने पूरी कठोरतासे जांच की। अमरावतीकी प्रतिमें १४६५ पत्र अर्थात् २९३० पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठपर १२ पंक्तियां लिखी गई हैं। प्रत्येक पंक्तिमें ६२ से ६८ तक अक्षर पाये जाते हैं जिससे औसत ६५ अक्षरोंकी ली जा सकती है। तदनुसार कुल ग्रंथमें २९३० × १२ × ६५ = २२८५४०० अक्षर पाये जाते हैं जिनकी श्लोकसंख्या ३२ का भाग देकर ७१,४१५ आई। इसे सामान्य लेखमें चाहे आप सत्तर हजार कहिये, चाहे बहत्तर हजार। कारणजा व आराकी प्रतियोंकी भी उक्त प्रकारसे जांच द्वारा प्रायः यही निष्कर्ष निकलता है। इससे तो अनुमान होता है कि प्रतियोंमेंसे एक खंडका खंड गायब होना असंभवसा है, क्योंकि उस खंडका प्रमाण और सब खंडोंको देखते हुए कमसे कम पांच सात हजार तो अवश्य रहा होगा। यह कर्मा प्रस्तुत प्रतियोंमें दिखाई दिये बिना नहीं रह सकती थी।

विषयके तारतम्यकी दृष्टिसे भी धवला अपने प्रस्तुत रूपमें अपूर्ण कहीं नज़र नहीं आती। प्रथम तीन खंड तो पूरे हैं ही। चौथे वेदना खंडके आदिसे कृति आदि अनुयोगद्वार प्रारम्भ हो जाते हैं। इनमें प्रथम छह कृति, वेदना, फास, कम्म, पयडि और बंधन स्वयं भगवान् भूतबलि-द्वारा प्ररूपित हैं। इनके अन्तमें धवलाकारने कहा है—

‘भूदबलिभदारपण जेणेदं सुतं देसामासियभावेण लिहिवं तेणेदेण सुचिद-सेस-अट्टारस-अणि-
बोगहारणं किंचि संबेवेण पक्खजं कस्तामो (धवला अ. पत्र १३३२)’

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आचार्य भूतबलिकी रचना यहीं तक है। किन्तु उक्त प्रतिज्ञा वाक्यके अनुसार शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका वर्णन धवलाकारने स्वयं किया है और अपनी इस रचनाको उन्होंने चूलिका कहा है—

एत्तो उवरिमगंधो चूलिया णाम ।

इन्हीं अठारह अनुयोगद्वारोंकी वीरसेनद्वारा रचनाका विशद इतिहास इन्द्रनन्दिने अपने श्रुतावतारमें दिया है * । इसी चूलिका विभागको उन्होंने छठवां खंड भी कहा है। इसप्रकार चौबीसों अनुयोगद्वारोंके कथनके साथ ग्रंथ अपने स्वाभाविक रूपसे समाप्त होता है। अब यदि इन्हीं अनुयोगद्वारोंके भीतर वर्गणाखंड नहीं माना जाता तो उसके लिये कौनसा विषय व अधिकार शेष रहा और वह कहाँसे छूट गया होगा ? लेखकद्वारा उसके छोड़ दिये जानेकी आशंकाको तो इस रचनामें बिलकुल ही गुंजाइश नहीं रही।

वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ

वेदनाखंडके आदि मंगलान्तरणकी व्यवस्था संबंधी सूचनाका जो अर्थ लगाया जाता है और उससे जो गड़बड़ी उत्पन्न होती है उसका हम ऊपर परिचय करा चुके हैं। अब हमें यह देखना आवश्यक है कि उक्त भूलोंका क्या कारण है और उन अवतरणोंका ठीक अर्थ क्या है। 'उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु' का अर्थ 'ऊपर कहे हुए तीन खंड' तो हो ही नहीं सकता। पर ऐसा अर्थ किये जानेके दो कारण मालूम होते हैं। प्रथम तो 'उवरि' से सामान्य ऊपर अर्थात् पूर्वोक्त का अर्थ ले लिया गया है और दूसरे उसकी आवश्यकता भी यों प्रतीत हुई क्योंकि आगे वर्गणा और महाबंधमें अलग मंगल करनेका उल्लेख पाया जाता है। पर खोज और विचारसे देखा जाता है कि 'उवरि' शब्दका धवलाकारने पूर्वोक्तके अर्थमें कहीं उपयोग नहीं किया। उन्होंने उस शब्दका प्रयोग सर्वत्र 'आगे' के अर्थमें किया है और पूर्वोक्तके लिये 'पुव्व' या पुव्वुत्त का। उदाहरणार्थ, संतपरुवणा, पृष्ठ १३० पर उन्होंने कहा है—

संपहि पुव्वं उच्च-पथाडिससुक्कित्तणा.....एदण्हं पंचण्हसुवरि संपहि पुव्वुत्त-जहण्णट्ठिदि
.....च पक्खित्ते चूलियाए णव अहियारा भवन्ति ।

अर्थात् पूर्वोक्त प्रकृति समुत्कीर्तनादि पांचोंके ऊपर अभी कहे गये जघन्यस्थिति आदि जोड़ देनेपर चूलिकाके नौ अधिकार हो जाते हैं। यहां ऊपर कहे जा चुकेके लिये 'पुव्वं उच्च' व 'पुव्वुत्त' शब्द प्रयुक्त हुए हैं और 'उवरि' से आगेका तात्पर्य है।

पृ. ७३ पर 'उवरि' से बने हुए उवरीदो (उपरितः) अव्ययका प्रयोग देखिये। आचार्य कहते हैं—

* सं. प. भू. पृ. ३८, ६७.

पुत्राणुपुत्री पच्छाणुपुत्री जस्थत्तथाणुपुत्री चेदि तिविहा आणुपुत्री । जं मूलादो परिवाडीए उच्चदे सा पुत्राणुपुत्री । तिस्से उदाहरणं 'उसहमजियं च वंदे' । इच्चवमादि । जं उवरीदो हेडा परिवाडीए उच्चदि सा पच्छाणुपुत्री । तिस्से उदाहरणं—एस करोमि य पणमं जिणवरवसहस्स वड्डमाणस्स । सेसाणं च जिणणं सिवसुहकंखा विलोमेण ॥

यहां यह बतलाया है कि जहां पूर्वसे पश्चातकी ओर क्रमसे गणना की जाती है उसे पूर्वानु-पूर्वी कहते हैं, जैसे 'ऋषभ और अजितनाथको नमस्कार' । पर जहां नीचे या पश्चात्से ऊपर या पूर्वकी ओर अर्थात् विलोमक्रमसे गणना की जाती है वह पश्चादानुपूर्वी कहलाती है जैसे मैं वर्द्धमान जिनेशको प्रणाम करता हूं और शेष (पार्श्वनाथ, नेमिनाथ आदि) तीर्थंकरोंको भी । यहां 'उवरीदो' से तात्पर्य 'आगे' से है और पीछे की ओरके लिखे हेडा [अधः] शब्दका प्रयोग किया गया है ।

धवलामें आगे बंधन अनुयोगद्वारकी समाप्तिके पश्चात् कहा गया है 'एत्तो उवरिमंगथो चूलिया णाम' । अर्थात् यहांसे ऊपरके ग्रंथका नाम चूलिका है । यहां भी 'उवरिम' से तात्पर्य आगे आनेवाले ग्रंथविभागसे है न कि पूर्वोक्त विभागसे ।

और भी धवलामें सैकड़ों जगह 'उवरि' शब्दका प्रयोग हमारी दृष्टिमें इसप्रकार आया है "उवरि भणमाणचुणिसुत्तादो," "उवरिमसुत्तं भणदि" आदि । इनमें प्रत्येक स्थलपर निर्दिष्ट सूत्र आगे दिया गया पाया जाता है । उवरिका पूर्वोक्तके अर्थमें प्रयोग हमारी दृष्टिमें नहीं आया

इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि उवरिका अर्थ आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है, पूर्वोक्तसे नहीं । और फिर प्रकृतमें तो 'उच्चमाण' पद इस अर्थको अच्छी तरह स्पष्ट कर देता है क्योंकि उसका अभिप्राय केवल प्रस्तुत और आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है । पर यदि आगे कहे जानेवाले तीन खंडोंका यह मंगल है तो इस बातका वर्गणा और महाबंधके आदिमें मंगलाचरणकी सूचनासे कैसे सामञ्जस्य बैठ सकता है ? यही एक विकट स्थल है जिसने उपर्युक्त सारी गड़बड़ी विशेषरूपसे उत्पन्न की है । समस्त प्रकरणपर सब दृष्टियोंसे विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि धवलाकी उपलब्ध प्रतियोंमें वहां पाठ की अशुद्धि है । मेरे विचारसे 'वग्गणामहाबंधाणमादीर मंगल-करणादो' की जगह 'वग्गणामहाबंधाणमादीए मंगलाकरणादो' पाठ होना चाहिये । दीर्घ 'आ' के स्थानपर ष्वस्व 'अ' की मात्रा की अशुद्धियां तथा अन्य स्वरोंमें भी ष्वस्व दीर्घके व्यत्यय इन प्रतियोंमें भरे पड़े हैं । हमें अपने संशोधनमें इसप्रकारके सुधार सैकड़ों जगह करना पड़े हैं । यथार्थतः प्राचीन कन्नड़ लिपिमें ष्वस्व और दीर्घ स्वरोंमें बहुधा विवेक नहीं किया जाता था x । हमारे अनुमान किये हुए सुधारके साथ पढ़नेसे पूर्वोक्त

समस्त प्रकरण व शंका-समाधानक्रम ठीक बैठ जाता है। उससे उक्त दो अवतरणोंके बीचमें आये हुए उन शंका समाधानोंका अर्थ भी सुलझ जाता है जिनका पूर्वकथित अर्थसे बिल्कुल ही सामञ्जस्य नहीं बैठता बल्कि विरोध उत्पन्न होता है। वह पूरा प्रकरण इस प्रकार है—

उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगलं ? तिण्णं खंडाणं । कुदो ? वग्गणा—महाबंधाणमादीए मंगलाकरणादो । ण च मंगलेण विणा भूतबलिभडारओ ग्रंथस्स पारभदि, तस्स अगाहरियत्तपसंगादो । कथं वेयणाए आदीए उत्तं मंगलं सेस दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिमिह उत्तस्स एदस्सेव मंगलस्स सेसतेवीस अणियोगहारेसु पउत्तिदंसणादो । महाकम्मपयडिपाहुडत्तणेण चउवीसण्हमणियोगहारणं भेदाभावादो एगत्तं, तदो एगस्स एयं मंगलं तत्थ ण विरुद्धदे । ण च एदेसिं तिण्हं खंडाणमेयत्तमेगखंडत्तपसंगादो ति, ण एस दोसो, महाकम्मपयडिपाहुडत्तणेण एदेसिं पि एगत्तदंसणादो । कदि-पास-हम्म-पयडि—अणियोगहारणि वि एत्थ परुविदाणि, तेसिं खंडग्रंथसण्णमकाऊण तिण्णं चेव खंडाणि ति किमट्टं उच्चदे ? ण, तेसिं पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो गउददे ? संखेवेग परुवणादो ।

इसका अनुवाद इस प्रकार होगा—

शंका—आगे कहे जाने वाले तीन खंडों (वेदना वर्गणा और महाबंध) में से किस खंड का यह मंगलाचरण है ?

समाधान—तीनों खंडोंका ।

शंका—कैसे जाना ?

समाधान—वर्गणाखंड और महाबंध खंडके आदिमें मंगल न किये जानेसे । मंगल-किये बिना तो भूतबलि भडारक ग्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते क्योंकि इससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है ।

शंका—वेदनाके आदिमें कहा गया मंगल शेष दो खंडोंका भी कैसे हो जाता है ?

समाधान—क्योंकि कृतिके आदिमें किये गये इस मंगलकी शेष तेवीस अनुयोगद्वारोंमें भी प्रवृत्ति देखी जाती है ।

शंका—महाकर्मप्रकृतिपाहुडत्वकी अपेक्षासे चौबीसों अनुयोगद्वारोंमें भेद न होनेसे उनमें एकत्व है, इसलिये एकका यह मंगल शेष तेवीसोंमें विरोधको प्राप्त नहीं होता । परंतु इन तीनों खंडोंमें तो एकत्व है नहीं, क्योंकि तीनोंमें एकत्व मान लेनेपर तीनोंके एक खंडत्वका प्रसंग आजाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि-महाकर्मप्रकृतिपाहुडत्वकी अपेक्षासे इनमें भी एकत्व देखा जाता है ।

शंका—कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां (ग्रंथके इस भागमें) प्ररूपित किये गये हैं, उनकी भी खंड ग्रंथ संज्ञा न करके तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं ?

समाधान—क्योंकि इनमें प्रधानताका अभाव है।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—उनका संक्षेपमें प्ररूपण किया गया है इससे जाना।

इस परसे यह बात स्पष्ट समझमें आजाती है कि उक्त मंगलाचरणका सम्बन्ध बंध-सामित्त और खुदाबंध खंडोंसे बैठाना बिलकुल निर्मूल, अस्वाभाविक, अनावश्यक और धवलाकार के मतसे सर्वथा विरुद्ध है। हम यह भी जान जाते हैं कि वर्गणाखंड और महाबंधके आदिमें कोई मंगलाचरण नहीं है, इसी मंगलाचरणका अधिकार उनपर चाहू रहेगा। और हमें यह भी सूचना मिल जाती है कि उक्त मंगलके अधिकारान्तर्गत तीनों खंड अर्थात् वेदना, वर्गणा और महाबंध प्रस्तुत अनुयोगद्वारोंसे बाहर नहीं हैं। वे किन अनुयोगद्वारोंके भीतर गर्भित हैं यह भी संकेत धवलाकार यहां स्पष्ट दे रहे हैं। खंड संज्ञा प्राप्त न होने की शिकायत किन अनुयोग-द्वारोंकी ओरसे उठाई गई? कदि, पास, कम्म और पयडि अनुयोगद्वारोंकी ओरसे। वेदना-अनुयोगद्वारका यहां उल्लेख नहीं है क्योंकि उसे खंड संज्ञा प्राप्त है। धवलाकारने बंधन अनुयोगद्वारका उल्लेख यहां जान बूझकर छोड़ा है क्योंकि बंधनके ही एक अवान्तर भेद वर्गणासे वर्गणाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है और उसके एक दूसरे उपभेद बंधविधानपर महाबंधकी एक भव्य इमारत खड़ी है। जीवद्वाराण, खुदाबंध और बंधसामित्तविचय भी इसीके ही भेद प्रभेदोंके सुफल हैं। इसलिये उन सबसे भाग्यवान पांच पांच यशस्वी संतानके जनयिता बंधनको खंड संज्ञा प्राप्त न होने की कोई शिकायत नहीं थी। शेष अठारह अनुयोगद्वारोंका उल्लेख न करनेका कारण यह है कि भूतबलि भट्टारकने उनका प्ररूपण ही नहीं किया। भूतबलिकी रचना तो बंधन अनुयोगद्वारके साथ ही, महाबंध पूर्ण होने पर, समाप्त हो जाती है जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं।

इसी अवतरणसे ऊपर धवलाकारने जो कुछ कहा है उससे प्रकृत विषयपर और भी बहुत विशद प्रकाश पड़ता है। वह प्रकरण इसप्रकार है—

तस्थेदं किं णिबद्धमाहो अणिवद्धमिदि ? ण ताव णिबद्धमंगलमिदं महाकम्मपयडीपाहुडस्स कदि-यादि-चउवीसअणियोगावयवस्य आदीए गोदमसामिणा परुदिदस्स भूतबलिभट्टारएण वेयणाखंडस्स आदीए मंगलट्टं तत्तो आणेदूण ठविदस्स णिबद्धत्तविरोहादो। ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयडीपाहुडं अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो। ण च भूदवली गोदमो विगलसुदधारयस्स धरसेणाहरियसीसस्स भूदवलिस्स सयल-सुदधारयवडुमाण्तेवासिगोदमत्तविरोहादो। ण चाण्णो पयारो णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अत्थि। तम्हा अणिवद्धमंगलमिदं। अधवा होदु णिबद्धमंगलं। कथं वेयणाखंडादिखंडगयस्स महाकम्मपयडिपाहुडत्तं ? ण, कदिया (दि) चउवीस-अणियोगद्वारोहिंतो एयंतेण पुअभूदमहाकम्मपयडिपाहुडाभावादो। एदेसिमणियोगद्वाराणं कम्मपयडिपाहुडत्ते संते पाहुड-बहुत्तं पसज्जेदे ? ण एस दोसो, कथंचि इच्छिज्जमाणत्तादो। कथं वेयणाए

महापरिमाणए उपसंहारस्स इमस्स वेयणाखंडस्स वेयणा-भावो ? ण, अवयवेहिंतो एयंतेण पुधभूदस्स अवयवित्स्स अणुबलंभादो । ण च वेयणाए बहुत्तमणिट्टमिच्छिजमाणत्तादो । कथं भूदबलित्स्स गोदमतं ? किं तस्स गोदमत्तेण ? कथमण्णहा मंगलस्स निबद्धत्तं ? ण, भूदबलित्स्स खंड-गंथं पडि कत्तारत्ताभावादो । ण च अण्णेण कय-गंथा-हियाराणं एगदेसस्स पुब्बिहा (पुब्बिह) सदस्थ-संदब्भस्स परूवओ कत्तारो होदि, अहप्पसंगादी । अधवा भूदबली गोदमो चेव एगाहिप्पायत्तादो । तदो सिद्धं णिदद्धमंगलत्तं पि । उवारे उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु ... इत्यादि ।

१ शंका— इनमें से, अर्थात् निबद्ध और अनिबद्ध मंगलोंमेंसे, यह मंगल निबद्ध है या अनिबद्ध ?

समाधान—यह निबद्ध मंगल नहीं है, क्योंकि कृति आदि चौबीस अवयवोंवाले महाकर्मप्रकृतिपाहुडके आदिमें गौतमस्वामीद्वारा इसका प्ररूपण किया गया है । भूतबलि स्वामीने उसे वहांसे लाकर वेदनाखंडके आदिमें मंगलके निमित्त रख दिया है । इसलिये उसमें निबद्धत्वका विरोध है । वेदनाखंड कुछ महाकर्मप्रकृतिपाहुड तो है नहीं, क्योंकि अवयवको ही अवयवी माननेमें विरोध आता है । और भूतबलि गौतमस्वामी हो नहीं सकते, क्योंकि विकल श्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य ऐसे भूतबलिमें सकलश्रुतके धारक और वर्धमान-स्वामीके शिष्य ऐसे गौतमपनेका विरोध है । और कोई प्रकार निबद्ध मंगलपनेका हेतु होता नहीं है, इसलिये यह मंगल अनिबद्ध मंगल है । अथवा, यह निबद्ध मंगल भी हो सकता है ।

२ शंका—वेदनाखंड आदि खंडोंमें समाविष्ट (ग्रंथ) को महाकर्मप्रकृतिपाहुडपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान—क्योंकि कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारों से सर्वथा पृथक्भूत महाकर्मप्रकृतिपाहुडकी कोई सत्ता नहीं है ।

३ शंका—इन अनुयोगद्वारोंमें कर्मप्रकृतिपाहुडत्व मान लेनेसे तो बहुतसे पाहुड माननेका प्रसंग आ जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यह बात कथंचित् अर्थात् एक दृष्टिसे अभीष्ट है ।

४ शंका—महापरिमाणवाली वेदनाके उपसंहाररूप इस वेदनाखंडको वेदना अनुयोगद्वार कैसे माना जाय ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि अवयवोंसे एकान्ततः पृथक्भूत अवयवी तो पाया नहीं जाता । और इससे यदि एकसे अधिक वेदना माननेका प्रसंग आता है तो वेदनाके बहुत्वसे कोई अनिष्ट भी नहीं, क्योंकि वह बात इष्ट ही है ।

५ शंका—भूतबलिको गौतम कैसे मान लिया जाय ?

समाधान—भूतबलिको गौतम माननेका प्रयोजन ही क्या है ?

६ शंका—यदि भूतबलिको गौतम न माना जाय तो मंगलको निबद्धपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान—क्योंकि भूतबलिके खंडग्रंथके प्रति कर्तापनेका अभाव है। कुछ दूसरे के द्वारा रचे गये ग्रंथाधिकारोंमेंसे एक देशका पूर्व प्रकारसे ही शब्दार्थ और संदर्भका प्ररूपण करनेवाला ग्रंथकर्ता नहीं हो सकता क्योंकि इससे तो अतिप्रसंग दोष अर्थात् एक ग्रंथके अनेक कर्ता होनेका प्रसंग आ जायगा। अथवा, दोनोंका एक ही अभिप्राय होनेसे भूतबलि गौतम ही है। इसप्रकार यहां निबद्ध मंगलत्व भी सिद्ध हो जाता है।

यहांपर प्रथम शंका समाधानमें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत पूरा **वेदना और वर्गणा-खंडोंकी सीमाओंका निर्णय** महाकम्मपयडिपाहुडका विषय नहीं है—वह उस पाहुडका एक अवयव मात्र है, अर्थात् उसमें उक्त पाहुडके चौबीसों अनुयोगद्वारोंका अन्तर्भाव नहीं किया जा सकता। महाकर्मप्रकृतिपाहुड अवयवी है और वेदनाखंड उसका एक अवयव।

दूसरे शंका समाधानसे यह सूचना मिलती है कि कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमें अकेला वेदनाखंड नहीं फैला है, वेदना आदि खंड हैं अर्थात् वर्गणा और महाबंधका भी अन्तर्भाव वहीं है। तीसरे शंका समाधानमें कर्मप्रकृतिपाहुड के कृति आदि अवयवोंमें भी एक दृष्टिसे पाहुडपना स्थापित करके चौथेमें स्पष्ट निर्देश किया गया है कि वेदनाखंडमें गौतमस्वामीकृत बड़े विस्तारवाले वेदना अधिकारका ही उपसंहार अर्थात् संक्षेप है। यह वेदना धवलाकी अ. प्रतिमें पृ. ७५६ पर प्रारम्भ होती है जहां कहा गया है—

कम्मट्टजणियवेयण-उवहि-समुत्तिण्णए जिये णमिउं ।

वेयणमहाहियारं विविहहियारं परूवेमो ॥

और वह उक्त प्रतिके ११०६ वें पत्रपर समाप्त होती है जहां लिखा मिलता है—

‘एवं वेयण—अप्पाबहुगाणिओगद्वारे समत्ते वेयणाखंड समत्ता ।

इसप्रकार इस पुष्पिकावाक्यमें अशुद्धि होते हुए भी वहां वेदनाखंडकी समाप्तिमें कोई शंका नहीं रह जाती।

पांचवें और छठवें शंका समाधानमें भूतबलि और गौतममें ग्रंथकर्ता व अभिप्रायकी अपेक्षा एकत्व स्थापित किया गया है जो सहज ही समझमें आजाता है। इसप्रकार उक्त मंगल निबद्ध भी सिद्ध करके बता दिया गया है।

इसप्रकार उक्त शंका समाधानसे वेदनाखंडकी दोनों सीमायें निश्चित हो जाती हैं। कृति तो वेदनाखंडके अन्तर्गत है ही क्योंकि उक्त शंका समाधानकी सूचनाके अतिरिक्त मंगला-चरणके साथ ही वेदनाखंडका प्रारंभ माना ही गया है।

वेदनाखंडके विस्तारका एक और प्रमाण उपलब्ध है। टीकाकारने उसका परिमाण सोलह हजार पद बतलाया है। यथा, 'खंडगंयं पडुच्च वेयणाए सोलसपदसहस्साणि'। यह पद-संख्या भूतबलिकृत सूत्र-प्रथकी अपेक्षासे ही होना चाहिये। अतएव जबतक यह न ज्ञात हो जावे कि पदसे यहां ध्वलाकारका क्या तात्पर्य है तथा वेदनादि खंडोंके सूत्र अलग करके उन पर वह माप न लगाया जावे तबतक इस सूचनाका हम अपनी जांचमें विशेष उपयोग नहीं कर सकते। तो भी चूंकि टीकाकारने एक अन्य खंडकी भी इसप्रकार पद संख्या दी है और उस खंडकी सीमादिके विषयमें कोई विवाद नहीं है इसलिये हमें उनकी तुलनासे कुछ आपेक्षिक ज्ञान अवश्य हो जायगा। ध्वलाकारने जीवद्वान खंडकी पद संख्या अठारह हजार बतलाई है—'पदं पडुच्च अठारहपदसहस्सं' (संत प. पृ. ६०). इससे यह ज्ञात हुआ कि वेदनाखंडका परिमाण जीवद्वानसे नवमांश कम है। जीवद्वान के ४७५ पत्रोंका नवमांश लगभग ५३ होता है, अतः साधारणतया वेदनाखंडकी पत्र संख्या ४७५-५३=४२२ के लगभग होना चाहिये। ऊपर निर्धारित सीमाके अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रत्यक्षमें ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुमानके बहुत नजदीक पड़ती है। समस्त चौबीस अनुयोगद्वारोंको वेदनाके भीतर मान लेनेसे तो जीवद्वानकी अपेक्षा वेदनाखंड ध्वला के तिगुनेसे भी अधिक बड़ा हो जाता है।

जब वेदनाखंडका उपसंहार वेदानुयोगद्वारके साथ हो गया तब प्रश्न उठता है कि उसके आगेके फास आदि अनुयोगद्वार किस खंडके अंग रहे? ऊपर वेदनादि **वर्गणा निर्णय** तीन खंडोंके उल्लेखोंके विवेचन से यह स्पष्ट ही है कि वेदनाके पश्चात् वर्गणा और उसके पश्चात् महाबंधकी रचना है। महाबंधकी सीमा निश्चितरूपसे निर्दिष्ट है क्योंकि ध्वलामें स्पष्ट कर दिया गया है कि बन्धन अनुयोगद्वारके चौथे प्रभेद बन्धविधानके चार प्रकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशबंधका विधान भूतबलि भट्टाकरने महाबंधमें विस्तारसे लिखा है, इसलिये वह ध्वलाके भीतर नहीं लिखा गया। अतः यहाँतक वर्गणाखंडकी सीमा समझना चाहिये। वहांसे आगेके निबन्धनादि अठारह अधिकार टीकाकी सूचनानुसार चूलिका रूप हैं। वे टीकाकार कृत हैं भूतबलिकी रचना नहीं हैं।

उक्त खंड विभागको सर्वथा प्रामाणिक सिद्ध करनेके लिये अब केवल उस प्रकारके किसी प्राचीन विश्वसनीय स्पष्ट उल्लेखमात्रकी अपेक्षा और रह जाती है। सौभाग्यसे ऐसा एक

उल्लेख भी हमें प्राप्त हो गया है। मूडविद्रीके पं. लोकनाथजी शास्त्रीने वीरवाणीविलास जैन सिद्धांतमवनकी प्रथम वार्षिक रिपोर्ट (१९३५) में मूडविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिपरसे महाधवल (महाबंध) का कुछ परिचय अवतरणों सहित दिया है। इससे प्रथम बात तो यह जानी जाती है कि पंडितजीको उस प्रतिमें कोई मंगलाचरण देखनेको नहीं मिला। वे रिपोर्ट में लिखते हैं “इसमें मंगलाचरण श्लोक, ग्रंथकी प्रशस्ति वगैरह कुछ भी नहीं है।” पं. लोकनाथजी की यह रिपोर्ट महत्वपूर्ण है क्योंकि पंडितजीने ग्रंथको केवल ऊपर नीचे ही नहीं देखा—उन्होंने कोई चार वर्षतक परिश्रम करके पूरे महाधवल ग्रंथकी नागरी प्रतिलिपि तैयार की है जैसा कि हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें बतला आये हैं। अतएव उस ग्रंथका एक एक शब्द उनकी दृष्टि और कलमसे गुजर चुका है। उनके मतसे पूर्वोक्त ‘मंगलकरणादो’ पदमें हमारे ‘मंगलाकरणादो’ रूप सुधार की पुष्टि होती है—

दूसरी बात जो महाधवलके अवतरणोंमें हमें मिलती है वह खंडविभागसे संबंध रखती है। महाबंधपर कोई पंचिका भी उस प्रतिमें प्रथित है जैसा कि अवतरणकी प्रथम पंक्तिसे ज्ञात होता है—

‘ बोच्छामि संतकम्मे पंचियरूवेण विवरणं सुमहत्थं ’

इसी पंचिकाकारने आगे चलकर कहा है—

‘ महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदि-वेदणाओ(दि) चौव्वीसमणियोगहारेसु तत्थ कदि-वेदणा त्ति जाणि अणियोगहाराणि वेदणाखंडमिह, पुणो पास (-कम्म-पयडि-बंधणाणि) चत्तारि अणियोगदारेसु तत्थ बंध बंधणिज्जाणमणियोमेहि सह वग्गणाखंडमिह, पुणो बंधविधानमणियोगो खुदाबंधमि सप्पवंचेण परुधिदाणि । पुणो वेहितो सेसट्टारसणियोगदाराणि सत्तकम्मे सव्वाणि परुधिदाणि । तो वि तस्सद्वगंभीरत्तादो अत्थविसम-पदाणमत्थे थोरुद्धयेण पंचियसरूवेण भणिस्सामो ’ × ।

इस अवतरणमें शब्दोंमें अशुद्धियाँ हैं। कोष्ठकके भीतरके सुधार या जोड़े हुए पाठ भेरे हैं। पर उसपरसे तथा इससे आगे जो कुछ कहा गया है उससे यह स्पष्ट जान पड़ा कि यहां निबंधनादि अठारह अधिकारोंकी पंचिका दी गई है। उन अठारह अधिकारोंका नाम ‘सत्तकम्म’ था, जिससे इन्द्रनन्दिके सत्कर्मसंबंधी उल्लेखकी पूरी पुष्टि होती है। प्राप्त अवतरण परसे महाधवलकी प्रति व उसके विषय आदिके संबंधमें अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं, और प्रतिकी परीक्षाकी बड़ी अभिलाषा उत्पन्न होती है, किन्तु उस सबका नियंत्रण करके प्रकृत विषय-पर आनेसे उक्त अवतरणमें प्रस्तुतोपयोगी यह बात स्पष्ट रूपसे माह्य हो जाती है, कि कृति

× यह अवतरण सं. प. जिल्द १ की भूमिका पृ. ६८ पर दिया जा चुका है। ‘पर वहाँ भूलसे ‘पुणो ते-हिंको’ आदि भाष्य छूट गया है। अतः प्रकृतोपयोगी उस अवतरणको यहाँ फिर पूरा दे दिया है।

और वेदना अनुयोगद्वारा वेदनाखंडके तथा फास, कम्म, पयडि और बंधनके बंध और बंधनीय भेद वर्गणाखंडके भीतर हैं। इससे हमारे विषयका निर्विवादरूपसे निर्णय हो जाता है।

प्रथम जिल्दकी भूमिकामें ठीक इसीप्रकार खंडविभागका परिचय कराया जा चुका है उस परिचयकी ओर पाठकोंका ध्यान पुनः आकर्षित किया जाता है।

४. णमोकार मंत्रके आदिकर्ता.

१

जो ख्याति और प्रचार हिन्दुओंमें गायत्री मन्त्रका है तथा बौद्धोंमें त्रिसरण मन्त्रका था, वही जैनियोंमें णमोकार मन्त्रका है। धार्मिक तथा सामाजिक सभी कृत्तों व विधानोंके आरम्भमें जैनी इस मन्त्रका उच्चारण करते हैं। यही उनका दैनिक जपमन्त्र है। इसकी प्रख्यातिका एक पद्य निम्न प्रकार है, जो नित्य पूजनविधान में उच्चारण किया जाता है—

एसो पंच-णमोयारो सब्बपापप्पणासणो । मंगलाणं च सब्बेसिं पढमं होइ मंगलं ॥

अर्थात् यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलोंमें प्रथम [श्रेष्ठ] मंगल है।

इस मन्त्रका प्रचार जैनियोंके तीनों सम्प्रदायों—दिगम्बर, श्वेताम्बर और स्थानकवासियोंमें समानरूपसे पाया जाता है। तीनों सम्प्रदायोंके प्राचीनतम साहित्यमें भी इसका उल्लेख मिलता है। किंतु अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इस मन्त्रके आदिकर्ता कौन हैं। यथार्थतः यह प्रश्न ही अभी तक किसी ने नहीं उठाया और इस कारण इस मन्त्रको अनादि-निधन जैसा पद प्राप्त हो गया है।

किन्तु षट्खंडागम और उसकी टीका धवलाके अवलोकनसे इस णमोकार मन्त्रके कर्तृत्वके सम्बन्धमें कुछ प्रकाश पड़ता है, और इसीका यहाँ परिचय कराया जाता है।

षट्खंडागमका प्रथम खण्ड जीवट्टाण है और इस खंडके प्रारम्भमें यही सुप्रसिद्ध मन्त्र पाया जाता है। टीकाकार वीरसेनाचार्यके अनुसार यही उक्त ग्रन्थका सूत्रकारकृत मंगलाचरण है। वे लिखते हैं कि—

मंगल—णिमित्त—हेउ—परिमाणं नाम तह थ कत्तारं । वागरिय छप्पि पच्छा वक्खाणउ सत्थमाइरियो ॥
इदि णायमाइरिय—परंपरागयं मणेणावहारिय पुब्वाइरियायाराणुसरणं तिरयणहेउ त्ति पुप्फदंताइ-
रियो मंगलादीणं छण्णं सकारणाणं परुवणट्टं सुत्तमाह—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवउत्तायाणं, णमो लोए सब्बसाद्धणं ॥

(सं० प० १, पृ० ७)

अर्थात् 'मंगल, निमित्त, हेतु परिमाण, नाम और कर्ता. इन छहों का प्ररूपण करके

पश्चात् आचार्यको शास्त्रका व्याख्यान करना चाहिये । ' इस आचार्य परम्परागत न्याय को मनमें धारण करके पुष्पदन्ताचार्य मंगलादि छहोंके सकारण प्ररूपणके लिये सूत्र कहते हैं, ' णमो अरिहंताणं ' आदि ।

इसके आगे धवलाकारने इसी मंगलसूत्रको ' तालपलंब ' सूत्रके समान देशामर्षक बतलाकर पूर्वोक्त मंगल, निमित्त आदि छहों का प्ररूपक सिद्ध किया है । तत्पश्चात् मंगल शब्दकी व्युत्पत्ति व अनेक दृष्टियोंसे भेद प्रभेद बतलाते हुए मंगलके दो भेद इसप्रकार किये हैं—

तच्च मंगलं दुविहं णिबद्धमणिबद्धमिदि । तत्थ णिबद्धं णाम जो सुत्तस्सादीए सुत्तहत्तारेण णिबद्ध-देवदा-णमोक्कारो तं णिबद्ध-मंगलं । जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिबद्ध-मंगलं । इदं पुण जीवट्टाणं णिबद्ध-मंगलं, यत्तो ' इमेसिं चोदसण्हं जीवसमाणं ' इदि एदस्स सुत्तस्सादीए णिबद्ध- ' णमो अरिहंताणं ' इच्चादिदेवदा-णमोक्कारदंसणादो ।

(सं० प० १, पृ० ४१)

अर्थात् मंगल दो प्रकारका है, निबद्ध और अनिबद्ध । सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा जो देवता-नमस्कार निबद्ध किया जाय वह निबद्ध मंगल है और जो सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा देवताको नमस्कार किया जाता है (किन्तु वह नमस्कार लिपिबद्ध नहीं किया जाता) वह अनिबद्ध-मंगल है । यह जीवट्टाणं निबद्ध मंगल है, क्योंकि इसके ' इमेसिं चोदसण्हं ' आदिसूत्रके पूर्व ' णमो अरिहंताणं ' इत्यादि देवतानमस्कार पाया जाता है ।

इससे यह सिद्ध हुआ कि जीवट्टाणके आदिमें जो यह णमोकार मंत्र पाया जाता है वह सूत्रकार पुष्पदन्त आचार्य द्वारा ही वहां रखा गया है और इससे उस शास्त्रको निबद्ध-मंगल संज्ञा प्राप्त हो जाती है । किन्तु इससे यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि यह मंगलसूत्र स्वयं पुष्पदन्ताचार्यने रचकर यहां निबद्ध किया है, या कहीं अन्यत्र से लेकर यहां रख दिया है । पर अन्यत्र धवलाकार ने इसका भी निर्णय किया है ।

वेदनाखंडके आदिमें ' णमो जिणाणं ' आदि मंगलसूत्र पाये जाते हैं, जिनकी टीका करते हुए धवलाकारने उनके निबद्ध अनिबद्ध स्वरूप का विवेचन किया है । वे लिखते हैं—

तत्थेदं किं णिबद्धमाहो अणिबद्धमिदि ? ण ताव णिबद्ध-मंगलमिदं, महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदियादि-चउवीस-अणियोगात्रयवस्स आदीए गोदमसामिणा परुविदस्स भूदबलिभडारएण बेयणाखंडस्स आदीए मंगलट्टं ततो आणेदूण ठविदस्स णिबद्धत्त-विरोहादो । ण च बेयणाखंडं महाकम्मपयडिपाहुडं अवयवस्स अवयवित्तविरोहादो । ण च भूदबली गोदमो, विगलसुदधारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदबलिस्स सयलसुदधारयवड्डुमाणंतेवासि-गोदमत्तविरोहादो । ण चाण्णो पयारो णिबद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अत्थि ।

अर्थात् यह मंगल (णमो जिणाणं, आदि) निबद्ध है या अनिबद्ध ? यह निबद्ध-मंगल तो नहीं है क्योंकि महाकर्मप्रकृतिपाहुडके कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंके आदिमें गौतमस्वामीने इस

मंगलका प्ररूपण किया है और भूतबलि मष्टारकने उसे वहांसे उठाकर मंगलार्थ यहां वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, इससे इसके निबद्ध-मंगल होनेमें विरोध आता है। न तो वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिपाहुड है, क्योंकि अवयवको अवयवी माननेमें विरोध आता है। और न भूतबली ही गौतम हैं क्योंकि विकलश्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य भूतबलिको सकलश्रुतके धारक और वर्धमानस्वामीके शिष्य गौतम माननेमें विरोध उत्पन्न होता है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगलत्वका हेतु हो नहीं सकता।

आगे टीकाकारने इस मंगलको निबद्धमंगल भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया है, पर इसके लिये उन्हें प्रस्तुत ग्रन्थका महाकर्मप्रकृतिपाहुडसे तथा भूतबलिस्वामीका गौतमस्वामीसे बड़ी खींचातानी द्वारा एकत्व स्थापित करना पड़ा है। इससे धवळाकारका यह मत बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि दूसरेके बनाये हुए मंगलको अपने ग्रन्थमें जोड़ देनेसे वह शास्त्र निबद्ध-मंगल नहीं कहला सकता, निबद्ध-मंगलत्वकी प्राप्तिके लिये मंगल ग्रन्थकारकी ही मौलिक रचना होना चाहिये। अतएव जब कि धवळाकार जीवट्टाणको णमोकार मन्त्ररूप मंगलके होनेसे निबद्ध-मंगल मानते हैं तब वे स्पष्टतः उस मंगलसूत्रको सूत्रकार पुष्पदन्तकी ही मौलिक रचना स्वीकार करते हैं, वे यह नहीं मानते कि उस मंगलको उन्होंने अन्यत्र कहीं से लिया है। इससे धवळाकार आचार्य वीरसेनका यह मत सिद्ध हुआ कि इस सुप्रसिद्ध णमोकार मंत्रके आदिकर्ता प्रातः स्मरणीय आचार्य पुष्पदन्त ही हैं।

२

णमोकार मंत्रके संग्रन्थमें श्वेताम्बर सम्प्रदायकी क्या मान्यता है और उसका पूर्वोक्त मतसे कहां तक सामञ्जस्य या वैषम्य है, इस पर भी यहां कुछ विचार किया जाता है। श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत छह छेदसूत्रोंमेंसे द्वितीय सूत्र 'महानिशीथ' नामका है। इस सूत्रमें णमोकार मन्त्रके विषयमें निम्न वार्ता पायी जाती है—

एवं तु जं पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स वक्खाणं तं महया पबंधेणं अणंतगमपज्जेहिं सुत्तस्स य पियभूयाहिं णिज्जुत्ति-भास-चुत्तीहिं जहेव अणंत-नाण-इंसणधरेहिं तित्थयरेहिं वक्खःणित्थं तहेव समासओ वक्खाणिज्जं तं आसिं । अहऽअया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ णिज्जुत्ति-भास-चुत्तीओ वुच्छिन्नाओ । इओ य वच्छंतेणं कालेणं समएणं महिड्डिपत्ते पयाणुसारी वइरसामी नाम दुवालसंगसुअहरे समुपत्ते । तेण य पंच-मंगल-महासुयक्खंधस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मज्जे लिहिओ । मूलसुत्तं पुण सुत्तत्ताए गणहरेहिं अत्थत्ताए अरिहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतित्थयरेहिं तिलोगमहिण्णिं वीरजिणिदेहिं पञ्चवियं त्ति एस वुड्डुसंपयाओ ।

(महानिशीथ सूत्र, अध्याय ५)

इसका अर्थ यह है कि इस पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका व्याख्यान महान प्रबंधसे, अनन्त गम और पर्यायों सहित, सूत्रकी प्रियभूत निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियों द्वारा जैसा अनन्त ज्ञान-दर्शनके

धारक तीर्थकरोंने किया था उसीप्रकार संक्षेपमें व्याख्यान करने योग्य था। किन्तु आगे काल-परिहानिके दोषसे वे निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियां विच्छिन्न हो गईं। फिर कुछ काल जानेपर यथासमय महाऋद्धिको प्राप्त पदानुसारी वइरसामी (वैरस्वामी या वज्रस्वामी) नामके द्वादशांग श्रुतके धारक उत्पन्न हुए। उन्होंने पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका उद्धार मूलसूत्रके मध्य लिखा। यह मूलसूत्र सूत्रत्वकी अपेक्षा गणधरों द्वारा तथा अर्थकी अपेक्षासे अरहंत भगवान्, धर्मतीर्थकर त्रिलोकमहित वीरजिनेन्द्रके द्वारा प्रज्ञापित है, ऐसा वृद्धसम्प्रदाय है।

यद्यपि महानिशीथसूत्रकी रचना श्वेताम्बर सम्प्रदायमें बहुत कुछ पीछेकी अनुमान की जाती है, तथापि उसके रचयिताने एक प्राचीन मान्यताका उल्लेख किया है जिसका अभिप्राय यह है कि इस पंचमंगलरूप श्रुतस्कंधके अर्थकर्ता भगवान् महावीर हैं और सूत्ररूप ग्रंथकर्ता गौतमादि गणधर हैं। इसका तीर्थकर कथित जो व्याख्यान था वह कालदोषसे विच्छिन्न हो गया। तब द्वादशांग श्रुतधारी वइरस्वामीने इस श्रुतस्कंधका उद्धार करके उसे मूल सूत्रके मध्यमें लिख दिया। श्वेताम्बर आगममें चार मूल सूत्र माने गये हैं—आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और पिंडनिर्युक्ति। इनमें से कोई भी सूत्र वज्रसूरिके नामसे सम्बद्ध नहीं है। उनकी चूर्णियां भद्रबाहुकृत कही जाती हैं। उन मूल सूत्रोंमें प्रथम सूत्र आवश्यकके मध्यमें गमोकार मंत्र पाया जाता है। अतएव उक्त मान्यताके अनुसार संभवतः यही वह मूलसूत्र है जिसमें वज्रसूरिने उक्त मंत्रको प्रक्षिप्त किया।

कल्पसूत्र स्थविरावलीमें 'वइर' नामके दो आचार्योंका उल्लेख मिलता है जो एक दूसरेके गुरु-शिष्य थे। यथा—

थेरस्स णं अज्ज-सीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगुते ।
थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरसेणे उक्कोसियगुत्ते* ।

अर्थात् कौशिक गोत्रीय स्थविर आर्य सिंहगिरिके शिष्य स्थविर आर्य वइर गोतम गोत्रीय हुए, तथा स्थविर आर्य वइर गोतम गोत्रीयके शिष्य स्थविर आर्य वइरसेन उक्कोसिय गोत्रीय हुए।

विक्रमसंवत् १६४६ में संगृहीत तपागच्छ पट्टावलीमें वइरस्वामीका कुछ विशेष परिचय पाया जाता है। यथा—

तेरसमो वयस्सामि गुरु ।

व्याख्या—तेरसमो सि श्रीसीहगिरिपट्टे त्रयोदशः श्रीवज्रस्वामी यो बाह्यादपि जातिस्मृतिभाग्, नभोगमनविद्यया संघरक्षाकृतू, दक्षिणस्यां बौद्धराज्ये जिनेन्द्रपूजानिमित्तं पुण्याद्यानयनेन प्रवचनप्रभावनाकृतू,

× Winternity : Hist. Ind. Lit. II, P. 465.

* पट्टावली समुच्चय, (पृ. ३)

देवाभिवंदितो दशपूर्वविदामपश्चिमो वज्रशाखोत्पत्तिमूलम् । तथा स भगवान् षण्णवत्यधिकचतुःशत ४९६ वर्षान्ते जातः सन् अष्टौ ८ वर्षाणि गृहे, चतुश्चत्वारिंशत् ४४ वर्षाणि व्रते, षट्त्रिंशत् ३६ वर्षाणि युगप्र० सर्वायुरष्टाशीति ८८ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् चतुरशीत्यधिकपंचशत ५८४ वर्षान्ते स्वर्गभाक् । श्रीवज्र-स्वामिनो दशपूर्व-चतुर्थ-संहननसंस्थानानां व्युच्छेदः ।

चतुःकुलसमुत्पत्तिपितामहमहं विभुम् ।

दशपूर्वविधिं वन्दे वज्रस्वामिसुनीश्वरम् ॥ *

इस उल्लेखपरसे वज्रस्वामीके संबंधमें हमें जो बातें ज्ञात होती हैं वे ये हैं कि उनका जन्म वीरनिर्वाण से ४९६ वर्ष पश्चात् हुआ था और स्वर्गवास ५८४ वर्ष पश्चात् । उन्होंने दक्षिण दिशामें भी विहार किया था तथा वे दशपूर्वियोंमें अपश्चिम थे । वीरवंशावलीमें भी उनके उत्तरदिशासे दक्षिणापथको विहार करनेका उल्लेख किया गया है,× और यह भी कहा गया है कि वहांके 'तुंगिया' नामक नगरमें उन्होंने चातुर्मास व्यतीत किया था । वहांसे उन्होंने अपने एक शिष्यको सोपारक पत्तन (गुजरात) में विहार करनेकी भी आज्ञा दी थी । इन उल्लेखोंपरसे उनके पुष्पदन्ताचार्यकी विहारभूमिसे संबन्ध होनेकी सूचना मिलती है ।

तपागच्छ पट्टावलीमें वज्रस्वामीसे पूर्व आर्यमंगुका उल्लेख आया है जिनका समय नि. सं. ४६७ बतलाया गया है । यथा—

सप्तषष्ठ्यधिकचतुःशतवर्षे ४६७ आर्यमंगुः ।

आर्यमंगुका कुछ विशेष परिचय नन्दीसूत्र पट्टावलीमें इसप्रकार आया है † —

भणसं करगं सरगं पभावगं णाण-दंसण-गुणाणं ।

वंदामि अज्जमंगुं सुयसागरपारगं धीरं ॥ २८ ॥

अर्थात् ज्ञान और दर्शन रूपी गुणोंके वाचक, कारक, धारक और प्रभावक, तथा श्रुतसागरके पारगामी धीर आर्यमंगुकी मैं वन्दना करता हूं । इसके अनन्तर अज्जधम्म और भद्दगुत्तके उल्लेखके पश्चात् अज्जवरका उल्लेख है । इन उल्लेखोंपरसे जान पड़ता है कि ये आर्यमंगु अन्य कोई नहीं, धवला जयधवलामें उल्लिखित आर्यमंगु ही हैं; जिनके विषयमें कहा गया है कि उन्होंने और उनके सहपाठी नागहत्थीने गुणधराचार्य द्वारा पंचमपूर्व ज्ञानप्रवादसे उद्धार किये हुए कसायपाहुडका अध्ययन किया था और उसे जइवसह (यतिवृषभाचार्य) को सिखाया था । उक्त नन्दीसूत्र पट्टावलीमें अज्जवरके अनन्तर अज्जरविल्लअ और अज्ज नन्दिलखमणके पश्चात् अज्ज नागहत्थी का भी उल्लेख इसप्रकार आया है —

* पट्टावली समुच्चय, पृ. ४७.

× जैन साहित्य संशोधक १, २, परिशिष्ट, पृ. १४.

† पट्टावली समुच्चय, पृ. १३.

बहुउ वायगवंसो जसवंसो अज्ज-नागहत्थीणं ।

वागरण-करणभंगिय-कम्मपयडी-पहाणाणं ॥ ३० ॥

अर्थात् व्याकरण, करणभंगी व कर्मप्रकृतिमें प्रधान आर्य नागहस्तीका यशस्वी वाचक वंश वृद्धिशील होवे ।

इसमें सन्देहको स्थान नहीं कि ये ही वे नागहत्थी हैं जो धनलादि ग्रंथोंमें आर्यमंखु के सहपाठी कहे गये हैं । उनके व्याकरणादिके अतिरिक्त 'कम्मपयडी' में प्रधानताका उल्लेख तो बड़ा ही मार्मिक है । श्वेताम्बर साहित्यमें कम्मपयडी नामका एक ग्रंथ शिवशर्मसूरि कृत पाया जाता है जिसका रचनाकाल अनिश्चित है । एक अनुमान उसके वि. सं. ५०० के लगभगका लगाया जाता है । अतएव यह ग्रंथ तो नागहस्ती के अध्ययनका विषय हो नहीं सकता । फिर या तो यहाँ कम्मपयडीसे विषयसामान्य का तात्पर्य समझना चाहिये, अथवा, यदि किसी ग्रंथ-विशेष से ही उसका अभिप्राय हो तो वह उसी कम्मपयडी या महाकम्मपयडिपाहुड से हो सकता है जिसका उद्धार पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंने षट्खंडागम रूपसे किया है ।

तपागच्छ पट्टावलीसे कोई सवा तीनसौ वर्ष पूर्व वि. सं. १३२७ के लगभग श्री धर्मघोष सूरि द्वारा संगृहीत 'सिरि-दुसमाकाल-समणसंन-थयं' नामक पट्टावलीमें तो 'वइर' के पश्चात् ही नागहत्थिका उल्लेख किया गया है । यथा—

वीणं तिवांस वइरं च नागहत्थिं च रेवईमित्तं ।

सीहं नागञ्जुणं भूइदिच्चियं कालयं वंदेX ॥ १३ ॥

ये वइर, वइर द्वितीय या कल्पसूत्र पट्टावलीके उक्कोसिय गोत्रीय वईरसेन हैं जिनका समय इसी पट्टावलीकी अवचूरीमें राजगणनासे तुलना करते हुए वि. सं. ६१७ के पश्चात् बतलाया गया है । यथा—

पुष्पमित्र (दुर्बलिका पुष्पमित्र) २० ॥ तथा राजा नाहडः ॥ १० ॥ (एवं) ६०५ शाकसंवत्सरः ॥ अत्रान्तरे वोटिका निर्गता । इति ६१७ ॥ प्रथमोदयः । वयरसेण ३ नागहस्ति ६९ रेवतिमित्र ५९ बंभदीवगसिंह ७८ नागार्जुन ७८

पणसयरी सयाइं तिञ्जि-सय-समञ्जिआइं अइकमज्जं ।

विक्कमकालाओ तभो बहुली (बलभी) भंगो सम्पुण्णो ॥ १ ॥

इसके अनुसार वीरसंवत्के ६१७ वर्ष पश्चात् वयरसेनका काल तीन वर्ष और उनके अनन्तर नागहस्तिका काल ६९ वर्ष पाया जाता है ।

पूर्वोक्त उल्लेखोंका मथितार्थ इस प्रकार निकलता है—श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें 'वइर' नामके दो आचार्योंका उल्लेख पाया जाता है जिनके नाममें कहीं कहीं 'अज्ज वइर' और 'अज्ज वइरसेन'

X पट्टावली सपुञ्जय, पृ. १६.

इसप्रकार भेद किया गया है। कल्पसूत्र-स्थविरावलीमें एकको गौतम गोत्रीय और दूसरेको उक्को-सिय गोत्रीय कहा है और उन्हें गुरु-शिष्य बतलाया है। किन्तु अन्य पीछेकी पट्टावलियोंमें उनके बीच कहीं कहीं एक दो नाम और जुड़े हुए पाये जाते हैं। प्रथम अज्जवइरके समयका उल्लेख उनके वीरनिर्वाणके ५८४ वर्षतक जीवित रहनेका मिलता है व अज्ज वइरसेनका उल्लेख वीर-निर्वाणसे ६१७ वर्ष पश्चात्का पाया जाता है। इन दोनों आचार्योंसे पूर्व अज्जमंगुका उल्लेख है, तथा उनके अनन्तर नागहत्थिका। अतः इन चारों आचार्योंका समय निम्न प्रकार पड़ता है—

वीर निर्वाण संवत्

अज्ज मंगु	४६७
अज्ज वइर	४९६-५८४
अज्ज वइरसेन	६१७-६२०
अज्ज नागहत्थी	६२०-६८९

अज्ज वइर दक्षिणापथकी गये, वे दशपूर्वोंके पाठी हुए और पदानुसारी थे तथा उन्होंने पंच णमोकार मंत्र का उद्धार किया। नागहत्थी कम्मपयडिमें प्रधान हुए।

दिगम्बर साहित्योल्लेखोंके अनुसार आचार्य पुष्पदन्तने पहले पहले 'कम्मपयडी' का उद्धार कर सूत्ररचना प्रारंभ की और उसीके प्रारंभमें णमोकार मंत्र रूपी मंगल निबद्ध किया, जो धवलाटीकाके कर्ता वीरसेनाचार्यके मतानुसार उनकी मौलिक रचना प्रतीत होती है। अज्जमंगु और नागहत्थि—दोनोंने गुणधराचार्य रचित कसायपाण्डुडको आचार्य परंपरासे प्राप्तकर यति-वृषभाचार्यको पढ़ाया, और यतिवृषभाचार्यने उसपर चूर्णिसूत्र रचे, ऐसा उल्लेख धवलादि ग्रंथोंमें मिलता है। यतिवृषभकृत 'तिलोपपण्णत्ति' में 'वइरजस' नामके आचार्यका उल्लेख मिलता है जो प्रज्ञाश्रमणोंमें अन्तिम कहे गये हैं। यथा—

पण्हसमणेसु चरिमो वइरजसो णाम । ×

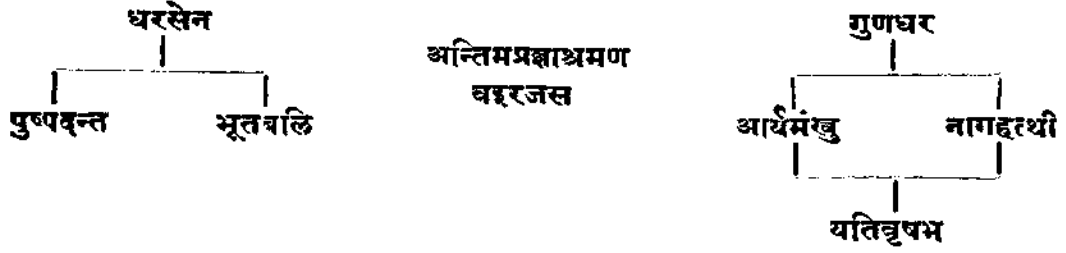
आश्चर्य नहीं जो ये अन्तिम प्रज्ञाश्रमण वइरजस (वज्रपश) श्वेताम्बर पट्टावलियोंके पदानुसारी वइर (वज्रस्वामी) ही हैं। पदानुसारित्व और प्रज्ञाश्रमणत्व दोनों ऋद्धियोंके नाम हैं और ये दोनों ऋद्धियां एक ही बुद्धि ऋद्धिके उपभेद हैं*। धवलान्तर्गत वेदनाखंडमें निबद्ध गौतम-स्वामीकृत मंगलाचरणमें इन दोनों ऋद्धियोंके धारक आचार्योंको नमस्कार किया गया है, यथा—

णमो पदानुसारीणं ॥ ८ ॥ णमो पण्हसमणाणं ॥ १८ ॥

× संतपरूबणा १, भूमिका पृ. ३०, फुटनोट

* राजवार्तिक पृ. १४३

इसप्रकार इन आचार्योंकी दिगम्बर मान्यताका क्रम निम्न प्रकार सूचित होता है—



वइरजसका नाम यतिवृषभसे पूर्व ठीक कहाँ आता है इसका निश्चय नहीं। आर्यमंखु और नागहत्थीके समकालीन होनेकी स्पष्ट सूचना पाई जाती है क्योंकि उन दोनोंने क्रमसे यतिवृषभको कसायपाहुड पढ़ाया था। क्रमसे पढ़ानेसे तथा आर्यमंखुका नाम सदैव पहले लिये जानेसे इतना ही अनुमान होता है कि दोनोंमें आर्यमंखु संभवतः जेठे थे। ये दोनों नाम श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें कोई १३० वर्षके अन्तरसे दूर पड़ जाते हैं जिससे उनका समकालीनत्व नहीं बनता। किन्तु यह बात विचारणीय है कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें ये दोनों नाम कहीं पाये जाते हैं और कहीं छोड़ दिये जाते हैं, तथा कहीं उनमेंसे एकका नाम मिलता है दूसरेका नहीं। उदाहरणार्थ, सबसे प्राचीन 'कल्पसूत्र स्थविरावली' तथा 'पट्टावली सारोद्धार' में ये दोनों नाम नहीं हैं, और 'गुरु पट्टावली' में आर्यमंखुका नाम है पर नागहत्थीका नहीं है×। फिर आर्यमंखु और नागहत्थीने जिनका रचा हुआ कसायपाहुड आचार्य-परंपरासे प्राप्त किया था वे गुणधराचार्य दिगम्बर उल्लेखोंके अनुसार महावीर स्वामीसे आचार्य-परंपराकी अट्ठाईस पीढ़ी पश्चात् निर्वाण संवत्की सातवीं शताब्दिमें हुए सूचित होते हैं जब कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें उन दोनोंमें से एक पाँचवीं और दूसरे सातवीं शताब्दिमें पड़ते हैं। इसप्रकार इन सब उल्लेखों परसे निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं:—

१. क्या 'तिलोय-पण्णत्ति' में उल्लिखित 'वइरजस' और महानिशीथसूत्रके पदानुसारी 'वइरसामी' तथा श्वेताम्बर पट्टावलियोंके 'अज्ज वइर' एक ही हैं ?

२. 'वइरस्वामीने मूलसूत्रके मध्य पंचमंगलश्रुतस्कंधका उद्धार लिख दिया' इस महानिशीथसूत्रकी सूचनाका तात्पर्य क्या है ? क्या उनकी दक्षिण यात्राका और उनके पंचमंगलसूत्रकी प्राप्तिका कोई सम्बन्ध है ? क्या धवलाकारद्वारा सूचित णमोकार मंत्रके कर्तृत्वका इससे सामञ्जस्य बैठ सकता है ?

३. क्या धवलादिश्रुतमें उल्लिखित आर्यमंखु और नागहत्थी तथा श्वेताम्बर पट्टावलियोंके अज्जमंखु और नागहत्थी एक ही हैं ? यदि एक ही हैं, तो एक जगह दोनोंकी समसामयिकता

× देखो पट्टावली समुच्चय।

प्रकट होने और दूसरी जगह उनके बीच एकसौ तीस वर्षका अन्तर पड़नेका क्या कारण हो सकता है ? पट्टावलियोंमें भी कहीं उनके नाम देने और कहीं छोड़ दिये जानेका भी कारण क्या है ?

४. जिस कम्मपयडीमें नागहत्थीने प्रधानता प्राप्त की थी क्या वह पुष्पदन्त भूतबलि द्वारा उद्धारित कम्मपयडिपाहुड हो सकता है ?

५. दिगम्बर और श्वेताम्बर पट्टावलियों आदिमें उक्त आचार्योंके कालनिर्देशमें वैषम्य पड़नेका कारण क्या है ?

इन प्रश्नोंमेंसे अनेकके उत्तर पूर्वोक्त विवेचनमें सूचित या ध्वनित पाये जावेंगे, फिर भी उन सबका प्रामाणिकतासे उत्तर देना बिना और भी विशेष खोज और विचारके संभव नहीं है । इस कार्यके लिये जितने समयकी आवश्यकता है उसकी भी अभी गुंजाइश नहीं है । अतः यहाँ इतना ही कहकर यह प्रसंग छोड़ा जाता है कि उक्त आचार्यों संबंधी दोनों परम्पराओंके उल्लेखोंका भारी रहस्य अवश्य है, जिसके उद्घाटनसे दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन इतिहास और उनके बीच साहित्यिक आदान प्रदानके विषय पर विशेष प्रकाश पड़नेकी आशा की जा सकती है ।

इस प्रकरणको समाप्त करनेसे पूर्व यहाँ यह भी प्रकट कर देना उचित प्रतीत होता है कि श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत भगवतीसूत्रमें जो पंच-नमोकार-मंगल पाया जाता है उसमें पंचम पद अर्थात् ' णमो लोए सन्वसाहूणं ' के स्थानपर ' णमो बंभीए लिवीए ' (ब्राह्मी लिपिको नमस्कार) ऐसा पद दिया गया है । उड़ीसाकी हाथीगुफामें जो कलिंग नरेश खारवेलका शिलालेख पाया जाता है और जिसका समय ईस्वी पूर्व अनुमान किया जाता है, उसमें आदि मंगल इसप्रकार पाया जाता है—

णमो अरहंताणं । णमो सब सिधाणं ।

ये पाठभेद प्रासंगिक हैं या किसी परिपाटीको लिये हुए हैं, यह विषय विचारणीय है । श्वेताम्बर सम्प्रदायमें किसी किसीके मतसे णमोकार सूत्र अनार्ष है × ।

५ बारहवें श्रुताङ्ग दृष्टिवादका परिचय

हम सत्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कह आये हैं कि बारहवां श्रुतांग दृष्टिवाद श्वेताम्बर मान्यताके अनुसार भी विच्छिन्न होगया, तथा दिगम्बर मान्यतानुसार उसके कुछ अंशोंका

× ' ये तु वदन्ति नमस्कारपाठ एव नार्ष... .. ' इत्यादि । देखो अभिधानराजेन्द्र—णमोकार, पृ. १८३५.

उद्धार षट्खंडागम और कषायप्राभृतमें पाया जाता है। किन्तु शेष भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका संक्षिप्त परिचय दोनों सम्प्रदायोंके साहित्यमें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः लुप्त हुए श्रुतांगके इस परिचयको हम दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत ग्रंथोंके आधारपर यहां तुलनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिखला सकें और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिपूरकताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूलाधार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायांगसूत्र हैं तथा दिग्म्बर सम्प्रदायके धयल और जयधवल ग्रंथ।

धवलमें दृष्टिवादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है—

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूपं निरूप्यते। कौत्कल-क्राणेविद्धि-कौशिक-हरिश्मश्रु-मांड्वपिक-रोमश-हारीत-सुण्ड-अश्वलायनादीनां क्रियावाददृष्टीनामशीतिशतम्, मरीचि-रुपिलोलूक-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाङ्मलि-माठर-मौद्गलायनादीनामक्रियावाददृष्टीनां चतुरशीतिः, शाकल्य-वत्कल-कुथुमि-सात्यमुनि-नारायण-कण्व-माध्यंदिन-मोद-पैपलाद-बादरायण-स्वेष्टकृद्वैतिकायन-वसु-जैमिण्यादीनामज्ञानिकदृष्टीनां सप्तषष्टिः, वशिष्ठ-पाराशर-जतु-कर्ण-वाल्मीकि-रोमहर्षणी-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रोपमन्यवैन्द्रदत्तायस्थूणादीनां वैनथिकदृष्टीनां द्वात्रिंशत्। एषां दृष्टिशतानां त्रयाणां त्रिषष्ट्युत्तराणां प्ररूपणं निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते। (सं. प., पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० क्रियावाद, ८४ अक्रियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वैनथिकवाद, इसप्रकार कुल ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निग्रह अर्थात् खंडन किया गया है। इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओंके जो नाम दिये गये हैं, उनमेंसे अनेक नाम वैदिक धर्मके भिन्न भिन्न साहित्यांगोंसे सम्बद्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, हारीत, वशिष्ठ, पाराशर सुप्रसिद्ध स्मृतिकारोंके नाम हैं। व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण सुविख्यात है, पर धर्मशास्त्रसंबंधी उनका बनाया ग्रंथ नहीं पाया जाता। आश्वलायन श्रौतसूत्र भी प्रसिद्ध है। गर्गका नाम एक ज्योतिषसंहितासे सम्बद्ध है। कण्व ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बंध रखता है। माध्यंदिन एक वैदिक शाखाका नाम है। बादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं। किन्तु शेष अधिकांश नाम बहुत कुछ अपरिचितसे हैं। इन नामोंके साथ उन उन दृष्टियोंका संबंध किन्हीं ग्रंथोंपरसे चला है या उनकी चलाई कोई अलिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है। पर तात्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत-मतान्तरोंका परिचय और विवेक कराया गया था। दृष्टिवादके जो भेद आगे बतलाये गये हैं उनमें सूत्र और पूर्वोंके भीतर ही इन वादोंके परिशीलनकी गुंजाइश दिखाई देती है।

श्वेताम्बर मान्यता
दिष्टिवाद' के ५ भेद
 १ परिकर्म^३
 २ सुत्त
 ३ पुव्वगय
 ४ अणुओग
 ५ चूलिया

दिगम्बर मान्यता
दिष्टिवाद' के ५ भेद
 १ परिकर्म^३
 २ सुत्त
 ३ पढमाणिओग
 ४ पुव्वगय
 ५ चूलिया

दोनों संप्रदायोंमें दृष्टिवादके इन पांच भेदोंके नामोंमें कोई भेद नहीं है, केवल अणियोगकी जगह दिगम्बर नाम पढमाणियोग पाया जाता है। इसका रहस्य आगे बताये हुए प्रभेदोंसे जाना जायगा। दूसरा कुछ अन्तर पुव्वगय और अणियोगके क्रममें है। श्वेताम्बर पुव्वगयको पहले और अणियोगको उसके पश्चात् गिनाते हैं; जब कि दिगम्बर पढमाणियोगको पहले और पुव्वगयको उसके अनन्तर रखते हैं। यह भेद या तो आकस्मिक हो, या दोनों संप्रदायोंके प्राचीन पठनक्रमके भेदका द्योतक हो। दिगम्बरीय क्रमकी सार्थकता आगे पूर्वोक्त विवेचनमें दिखायी जावेगी।

परिकर्मके ७ भेद

१ सिद्धसेणिआ
 २ मणुस्ससेणिआ
 ३ पुट्टसेणिआ
 ४ ओगाढसेणिआ
 ५ उवसंपज्जणसेणिआ
 ६ विप्पजहणसेणिआ
 ७ चुआचुअसेणिआ

परिकर्मके ५ भेद

१ चंदपण्णत्ती
 २ सूरपण्णत्ती
 ३ जंबूदीवपण्णत्ती
 ४ दीवसायरपण्णत्ती
 ५ वियाहपण्णत्ती

१ अथ कोऽयं दृष्टिवादः ? दृष्टयो दर्शनानि, वदनं वादः। दृष्टीनां वादो दृष्टिवादः। अथवा पतनं पातः, दृष्टीनां पातो यत्र स दृष्टिपातः।

(नंदीसूत्र टीका)

२ तत्र परिकर्म नाम योग्यतापादनम्। तद्धेतुः शास्त्रमपि परिकर्म। ××× तथा चोक्तं चूर्णैः-परिकर्मेति योग्यताकरणं। जह गणियस्स सोलस परिकम्मा तग्गाहिय-सुत्तत्थो सेस गणियस्स जोग्गो भवइ, एवं गहियपरिकम्मसुत्तत्थो सेस-सुत्ताह-दिष्टिवायस्स जोग्गो भवइ त्ति। (नंदीसूत्र टीका)

१ दृष्टीनां विषयपुत्तरत्रिशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां वादोऽनुवादः, तच्चिराकरणं च यस्मिन्क्रियते तद् दृष्टिवादं नाम।

(गोम्मटसार टीका)

२ परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तन् परिकर्म।

(गोम्मटसार टीका)

ये परिकर्मके भेद दोनों सम्प्रदायोंमें संख्या और नाम दोनों बातोंमें एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न हैं। सिद्धश्रेणिकादि भेदोंका क्या रहस्य था, यह ज्ञात नहीं रहा। समवायांगके टीकाकार कहते हैं—

‘ एतच्च सर्वं समूलोत्तरभेदं सूत्रार्थतो व्यवच्छिन्नं ’

अर्थात् यह सब परिकर्मशास्त्र अपने मूल और (आगे बतलाये जानेवाले) उत्तर भेदोंसहित सूत्र और अर्थ दोनों प्रकारसे नष्ट होगया। किन्तु सूत्रकार व टीकाकारने इन सात भेदोंके सम्बन्धमें कुछ बातें ऐसी बतलायीं हैं जो बड़ी महत्वपूर्ण हैं। परिकर्मके सात भेदोंके सम्बन्धमें वे लिखते हैं—

इच्छेयाइं छ परिकर्माइं ससमइयाइं, सत्त आजीवियाइं; छ चउक-णइयाइं, सत्त तेरासियाइं
। (समवायांगसूत्र)

एतेषां च परिकर्मणां षट् आदिमानि परिकर्माणि स्वसामयिकान्येव । गोशालक-प्रवर्तित्वाजीविक-पाखण्डिक-सिद्धान्तमतेन पुनः च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्मसहितानि सप्त प्रज्ञाप्यन्ते । इदानीं परिकर्मसु नय-चिन्ता । तत्र नैगमो द्विविधः सांग्राहिकोऽसांग्राहिकश्च । तत्र सांग्राहिकः संग्रहं प्रविष्टोऽसांग्राहिकश्च व्यवहारम् । तस्मात्संग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्रः शब्दादयश्चैक एवेत्येवं चत्वारो नयाः । एतैश्चतुर्भिर्नयैः षट् स्वसामयिकानि परिकर्माणि चिन्त्यन्ते, अतो भणितं ‘ छ चउक-नयाइं ’ ति भवन्ति । त एव चाजीविकात्रैराशिका भणिताः । कस्माद् ? उच्यते, यस्मात्ते सर्वं आत्मकमिच्छन्ति, यथा जीवोऽजीवो जीवाजीवः, लोकोऽलोको लोकालोकः, सत् असत् सदसत् इत्येवमादि । नयचिन्तायामपि ते त्रिविधं नयमिच्छन्ति । तद्यथा द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः उभयार्थिकः । अतो भणितं ‘सत्त तेरासिय’ च्छि । सप्त परिकर्माणि त्रैराशिकपाखण्डिकास्त्रिविधया नयचिन्तया चिन्तयन्तीत्यर्थः । (समवायांग टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि परिकर्मके जो सात भेद ऊपर गिनाये गये हैं उनमेंसे प्रथम छ भेद तो स्वसमय अर्थात् अपने सिद्धान्तके अनुसार हैं, और सातवां भेद आजीविक सम्प्रदायकी मान्यताके अनुसार है। जैनियोंके सात नयोंमेंसे प्रथम अर्थात् नैगम नयका तो संग्रह और व्यवहारमें अन्तर्भाव हो जाता है, तथा अन्तिम दो अर्थात् समभिरूढ़ और एवंभूत शब्दनयमें प्रविष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार मुख्यतासे उनके चार ही नय रहते हैं, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र और शब्द। इस अपेक्षासे जैनी चउकणइक अर्थात् चतुष्कनयिक कहलाते हैं। आजीविक सम्प्रदायवाले सब वस्तुओंको त्रि-आत्मक मानते हैं, जैसे जीव, अजीव और जीवाजीव; लोक, अलोक और लोकालोक; सत्, असत् और सदसत्, इत्यादि। नयका चिन्तन भी वे तीन प्रकारसे करते हैं—द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक और उभयार्थिक। अतः आजीविक तेरासिय अर्थात् त्रैराशिक भी कहलाते हैं। उन्हींकी मान्यतानुसार परिकर्मका सातवां भेद ‘ चुआचुअसेणिआ ’ जोड़ा गया है।

इस सूचनासे जैन और आजीविक सम्प्रदायोंके परस्पर सम्पर्कपर बहुत प्रकाश पड़ता है। मंखलिगोशाल महावीरस्वामी व बुद्धदेवके समसामयिक धर्मोपदेशक थे। उनके द्वारा स्थापित

आजीविक सम्प्रदायके बहुत उल्लेख प्राचीन बौद्ध और जैन ग्रंथोंमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत सूचना पर से जाना जाता है कि उनका शास्त्र और सिद्धान्त जैनियोंके शास्त्र और सिद्धान्तके बहुत ही निकटवर्ती था, केवल कुछ कुछ भेद-प्रभेदों और दृष्टिकोणोंमें अन्तर था। भूमिका जैनियों और आजीविकोंकी प्रायः एक ही थी। आगे चलकर, जान पड़ता है, जैनियोंने आजीविकोंकी मान्यताओं को अपने शास्त्रमें भी संग्रह कर लिया और इसप्रकार धीरे धीरे समस्त आजीविक पंथका अपने ही समाजमें अन्तर्भाव कर लिया। ऊपरकी सूचनामें यद्यपि टीकाकारने आजीविकोंको पाखंडी कहा है, पर उनकी मान्यताको वे अपने शास्त्रमें स्वीकार कर रहे हैं।

परिकर्मके पूर्वोक्त सात भेद दिग्म्बर मान्यतामें नहीं पाये जाते। पर इस मान्यताके जो पांच भेद चंद्रपण्णत्ति आदि हैं, उनमें से प्रथम तीन तो श्वेताम्बर आगमके उपांगोंमें गिनाये हुए मिलते हैं, तथा चौथा दीवसायरपण्णत्ती व जंबूदीवपण्णत्ती और चंद्रपण्णत्तीके नाम नंदीसूत्रमें अंगवाह्य श्रुतके आवश्यकव्यतिरिक्त भेदके अन्तर्गत पाये जाते हैं। किन्तु पांचवां भेद वियाहपण्णत्तिका नाम पांचवें श्रुतांगके अतिरिक्त और नहीं पाया जाता।

सिद्धसेणिया परिकम्मके १४ उपभेद

१. माउगापयाइं
२. एगट्टिअपयाइं
३. अट्ट या पादोट्ट'पयाइं
४. पाटोआमास या आगास' पयाइं
५. केउभूअं
६. रासिवद्धं
७. एमगुणं
८. दुगुणं
९. तिगुणं
१०. केउभूअं
११. पडिग्गहो
१२. संसारपडिग्गहो
१३. नंदावत्तं
१४. सिद्धावत्तं

मणुस्ससेणिया परिकम्मके भी १४ भेद हैं जिनमें प्रथम १३ भेद उपर्युक्त ही हैं। १४

१. चंद्रपण्णत्ती— छत्तीसलकखपंचपदसहस्सेहि (३६०५०००) चंदायु—परिवारिद्धि—गइ—बिंबुस्सेह—वण्णणं कुणइ।
२. सूरपण्णत्ती—पंचलकखतिणिसहस्सेहि पदेहि (५०३०००) सूरसायु—भोगोव—भोग—परिवारिद्धि—गइ—बिंबुस्सेह—दिणकिर—णुज्जोव—वण्णणं कुणइ।
३. जंबूदीवपण्णत्ती—तिणिलकखपंचवीस—पदसहस्सेहि (३२५०००) जंबूदीवे णाणाविहमणुयाणं भोग—कम्मभूमियाणं अण्णेसि च पव्वद—दह—णइ—वेइयाणं वस्सावासाकट्टिमजिणहरादीणं वण्णणं कुणइ।
४. दीवसायरपण्णत्ती—वावण्णलकखछत्तीस—पदसहस्सेहि (५२३६०००) उद्धार—

१. ये पाठभेद नंदीसूत्र और समवायांगके हैं।

वां भेद ' मणुस्सावत्तं ' नामका है ।

पुट्टसेणिआदि शेष पांच परिकर्मोंमें प्रत्येक के ११ उपभेद हैं जो प्रथम तीनको छोड़ कर शेष पूर्वोक्तही हैं । अन्तिम भेदके स्थानमें स्वनामसूचक भेद है, जैसे पुट्टावत्तं, ओगाद्वावत्तं, उवसंपज्जणावत्तं, विप्पजहणावत्तं और चुआचुआवत्तं । इसप्रकार ये सब मिलकर ८३ प्रभेद होते हैं ।

परिकर्मके इन माउगापयाइ आदि उपभेदोंका कोई विवरण हमें उपलब्ध नहीं है । किन्तु मातृकापदसे जान पड़ता है उसमें लिपि विज्ञानका विवरण था । इसीप्रकार अन्य भेदोंमें शिक्षाके मूलविषय गणित, न्याय आदिका विवरण रहा जान पड़ता है ।

सुत्तके ८८ भेद

१. उज्जुसुयं या उजुगं
२. परिणयापरिणयं
३. बहुभंगिअं
४. विजयचरियं, विप्पचइयं या विनयचरियं
५. अणंतरं
६. परंपरं
७. मासाणं (समाणं-स. अं.)
८. संजूहं (मासाणं- ,,)
९. संभिण्णं
१०. आहव्वायं (अहाच्चायं-स. अं.)
११. सोवत्थिअवत्तं
१२. नंदावत्तं
१३. बहुलं
१४. पुट्टापुट्टं
१५. विआवत्तं

पल्लपमाणेण दीवसायरपमाणं अण्णं पि दीवसायरंतम्भूदत्थं बहुभेयं वण्णेदि ।

५. **वियाहपण्णत्ती**— चउरासीदिलक्खत्तीस-पदसहस्सेहि (८४३६०००) रूवि—अजीवदव्वं अरूवि-अजीवदव्वं भवसिद्धिय-अभवसिद्धियरासि च वण्णेदि ।

सुत्तके अन्तर्गत विषय

सुत्तं अट्टासीदिलक्खपदेहि (८८०००००) अबंधओ, अवलेवओ, अकत्ता, अभोत्ता, णिग्गुणो, सब्वगओ, अणुमेत्तो, णत्थि जीवो, जीवो चेव अत्थि, पुट्टवियादीणं समुदएण जीवो उप्पज्जइ, णिच्चेयणो, णाणेण विणा, सचेयणो, णिच्चो, अणिच्चो अप्पेत्ति वण्णेदि । तेरासियं, णियदिवादं, विण्णाणवादं, सइवादं, पहाणवादं, दव्व-वादं, पुरिसवादं च वण्णेदि । उत्तं च—

अट्टासी अहियोरेसु चउण्हमहियाराणमत्थि णिइसो । पढमो अबंधयाणं, विदियो तेरासियाण बोद्धव्वो ॥ तदियो य णियइपक्खे हवइ चउत्थो ससमयम्मि । (धवला सं. प., पृ. ११०)

१. सिद्धसेणिकादिपरिकर्म मूलभेदतः सप्तविधं, उत्तरभेदतस्तु त्र्यशीतिविधं मातृकापदादि ।

(समवायांग टीका).

- | | |
|------------------------------|--|
| १६. एवंभूअं | सुत्ते अट्ठासीदि अत्थाहियारा, ण तेसिं |
| १७. दुयावत्तं | णामाणि जाणिज्जंति, संपहि विसिद्धुवएसा- |
| १८. वत्तमाणप्पयं | भावादो (जयधवल) |
| १९. समभिरूढं | |
| २०. सव्वओभइं | |
| २१. पस्सासं (पणामं-स. अं.) | |
| २२. दुप्पडिग्गहं | |

ये ही २२ सूत्र चार प्रकारसे प्ररूपित हैं—

- १ छिण्णछेअ-णइयाणि
- २ अछिण्णछेअ-णइयाणि
- ३ तिक-णइयाणि
- ४ चउक्क-णइयाणि

इसप्रकार सूत्रोंकी संख्या $२२ \times ४ = ८८$

हो जाती है ।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें सूत्रके मुख्य भेद बावीस हैं । उनके अठ्ठासी भेदोंकी सूचना समवार्थागमें इस प्रकार दी गई है—

इच्छेयाइं वावीसं सुत्ताइं छिण्णछेअणइयाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए, इच्छेआइं वावीसं सुत्ताइं अछिण्णछेयनइयाइं आजीवियसुत्तपरिवाडीए । इच्छेआइं वावीसं सुत्ताइं तिक-णइयाइं तेरासियसुत्तपरिवाडीए, इच्छेआइं वावीसं सुत्ताइं चउक्कणइयाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए । एवमेव सपुन्वावरेणं अट्ठासीदि सुत्ताइं भवन्तीति मन्थयाइं ।

यहां जिन चार नयोंकी अपेक्षासे वावीस सूत्रोंके अठ्ठासी भेद हो जाते हैं, उनका स्पष्टीकरण टीकामें इसप्रकार पाया जाता है—

एतानि किल ऋजुकादीनि द्वाविंशतिः सूत्राणि, तान्येव विभागतोऽष्टाशीतिर्भवन्ति । कथम् ? उच्यते— ' इच्छेयाइं वावीसं सुत्ताइं छिण्णछेयनइयाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए ' इति । इह यो नयः सूत्रं छिन्नं छेदेनेच्छति स छिन्नच्छेदनयो, यथा ' धम्मो मंगलमुक्किट्टं ' इत्यादि श्लोकः सूत्रार्थतः प्रत्येकछेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकमपेक्षते, प्रत्येककल्पितपर्यन्त इत्यर्थः । एतान्येव द्वाविंशतिः स्वसमयसूत्रपरिपाठ्या सूत्राणि स्थितानि । तथा इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि अछिण्णच्छेदनयिकान्याजीविकसूत्रपरिपाठ्येति, अयमर्थः — इह यो नयः सूत्रमच्छिन्नं छेदेनेच्छति सोऽछिण्णच्छेदनयो यथा, ' धम्मो मंगलमुक्किट्टं, ' इत्यादि श्लोक एवार्थतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमाणो द्वितीयादयश्च प्रथममिति अन्योऽन्यसापेक्षा इत्यर्थः । एतानि द्वाविंशतिराजीविकगोशालकप्रवर्तितपाखंडसूत्रपरिपाठ्या अक्षररचनाविभागस्थितान्यप्यर्थतोऽन्योन्यमपेक्षमाणानि भवन्ति । ' इच्छेयाइं ' इत्यादिसूत्रम् । तत्र तिकणइयाइं ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिन्त्यन्त इत्यर्थ-सैराशिकाश्चाजीविका एवोच्यन्ते इति । तथा ' इच्छेयाइं ' इत्यादिसूत्रं । तत्र ' चउक्कणइयाइं ' ति

नयचतुष्काभिप्रायताश्चिन्त्यन्त इति भावना, एवमेवेत्यादिसूत्रम् । एवं चतस्रो द्वाविंशत्योऽष्टाशीतिः सूत्राणि भवन्ति ।

इस विवरणसे ज्ञात होता है कि उपर्युक्त बावीस सूत्रोंका चार प्रकारसे अध्ययन या व्याख्यान किया जाता था । प्रथम परिपाटी छिन्नछेदनय कहलाती थी जिसमें सूत्रगत एक एक वाक्य, पद या श्लोकका स्वतंत्रतासे पूर्वापर अपेक्षारहित अर्थ लगाया जाता था । यह परिपाटी स्वसमय अर्थात् जैनियोंमें प्रचलित थी । दूसरी परिपाटी अछिन्नछेदनय थी जिसके अनुसार प्रत्येक वाक्य, पद या श्लोकका अर्थ आगे पीछेके वाक्योंसे संबंध लगाकर बैठाय़ा जाता था । यह परिपाटी आजीविक सम्प्रदायमें चलती थी । तीसरा प्रकार त्रिकनय कहलाता था जिसमें द्रव्यार्थिक, पर्यायाधिक और उभयार्थिक व जीव, अजीव और जीवाजीव आदि उपर्युक्त त्रि-आत्मक व त्रिनय रूपसे वस्तुस्वरूपका चिन्तन किया जाता था । पूर्वोक्तानुसार यह परिपाटी आजीवकोंकी थी । तथा जो वस्तुचिन्तन पूर्वकथित चार नयोंकी अपेक्षासे चलता था वह चतुर्नय परिपाटी कहलाती थी और वह जैनियों की चीज़ थी । इस प्रकार निरपेक्ष शब्दार्थ और चतुर्नय चिन्तन, ये दो परिपाटियाँ जैनियोंकी और सापेक्ष शब्दार्थ तथा त्रिकनय चिन्तन, ये दो परिपाटियाँ आजीविकोंकी मिलकर बावीस सूत्रोंके अठ्ठासी भेद कर देती थीं । आजीविक ज्ञानशैलीको जैनियोंने किसप्रकार अपने ज्ञानभंडारमें अन्तर्भूत कर लिया यह यहां भी प्रकट हो रहा है ।

दिगम्बर सम्प्रदायमें सूत्रोंके भीतर प्रथम जीवका नाना दृष्टियोंसे अध्ययन और फिर दूसरे अनेक वादोंका अध्ययन किया जाता था, ऐसा कहा गया है । इन वादों में तेरासिय मतका उल्लेख सर्व प्रथम है जिससे तात्पर्य त्रैराशिक-आजीविक सिद्धान्तसे ही है, जो जैन सिद्धान्तके सबसे अधिक निकट होनेके कारण अपने सिद्धान्तके पश्चात् ही पढ़ा जाता था । धबलामें सूत्रके ८८ अधिकारोंका उल्लेख है जिनमेंसे केवल चारके नाम दिये हैं । जयधबलामें स्पष्ट कह दिया है कि उन ८८ अधिकारोंके अब नामोंका भी उपदेश नहीं पाया जाता । किन्तु जो कुछ वर्णन दिगम्बर सम्प्रदायमें शेष रहा है उसमें विशेषता यह है कि वह उन लुप्त ग्रंथोंके विषयपर बहुत कुछ प्रकाश डालता है; श्वेताम्बर श्रुतमें केवल अधिकारोंके नाममात्र शेष हैं जिनसे प्रायः अब उनके विषयका अंदाज लगाना भी कठिन है ।

पुण्ड्रगयके १४ भेद तथा उनके अन्तर्गत
वत्थू और चूलिका

१. उप्पायं (१० वत्थू + ४ चूलिका)
२. अग्गाणीयं (१४ वत्थू + १२ चूलिका)
३. वीरिअं (८ " + ८ ")
४. अत्थिणात्थिप्पवायं (१८ + १०)

पुण्ड्रगयके १४ भेद तथा उनके
अन्तर्गत वत्थू

१. उप्पाद (१० वत्थू)
२. अग्गोणियं (१४ वत्थू)
३. वीरियाणुपवादं (८ ")
४. अत्थिणत्थिपवादं (१८ ")

५. नाणप्पवायं (१२ वत्थू)	५. णाणपवादं (१२ वत्थू)
६. सच्चप्पवायं (२ ,,)	६. सच्चपवादं (१२ ,,)
७. आयप्पवायं (१६ ,,)	७. आदपवादं (१६ ,,)
८. कम्मप्पवायं (३० ,,)	८. कम्मपवादं (२० ,,)
९. पच्चक्खाणप्पवायं (२० ,,)	९. पच्चक्खाणं (३० ,,)
१०. विज्जाणुप्पवायं (१५ ,,)	१०. विज्जाणुवादं (१५ ,,)
११. अवञ्जं (१२ ,,)	११. कल्लाणवादं (१० ,,)
१२. पाणाऊ (१३ ,,)	१२. पाणावायं (१० ,,)
१३. किरिआविसालं (३० ,,)	१३. किरियाविसालं (१० ,,)
१४. लोकविंदुसारं (२५ ,,)	१४. लोकविंदुसारं (१० ,,)

दृष्टिवादके इस विभागका नाम पूर्व क्यों पड़ा, इसका समाधान समवायांग व नन्दीसूत्रकी टीकाओंमें इसप्रकार किया गया है—

अथ किं तत् पूर्वगतं ? उच्यते । यस्मात्तर्थाकरः तीर्थप्रवर्तनाकाले गणधराणां सर्वसूत्राधारत्वेन पूर्व पूर्वगतं सूत्रार्थं भाषते तस्मात् पूर्वाणीति भणितानि । गणधराः पुनः श्रुतरचनां विदधाना आचारादिक्रमेण रचयन्ति स्थापयन्ति च । मतान्तरेण तु पूर्वगतसूत्रार्थः पूर्वमर्हता भाषितो गणधरैरपि पूर्वगतश्रुतमेव पूर्व रचितं, पश्चादाचारादि । नन्वेवं यदाचारनिर्युक्त्यामभिहितं ' सब्बोसिं आयारो पढमो ' इत्यादि, तत्कथम् ? उच्यते । तत्र स्थापनामाश्रित्य तथोक्तमिह स्वक्षररचनां प्रतीत्य भणितं पूर्व पूर्वाणि कृतानीति ।

(समवायांग टीका)

इसका तात्पर्य यह है कि तीर्थप्रवर्तनके समय तीर्थकर अपने गणधरोंको सबसे प्रथम पूर्वगत सूत्रार्थका ही व्याख्यान करते हैं, इससे इन्हें पूर्वगत कहा जाता है । किन्तु गणधर जब श्रुतकी ग्रंथरचना करते हैं तब वे आचारादिक्रमसे ही उनकी रचना व व्यवस्था करते हैं, और इसी स्थापनाकी दृष्टिसे आचारांगकी निर्युक्तिमें यह बात कही गई है कि सब श्रुतांगोंमें आचारांग प्रथम है । यथार्थतः अक्षररचनाकी दृष्टिसे पूर्व ही पहले बनाये गये ।

एक आधुनिक मत* यह भी है कि पूर्वोंमें महावीरस्वामीसे पूर्व और उनके समयमें प्रचलित मत—मतान्तरोंका वर्णन किया गया था, इस कारण वे पूर्व कहलाये ।

चाँदह पूर्वोंके नामोंमें दोनों सम्प्रदायोंमें कोई विशेष भेद नहीं है, केवल ग्यारहवें पूर्वको श्वेताम्बर ' अवञ्जं ' कहते हैं और दिगम्बर ' कल्लाणवाद ' । अवञ्जंका जो अर्थ टीकाकारने अवध्य अर्थात् ' सफल ' बतलाया है वह ' कल्याण ' के शब्दार्थके निकट पहुंच जाता है, इससे संभवतः वह उनके विषयभेदका द्योतक नहीं है । छठवें, आठवें, नवमें और ग्यारहसे चौदहवें तक इस

* डॉ. जैकोबी; कल्पसूत्रभूमिका.

प्रकार सात पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओंकी संख्यामें दोनों सम्प्रदायोंमें मतभेद है । शेष सात पूर्वोंकी वस्तु-संख्यामें कोई भेद नहीं है । श्रेताम्बर मान्यतामें प्रथम चार पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओंके अतिरिक्त चूलिकाओंकी संख्या भी दी गई है, और दृष्टिवादके पंचमभेद चूलिकाके वर्णनमें कहा है कि वहां उन्हीं चार पूर्वोंकी चूलिकाओंसे अभिप्राय है । यदि ये चूलिकाएं पूर्वोंके अन्तर्गत थीं, तो यह समझमें नहीं आता कि उनका फिर एक स्वतंत्र विभाग क्यों रखा गया । दिगम्बरीय मान्यतामें पूर्वोंके भीतर कोई चूलिकाएं नहीं गिनायी गईं और चूलिका विभागके भीतर जो पांच चूलिकाएं बतलायी हैं उनका प्रथम चार पूर्वोंसे कोई संबंध भी ज्ञात नहीं होता ।

समवायांग और नन्दीसूत्रमें पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओं और चूलिकाओंकी संख्या-सूचक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती हैं—

दस चोद्दस अट्टद्वारसेव वारस दुवे य वत्थूणि ।
 सोलस तीसा बीसा पण्णरस अणुप्पचार्यमि ॥ १ ॥
 बारस पुक्कारसमे बारसमे तेरसेव वत्थूणि ।
 तीसा पुण तेरसमे चउदसमे पन्नवीसाओ ॥ २ ॥
 चत्तारि दुवालस अट्ट चेव दस चेव चूलवत्थूणि ।
 आइल्लाण चउण्हं सेसाणं चूलिया णत्थि ॥ ३ ॥

धवलामें (वेदनाखंडके आदिमें) पूर्वोंके अन्तर्गत वस्तुओं और वस्तुओंके अन्तर्गत पाहुडोंकी संख्याकी द्योतक निम्न तीन गाथाएं पाई जाती हैं—

दस चोद्दस अट्टारस (अट्टद्वारस) वारस य दोसु पुव्वेसु ।
 सोलस बीसं तीसं दसमंमि य पण्णरस वत्थू ॥ १ ॥
 पुद्देसिं पुव्ववाणं एवदिओ वत्थुसंगहो भणिदो ।
 सेसाणं पुव्ववाणं दस दस वत्थू पणित्रयामि ॥ २ ॥
 एक्केक्कम्हि य वत्थू बीसं बीसं च पाहुडा भणिदा ।
 विसम-समा हि य वत्थू सब्बे पुण पाहुडेहि समा ॥ ३ ॥

इनके अंक भी धवलामें दिये हुए हैं जिन्हें हम निम्न तालिकाद्वारा अच्छीतरह प्रकट कर सकते हैं ।

पूर्व	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	कुल
वत्थू	१०	१४	८	१८	१२	१२	१६	२०	३०	१५	१०	१०	१०	१०	१९५
पाहुड	२००	२८०	१६०	३६०	२४०	२४०	३२०	४००	६००	३००	२००	२००	२००	२००	३९००

सव्व-वत्थु-समासो पंचाणउदिसदमेत्तो १९५ ।

सव्व-पाहुड-समासो ति-सहस-णव-सद-मेत्तो ३९०० ।

जयधवलामें यह भी बतलाया गया है कि एक एक पाहुडके अन्तर्गत पुनः चौबीस चौबीस अनुयोगद्वार थे । यथा—

एदेसु अत्थाहियारेसु एक्केकस्स अत्थाहियारस्स वा पाहुडसण्णिदा वीस वीस अत्थाहियारा । तेलिं पि अत्थाहियाराणं एक्केकस्स अत्थाहियारस्स चउवीसं चउवीसं अणिभोगद्वाराणि सण्णिदा अत्थाहियारा ।

इससे स्पष्ट है कि पूर्वोक्त अन्तर्गत वस्तु अधिकार थे, जिनकी संख्या किसी विशेष नियमसे नहीं निश्चित थी । किन्तु प्रत्येक वस्तुके अवान्तर अधिकार पाहुड कहलाते थे और उनकी संख्या प्रत्येक वस्तुके भीतर नियमतः बीस बीस रहती थी और फिर एक एक पाहुडके भीतर चौबीस चौबीस अनुयोगद्वार थे । यह विभाग अब हमारे लिये केवल पूर्वोक्ती विशालता मात्रका द्योतक है क्योंकि उन वस्तुओं और उनके अन्तर्गत पाहुडोंके अब नाम तक भी उपलब्ध नहीं हैं । पर इन्हीं ३९०० पाहुडोंमेंसे केवल दो पाहुडोंका उद्धार पट्खंडागम और कसायपाहुड (धवला और जयधवला) में पाया जाता है जैसा कि आगे चलकर बतलाया जायगा । उनसे और उनकी उपलब्ध टीकाओंसे इस साहित्यकी रचनाशैली व कथनोपकथन पद्धतिका बहुत कुछ परिचय मिलता है ।

चौदह पूर्वोक्ता विषय व परिमाण

- १ उप्पादपुव्वं—तत्र च सर्वद्रव्याणां पर्यन्नाणां चोत्पादभावमंगीकृत्य प्रज्ञापना कृता ।
(१०००००००)
- २ अग्गेणीयं—तत्रापि सर्वेषां द्रव्याणां पर्य-
वाणां जीवविशेषाणां चाग्रं परिमाणं वर्ण्यते ।
(९६००००००)
- ३ वीरियं—तत्राप्यजीवानां जीवानां च सकर्मे-
तराणां वीर्यं प्रोच्यते । (७०००००००)
- ४ अत्थिणत्थिपवादं—यद्यल्लोके यथास्ति यथा
वा नास्ति, अथवा स्याद्वादाभिप्रायतः तदे-
वास्ति तदेव नास्तीत्येवं प्रवदति ।
(६०००००००)
- ५ गाणपवादं—तस्मिन् मतिज्ञानादिपंचकस्य
भेदप्ररूपणा यस्मात्कृता तस्मात् ज्ञानप्रवादं ।
(९९९९९९९९)

चौदह पूर्वोक्ता विषय व पदसंख्या

- १ उप्पादपुव्वं जीव-काल-पोग्गलणमुप्पाद-
वय-धुवत्तं वण्णेइ । (१०००००००)
- २ अग्गेणियं अंगाणमग्गं वण्णेइ । अंगाणमग्गं-
पदं वण्णेदि ति अग्गेणियं गुणणामं ।
(९६००००००)
- ३ वीरियाणुपवादं अप्पविरियं परविरियं उम-
यविरियं खेत्तविरियं भवविरियं तवविरियं
वण्णेइ । (७०००००००)
- ४ अत्थिणत्थिपवादं जीवाजीवाणं अत्थि-
णत्थित्तं वण्णेदि । (६०००००००)
- ५ गाणपवादं पंच गाणाणि तिग्णि अण्णा-
णाणि वण्णेदि । (९९९९९९९९)

- ६ सच्चपवादं—सत्यं संयमं सत्यवचनं वा तद्यत्र सभेदं सप्रतिपक्षं च वर्ण्यते तत्सत्य-प्रवादम् । (१००००००६)
- ७ आदपवादं—आत्मा अनेकधा यत्र नयदर्शनै-वर्ण्यते तदात्मप्रवादं । (२६०००००००)
- ८ कम्मपवादं—ज्ञानावरणादिकमष्टविधं कर्म प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशादिभिर्भेदैरन्यैश्चोत्तरो-त्तरभेदैर्यत्र वर्ण्यते तत्कर्मप्रवादम् । (१८००००००)
- ९ पञ्चकखाणं—तत्र सर्वं प्रत्याख्यानस्वरूपं वर्ण्यते । (८४००००००)
- १० विज्ञाणुवादं—तत्रानेके विधातिशया वर्णिताः । (११०००००००)
- ११ अवंज्झं—वन्ध्यं नाम निष्फलम्, न वन्ध्यम-वन्ध्यं सफलमित्यर्थः । तत्र हि सर्वे ज्ञानतपः-संयमयोगाः श्लुभफलेन सफला वर्ण्यन्ते, अप्रशस्ताश्च प्रमादादिकाः सर्वे अश्लुभफला वर्ण्यन्ते, अतोऽवन्ध्यम् । (२६००००००००)
- १२ पाणावायं—तत्राप्यायुःप्राणविधानं सर्वं सभेदमन्ये च प्राणा वर्णिताः । (१५६००००००)
- ६ सच्चपवादं—वाग्गुतिः वाक्संस्कारकारण-प्रयोगो द्वादशधा भाषावक्तारश्च अनेक-प्रकारं मृषाभिधानं दशप्रकारश्च सत्य-सद्भावो यत्र निरूपितस्तत्सत्यप्रवादम् । (१०००००००६)
- ७ आदपवादं आदं वर्णेदि वेदेत्ति वा विण्हु-त्ति वा भोत्तेत्ति वा बुद्धेत्ति वा इच्छादिसख-वेण । (२६००००००००)
- ८ कम्मपवादं अट्टविहं कम्मं वर्णेदि । (१८०००००००)
- ९ पञ्चकखाणं दब्ब—भाव—परिमियापरिमिय-पञ्चकखाणं उववासविहिं पंच समिदीओ तिण्णि गुत्तीओ च परूवेदि । (८४०००००००)
- १० विज्ञाणुवादं अंगुष्ठप्रसेनादीनां अल्पविद्यानां सप्तशतानि रोहिण्यादीनां महाविद्यानां पञ्च-शतानि अन्तरिक्ष--भौमाङ्गस्वर-स्वप्न-लक्षण-व्यंजनछिन्नान्यद्यै महानिमित्तानि च कथयति । (११००००००००)
- ११ कल्याणं रवि—शशि—नक्षत्र—तारागणानां चारोपपाद—गति—विपर्ययफलानि शकुन-व्याहृतमर्हद्वलदेव—वासुदेव—चक्रधरादीनां गर्भावतरणादिमहाकल्याणानि च कथयति । (२६००००००००)
- १२ पाणावायं कायचिकित्साद्यष्टांगमायुर्वेदं भूतिकर्म जांगुलिप्रक्रमं प्राणापानविभागं च विस्तरेण कथयति । (१३००००००००)

१३ किरियाविसालं-तत्र कायिक्यादयःक्रिया विशालं त्ति सभेदाः संयमक्रिया छन्दक्रिया-विधानानि च वर्णयन्ते ।

(९०००००००)

१४ लोकविंदुसारं-तच्चास्मिन् लोके श्रुतलोके वा विन्दुरिवाक्षरस्य सर्वोत्तममिति, सर्वाक्षर-सन्निपातप्रतिष्ठितत्वेन च लोकविन्दुसारं भणितम् ।

(१२५००००००)

१३ किरियाविसालं लेखादिकाः द्वासप्ततिकलाः क्षेत्रांश्चतुःषष्टिगुणान् शिल्पानि कान्यगुण-दोषक्रियां छन्दोविचितिक्रियां च कथयति ।

(९०००००००)

१४ लोकविंदुसारं अष्टौ व्यवहारान् चत्वारि बीजानि मोक्षगमनक्रियाः मोक्षसुखं च कथयति ।

(१२५००००००)

पूर्वोके अन्तर्गत विषयोंकी सूचना समवायांग व नन्दीसूत्रोंमें नहीं पायी जाती, वहाँ केवल नाम ही दिये गये हैं। विषयकी सूचना उनकी टीकाओंमें पायी जाती है। उपर्युक्त श्वेताम्बर मान्यताका विषय समवायांग टीकासे दिया गया है। उस परसे ऐसा ज्ञात होता है कि वहाँ विषयका अंदाज बहुत कुछ नामकी व्युत्पत्ति द्वारा लगाया गया है। ध्वलान्तर्गत विषय-सूचना कुछ विशेष है। पर विषयनिर्देशमें शब्दभेदको छोड़ कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है। अवन्ध्य और कल्याणवादमें जो नामभेद है, उसीप्रकार विषयसूचनामें भी कुछ विशेष है। ध्वलामें उसके अन्तर्गत फलित ज्योतिष और शकुनशास्त्रका स्पष्ट उल्लेख है जो अवन्ध्यके विषयमें नहीं पाया जाता। उसी प्रकार बारहवें प्राणावायु पूर्वके भीतर ध्वलामें कायचिकित्सादि अष्टांगायुर्वेदकी सूचना स्पष्ट दी गई है, वैसी समवायांग टीकामें नहीं पायी जाती। वहाँ केवल 'आयुषाणविधान' कहकर छोड़ दिया गया है। तेरहवें क्रियाविशालमें भी ध्वलामें स्पष्ट कहा है कि उसके अन्तर्गत लेखादि बहत्तर कलाओं, चौसठ खी कलाओं और शिल्पोंका भी वर्णन है। यह समवायांग टीकामें नहीं पाया जाता।

पदप्रमाण दोनों मान्यताओंमें तेरह पूर्वोका तो ठीक एकसा ही पाया जाता है, केवल बारहवें पूर्व पाणावायुकी पदसंख्या दोनोंमें भिन्न पाई जाती है। ध्वलके अनुसार उसका पदप्रमाण तेरह कोटि है जब कि समवायांग और नन्दीसूत्रकी टीकाओंमें एक कोटि छप्पन लाख (एक कोटी षट्पञ्चाशच्च पदलक्षाणि) पाया जाता है।

प्रथम नौ पूर्वोका विषय तो अध्यात्मविद्या और नीति-सदाचारसे संबंध रखता है किन्तु आगेके विद्यानुवादादि पांच पूर्वोंमें मंत्रतंत्र व कला कौशल शिल्प आदि लौकिक विद्याओंका वर्णन था, ऐसा प्रतीत होता है। इसी विशेष भेदको लेकर दशपूर्वी और चौदहपूर्वी का अलग अलग उल्लेख पाया जाता है। ध्वलके वेदनाखंडके आदिमें जो मंगलाचरण है वह स्वयं इन्द्रभूति गौतम गणधरकृत और महाकम्मपयडिपाड्डके आदिमें उनके द्वारा निबद्ध कहा गया है। वहाँसे

उठाकर उसे भूतबलि आचार्यने जैसाका तैसा वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, ऐसी ध्वलाकारकी सूचना है। इस मंगलाचरणमें ४४ नमस्कारात्मक सूत्र या पद हैं। इनमें बारहवें और तेरहवें सूत्रोंमें क्रमसे दशपूर्वियों और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया गया है, जिसके रहस्यका उद्घाटन ध्वलाकारने इसप्रकार किया है—

णमो दसपुत्रिव्याणं ॥ १२ ॥

एथ दसपुत्रिव्याणो भिण्णाभिण्णभेएण दुविहा होंति । तथ एवकारसंगाणि पादिकुण पुणो परियम्म-
सुत्तपढमाणियोगपुव्वरायचूलिया ति पंचहियारणिबद्धेदिट्ठिवादे पढिज्जाणे उप्पायपुव्वमादिं कादूण पढंताणं
दसपुव्वीविज्जापवादे समत्ते रोहिणी-भादिपंचसयमहाविज्जाई अंगुट्टपसेणादिसत्तलयदहरविज्जाहि अणुगयाओ
किं भयवं आणवेवत्ति दुक्कंति । एवं दुक्कणं सच्चविज्जाणं जो लोभो गच्छदि सो भिण्णदसपुव्वी । जो पुण
ण तासु लोभं करेदि कम्मवत्थयत्थी होंतो सो अभिण्णदसपुव्वी णाम । तथ अभिण्णदसपुव्वीजिणाणं णमो-
कारं करेमि ति उत्तं होदि । भिण्णदसपुव्वीणं कथं पढिणिविती ? जिणसद्दाणुववत्तीदो, ण च तेसिं जिणत्तमत्थि,
भग्गमहव्वएसु जिणत्ताणुववत्तीदो ।

णमो चोदसपुत्रिव्याणं ॥ १३ ॥

जिणाणमिदि एथाणुवट्ठे । सयलसुदणणधारिणो चोदसपुत्रिव्याणो, तेसिं चोदसपुव्वीणं जिणाणं णमो
इदि उत्तं होदि । सेसहेट्ठिमपुव्वीणं णमोकारो किण्ण कर्हो ? ण, तेसिं पि कदो चव तेहिं विणा चोदसपुव्वा-
णुववत्तीदो । चोदसपुव्वस्सेव णामणिहेसं कादूण किमट्ठं णमोकारो कीरदे ? विज्जाणुपवादसस समत्तीए इव
चोदसपुव्वसमत्तीए वि जिणवयणपच्चयदंसणादो । चोदसपुव्वसमत्तीए को पच्चओ ? चोदसपुव्वाणि समा-
णिय रतिं काउस्सग्गेण ट्ठिदसस पहादसमए भवणवासियवाणवेंतरजोदिसियकप्पवासियदेवेहि कयमहापूजा
संसकाहलात्तरवसंकुला । होदु एदसु दोसु ट्ठानेसु जिणवयणपच्चओवलंभो, जिणवयणत्तं पडि सव्वंगपुव्वाणि
समाणाणि ति तेसिं सच्चोसिं णामणिहेसं काऊण णमोकारो किण्ण कर्हो ? ण, जिणवयणत्तणेण सव्वंगपुव्वांमिहि
सरिसत्ते संते वि विज्जाणुपवादलोगविदुसाराणं महल्लत्तमत्थि, एत्थेव देवपूजोवलंभादो । चोदसपुव्वहरो
मिच्छत्तं ण गच्छदि तमिहि भवे असंजमं च ण पडिवज्जदि, एसो एदसस विसेसो ।

यहां ध्वलाकारने दशपूर्वियों और चौदहपूर्वियोंको अलग अलग नामनिर्देशपूर्वक नमस्कार किये जानेका कारण यह बतलाया है, कि जब श्रुतपाठी आचारांगादि ग्यारह श्रुतोंको पढ चुकता है और दृष्टिवादके पांच अधिकारोंका पाठ करते समय क्रमसे उत्पादादि पूर्व पढ़ता हुआ दशम पूर्व विद्यानुवादको समाप्त कर चुकता है, तब उससे रोहिणी आदि पांच सौ महाविद्याएं और अंगुष्ठप्रसेणादि सात सौ अल्प विद्याएं आकर पूछती हैं 'हे भगवन्, क्या आज्ञा है' ? इसप्रकार सब विद्याओंके प्राप्त हो जानेपर जो लोभमें पड़ जाता है वह तो भिन्नदशपूर्वी कहलाता है, और जो उनके लोभमें न पड़कर कर्मक्षयार्थी बना रहता है वह अभिन्नदशपूर्वी होता है। ये अभिन्नदशपूर्वी ही 'जिन' संज्ञाको प्राप्त करते हैं और उन्हींको यहां नमस्कार किया गया है। किन्तु जो महाव्रतोंका भंग कर देनेसे जिनसंज्ञाको प्राप्त नहीं कर पाते उन्हें यहां नमस्कार नहीं किया गया।

आगे यह प्रश्न उठाया गया है कि जब दश और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया तब बीचके ग्यारहपूर्वी, बारहपूर्वी और तेरहपूर्वियों को भी क्यों नहीं पृथक् नमस्कार किया। इसका उत्तर दिया गया है कि उनको नमस्कार तो चौदहपूर्वियोंके नमस्कारमें आ ही जाता है, पर जैसा जिनवचनप्रत्यय विद्यानुवादकी समाप्तिके समय देखा जाता है वैसा ही चौदहपूर्वियोंकी समाप्तिपर पाया जाता है। जब चौदहपूर्वियोंको समाप्त करके रात्रिमें श्रुत-केवली कायोत्सर्गसे विराजमान रहते हैं तब प्रभात समय भवनवासी, बाणव्यंतर, अयोतिषी, और कल्पवासी देव आकर उनकी शंखतूर्यके साथ महापूजा करते हैं। इसप्रकार यद्यपि जिनवचनत्वकी अपेक्षासे सभी पूर्व समान हैं, तथापि विद्यानुप्रवाद और लोकविन्दुसारका महत्त्व विशेष है, क्योंकि यहीं देवोंद्वारा पूजा प्राप्त होती है। दोनों अवस्थाओंमें विशेषता केवल इतनी है कि चतुर्दशपूर्वधारी फिर मिथ्यात्वमें नहीं जा सकता और उस भवमें असंयमको भी प्राप्त नहीं होता।

इससे जाना जाता है कि श्रुतपाठियोंकी विद्या एक प्रकारसे दशम पूर्वपर ही समाप्त हो जाती थी, वहीं वह देवपूजाको भी प्राप्त कर लेता था और यदि लोभमें आकर पथभ्रष्ट न हुआ तो 'जिन' संज्ञाका भी अधिकारी रहता था। इससे दिगम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके प्रथमानुयोग नामक विभागको पूर्वगतसे पहले रखने का सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। यदि पूर्वगतके पश्चात् प्रथमानुयोग रहा तो उसका तात्पर्य यह होगा कि दशपूर्वियोंको उसका ज्ञान ही नहीं हो पायगा। अतएव इस दशपूर्वियोंकी मान्यताके अनुसार प्रथमानुयोगको पूर्वसे पहले रखना बहुत सार्थक है। आगेके शेष पूर्व और चूलिकाएं लौकिक और चमत्कारिक विद्याओंसे ही संबंध रखती हैं, वे आत्मशुद्धि बढ़ानेमें उतनी कार्यकारी नहीं हैं, जितनी उसकी दृढ़ताकी परीक्षा करानेमें हैं।

भिन्न और अभिन्न दशपूर्वियोंकी मान्यताका निर्देश नंदीसूत्रमें भी है, यथा—

‘इच्छेन्नं दुवालसंगं गणिपिडगं चोद्दसपुव्विस्स सम्मसुअं अभिण्णदसपुव्विस्स सम्मसुअं, तेण परं भिण्णेषु भयणा से तं सम्मसुअं’ (सू. ४१)

टीकाकारने भिन्न और अभिन्न दशपूर्वियोंका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है—

‘इत्येतद् द्वादशांगं गणिपिटकं यश्चतुर्दशपूर्वीं तस्य सकलमपि सामायिकादि विन्दुसार-पर्यवसानं नियमात् सम्यक् श्रुतं। ततो अधोमुखपरिहान्या नियमतः सर्वं सम्यक् श्रुतं तावद् वक्तव्यं यावदभिन्नदशपूर्विणः—सम्पूर्णदशपूर्वधरस्य। सम्पूर्णदशपूर्वधरत्वादिकं हि नियमतः सम्यग्दृष्टेरेव, न मिथ्यादृष्टेः, तथा स्वाभाव्यात्। तथाहि, यथा अभव्यो ग्रंथिदेशमुपागतोऽपि तथा स्वभावत्वात् न ग्रंथिभेदमाघातुमलम्, एवं मिथ्यादृष्टिरपि श्रुतमवगाहमानः प्रकर्षतोऽपि तावदवगाहते यावत्किञ्चिन्मन्यूनानि दशपूर्वाणि भवन्ति, परिपूर्णानि तु तानि नावगाहं शक्नोति तथा स्वभावत्वादिति।’ इत्यादि

इसका तात्पर्य यह है कि जो सम्मगदृष्टि होता है वह तो दश पूर्वोंका अध्ययन कर लेता है और आगे भी बढ़ता जाता है, किन्तु जो मिथ्यादृष्टि होता है वह कुछ कम दश पूर्वोंतक तो पढ़ता जाता है, किन्तु वह दशमेंको भी पूरा नहीं कर पाता। इसका उदाहरण उन्होंने एक अभव्यका दिया है जो किसी ग्रंथि-देशपर आजानेसे उस ग्रंथिका भेदन नहीं कर पाता। पर टीकाकारने यह नहीं बतलाया कि कुछ कम दशवें पूर्वमें श्रुतपाठी कौनसी ग्रंथि पाकर रुक जाता है और उसका भेदन क्यों नहीं कर पाता।

अनुयोगके दो भेद

१. मूलपढमाणुओग

२. गंडिआणुओग

मूलप्रथमानुयोगका विषय

अरहंताणं भगवंताणं पुव्वभवा देवगमणाइं आउं-
चवणाइं जम्मणाइं अभिसेआ रायवरसिरीओ पव्व-
ज्जाओ तवा य उग्गा केवल्लणाणुप्पयाओ तित्थ-
पवत्तणाणि सीसा गणा गणहरा अज्जपवत्तिणीओ
संवस्स चउव्विहस्स जं च परिमाणं जिण मण
पज्जव आहिनाणी सम्मत्त सुअनाणिणो वाई
अणुत्तरगई उत्तरवेउव्विण्णो मुणिणो जत्तिआ
सिद्धा सिद्धीवहो जहदेसिओ जच्चिरं च कालं
पाओवगया जे जेहिं जात्तियाइं भत्ताइं छेइत्ता
अंतगडे मुणिवरुत्तमे तमरओघविप्पमुक्के मुख-
सुहमणुत्तरं च पत्ते एवमन्ने अ एवमाइभावा
मूलपढमाणुओगे कहिआ।

गंडिआणुओग

गंडिआणुओगे कुलगर-तित्थयर-चक्रवट्टि-दसार-
वलदेव-वासुदेव-गणधर-भइवाहु-तवोक्कम-हरिवंस-
उस्सप्पिणी-चित्तंतर-अमर-नर-तिरिय--निरय-गइग-
मण-विविहपरियट्टणेसु एवमाइआओ गंडिआओ
आघविज्जंति पण्णाविज्जंति।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके चौथे भेदका नाम अनुयोग है जिसके पुनः दो प्रभेद होते हैं, मूलप्रथमानुयोग और गंडिकानुयोग। दिग्म्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोग ही दृष्टिवादका तीसरा भेद है। अनुयोगका अर्थ समवायाग टीकामें इसप्रकार दिया है—

प्रथमानुयोगका विषय

पढमाणुओए चउवीस अत्थाहियारा तित्थयर-
पुराणेषु सव्वपुराणाणमंतव्मावादो (जयधवला)
पढमाणियोगो पंच-सहस्सपदेहि (५०००)
पुराणं वण्णेदि। उत्तं च-
वारसविहं पुराणं जं दिट्ठं जिणवरेहि सव्वेहि।
तं सव्वं वण्णेदि हु जिणवंसे रायवंसे य ॥ १ ॥
पढमो अरहंताणं विदियो पुण चक्रवट्टिवंसो
हु। विज्जाहराण तदियो चउत्थओ वासु-
देवाणं ॥२॥ चारणवंसे तह पंचमो हु छट्ठो य
पण्णसमणाणं। सत्तमओ कुरुवंसो अट्ठमओ तह
य हरिवंसो ॥३॥ णवमो य इक्खयाणं दसमो वि य
कासियाणं बोद्धव्वो। वाईणेक्कारसमो वारसमो
णाहवंसो हु ॥ ४ ॥

अनुरूपोऽनुकूलो वा योगोऽनुयोगः सूत्रस्य निजेनाभिधेयेन सार्द्धमनुरूपः सम्बन्ध इत्यर्थः ।

अर्थात्—सूत्रद्वारा प्रतिपादित अर्थके अनुकूल संबंधका नाम ही अनुयोग है । तात्पर्य यह कि जिसमें सूत्र कथित सिद्धांत या नियमोंके अनुकूल दृष्टान्त और उदाहरण पाये जावें वह अनुयोग है । उसके दो भेद करनेका अभिप्राय नंदीसूत्रकी टीकामें यह बतलाया गया है कि—

इह मूलं धर्मप्रणयनात् तीर्थकरास्तेषां प्रथमः सम्यक्त्वासिलक्षणपूर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो मूल-प्रथमानुयोगः । इक्ष्वादीनां पूर्वापरपर्वपरिच्छिन्नो मध्यभागो गण्डिका, गण्डिकेव गण्डिका, एकार्थाधिकारा ग्रंथपद्धतिरित्यर्थः । तस्या अनुयोगो गण्डिकानुयोगः ।

इसका अभिप्राय यह है कि धर्मके प्रवर्तक होनेसे तीर्थकर ही मूल पुरुष हैं, अतएव उनका प्रथम अर्थात् सम्यक्त्वप्राप्तिलक्षण पूर्वभव आदिका वर्णन करनेवाला अनुयोग मूलप्रथमानुयोग है । और जैसे गन्ने आदिकी गंडेरी आजू बाजूकी गांठोंसे सीमित रहती है ऐसे ही जिसमें एक एक अधिकार अलग अलग हो उसे गंडिकानुयोग कहते हैं, जैसे कुलकरगंडिका आदि । किन्तु यह विभाग कोई विशेष महत्व नहीं रखता क्योंकि दोनोंमें विषयकी पुनरावृत्ति पायी जाती है । जैसे तीर्थकर और उनके गणधरोंका वर्णन दोनों विभागोंमें आता है । दिगम्बरोंमें ऐसा कोई विभाग नहीं किया गया और साफ सीधे तौरसे बतलाया गया है कि दृष्टिवादके प्रथमानुयोगमें चौबीस अधिकारोंद्वारा बारह जिनवंशों और राजवंशोंका वर्णन किया गया है

दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोगका अर्थ इसप्रकार किया गया है—

प्रथमं मिथ्यादृष्टिप्रवृत्तिकमन्युत्पन्नं वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः

(गोम्मटसार टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि ' प्रथमं ' का तात्पर्य अव्रती और अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि शिष्यसे है और उसके लिये जिस अनुयोग की प्रवृत्ति होती है वह प्रथमानुयोग कहलाता है । इसीके भीतर सब पुराणोंका अन्तर्भाव हो जाता है । किन्तु इसका पद-प्रमाण केवल पाँच हजार बतलाया गया है । इससे जान पड़ता है कि दृष्टिवादके अन्तर्गत प्रथमानुयोगमें सर्व कथावर्णन बहुत संक्षेपमें किया गया था । पुराणवादका विस्तार पीछे पीछे किया गया होगा ।

नन्दिसूत्रकी टीकामें गंडिकानुयोगके अन्तर्गत चित्रान्तरगण्डिकाका बड़ा ही विचित्र और विस्तृत परिचय दिया है । पहले उन्होंने बतलाया है कि—

' कुलकराणां गण्डिकाः कुलकरगण्डिकाः, तत्र कुलकराणां विमलवाहनादीनां पूर्वभवजन्मादीनि सप्रपञ्चमुपवर्णयन्ते । एवं तीर्थकरगण्डिकादिष्वभिधानवशात्तो भावनीयं ' जाव चित्ततरगंडिभाउ ' चि ।

अर्थात् कुलकरगण्डिकामें विमलवाहनादि कुलकरोंके पूर्वभव जन्मादिका सविस्तर वर्णन किया गया है । इसीप्रकार तीर्थकरादि गंडिकाओंमें उनके नामानुसार विषय वर्णन समझ लेना चाहिये

जहांतक कि चित्रान्तरगंडिका नहीं आती । फिर चित्रान्तरगण्डिकाका परिचय इस प्रकार प्रारम्भ किया गया है—

‘ चित्रा अनेकार्थाः, अन्तरे ऋषभाजिततीर्थकरापान्तराले गण्डिकाः चित्रान्तरगण्डिकाः । एतदुक्तं भवति—ऋषभाजिततीर्थकरान्तराले ऋषभवंशसमुद्भूतभूपतीनां शेषगतिगमनव्युत्थासेन शिवगतिगमनामुत्तरोपपातप्राप्तिप्रतिपादिका गण्डिकाश्चित्रान्तरगण्डिकाः । तासां च प्ररूपणा पूर्वाचार्यैरेवमकारि—इह सुबुद्धिनामा सगरचक्रवर्तिनो महामात्योऽष्टापदपर्वते सगरचक्रवर्तिसुतेभ्य आदित्यशःप्रभृतीनां भगवदृषभवंशजानां भूपतीनामेवं संख्यामाख्यातुमपक्रमते स्म । आह च—

“ आहृच्चजसाईणं उसभस्स परंपरानरवईणं ।

सथरसुयाण सुबुद्धी इणमो संखं परिकहेइ ॥ १ ॥

आदित्यशःप्रभृतयो भगवन्नाभेयवंशजास्त्रिखण्डभरतार्द्धमनुपाल्य पर्यन्ते पारमेश्वरीं दीक्षामाभिमृष्टा तत्रभावतः सकलकर्मक्षयं कृत्वा चतुर्दश लक्षा निरन्तरं सिद्धिमगमन् । तत एकः सर्वार्थसिद्धौ, ततो भूयोऽपि चतुर्दश लक्षा निरन्तरं निर्वाणे, ततोऽप्येकः सर्वार्थसिद्धे महाविमाने । एवं चतुर्दशलक्षान्तरितः सर्वार्थसिद्धावैकैकस्तावद्दक्ष्यो यावत्तेऽप्येकका असंख्येया भवन्ति । ततो भूयश्चतुर्दश लक्षा नरपतीनां निरन्तरं निर्वाणे, ततो द्वौ सर्वार्थसिद्धे । ततः पुनरपि चतुर्दश लक्षा निरन्तरं निर्वाणे । ततो भूयोऽपि द्वौ सर्वार्थसिद्धे । एवं चतुर्दश लक्षा २ लक्षान्तरितौ द्वौ २ सर्वार्थसिद्धे तावद्दक्ष्यो यावत्तेऽपि द्विक २ संख्यया असंख्येया भवन्ति । एवं त्रिक २ संख्याद्योऽपि प्रथेकमसंख्येयास्तावद्दक्ष्यः यावन्निरन्तरं चतुर्दश लक्षा निर्वाणे । ततः पञ्चाशत्सर्वार्थसिद्धे । ततो भूयोऽपि चतुर्दश लक्षा निर्वाणे । ततः पुनरपि पञ्चाशत्सर्वार्थसिद्धे । एवं पञ्चाशत्संख्याका अपि चतुर्दश २ लक्षान्तरितास्तावद्दक्ष्यः यावत्तेऽप्यसंख्येया भवन्ति । उक्तं च—

“ चोद्स लक्खा सिद्धा णिवईणेको य होइ सव्वट्टे ।

एवैकेके ठाणे पुरिसजुगा होंतिऽसंखेज्जा ॥ १ ॥

पुणरपि चोद्स लक्खा सिद्धा निव्वईण दो वि सव्वट्टे ।

हुगठाणेऽवि असंखा पुरिसजुगा होंतिं नायव्वा ॥ २ ॥

जाव य लक्खा चोद्स सिद्धा पण्णास होंतिं सव्वट्टे ।

पञ्चासट्टाणे वि उ पुरिसजुगा होंतिऽसंखेज्जा ॥ ३ ॥

एगुत्तरा उ ठाणा सव्वट्टे चैव जाव पञ्चासा ।

एक्केअंतरठाणे पुरिसजुगा होंति असंखेज्जा ॥ ४ ॥

इत्यादि ।

इसका तापर्य यह है कि ऋषभ और अजित तीर्थकरोंके अन्तराल कालमें ऋषभ वंशके जो राजा हुए उनकी और गतियोंको छोड़कर केवल शिवगति और अनुत्तरोपपातकी प्राप्तिका प्रतिपादन करनेवाली गंडिका चित्रान्तरगंडिका कहलाती है । इसका पूर्वाचार्योंने ऐसा प्ररूपण किया है कि सगरचक्रवर्तीके सुबुद्धिनामक महामात्यने अष्टापद पर्वतपर सगरचक्रकी पुत्रोंको भगवान् ऋषभके वंशज आदित्यश आदि राजाओंकी संख्या इस प्रकार बताई—उक्त आदित्यश आदि नाभेयवंशके राजा त्रिखंड भरतार्थका पालन करके अन्त समय पारमेश्वरी दीक्षा धारण कर उसके प्रभावसे सब कर्मोंका क्षय करके चौदह लाख निरन्तर क्रमसे सिद्धिको प्राप्त हुए और

अनन्तर एक सर्वार्थसिद्धिको गया । फिर चौदह लाख निरन्तर मोक्षको गये और पश्चात् एक फिर सर्वार्थसिद्धिको गया । इसीप्रकार क्रमसे वे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको तबतक जाते रहे जबतक कि सर्वार्थसिद्धिमें एक एक करके असंख्य होगये । इसके पश्चात् पुनः निरन्तर चौदह चौदह लाख मोक्षको और दो दो सर्वार्थसिद्धिको तबतक गये जबतक कि ये दो दो भी सर्वार्थसिद्धिमें असंख्य होगये । इसीप्रकार क्रमसे फिर चौदह लाख मोक्षगामियोंके अनन्तर तीन तीन, फिर चार चार करके पचास पचास तक सर्वार्थसिद्धिको गये और सभी असंख्य होते गये । इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको जाने के पश्चात् एक एक मोक्षको जाने लगा और पूर्वोक्त प्रकारसे दो दो फिर तीन तीन करके पचास तक गये और सब असंख्य होते गये । फिर दो लाख निर्वाणको, फिर दो लाख सर्वार्थसिद्धिको, फिर तीन तीन लाख । इस प्रकारसे दोनों ओर यह संख्या भी असंख्य तक पहुँच गई । यह सब चित्रान्तरगंडिकामें दिखाया गया था । उसके आगे चार प्रकारकी और चित्रान्तरगंडिकायें थीं—एकादिका एकोत्तरा, एकादिका द्व्युत्तरा, एकादिका त्र्युत्तरा और त्र्यादिका द्वादिबिषयोत्तरा, जिनमें भी और और प्रकारसे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको जानेवालोंकी संख्याएं बतायीं गई थीं ।

जान पड़ता है, इन सब संख्याओंका उपयोग अनुयोगके विषयकी अपेक्षा गणितकी भिन्न-भिन्न धाराओंके समझानेमें ही अधिक होता होगा ।

चूलिका

प्रथम चार पूर्वोकी चूलिकाएं ही इसके अन्तर्गत हैं । उन चूलिकाओंकी संख्या $४+१२+८+१०=३४$ है

पांच चूलिकाओंके अन्तर्गत विषय

- १ जलगया—जलगमण—जलत्थंभण—कारण—मंत—तंत—तवच्छरणाणि वण्णेदि ।
- २ थलगया—भूमिगमणकारण—मंत—तंत—तवच्छरणाणि वत्थुविज्जं भूमिसंबंधमण्णं पि सुहा—सुहकारणं वण्णेदि ।
- ३ मायागया—इंदजालं वण्णेदि
- ४ रूवगया—सीह—हय—हरिणादि—रूवायारेण परिणमणहेदु—मंत—तंत—तवच्छरणाणि चित्त—कट्ट—लेप्प—लेणकम्मादि—लक्खणं च वण्णेदि ।
- ५ आयासगया—आगासगमणमिच्च—मंत—तंत—तवच्छरणाणि वण्णेदि ।

श्वेताम्बर ग्रंथोंमें यद्यपि चूलिका नामका दृष्टिवादका पांचवां भेद गिना गया है, किन्तु उसके भीतर न तो कोई ग्रंथ बताये गये और न कोई विषय, केवल इतना कह दिया गया है कि—

से किं तं चूलिआओ ? चूलिआओ आइलाणं चउण्हं पुव्वाणं चूलिआ, सेसाइं पुव्वाइं अचूलिआइं, से तं चूलिआओ ।

अर्थात् प्रथम चार पूर्वोंकी जो चूलिकाएं बता आये हैं वे ही चूलिकाएं यहां गिन लेना चाहिये । किन्तु, यदि ऐसा है तो चूलिकाको पूर्वोंका ही भेद रखना था, दृष्टिवादका एक अलग भेद बताकर उसका एक दूसरे भेदके अन्तर्गत निर्देश करनेसे क्या विशेषता आई ? फिर भी टीकाकार यह तो स्पष्ट बतलाते हैं कि दृष्टिवादका जो विषय परिकर्म, सूत्र, पूर्व और अनुयोगमें अनुक्त रहा वह चूलिकाओंमें संग्रह किया गया—

‘ इह चूला शिखरमुच्यते, यथा मेरौ चूला । तत्र चूला इव चूला । दृष्टिवादे परिकर्म-सूत्र-पूर्वानुयोगेऽनुकार्यसंग्रहपरा ग्रंथपद्धतयः । × × × एताश्च सर्वस्यापि दृष्टिवादस्थोपरि किल स्थापितास्तथैव च पठ्यन्ते । ’
(नन्दीसूत्र टीका)

इससे तो जान पड़ता है कि उन्हें पूर्वोंके भीतर बतलानेमें कुछ गड़बड़ी हुई है ।

दिगम्बर मान्यतामें पूर्वोंके भीतर कोई चूलिकाएं नहीं दिखाई गईं । उसके जो पांच प्रभेद बतलाये गये हैं उनका प्रथम चार पूर्वोंसे विषयका भी कोई सम्बंध नहीं है । वे जल, थल, माया, रूप और आकाश सम्बंधी इन्द्रजाल और मंत्र-तंत्रात्मक चमत्कारका प्ररूपण करती हैं, तथा अन्तिम पांच पूर्वोंके मंत्रतंत्रात्मक विषयकी धाराको लिये हुए हैं । प्रत्येक चूलिकाकी पदसंख्या २०९८९२०० बतलाई है, जिससे उनके भारी विस्तारका पता चलता है ।

अब यहां पूर्वोंके उन अंशोंका विशेष परिचय कराया जाता है जो धवला जयधवलाके भीतर प्रथित हैं और जिनकी तुलनाकी कोई सामग्री श्वेताम्बरीय उपर्युक्त आगमोंमें नहीं पायी जाती । इनकी रचना आदिका इतिहास सत्पररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिया जा चुका है जिसका सारांश यह है कि भगवान् महावीरके पश्चात् क्रमशः अड्डाईस आचार्य हुए जिनका श्रुतज्ञान धीरे धीरे कम होता गया । ऐसे समयमें दो भिन्न भिन्न आचार्योंने दो भिन्न भिन्न पूर्वोंके अन्तर्गत एक एक पाहुडका उद्धार किया । धरसेनाचार्यने पुष्पदंत और भूतबलिको जो श्रुत पढ़ाया उसपरसे उन्होंने द्वितीय पूर्व आप्रायणीके एक पाहुडका उद्धार सूत्ररूपसे किया । आप्रायणीपूर्वके अन्तर्गत निम्न चौदह ‘ वस्तु ’ नामक अधिकार थे—पुष्पदंत, अवरंत, ध्रुव, अध्रुव, चयणलट्टी, अद्भुवम, पणिधिकण्ण, अट्ट, भौम्म, वयादिय, सब्वट्ट, कण्णिजाण, अतीद-सिद्ध-बद्ध और अणागय-सिद्ध-बद्ध ।

हम ऊपर बतला ही आये हैं कि पूर्वोंकी प्रत्येक वस्तुमें नियमसे बीस बीस पाहुड रहते थे । आप्रायणी पूर्वकी पंचम वस्तु चयनलट्टिके बीस पाहुडोंमें चौथे पाहुडका नाम कम्मपयडी या महाकम्मपयडी अथवा वेयणकसिणपाहुड × था । इसीका उद्धार पुष्पदंत और भूतबलिने

× कम्मार्ण पयडिसरूद्धं वण्णेदि, तेण कम्मपयडिपाहुडे ति गुणणामं । वेयणकसिणपाहुडे ति वि तस्स विदियं णाममत्थि । वेयणा कम्मणामुदयो तं कसिणं णिरवसेसं वण्णेदि अदो वेयणकसिणपाहुडमिदि एदमवि गुणणाममेव (सं. प. १, पृ. १२४, १२५)

सूत्ररूपसे षट्खंडागमके भीतर किया। इस पाहुडके जो चौबीस अवान्तर अधिकार थे, उनके विषयका संक्षेप परिचय धवलाकारने वेदनाखंडके आदिमें कराया है जो इस प्रकार है—

१ कदि—कदीए ओरालिय-वेउन्विय-तेजाहार-कम्मइयसरीराणं संघादण-परिसादणकदी-ओ भव-पढमापढम-चरिमग्गि द्विदजीवाणं कदि-णोकदि-अवत्तव्यसंखाओ च परूवि-उज्जति ।

२ वेदणा—वेदणाए कम्म-पोग्गलाणं वेदणा-सण्णिदाणं वेदण-णिकखेवादि-सोलसेहि अण्णियोगदारेहि परूवणा कीरदे ।

३ फास-फासण्णियोगदारेहि कम्म-पोग्गलाणं णाणावरणादिभेएण अट्ठभेदमुवगयाणं फास-गुणसंबंधेण पत्त-फासणीमाण-फासणिकखे-वादि-सोलसेहि अण्णियोगदारेहि परूवणा कीरदे ।

४ कम्म-कम्मेत्ति अण्णियोगदारे पोग्गलाणं णाणावरणादिकम्मकरणकम्मत्तणेण पत्त-कम्मसण्णाणं कम्मणिकखेवादि-सोलसेहि अण्णियोगदारेहि परूवणा कीरदे ।

५ पयडि-पयडि त्ति अण्णियोगदारेहि पोग्ग-लाणं कदिग्गि परूविद-संघादाणं वेदणाए पण्णविदावत्थाविसेस-पच्चयादीणं फासग्गि णिरूविद-वावाराणं पयडिणिकखेवादि-सोलस-अण्णियोगदारेहि सहाव-परूवणा कीरदे ।

१ कृति—कृति अर्थाधिकारमें औदारिक, वैक्रियिक, तैजस, आहारक और कर्मण, इन पाचों शरीरोंकी संघातन और परि-शातनरूप कृतिका तथा भवके प्रथम, अप्रथम और चरम समयमें स्थित जीवोंके कृति, नोकृति और अवक्तव्यरूप संख्या-ओंका वर्णन है ।

२ वेदना—वेदना अर्थाधिकारमें वेदनासंज्ञिक कर्मपुद्गलोंका वेदनासंज्ञिक आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा वर्णन किया गया है ।

३ स्पर्श—स्पर्श अर्थाधिकारमें स्पर्श गुणके संबन्धसे प्राप्त हुए स्पर्शनिर्माण, स्पर्श-संज्ञिक आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादिके भेदसे आठ भेदको प्राप्त हुए कर्मपुद्गलोंका वर्णन किया गया है ।

४ कर्म—कर्म अर्थाधिकारमें कर्मसंज्ञिक आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादि कर्मकरणमें समर्थ होनेसे जिन्हें कर्मसंज्ञा प्राप्त हो गई है, ऐसे पुद्गलोंका वर्णन किया गया है ।

५ प्रकृति—प्रकृति अर्थाधिकारमें कृति अधि-कारमें कहे गये संघातनरूप, वेदना अधि-कारमें कहे गये अवस्थाविशेष प्रत्ययादि-रूप, स्पर्शमें कहे गये जीवसे संबद्ध और जीवके साथ संबद्ध होनेसे उत्पन्न हुए गुणके द्वारा कर्म अधिकारमें कथित रूपसे व्यापार करनेवाले पुद्गलोंके स्वभाव

६ **बंधण**—जं तं बंधणं तं चउच्चिंहं—बंधो बंधगा बंधणिज्जं बंधविधानमिदि । तथ बंधो जीवकम्मपदेसाणं सादियमणादियं च बंधं वण्णेदि । बंधगाहियारो अट्टविहकम्म-बंधगे परूवेदि, सो च खुदाबंधे परूविदो । बंधणिज्जं बंधपाओग्ग-तदपाओग्ग-पोग्गल-दव्वं परूवेदि । बंधविहाणं पयडिबंधं टिदिबंधं अणुभागबंधं पदेसबंधं च परूवेदि ।

७ **गिबंधण**—गिबंधणं मूलत्तरपयडीणं निबंधणं वण्णेदि । जहा चक्खिंदियं रूवग्मि गिबद्धं, सोदिंदियं सहग्मि गिबद्धं, धाणिंदियं गंधग्मि गिबद्धं, निम्भिंदियं रसग्मि गिबद्धं, फासिंदियं कक्खदादिफासेसु गिबद्धं, तहा इमाओ पयडीओ पदेसु अत्थेसु गिबद्धाओ ति गिबंधणं परूवेदि, एसो भावत्थो ।

८ **पक्कम**—पक्कमेत्ति अणियोगदारं अकम्मसरू-वेण ड्ढिदाणं कम्मइयवग्गणाखंधाणं मूलत्तर-पयडिसरूवेण परिणममाणं पयडि-ट्टिदि-अणुभागविसेसेण विसिद्धाणं पदेसपरूवणं

का निरूपण प्रकृतिनिक्षेप आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा किया गया है ।

६ **बन्धन**—बन्ध, बन्धक, बन्धनीय और बन्धविधान, इसप्रकार बन्धन अर्थाधिकारके चार भेद हैं । उनमेंसे बन्ध अधिकार जीव और कर्मप्रदेशोंका सादि और अनादिरूप बन्धका वर्णन करता है । बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मोंके बन्धकका प्रतिपादन करता है जिसका कथन क्षुल्लकबन्धमें किया जा चुका है । बन्धके योग्य पुद्गलद्रव्यका कथन बन्धनीय अधिकार करता है । बन्धविधान अधिकार प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभाग-बन्ध और प्रदेशबन्ध, इन चार बन्धके भेदोंका कथन करता है ।

७ **निबन्धन**—निबन्धन अधिकार मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियोंके निबन्धनका कथन करता है । जैसे, चक्षुरिन्द्रिय रूपमें निबद्ध है । श्रोत्रेन्द्रिय शब्दमें निबद्ध है । घ्राणेन्द्रिय गन्धमें निबद्ध है । जिह्वा इन्द्रिय रसमें निबद्ध है और स्पर्शनेन्द्रिय कर्कश आदि स्पर्शमें निबद्ध है । उसी-प्रकार ये मूलप्रकृतियां और उत्तरप्रकृतियां इन विषयोंमें निबद्ध हैं, इसप्रकार निबन्धन अर्थाधिकार प्ररूपण करता है यह भावार्थ जानना चाहिये ।

८ **प्रक्रम**—प्रक्रम अर्थाधिकार जो वर्गणास्कन्ध अभी कर्मरूपसे स्थित नहीं हैं, किंतु जो मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिरूपसे परिणमन करनेवाले हैं और जो प्रकृति, स्थिति और

कुणदि ।

९ **उवक्कम**—उवक्कमेत्ति अणियोगद्दारस्स चत्तारि अहियारा—बंधणोवक्कमो उदीरणोवक्कमो उवसामणोवक्कमो विपरिणामोवक्कमो चेदि । तत्थ बंधोवक्कमो बंधविदियसमयप्पहुडि अ-दृण्णं कम्माणं पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसाणं बंधवण्णं कुणदि । उदीरणोवक्कमो पयडि-द्विदि-अणुभागपदेसाणमुदीरणं परूवेदि । उवसामणोवक्कमो पसत्थोवसामणमप्पस-त्थोवसामणाणं च पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसभेदभिण्णं परूवेदि । विपरिणाममुव-क्कमो पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसाणं देस-णिज्जरं सयलणिज्जरं च परूवेदि ।

१० **उदय**—उदयाणियोगद्दारं पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसुदयं परूवेदि ।

११ **मोक्ख**—मोक्खो पुण देस-सयलणिज्जराहि परपयडिसंकमोक्खणुक्कणुण-अद्धद्विदिगल-णेहि पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेसभिण्णं मोक्खं वण्णेदि त्ति अत्थभेदो ।

१२ **संकम**—संकमेत्ति अणियोगद्दारं पयडि-द्विदि-अणुभाग-पदेससंकमे परूवेदि ।

अनुभागकी विशेषतासे वैशिष्ट्यको प्राप्त हैं ऐसे कर्मवर्गणास्कन्धोंके प्रदेशोंका प्ररूपण करता है ।

९ **उपक्कम**—उपक्कम अर्थाधिकारके चार अधिकार हैं बन्धनोपक्कम, उदीरणोपक्कम, उपशामनोपक्कम और विपरिणामोपक्कम । उनमेंसे बन्धनोपक्कम अधिकार बन्ध होनेके दूसरे समयसे लेकर प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशरूप ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंके बन्धका वर्णन करता है । उदीर-णोपक्कम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी उदीरणाका कथन करता है । उपशामनोपक्कम अधिकार, प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे भेदको प्राप्त हुए प्रशस्तोपशमना और अप्रशस्तो-पशमनाका कथन करता है । विपरिणा-मोपक्कम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशोंकी देशनिर्जरा और सकलनिर्जराका कथन करता है ।

१० **उदय**—उदय अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके उदयका कथन करता है ।

११ **मोक्ष**—मोक्ष अर्थाधिकार देशनिर्जरा और सकलनिर्जराकेद्वारा परप्रकृतिसंक्रमण, उत्कर्षण अपकर्षण और स्थितिगलनसे प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्धका आत्मासे भिन्न होना मोक्ष है, इसका वर्णन करता है ।

१२ **संक्रम**—संक्रम अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके संक्रमणका प्ररूपण करता है ।

- १३ **लेस्सा**—लेस्सेत्ति अणिओगद्वारं छदव्वले-
स्साओ परूवेदि ।
- १४ **लेस्सायम्म**—लेस्सापरिणामेत्ति अणियोग-
द्वारमंतरंग-छलेस्सा-परिणयजीवाणं वज्झ-
कज्जपरूपणं कुणदि ।
- १५ **लेस्सापरिणाम**—लेस्सापरिणामेत्ति अणि-
योगद्वारं जीव-पोग्गलाणं दव्व-भावलेस्साहि
परिणमणविहाणं वण्णेदि ।
- १६ **सादमसाद**—सादमसादेत्ति अणियोगद्वारमे-
यंतसाद-अणेयंततोदाणं (?) गदियादि-
मग्गणाओ अस्सिदूण परूवणं कुणइ ।
- १७ **दीहेरहस्स**—दीहेरहस्सेत्ति अणिओगद्वारं
पयडि-डिदि-अणुभाग-पदेसे अस्सिदूण
दीहेरहस्सत्तं परूवेदि ।
- १८ **भवधारणीय**—भवधारणीए त्ति अणियोग-
द्वारं केण कम्मणेण णेरइय-तिरिक्ख-मणुस-
देवभवा धरिज्जंति त्ति परूवेदि ।
- १९ **पोग्गलत्त**—पोग्गलत्थेत्ति अणिओगद्वारं गह-
णादो अत्ता पोग्गला परिणामदो अत्ता पोग्गला
उवभोगदो अत्ता पोग्गला आहारदो अत्ता
पोग्गला ममत्तीदो अत्ता पोग्गला परिगहादो
अत्ता पोग्गला त्ति अप्पणिज्जाणप्पणिज्ज-
पोग्गलाणं पोग्गलाणं संबंधेण पोग्गलत्तं
पत्तजीवाणं च परूवणं कुणदि ।
- १३ **लेश्या**—लेश्या आनुयोगद्वारं छह द्रव्य
लेश्याओंका प्रतिपादन करता है ।
- १४ **लेश्याकर्म**—लेश्याकर्म अर्थाधिकार अन्तरंग
छह लेश्याओंसे परिणत जीवोंके बाह्य
कार्योंका प्रतिपादन करता है ।
- १५ **लेश्यापरिणाम**—लेश्यापरिणाम अर्थाधिकार
जीव और पुद्गलोंके द्रव्य और भावरूपसे
परिणमन करनेके विधानका कथन करता
है ।
- १६ **सातासात**—सातासात अर्थाधिकार एकान्त
सात, अनेकान्त सात, एकान्त असात,
अनेकान्त असातका गति आदि मार्गणा-
ओंके आश्रयसे वर्णन करता है ।
- १७ **दीर्घंहस्व**—दीर्घंहस्व अर्थाधिकार प्रकृति,
स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंका आश्रय
लेकर दीर्घता और ह्रस्वताका कथन
करता है ।
- १८ **भवधारणीय**—भवधारणीय अर्थाधिकार,
किस कर्मसे नरकभव प्राप्त होता है,
किससे तिर्यंचभव, किससे मनुष्यभव
और किससे देवभव प्राप्त होता है, इसका
कथन करता है ।
- १९ **पुद्गलात्त**—पुद्गलार्थ अनुयोगद्वार दण्डादिके
ग्रहण करनेसे आत्त पुद्गलोंका, मिथ्या-
त्वादि परिणामोंसे आत्त पुद्गलोंका,
उपभोगसे आत्त पुद्गलोंका, आहारसे आत्त
पुद्गलोंका, ममतासे आत्त पुद्गलोंका और
परिग्रहसे आत्त पुद्गलोंका, इसप्रकार
आत्मसात् किये हुए और नहीं किये हुए

पुद्गल्लोका तथा पुद्गलके संबन्धसे पुद्गलत्वको प्राप्त हुए जीवोंका वर्णन करता है ।

२० **निधत्तमनिधत्त**— निधत्तमनिधत्तमिदि अणियोगद्वारं पयडि-डिदि-अणुभागाणं निधत्तमनिधत्तं च परूवेदि । निधत्तमिदि किं ? जं पदेसगं ण सक्कमुदए दाहुं अणपयडिं वा संकामेदुं तं निधत्तं णाम । तव्विवरीयमनिधत्तं ।

२० **निधत्तानिधत्त**—निधत्तानिधत्त अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निधत्त और अनिधत्तका प्रतिपादन करता है । जिसमें प्रदेशाग्र उदय अर्थात् उदीरणामें नहीं दिया जा सकता है और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमणको भी प्राप्त नहीं कराया जा सकता है, उसे निधत्त कहते हैं । अनिधत्त इससे विपरीत होता है ।

२१ **निकाचिदमणिकाचिद**--णिकाचिदमणिकाचिदमिदि अणियोगद्वारं पयडि-डिदि-अणुभागाणं निकाचणं परूवेदि । निकाचणमिदि किं ? जं पदेसगं ण सक्कमोक-ड्ढिटुमणपयडिं संकामेदुमुदए दाहुं वा तणिकाचिदं णाम । तव्विवरीदमणिकाचिदं ।

२१ **निकाचितानिकाचित**--निकाचितानिकाचित अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निकाचित और अनिकाचितका वर्णन करता है । जिसमें प्रदेशाग्रका उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृतिसंक्रमण नहीं हो सकता और न वह उदय अथवा उदीरणामें ही दिया जा सकता है उसे निकाचित कहते हैं । अनिकाचित इससे विपरीत होता है ।

२२ **कम्मट्टिदि**--कम्मट्टिदि त्ति अणियोगद्वारं सव्वकम्माणं सत्तिकम्मट्टिदिमुक्कड्डणोकड्डण-जणिट्टिदिच परूवेदि ।

२२ **कर्मस्थिति**--कर्मस्थिति अनुयोगद्वार संपूर्ण कर्मोंकी शक्तिरूप कर्मस्थितिका और उत्कर्षण तथा अपकर्षणसे उत्पन्न हुई कर्मस्थितिका वर्णन करता है ।

२३ **पच्छिमस्सखंध**-पच्छिमस्सखंधेति अणियोगद्वारं दंड-कपाट-पदर-लोगपूरणाणि तत्थ डिदि-अणुभागखंडयघादणविहाणं जोग-किड्डीओ काऊण जोगणिरोहसखं कम्म-क्खवणविहाणं च परूवेदि ।

२३ **पश्चिमस्कन्ध**--पश्चिमस्कन्ध अर्थाधिकार दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरणरूप समुद्धातका, इस समुद्धातमें होनेवाले स्थितिकांडकघात और अनुभागकाण्डकघातके विधानका, योगोंकी कृष्टि करके होनेवाले योगनिरोधके स्वरूपका और कर्मक्षपणके विधानका वर्णन करता है ।

२४ अप्पाबहुग — अप्पाबहुगाणिओगद्वारं २४ अल्पबहुत्व — अल्पबहुत्व अनुयोगद्वारं
अदीदसव्वाणिओगद्वारेसु अप्पाबहुगं अतीत संपूर्ण अनुयोगद्वारोंमें अल्पबहुत्वका
परूवेदि । प्रतिपादन करता है ।

इन चौबीस अधिकारोंके विषयका प्रतिपादन पुष्पदन्त और भूतबलिने कुछ अपने स्वतंत्र विभाग से किया है जिसके कारण उनकी कृति षट्खंडागम कहलाती है । उक्त चौबीस अधिकारोंमें पांचवां बंधन विषयकी दृष्टिसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है । इसीके कुछ अवान्तर अधिकारोंको लेकर प्रथम तीन खंडों अर्थात् जीवद्वाण, खुदाबंध और बंधसामित्तविचयकी रचना हुई है । इन तीन खंडोंमें समानता यह है कि उनमें जीवका बंधककी प्रधानतासे प्रतिपादन किया गया है । उनका मंगलाचरण भी एक है । इन्हीं तीन खंडोंपर कुन्दकुन्दद्वारा परिकर्म नामक टीका लिखी कही गयी है । इन्हीं तीन खंडोंके पारंगत होनेसे अनुमानतः त्रैविद्यदेवकी उपाधि प्राप्त होती थी । इन्हीं तीन खंडोंका संक्षेप सिद्धान्तचक्रवर्ती नेमिचन्द्रकृत गोम्मटसारके प्रथम विभाग जीवकांडमें पाया जाता है ।

इन तीन खंडोंके पश्चात् उक्त चौबीस अधिकारोंका प्ररूपण कृति वेदनादि क्रमसे किया गया है और प्रथम छह अर्थात् बंधन तकके प्ररूपणको अधिकार व अवान्तर अधिकारकी प्रधानतानुसार अगले तीन खंडों वेदणा, वग्गणा और महाबंधमें विभाजित कर दिया गया है । इन तीन खंडोंके विषय-विवेचनकी समानता यह है कि यहां बंधनीय कर्मकी प्रधानतासे विवेचन किया गया है । इनमें अन्तिम महाबंध सबसे बड़ा है और स्वतंत्र पुस्तकारूढ है । जो उपर्युक्त तीन खंडोंके अतिरिक्त इन तीनोंमें भी पारंगत हो जाते थे, वे सिद्धान्तचक्रवर्ती पदके अधिकारी होते थे । सि. च. नेमिचन्द्रने इनका संक्षेप गोम्मटसार कर्मकांडमें किया है ।

भूतबलि रचित सूत्रग्रंथ छठवें बंधन अधिकारके साथही समाप्त हो जाता है । शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका प्ररूपण धवला टीकाके रचयिता वीरसेनाचार्यकृत है, जिसे उन्होंने चूलिका कहकर पृथक् निर्देश कर दिया है ।

उपर्युक्त खंडविभागादिका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये हुए मानचित्रोंसे स्पष्टतया समझमें आजाता है । उन चित्रोंमें बतलायी हुई जीवद्वाणकी नवमीं चूलिका गति-आगतिकी उत्पत्तिके विषयमें एक सूचना कर देना आवश्यक प्रतीत होता है । वह चूलिका धवलामें वियाहपण्णत्ति से उत्पन्न हुई कही गयी है । मानचित्रमें व्याख्याप्रज्ञप्तिके आगे (पांचवां अंग) ऐसा लिख दिया गया है, क्योंकि यह नाम पांचवें अंगका पाया जाता है । किन्तु दृष्टिवादके प्रथम विभाग परिकर्मके पांच भेदोंमें भी पांचवां भेद वियाहपण्णत्ति नामका पाया जाता है । अतएव संभव है कि गति-आगति चूलिकाकी उत्पादक वियाहपण्णत्तिसे इसीका अभिप्राय हो ?

पांचवें पूर्व णाणपवाद (ज्ञानप्रवाद) के एक पाहुडका उद्धार गुणधराचार्यद्वारा गाथारूपमें किया गया । णाणपवादकी बारह वस्तुओंमेंसे दशम वस्तुके तीसरे पाहुडका नाम 'पेज्ज' या 'पेज्जदोस' या 'कसाय' पाहुड था । इसीका गुणधराचार्यने १८० गाथाओं (और ५३ विवरण-गाथाओंमें) उद्धार किया, जिसका नाम कसायपाहुड है । इसका परिचय स्वयं सूत्रकार व टीकाकारके शब्दोंमें संक्षेपतः इसप्रकार है—

पुत्रमि पंचममि तु दसमे वत्थुमि पाहुडे तदिये ।
पेज्जं ति पाहुडमि तु हवदि कसायाण पाहुडं णाम ॥ १ ॥

* * *

गाहासदे असीदे अत्थे पण्णारसधा विहत्तमि ।
चोच्छामि सुत्तगाहा जद् गाहा जमि अत्थमि ॥

टीका—सोलसपदसहस्सेहि वे कोडाकोडि एकसट्टिलक्ख—सत्तायण्णसहस्स-वेत्तद-वाणउदिकोटि—
वासट्टिलक्ख-अट्टसहस्सक्खरुण्णगेहि जं भणिदं गणहरदेवेण इन्द्रभूदिणा कसायपाहुडं तमसीदि-सदगाहाहि
चेव जाणावेमि ति गाहासदे असीदे ति पढमपइज्जा कदा । तत्थ अणेगेहि अत्थाहियारेहि परुवेदं कसाय-
पाहुडमेत्थ पण्णारसेहि चेव अत्थाहियारेहि परुवेमि ति जाणावणट्ठं अत्थे पण्णारसधा विहत्तमि ति
विदियपइज्जा कदा । × × × ।

* * *

संपहि कसायपाहुडस्स पण्णारस-अत्थाहियार-परुवणट्ठं गुणहरभडारभो दो सुत्तगाहाओ पडदि—

पेज्जदोस-विहत्तीट्ठिदि-अणुभागे च बंधगे चय ।
वेदमण्वजोगे वि य चउट्ठाण-विथंजणे चे य ॥
सम्मत्त-देसविरयी संजम-उवसामणा च खवणा च ।
दंसण-चरित्तमोहे अट्ठापरिमाणणिहेसो ॥

इसका तात्पर्य यह है कि यह कसायपाहुड पंचम पूर्वकी दसम वस्तुके पेज्जनामक तृतीय पाहुडसे उत्पन्न हुआ है । इन्द्रभूति गौतमकृत उस मूलग्रंथका परिमाण बहुत भारी था और अधिकार भी अनेक थे । प्रस्तुत कसायपाहुडमें १८० गाथाएं १५ अधिकारोंमें विभक्त हैं । गाथाओंमें सूचित पन्द्रह अधिकार जयध्वलाकारने तीन प्रकारसे बतलाये हैं । इनमेंसे जो विभाग उन्होंने चूर्णिकार यतिवृषभके आधारसे दिये हैं, वे निम्नप्रकार हैं—

१ पेज्जदोस	५ उदय (कर्मोदय)	} वेदग
२ विहत्ती-ट्ठिदि-अणुभाग	६ उदीरणा (अकर्मोदय)	
३ बंधग (अकर्मबंध)	७ उवजोग	} बंधग
४ संकम (कर्मबंध)	८ चउट्ठाण	

९ वंजण	} समत्त	१३ चरित्तमोहणीयस्स उवसामणा	} संजम
१० दंसणमोहणीयस्स उवसामणा		१४ " " खवणा	
११ " " खवणा		१५ अद्दापरिमाणणिदेस ।	
१२ देसविरदी			

इस प्राभृतके आगे पीछेका इतिहास संक्षेपमें ध्वलाकारने इसप्रकार दिया है—

‘ एसो अथो विउलगिरिमत्थयत्थेण पच्चक्खीकथ-तिकालगोयरल्लह्वेण वड्डमाणभडारपण गोदम-थेरस्स कहिदो । पुणो सो अथो आहरियपरंपराए आगंतूण गुणहरभडारयं संपत्तो । पुणो तत्तो आहरिय-परंपराए आगंतूण अज्जमंखु-नागहत्थीयं भडारयायं मूलं पत्तो । पुणो तेहि देहि वि क्रमेण जद्विसहभडा-रयस्स वक्खाणिदो । तेण वि × × सिस्साणुग्गदट्टं चुण्णिसुत्ते लिहिदो ’ ।

अर्थात् इस कसायपाहुडका मूल विषय वर्धमान स्वामीने विपुलाचलपर गौतम गणधरको कहा । वही आचार्य-परंपरासे गुणधर भडारकको प्राप्त हुआ । उनसे आचार्य-परंपराद्वारा वही आर्यमंखु और नागहस्ती आचार्योंके पास आया, जिन्होंने क्रमसे यतिवृषभ भडारकको उसका व्याख्यान किया । यतिवृषभने फिर उसपर चूर्णिसूत्र रचे ।

गुणधराचार्यकृत गाथारूप कसायपाहुड और यतिवृषभकृत चूर्णिसूत्र वीरसेन और जिनसेना-चार्यकृत जयध्वलामें प्रथित हैं जिसका परिमाण ६० हजार श्लोक है । इस टीकामें आर्यमंखु और नागहस्तिके अलग अलग व्याख्यानके तथा उच्चारणाचार्यकृत वृत्तिसूत्रके भी अनेक उल्लेख पाये जाते हैं । यतिवृषभके चूर्णिसूत्रोंकी संख्या छह हजार और वृत्तिसूत्रोंकी बारह हजार बताई जाती है ।

नंदीसूत्रमें पूर्वोक्त प्रभेदोंमें पाहुडों और पाहुडिकाओंका भी निम्नप्रकार उल्लेख है, किन्तु उनका विशेष परिचय कुछ नहीं पाया जाता—

‘ से ण अंगट्ठयाए वारसमे अंगे एगे सुअक्खंधे चोदस पुवाइं, संखेज्जा वत्थु, संखेज्जा चूलवत्थु, संखेज्जा पाहुडा, संखेज्जा पाहुडपाहुडा, संखेज्जाओ पाहुडिआओ, संखेज्जाओ पाहुडपाहुडिआओ संखेज्जाइं पयसहस्साइं पयग्गेणं संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा अणंता पज्जवा ’ आदि

६. ग्रंथका विषय

सम्प्ररूपणके प्रथम भागमें आचार्य गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंका विवरण कर चुके हैं । अब इस भागमें पूर्वोक्त विवरणके आश्रयसे ध्वलाकार वीरसेन स्वामी उन्हींका विशेष प्ररूपण करते हैं—

संपहि संतसुत्तविवरणसमत्ताणंतरं तेसिं परूवणं भणिस्सामो । (पृ. ४११)

किन्तु इस विशेष प्ररूपणमें उन्होंने गुणस्थान, जीवसमाप्त, पर्याप्ति आदि बीस प्ररूपणाओं द्वारा जीवोंकी परीक्षा की है। यह बीस प्ररूपणाओंका विभाग पूर्वोक्त सत्प्ररूपणाके सूत्रोंमें नहीं पाया जाता, और इसीलिये टीकाकारने एक शंका उठाकर यह बतला दिया है कि सूत्रोंमें स्पष्टतः उल्लिखित न होने पर भी इन बीस प्ररूपणाओंका सूत्रकारकृत गुणस्थान और मार्गणास्थानोंके भेदोंमें अन्तर्भाव हो जाता है, अतः ये प्ररूपणाएं सूत्रोक्त नहीं हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता (पृ. ४१४)।

‘सूत्रेण सूचिताथानां स्पष्टीकरणार्थं विंशतिविधानेन प्ररूपणोच्यते’। ‘न पौनरुक्त्यमपि कथंचित्तेभ्यो भेदात्’। (पृ. ४१५)

इससे यह तो स्पष्ट है कि यह बीस प्ररूपणारूप विभाग पुष्पदन्ताचार्यकृत नहीं है। यह स्वयं ध्वजलकारकृत भी नहीं है, क्योंकि उन्होंने उन प्ररूपणाओंका नामनिर्देश करनेवाली एक प्राचीन गाथाको ‘उक्तं च’ रूपसे उद्धृत किया है। इस विभागका प्राचीनतम निरूपण हमें यतिवृषभाचार्य कृत तिलोयपण्णत्तिमें मिलता है। यथा—

गुण-जीवा पउज्जती पाणा सण्णा य मग्गगा कमसो ।
उवजोगा कहिद्वरा णारइयाणं जहाजोगं ॥२७३॥

*

*

*

गुण-जीवा पउज्जती पाणा सण्णा य मग्गगा कमसो ।
उवजोगा कहिद्वरा एदुाण कुमारदेवाणं ॥१८३॥

आदि.

किन्तु यह अभी निश्चयतः नहीं कहा जा सकता कि इस बीस प्ररूपणारूप विभागका आदिकर्ता कौन है ? यह विषय अन्वेषणीय है।

गुणस्थानों व मार्गणास्थानके अनेक भेद प्रभेदोंका विशिष्ट जीवोंकी अपेक्षासे सामान्य, पर्याप्त व अपर्याप्त रूप प्ररूपण करनेसे आलापोंकी संख्या कई सौ पर पहुँच जाती है। इस आलाप विभागका परिचय विषय—सूचीको देखनेसे मिल सकता है। अतः उस सम्बंधमें यहाँ विशेष कथनकी आवश्यकता नहीं है। प्रथम भागकी भूमिकामें गुणस्थानों और मार्गणाओंका सामान्य परिचय देकर यह सूचित किया गया था कि अगले खंडमें विषयका विशेष विवेचन किया जायगा। किन्तु इस भागका कलेवर अपेक्षासे अधिक बढ गया है और प्रस्तावना भी अन्य उपयोगी विषयोंकी चर्चासे यथेष्ट विस्तृत हो चुकी है। अतः हम उक्त विषयके विशेष विवेचन करनेकी आकांक्षाका अभी फिर भी नियंत्रण करते हैं।

७. रचना और भाषाशैली

प्रस्तुत ग्रंथविभागमें सूत्र नहीं हैं। सत्प्ररूपणाका जो विषय ओष और आदेश अर्थात् गुणस्थान और मार्गणास्थानोंद्वारा प्रथम १७७ सूत्रोंमें प्रतिपादित हो चुका है उसीका यहाँ बीस प्ररूपणाओं द्वारा निर्देश किया गया है।

इस बीस प्रकारकी प्ररूपणाके आदिमें टीकाकारने 'ओषेण अत्थि मिच्छाइट्टी० सिद्धा चेदि' इस प्रकारसे सूत्र दिया है और उसे ओषसूत्र कहा है। हमारी अ. प्रतिमें इसपर ७४, आ. में १७४, तथा स. में १७९ की संख्या पायी जाती है जो उन प्रतियों की पूर्व सूत्रगणनाके क्रमसे है। पर स्पष्टतः वह सूत्र पृथक् नहीं है, भ्रवलाकारने पूर्वोक्त ९ से २३ तकके ओष सूत्रोंका प्रकृत विषयकी वहाँसे उत्पत्ति बतलाने के लिये समष्टिरूपसे उल्लेख मात्र किया है।

इस भागमें गाथाएं भी बहुत थोड़ी पायी जाती है, जिसका कारण यहाँ प्रतिपादित विषयकी विशेषता है। अवतरण गाथाओंकी संख्या यहाँ केवल १३ है जिनमेंसे एक (नं २२०) कुंद-कुंदके बोधपाहुडमें और दो (२२३, २२४) प्राकृत पंचसंप्रहमें* भी पायी जाती हैं। गाथा नं. (२२८) 'उत्तं च पिंडियाए' ऐसा कहकर उद्धृत की गई है। हमने इस गाथाकी खोज कराई, पर बीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने हमें सूचित किया कि यह गाथा न तो प्राकृत पंचसंप्रह में है न तिलोपपण्णतिमें और न श्वेताम्बरीय कर्मप्रकृति, पंचसंप्रह, जीवसमास विशेषावश्यक आदि ग्रन्थोंमें है। जान पड़ता है 'पिंडिका' नामका कोई प्राचीन ग्रंथ रहा है जो अवतक अज्ञात है। इन तीन गाथाओंको छोड़कर शेष सब कहीं जैसी की तैसी और कहीं किंचित् पाठभेद को लिये हुए गोम्मटसार जीवकांडमें भी संगृहीत हैं।

इस विभागमें संस्कृत केवल प्रारंभमें थोड़ी सी पायी जाती है। शेष समस्त रचना प्राकृतमें ही है। पर यहाँ विषयकी विशेषता ऐसी है कि उसमें प्रतिपादन और विवेचनकी गुंजा-इश कम है। अतएव जैसी साहित्यिक वाक्यशैली प्रथम विभागमें पायी जाती है वैसी यहाँ बहुत कम है। जहाँ कहीं शंका-समाधानका प्रसंग आ गया है, वहीं साहित्यिक शैली पायी जाती है। ऐसे शंका समाधान इस विभागमें ३३ पाये जाते हैं। शेष भागमें तो गुणस्थान और मार्गणास्थानकी अपेक्षा जीवविशेषोंमें गुणस्थान आदि बीस प्ररूपणाओंकी संख्या मात्र गिनायी गयी है, जिसमें वाक्य रचनाकी व्याकरणात्मक शुद्धिपर ध्यान नहीं दिया गया। पद कहीं सवि-भक्तिक हैं और कहीं विभक्ति-रहित अपनेप्राति पदिक रूपमें। समास-बंधन भी शिथिलता पाया जाता है, उदाहरणार्थ 'आहारभयमेहुणसण्णा चेदि' (पृ. ४१३)। चेदि से पूर्वके पद समास-

* यह ग्रंथ अभी अभी 'बीरसेवा मन्दिर सरसावा' द्वारा प्रकाशमें लाया जा रहा है। उसमें उक्त गाथा-ओंके होनेकी सूचना हमें वहाँके पं. परमानन्दजी शास्त्री द्वारा मिली।

युक्त समझे जाय, या अलग अलग ? यदि अलग अलग लें तो वे सब विभक्तिहीन रह जाते हैं, यदि समासरूप लें तो 'च' की कोई सार्थकता नहीं रह जाती। संशोधनमें यह प्रयत्न किया गया है कि यथाशक्ति प्रतियोंके पाठको सुरक्षित रखते हुए जितने कम सुधारसे काम चल सके उतना कम सुधार करना। किंतु अविभक्तिक पदोंको जानबूझकर विना यथेष्ट कारणके सविभक्तिक बनानेका प्रयत्न नहीं किया गया। इस कारण प्ररूपणाओंमें बहुतायतसे विभक्तिहीन पद पाये जायेंगे।

इन प्ररूपणाओंमें आलापोंके नामनिर्देश स्वभावतः पुनः पुनः आये हैं। प्रतियोंमें इन्हें प्रायः संक्षेपतः आदिके अक्षर देकर बिन्दु रखकर ही सूचित किया है, जैसे 'गुणद्वय' के स्थानपर गुण०, 'पञ्चत्तौ' के स्थानपर प० आदि। यदि सब प्रतियोंमें ये संक्षिप्त रूप एकसे होते, तो समझा जाता कि वे मूलादर्श प्रतिके अनुसार हैं, अतः मुद्रितरूपमें भी उन्हें वैसे ही रखना कदाचित् उपयुक्त होता। किन्तु किसी प्रतिमें एक अक्षर लिखकर, किसीमें दो अक्षर लिखकर आदि भिन्नरूपसे संक्षेप बनाये गये हैं और किसी प्रतिमें वे पूरे रूपमें भी लिखे हैं। इसप्रकार बिन्दुसहित संक्षिप्तरूप करंजाकी प्रतिमें सबसे अधिक और आराकी प्रतिमें सबसे कम हैं। इस अव्यवस्थाको देखते हुए आदर्श प्रतिमें बिन्दु हैं या नहीं, इस विषयमें शंका हो जानेके कारण हमने इन संक्षिप्त रूपोंका उपयोग न करके पूरे शब्द लिखना ही उचित समझा।

प्रत्येक आलापमें बीस बीस प्ररूपणाएं हैं। पर कहीं कहीं प्रतियोंमें एक शब्दसे लगाकर पूरे आलाप तक भी छूटे हुए पाये जाते हैं। इनकी पूर्ति एक दूसरी प्रतियोंसे हो गई है, किन्तु कहीं कहीं उपलब्ध सभी प्रतियोंमें पाठ छूटे हुए हैं जैसा कि पाठ-टिप्पण व प्रति-मिलान और छूटे हुए पाठोंकी तालिकासे ज्ञात हो सकेगा। इन पाठोंकी पूर्ति विषयको देख समझकर कर्ताकी शैलीमें ही उन्हींके अन्वय आये हुए शब्दोंद्वारा करदी गई है। जहां ऐसे जोड़े हुए पाठ एक दो शब्दोंसे अधिक बड़े हैं वहां वे कोष्ठकके भीतर रख दिये गये हैं।

मूलमें जहां कोई विवाद नहीं है वहां प्ररूपणाओंकी प्रत्येक स्थानमें संख्या मात्र दी गई है। अनुवादमें सर्वत्र उन प्ररूपणाओंकी स्पष्ट सूचना कर देनेका प्रयत्न किया गया है और मूलका सावधानीसे अनुसरण करते हुए भी वाक्यरचना यथाशक्ति मुहावरोंके अनुसार और सरल रखी गई है।

मूलमें जो आलाप आये हैं उनको और भी स्पष्ट करने तथा दृष्टिपातमात्रसे ज्ञेय बनानेके लिये प्रत्येक आलापका नकशा भी बनाकर उसी पृष्ठपर नीचे दे दिया गया है। इनमें संख्याएं अंकित करनेमें सावधानी तो पूरी रखी गई है, फिर भी संभव है दृष्टिदोषसे दो चार जगह एकाध अंक अशुद्ध छप गया हो। पर मूल और अनुवाद साम्हने होनेसे उनके कारण पाठकोंको कोई भ्रम न हो सकेगा। नकशोंका मिलान गोम्मटसारके प्रस्तुत प्रकरणसे भी कर लिया गया है।

सत्प्ररूपणा-आलापसूची

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
ओघ आलाप		४१५-४४८
सामान्य		४१५
पर्याप्त	१	४२०
अपर्याप्त	२	४२१
१ मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	३	४२३
पर्याप्त	४	४२४
अपर्याप्त	५	४२५
२ सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	६	४२६
पर्याप्त	७	४२६
अपर्याप्त	८	४२७
३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि	९	४२८
४ असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१०	४२८
पर्याप्त	११	४२९
अपर्याप्त	१२	४३०
५ संयतासंयत	१३	४३१
६ प्रमत्तसंयत्त	१४	४३२
७ अप्रमत्तसंयत	१५	४३३
८ अपूर्वकरण	१६	४३४
९ अनिवृत्तिकरण		
प्रथम भाग	१७	४३५
द्वितीय ,,	१८	४३६
तृतीय ,,	१९	४३६
चतुर्थ ,,	२०	४३७
पंचम ,,	२१	४३८
१० सूक्ष्मसाम्पराय	२२	४३८
११ उपशान्तकषाय	२३	४३९
१२ क्षीणकषाय	२४	४४०
१३ सयोगिकेवली	२५	४४०
१४ अयोगिकेवली	२६	४४५
१५ सिद्ध	२७	४४७

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
आदेश आलाप		
१ गतिमार्गणा		
१ नरकगति		
सामान्य	२८	४४८
पर्याप्त	२९	४४९
अपर्याप्त	३०	४५०
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	३१	४५१
पर्याप्त	३२	४५१
अपर्याप्त	३३	४५२
सासादनसम्यग्दृष्टि	३४	४५३
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३५	४५३
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	३६	४५४
पर्याप्त	३७	४५४
अपर्याप्त	३८	४५५
प्रथमपृथिवी		
सामान्य	३९	४५६
पर्याप्त	४०	४५७
अपर्याप्त	४१	४५८
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	४२	४५९
पर्याप्त	४३	४५९
अपर्याप्त	४४	४६०
सासादनसम्यग्दृष्टि	४५	४६१
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४६	४६१
असंयतसम्यग्दृष्टि—		
सामान्य	४७	४६२
पर्याप्त	४८	४६३
अपर्याप्त	४९	”
द्वितीयपृथिवी		
सामान्य	५०	४६४
पर्याप्त	५१	४६५

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	५२	"	पर्याप्त	८०	"
मिथ्यादृष्टि			अपर्याप्त	८१	४८८
सामान्य	५३	४६६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	८२	४८९
पर्याप्त	५४	४६७	असंयतसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	५५	"	सामान्य	८३	४८९
सासादनसम्यग्दृष्टि	५६	४६८	पर्याप्त	८४	४९०
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५७	४६९	अपर्याप्त	८५	४९१
असंयतसम्यग्दृष्टि	५८	४६९	संयतासंयत	८६	४९१
तृतीयादि पृथिवियोंके			पंचेन्द्रियतिर्यंचपर्याप्त		४९२
आलाप		४७०	पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिमती		
२ तिर्यंचगति—			सामान्य	८७	४९२
सामान्य	५९	४७१	पर्याप्त	८८	४९३
पर्याप्त	६०	४७२	अपर्याप्त	८९	४९४
अपर्याप्त	६१	४७३	मिथ्यादृष्टि		
मिथ्यादृष्टि			सामान्य	९०	४९४
सामान्य	६२	४७४	पर्याप्त	९१	४९५
पर्याप्त	६३	४७५	अपर्याप्त	९२	४९६
अपर्याप्त	६४	"	सासादनसम्यग्दृष्टि		
सासादनसम्यग्दृष्टि			सामान्य	९३	४९७
सामान्य	६५	४७६	पर्याप्त	९४	४९७
पर्याप्त	६६	४७७	अपर्याप्त	९५	४९८
अपर्याप्त	६७	४७८	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	९६	४९८
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	६८	४७८	असंयतसम्यग्दृष्टि	९७	४९९
असंयतसम्यग्दृष्टि			संयतासंयत	९८	५००
सामान्य	६९	४७९	पंचेन्द्रियतिर्यंचलब्ध—		
पर्याप्त	७०	४८०	पर्याप्तक	९९	५००
अपर्याप्त	७१	४८०	३ मनुष्यगति		
संयतासंयत	७२	४८१	सामान्य	१००	५०१
पंचेन्द्रियतिर्यंच			पर्याप्त	१०१	५०२
सामान्य	७३	४८२	अपर्याप्त	१०२	५०४
पर्याप्त	७४	४८३	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	७५	४८४	सामान्य	१०३	५०५
मिथ्यादृष्टि			पर्याप्त	१०४	५०५
सामान्य	७६	४८५	अपर्याप्त	१०५	५०६
पर्याप्त	७७	"	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	७८	४८६	सामान्य	१०६	५०७
सासादनसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	१०७	"
सामान्य	७९	४८७	अपर्याप्त	१०८	५०८

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१०९	५०८	४ देवगति		
असंयतसम्यग्दृष्टि			सामान्य	१४०	५३१
सामान्य	११०	५०९	पर्याप्त	१४१	५३२
पर्याप्त	१११	५१०	अपर्याप्त	१४२	५३६
अपर्याप्त	११२	५१०	मिथ्यादृष्टि		
संयतासंयत	११३	५११	सामान्य	१४३	५३७
प्रमत्तसंयतादि		५१२	पर्याप्त	१४४	५३८
मनुष्यपर्याप्त		५१२	अपर्याप्त	१४५	५३८
मनुष्यनी			सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	११४	५१३	सामान्य	१४६	५३८
पर्याप्त	११५	५१४	पर्याप्त	१४७	५३९
अपर्याप्त	११६	५१५	अपर्याप्त	१४८	५४०
मिथ्यादृष्टि			सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१४९	५४०
सामान्य	११७	५१६	असंयतसम्यग्दृष्टि		
पर्याप्त	११८	५१७	सामान्य	१५०	५४१
अपर्याप्त	११९	५१७	पर्याप्त	१५१	५४२
सासादनसम्यग्दृष्टि			अपर्याप्त	१५२	५४२
सामान्य	१२०	५२८	भवनत्रिक		
पर्याप्त	१२१	५२९	सामान्य	१५३	५४३
अपर्याप्त	१२२	५२९	पर्याप्त	१५४	५४४
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१२३	५२०	अपर्याप्त	१५५	५४४
असंयतसम्यग्दृष्टि	१२४	५२०	मिथ्यादृष्टि		
संयतासंयत	१२५	५२१	सामान्य	१५६	५४५
प्रमत्तसंयत	१२६	५२२	पर्याप्त	१५७	५४६
अप्रमत्तसंयत	१२७	५२२	अपर्याप्त	१५८	५४६
अपूर्वकरण	१२८	५२३	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अनिवृत्तिप्रथमभाग	१२९	५२४	सामान्य	१५९	५४७
,, द्वितीय भाग	१३०	५२४	पर्याप्त	१६०	५४८
,, तृतीय ,,	१३१	५२५	अपर्याप्त	१६१	५४८
,, चतुर्थ ,,	१३२	५२६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१६२	५४९
,, पंचम ,,	१३३	५२६	असंयतसम्यग्दृष्टि	१६३	५५०
सूक्ष्मसाम्पराय	१३४	५२७	भवनत्रिक पुरुषवेदी		५५०
उपशान्तकषाय	१३५	५२८	भवनत्रिक स्त्रीवेदी		५५०
क्षीणकषाय	१३६	५२८	सौधर्म-पेशान		
सयोगिकेवली	१३७	५२९	सामान्य	१६४	५५१
अयोगिकेवली	१३८	५३०	पर्याप्त	१६५	५५१
लब्धपर्याप्तकमनुष्य	१३९	५३०	अपर्याप्त	१६६	५५२

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			सूक्ष्म एकेन्द्रिय		
सामान्य	१६७	५५३	सामान्य	१८९	५७३
पर्याप्त	१६८	५५४	पर्याप्त	१९०	५७४
अपर्याप्त	१६९	"	अपर्याप्त	१९१	"
सासादनसम्पग्दृष्टि			सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७५
सामान्य	१७०	५५५	" " लब्धपर्याप्त		"
पर्याप्त	१७१	५५६	२ द्वीन्द्रिय		
अपर्याप्त	१७२	"	सामान्य	१९२	५७५
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१७३	५५७	पर्याप्त	१९३	५७६
असंयतसम्पग्दृष्टि			अपर्याप्त	१९४	५७७
सामान्य	१७४	५५७	द्वीन्द्रिय पर्याप्त		५७७
पर्याप्त	१७५	५५८	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१७६	५५९	३ त्रीन्द्रिय		
सौधर्म पेशान पुरुषवेदी		५६०	सामान्य	१९५	५७७
सौधर्म पेशान स्त्रीवेदी		५६०	पर्याप्त	१९६	५७८
सानत्कुमार माहेन्द्र			अपर्याप्त	१९७	५७९
सामान्य	१७७	५६१	त्रीन्द्रिय पर्याप्त		५७९
पर्याप्त	१७८	५६२	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१७९	"	४ चतुरिन्द्रिय		
मिथ्यादृष्ट्यादि		५६३	सामान्य	१९८	५७९
ब्रह्म से नौ प्रवेयक		५६३	पर्याप्त	१९९	५८०
नौ अनुदिश पांच अनुत्तर			अपर्याप्त	२००	५८१
सामान्य	१८०	५६४	चतुरिन्द्रियपर्याप्त		५८२
पर्याप्त	१८१	५६५	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१८२	५६८	५ पंचेन्द्रिय		
५ सिद्धगति		५६८	सामान्य	२०१	५८२
२ इन्द्रियमार्गणा			पर्याप्त	२०२	५८३
१ एकेन्द्रिय			अपर्याप्त	२०३	५८४
सामान्य	१८३	५६९	मिथ्यादृष्टि		
पर्याप्त	१८४	५७०	सामान्य	२०४	५८४
अपर्याप्त	१८५	५७१	पर्याप्त	२०५	५८५
बादर एकेन्द्रिय			अपर्याप्त	२०६	५८६
सामान्य	१८६	५७१	सासादनादि		५८७
पर्याप्त	१८७	५७२	असंज्ञीपंचेन्द्रिय		
अपर्याप्त	१८८	"	सामान्य	२०७	५८७
बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७३	पर्याप्त	२०८	"
" " लब्धपर्याप्त		५७३	अपर्याप्त	२०९	५८८
			पंचेन्द्रियलब्धपर्याप्त	२१०	५८९

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
संज्ञीपंचेन्द्रिय	२११	५८९	बादरसाधारणवनस्पति		
असंज्ञीपंचेन्द्रिय	२१२	५९०	सामान्य	२३१	६१८
६ अनिन्द्रिय		५९०	पर्याप्त	२३२	६१९
३ कायमार्गणा			अपर्याप्त	२३३	६२०
सामान्य	२१३	५९१	बादरसाधारणपर्याप्त		६२०
पर्याप्त	२१४	६०१	” लब्धपर्याप्त		”
अपर्याप्त	२१५	६०२	सूक्ष्मसाधारण		”
मिथ्यादृष्ट्यादि		६०४	६ त्रसकायिक		
१ पृथिवीकायिक			सामान्य	२३४	६२१
सामान्य	२१६	६०४	पर्याप्त	२३५	६२२
पर्याप्त	२१७	६०५	अपर्याप्त	२३६	६२३
अपर्याप्त	२१८	६०६	मिथ्यादृष्टि		
बादरपृथिवीकायिक			सामान्य	२३७	६२४
सामान्य	२१९	६०७	पर्याप्त	२३८	६२५
पर्याप्त	२२०	६०८	अपर्याप्त	२३९	६२६
अपर्याप्त	२२१	”	सासादनादि		६२७
बादरपृथिवीकायिकपर्याप्त		६०९	७ अकायिक	२४०	६२७
” लब्धपर्याप्त		”	त्रसकायिक पर्याप्त		६२७
सूक्ष्मपृथिवीकायिक		”	” लब्धपर्याप्त	२४१	”
२ अप्कायिक		६०९	४ योगमार्गणा		
३ अग्निकायिक		६१०	१ मनोयोगी	२४२	६२८
४ वायुकायिक		६११	मिथ्यादृष्टि	२४३	६२९
५ वनस्पतिकायिक			सासादन०	२४४	६३०
सामान्य	२२२	६१२	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२४५	६३०
पर्याप्त	२२३	६१३	असंयतसम्यग्दृष्टि	२४६	६३१
अपर्याप्त	२२४	”	संयतासंयत	२४७	६३२
प्रत्येकवनस्पतिकायिक			प्रमत्तसंयत	२४८	६३२
सामान्य	२२५	६१४	अप्रमत्तसंयतादि		६३३
पर्याप्त	२२६	६१५	सत्यमनोयोगी		”
अपर्याप्त	२२७	”	असत्यमृषामनोयोगी		”
प्रत्येकवनस्पतिकायिक पर्याप्त		६१६	मृषामनोयोगी	२४९	६३३
” ” लब्धपर्याप्त		”	मिथ्यादृष्ट्यादि		६३४
बादरनिगोदप्रतिष्ठित		”	२ वचनयोगी	२५०	६३४
साधारणवनस्पतिकायिक			मिथ्यादृष्टि	२५१	६३५
सामान्य	२२८	६१६	सासादनादि		६३६
पर्याप्त	२२९	६१७	सत्यवचनयोगी		६३६
अपर्याप्त	२३०	६१८	मृषावचनयोगी		”

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सत्यमृषावचनयोगी		"	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२८२	६६३
असत्यमृषावचनयोगी		"	असंयतसम्यग्दृष्टि	२८३	"
३ काययोगी			वैक्रियिकमिश्रकाययोगी	२८४	६६४
सामान्य	२५२	६३७	मिथ्यादृष्टि	२८५	६६५
पर्याप्त	२५३	६३८	सासादनसम्यग्दृष्टि	२८६	६६५
अपर्याप्त	२५४	६३९	असंयतसम्यग्दृष्टि	२८७	६६६
मिथ्यादृष्टि			आहारककाययोगी	२८८	६६७
सामान्य	२५५	६४०	आहारकमिश्रकाययोगी	२८९	६६८
पर्याप्त	२५६	६४१	कर्मणकाययोगी	२९०	६६८
अपर्याप्त	२५७	"	मिथ्यादृष्टि	२९१	६७०
सासादनसम्यग्दृष्टि			सासादनसम्यग्दृष्टि	२९२	६७०
सामान्य	२५८	६४२	असंयतसम्यग्दृष्टि	२९३	६७१
पर्याप्त	२५९	६४३	सयोगिकेवली	३९४	६७२
अपर्याप्त	२६०	"	४ अयोगी		६७२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२६१	६४४			
असंयतसम्यग्दृष्टि			५ वेदमार्गणा		
सामान्य	२६२	६४४	१ स्त्रीवेदी		
पर्याप्त	२६३	६४५	सामान्य	२९५	६७३
अपर्याप्त	२६४	६४६	पर्याप्त	२९६	६७४
संयतासंयत	२६५	६४६	अपर्याप्त	२९७	"
प्रमत्तसंयत	२६६	६४७	मिथ्यादृष्टि		
अप्रमत्तसंयत	२६७	६४८	सामान्य	२९८	६७५
अपूर्वकरणादि		६४८	पर्याप्त	२९९	६७६
सयोगिकेवली	२६८	६४८	अपर्याप्त	३००	"
औद्धारिककाययोगी	२६९	६४९	सासादनसम्यग्दृष्टि		
मिथ्यादृष्टि	२७०	६५०	सामान्य	३०१	६७७
सासादनसम्यग्दृष्टि	२७१	६५१	पर्याप्त	३०२	६७८
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२७२	६५१	अपर्याप्त	३०३	"
असंयतसम्यग्दृष्टि	२७३	६५२	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३०४	६७९
संयतासंयतादि		"	असंयतसम्यग्दृष्टि	३०५	६७९
औद्धारिकमिश्रकाययोगी	२७४	६५३	संयतासंयत	३०६	६८०
मिथ्यादृष्टि	२७५	६५५	प्रमत्तसंयत	३०७	६८१
सासादनसम्यग्दृष्टि	२७६	६५६	अप्रमत्तसंयत	३०८	६८२
असंयतसम्यग्दृष्टि	२७७	"	अपूर्वकरण	३०९	६८२
सयोगिकेवली	२७८	६५८	अनिवृत्तिकरण	३१०	६८३
वैक्रियिककाययोगी	२७९	६६१			
मिथ्यादृष्टि	२८०	६६२	२ पुरुषवेदी		
सासादनसम्यग्दृष्टि	२८१	६६२	सामान्य	३११	६८४
			पर्याप्त	३१२	६८४

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	३१३	६८५	सासादनसम्यग्दृष्टि		
मिथ्यादृष्टि			सामान्य	३३८	७०४
सामान्य	३१४	६८६	पर्याप्त	३३९	७०५
पर्याप्त	३१५	"	अपर्याप्त	३४०	७०५
अपर्याप्त	३१६	६८७	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३४१	७०६
सासादनादि		६८८	असंयतसम्यग्दृष्टि		
३ नपुंसकवेदी			सामान्य	३४२	७०७
सामान्य	३१७	६८८	पर्याप्त	३४३	"
पर्याप्त	३१८	६८९	अपर्याप्त	३४४	७०८
अपर्याप्त	३१९	६९०	संयतासंयत	३४५	७०९
मिथ्यादृष्टि			प्रमत्तसंयत	३४६	७०९
सामान्य	३२०	६९०	अप्रमत्तसंयत	३४७	७१०
पर्याप्त	३२१	६९१	अपूर्वकरण	३४८	७११
अपर्याप्त	३२२	६९२	अनिवृत्तिकरण		
सासादनसम्यग्दृष्टि			प्र० भा०	३४९	७११
सामान्य	३२३	६९३	" द्वि० भा०	३५०	७१२
पर्याप्त	३२४	"	मान, माया और		
अपर्याप्त	३२५	६९४	लोभकषायी		७१२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३२६	६९५	अकषायी	३५१	७१३
असंयतसम्यग्दृष्टि			उपशान्तकषायादि		७१४
सामान्य	३२७	६९५	७ ज्ञानमार्गणा		७१४
पर्याप्त	३२८	६९६	मति-श्रुत-अज्ञानी		
अपर्याप्त	३२९	६९७	सामान्य	३५२	७१४
संयतासंयत	३३०	६९७	पर्याप्त	३५३	७१५
प्रमत्तसंयतादि		६९८	अपर्याप्त	३५४	७१६
४ अपगतवेदी	३३१	६९८	मिथ्यादृष्टि		
अनिवृत्तिकरण			सामान्य	३५५	७१६
द्वितीय भागादि		६९९	पर्याप्त	३५६	७१७
६ कषायमार्गणा			अपर्याप्त	३५७	७१८
क्रोधकषायी			सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	३३२	७००	सामान्य	३५८	७१९
पर्याप्त	३३३	७०१	पर्याप्त	३५९	"
अपर्याप्त	३३४	"	अपर्याप्त	३६०	७२०
मिथ्यादृष्टि			विभंगज्ञानी	३६१	७२०
सामान्य	३३५	७०२	मिथ्यादृष्टि	३६२	७२१
पर्याप्त	३३६	७०३	सासादनसम्यग्दृष्टि	३६३	७२२
अपर्याप्त	३३७	७०४	मतिश्रुतज्ञानी		

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सामान्य	३६४	७२२
पर्याप्त	३६५	७२३
अपर्याप्त	३६६	७२४
असंयतसम्यग्दृष्टि—		
सामान्य	३६७	७२४
पर्याप्त	३६८	७२५
अपर्याप्त	३६९	७२६
संयतासंयतादि		७२६
अवधिज्ञानी		७२६
मनःपर्ययज्ञानी	३७०	७२७
प्रमत्तसंयतादि		७२९
केवलज्ञानी	३७१	७२९
सयोगी आदि		७३०
८ संयममार्गणा	३७२	७३०
प्रमत्तसंयत	३७३	७३१
अप्रमत्तसंयत	३७४	७३२
अपूर्वकरणादि		७३२
सामायिकशुद्धिसंयत	३७५	७३३
प्रमत्तसंयतादि		७३३
छेदोपस्थापनासंयत		७३३
परिहारशुद्धिसंयत	३७६	७३३
प्रमत्तसंयतादि		७३४
सूक्ष्मसाम्परायसंयत		७३५
यथाख्यातसंयत	३७७	७३५
उपशान्तकथायादि		७३५
असंयत		७३६
सामान्य	३७८	७३६
पर्याप्त	३७९	७३६
अपर्याप्त	३८०	७३७
मिथ्यादृष्ट्यादि		७३८
९ दर्शनमार्गणा		७३८
१ चक्षुदर्शनी		७३८
सामान्य	३८१	७३८
पर्याप्त	३८२	७३९
अपर्याप्त	३८३	७४०
मिथ्यादृष्टि		७४१
सामान्य	३८४	७४१
पर्याप्त	३८५	७४१

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	३८६	७४२
सासादनसम्यग्दृष्ट्यादि		७४३
२ अचक्षुदर्शनी		७४३
सामान्य	३८७	७४३
पर्याप्त	३८८	७४४
अपर्याप्त	३८९	७४४
मिथ्यादृष्टि		७४५
सामान्य	३९०	७४५
पर्याप्त	३९१	७४६
अपर्याप्त	३९२	७४७
सासादनसम्यग्दृष्ट्यादि		७४७
३ अवधिदर्शनी		७४८
सामान्य	३९३	७४८
पर्याप्त	३९४	७४८
अपर्याप्त	३९५	७४९
असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि		७५०
४ केवलदर्शनी		७५०
१० लेश्यामार्गणा		७५०
१ कृष्णलेश्या		७५०
सामान्य	३९६	७५०
पर्याप्त	३९७	७५१
अपर्याप्त	३९८	७५२
मिथ्यादृष्टि		७५२
सामान्य	३९९	७५३
पर्याप्त	४००	७५३
अपर्याप्त	४०१	७५४
सासादनसम्यग्दृष्टि		७५५
सामान्य	४०२	७५५
पर्याप्त	४०३	७५५
अपर्याप्त	४०४	७५६
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४०५	७५७
असंयतसम्यग्दृष्टि		७५७
सामान्य	४०६	७५७
पर्याप्त	४०७	७५८
अपर्याप्त	४०८	७५९
२ नीललेश्या		७५९
३ कापोतलेश्या		७५९
सामान्य	४०९	७५९

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
पर्याप्त	४१०	७६०	अपर्याप्त	४४०	७८१
अपर्याप्त	४११	७६१	मिथ्यादृष्टि		
मिथ्यादृष्टि			सामान्य	४४१	७८१
सामान्य	४१२	७६२	पर्याप्त	४४२	७८२
पर्याप्त	४१३	७६२	अपर्याप्त	४४३	७८३
अपर्याप्त	४१४	७६३	सासादनसम्यग्दृष्टि		
सासादनसम्यग्दृष्टि			सामान्य	४४४	७८३
सामान्य	४१५	७६४	पर्याप्त	४४५	७८४
पर्याप्त	४१६	"	अपर्याप्त	४४६	७८५
अपर्याप्त	४१७	७६५	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४४७	७८५
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४१८	७६६	असंयतसम्यग्दृष्टि		
असंयतसम्यग्दृष्टि			सामान्य	४४८	७८६
सामान्य	४१९	७६६	पर्याप्त	४४९	७८६
पर्याप्त	४२०	७६७	अपर्याप्त	४५०	७८७
अपर्याप्त	४२१	७६८	संयतासंयत	४५१	७८८
४ तेजोलेख्या			प्रमत्तसंयत	४५२	७८८
सामान्य	४२२	७६८	अप्रमत्तसंयत	४५३	७८९
पर्याप्त	४२३	७६९	६ शुक्कलेख्या		
अपर्याप्त	४२४	७७०	सामान्य	४५४	७९०
मिथ्यादृष्टि			पर्याप्त	४५५	७९१
सामान्य	४२५	७७१	अपर्याप्त	४५६	"
पर्याप्त	४२६	"	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	४२७	७७२	सामान्य	४५७	७९२
सासादनसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	४५८	७९३
सामान्य	४२८	७७३	अपर्याप्त	४५९	"
पर्याप्त	४२९	"	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	४३०	७७४	सामान्य	४६०	७९४
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४३१	७७५	पर्याप्त	४६१	७९५
असंयतसम्यग्दृष्टि			अपर्याप्त	४६२	७९६
सामान्य	४३२	७७६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४६३	७९६
पर्याप्त	४३३	"	असंयतसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	४३४	७७७	सामान्य	४६४	७९७
संयतासंयत	४३५	७७७	पर्याप्त	४६५	७९८
प्रमत्तसंयत	४३६	७७८	अपर्याप्त	४६६	"
अप्रमत्तसंयत	४३७	७७९	संयतासंयत	४६७	७९९
५ पद्मलेख्या			प्रमत्तसंयत	४६८	७९९
सामान्य	४३८	७७९	अप्रमत्तसंयत	४६९	८००
पर्याप्त	४३९	७८०	अपूर्वकरणादि		८०१

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
७ अलेश्य		८०१	अपर्याप्त	४९४	८१९
११ भव्यमार्गणा			असंयतसम्यग्दृष्टि		
भव्यसिद्धिक	"	"	सामान्य	४९५	८२०
अभव्यसिद्धिक			पर्याप्त	४९६	"
सामान्य	४७०	८०१	अपर्याप्त	४९७	८२१
पर्याप्त	४७१	८०२	संयतासंयत	४९८	८२१
अपर्याप्त	४७२	८०३	प्रमत्तसंयत	४९९	८२२
भव्याभव्य-विमुक्त		८०३	अप्रमत्तसंयत	५००	८२३
१२ सम्यक्त्वमार्गणा			अपूर्वकरणादि		८२५
सामान्य	४७३	८०३	मिथ्यात्वादि		८२५
पर्याप्त	४७४	८०४	१३ संज्ञिमार्गणा		
अपर्याप्त	४७५	८०५	१ संज्ञी		
असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि		८०६	सामान्य	५०१	८२५
१ क्षायिकसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	५०२	८२६
सामान्य	४७६	८०७	अपर्याप्त	५०३	८२७
पर्याप्त	४७७	८०८	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	४७८	"	सामान्य	५०४	८२७
असंयतसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	५०५	८२८
सामान्य	४७९	८०९	अपर्याप्त	५०६	८२९
पर्याप्त	४८०	८१०	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	४८१	८११	सामान्य	५०७	८२९
संयतासंयत	४८२	८११	पर्याप्त	५०८	८३०
प्रमत्तसंयतादि		८१२	अपर्याप्त	५०९	"
२ वेदकसम्यग्दृष्टि			सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५१०	८३१
सामान्य	४८३	८१२	असंयतसम्यग्दृष्टि		
पर्याप्त	४८४	८१३	सामान्य	५११	८३२
अपर्याप्त	४८५	"	पर्याप्त	५१२	८३२
असंयतसम्यग्दृष्टि			अपर्याप्त	५१३	८३३
सामान्य	४८६	८१४	संयतासंयतादि		८३३
पर्याप्त	४८७	८१५	२ असंज्ञी		
अपर्याप्त	४८८	"	सामान्य	५१४	८३४
संयतासंयत	४८९	८१६	पर्याप्त	५१५	"
प्रमत्तसंयत	४९०	८१६	अपर्याप्त	५१६	८३५
अप्रमत्तसंयत	४९१	८१७	१४ आहारमार्गणा		
३ उपशमसम्यग्दृष्टि			सामान्य	५१७	८३६
सामान्य	४९२	८१८	पर्याप्त	५१८	८३७
पर्याप्त	४९३	८१८	अपर्याप्त	५१९	८३८

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			अप्रमत्तसंयत	५३२	८४६
सामान्य	५२०	८३९	अपूर्वकरण	५३३	८४७
पर्याप्त	५२१	"	अनिवृत्तिकरण	५३४	"
अपर्याप्त	५२२	८४०	सूक्ष्मसाम्पराय	५३५	८४८
सासादनसम्यग्दृष्टि			उपशान्तकषाय	५३६	८४९
सामान्य	५२३	८४०	क्षीणकषाय	५३७	"
पर्याप्त	५२४	८४१	सयोगिकेवली	५३८	८५०
अपर्याप्त	५२५	८४२	अनाहारी	५३९	८५१
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५२६	"	मिथ्यादृष्टि	५४०	८५२
असंयतसम्यग्दृष्टि			सासादनसम्यग्दृष्टि	५४१	"
सामान्य	५२७	८४३	असंयतसम्यग्दृष्टि	५४२	८५३
पर्याप्त	५२८	"	सयोगिकेवली	५४३	८५४
अपर्याप्त	५२९	८४४	अयोगिकेवली	५४४	"
संयतासंयत	५३०	८४५	सिद्धभगवान्	५४५	८५५
प्रमत्तसंयत	५३१	"			

सत्प्ररूपणाके

आलापान्तर्गत विशेष विषयोंकी सूची

क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.	क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.
१	प्ररूपणाका स्वरूप और भेद- निरूपण	४११	८	अपर्याप्त कालमें तीनों सम्यक्त्वोंके होनेका कारण	४३०
२	प्राणका स्वरूप और प्राणोंका पृथक् निर्देश कथन	४१२	९	भावलेख्याके स्वरूपमें मतभेद और उसका निराकरण	४३१
३	संज्ञाके भेद और उनका पृथक् निर्देश	४१३	१०	अप्रमत्तसंयतके तीन संज्ञाओंके होनेमें हेतु	४३३
४	उपयोगका स्वरूप और उसका पृथक् निर्देश	४१३	११	अपूर्वकरण गुणस्थानमें वचनयोग और काययोगके होनेका कारण	४३४
५	प्ररूपणाओंका सूत्रोक्तत्व-अनुक्तत्व- विचार और भेदाभेद निरूपण	४१४	१२	उपशान्तकषायादि गुणस्थानोंमें शुक्लेश्या होनेका कारण	४३९
६	अपर्याप्तकालमें द्रव्यलेख्या कापोत और शुक्ल ही क्यों होती है, इस बातका विचार	४२२	१३	कपाट, प्रतर और लोकपूरण समु- द्घातगत केवलीके पर्याप्त-अप- र्याप्तत्वका विचार	४४१
७	अपर्याप्त कालमें छहों भावलेख्या- ओंके होनेका कारण	४२२	१४	भावेन्द्रियका लक्षण और केवलीके उसके अभावका समर्थन	४४४

क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.	क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.
१५	अयोगिकेवलीके एक आयुप्राणका समर्थन	४४५		सम्यग्दृष्टि जीवोंके भवसे छहों लेश्याओंके अस्तित्वका प्रतिपादन	६५६
१६	कालाकालाभास द्रव्यलेश्याका स्वरूप	४४८	३१	औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके आयु और कायबल प्राणोंके अतिरिक्त शेष प्राणोंके अभावका समर्थन	६५८
१७	तिर्यचोंके अपर्याप्तकालमें क्षायिक और क्षायोपक्षमिक सम्यक्त्वका समर्थन	४८१	३२	औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके केवल एक कापोतलेश्या होनेका समर्थन	६६०
१८	संयतासंयत तिर्यचोंके क्षायिक-सम्यक्त्वके अभावका कारण	४८२	३३	आहारककाययोगी जीवोंके खीवेद नपुंसकवेद, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धि संयमके अभावके कारणका प्रतिपादन	६६७
१९	अयोगिकेवलीके अनाहारकत्व-समर्थन	५०३	३४	कर्मणकाययोगी जीवोंके अनाहार-कत्वका समर्थन	६६९
२०	असंयतसम्यक्त्वी मनुष्यके अपर्याप्त कालमें एक पुरुषवेद तथा भावलेश्याओंके होनेका कारण	५१०	३५	खीवेदी प्रमत्तसंयतके परिहार-संयमादिके अभावका प्रतिपादन	६८१
२१	मनुष्यनियोंके आहारकशरीर न होनेका कारण	५१२	३६	विवक्षित ज्ञान और दर्शनमार्ग-णाके आलाप कहनेपर शेष ज्ञान और दर्शनके नहीं बतानेके कारण का प्रतिपादन	७२६
२२	देवोंके पर्याप्तकालमें छहों द्रव्य-लेश्याओंका समर्थन	५३२	३७	मनःपर्ययज्ञानके साथ द्वितीयोप-शमसम्यक्त्वके होने और प्रथमो-शमसम्यक्त्वके नहीं होनेका कारण	७२७
२३	देवोंके अपर्याप्तकालमें उपशम-सम्यक्त्वका सद्भाव-समर्थन	५५९	३८	कृष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त-कालमें वेदकसम्यक्त्वके अस्तित्वका प्रतिपादन	७५२
२४	अनुदिशादि देवोंके पर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्वके अभावका विशिष्ट समर्थन	५६६	३९	शुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोगके अभावका प्रतिपादन	७९४
२५	जीवसमासोंके एकसे लगाकर ५७ भेदों तकका निरूपण	५९१	४०	उपशमसम्यक्त्वीके मनःपर्ययज्ञानके सद्भाव-असद्भावका विचार	८२२
२६	बादर जलकायिक जीवोंके वर्णका विचार	६०९	४१	संयमादि मार्गणाओंमें असंयमादि विपक्षी भावोंके बतानेका कारण	८२५
२७	मनोयोगियोंके वचन और काय-प्राणके अस्तित्वका समर्थन	६२८			
२८	सयोगिकेवलीके जीवसमासके अस्तित्वका समर्थन	६५३			
२९	औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतलेश्या अथवा छहों लेश्याएं और भावसे छहों लेश्याओंके अस्तित्वका प्रतिपादन	६५३			
३०	औदारिकमिश्रकाययोगी असंयत				

शुद्धि पत्र

(पुस्तक-१)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७	२ [हिं.]	पीले सरसों	इधेत सरसों
६८	७ [हिं.]	हम दोनों	हम दोनों साधु
१०३	६ [हिं.]	इन सबकी दशाका	इन दशोंका
११०	१३ [हिं.]	निर्गुण ही है	निर्गुण ही है, सर्वगत ही है,
१३८	१९ [हिं.]	नामकर्मका उदय	नामकर्मका सत्त्व
१७५	३ [मूल]	नान्यन्तरेण	तान्यन्तरेण
१८२	११ [हिं.]	११ वीं पंक्तिसे आगे	×
<p>× शंका-क्षपकश्रेणीमें होनेवाले परिणामोंमें कर्मोंका क्षपण कारण है. और उपशमश्रेणीमें होनेवाले परिणामोंमें कर्मोंका उपशमन कारण है. इसलिए इन भिन्न भिन्न परिणामोंमें एकता कैसे बन सकती है ?</p> <p>समाधान-नहीं; क्योंकि, क्षपक और उपशमक जीवोंके होनेवाले उन परिणामोंमें अपूर्वत्वके प्रति समानता पाई जाती है इससे उनमें एकता बन जाती है।</p>			
२३०	७ [हिं.]	अपेक्षा पर पदार्थसे भी	अपेक्षा भी पर पदार्थसे
२४०	२ [मूल]	-मिति	-मिति।
११	१ [हिं.]	चाहिये।	चाहिये। अर्थात् वनस्पतितकके जीवोंके एक स्पर्शानेन्द्रिय होती है।
३१८	५ [हिं.]	पूर्ण होनेकी	पूर्ण नहीं होनेकी

(पुस्तक-२)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२१	२	छम्भेदं द्विदा	छम्भेदद्विदा
४२८	८	तिण्णिवेद	तिण्णिवेद
४३१	६	केई	केई
४४३	२० [हिं.]	और संयता- संयतोंके	संयतासंयत और संयतोंके
४४६	६ [हिं.]	होते हैं।	होते हैं। यह प्राण अल्प प्राण है या अप्रधान है।
४५०	९ [हिं.]	कृतत्यकवेदक-	कृतकृत्यवेदक-
४५३	८	तिहिं	तीहिं
४५९	२२	मिथ्यादृष्टि	मिथ्यादृष्टि सामान्य
५०६	नं. १०४	स.	स.
		६	१
५६९	३	संजदासंजदा	संजदासंजदा
५७०	८	णबुंदसयवेद	णबुंसयवेद
५९२	२ (टि.)	पाठव्युत्क्रमः	पाठव्युत्क्रमः
७५२	नं. ३९८	द.	द.
		१	३
२ (परि. १)	(परि. भा. २)	(परि. भा. २)	(परि. भा. २)
	१६	१६	१५
६ (परि. २)	९		२२८ लेस्ता य दब्बभावं ७८८ (पिंडिका ?)

संतपरुवणा-आलाप



सिरि-भगवंत-पुष्पदंत-भृदबलि-पणीदे

छक्खंडागमे

जीवट्टाणं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइया टीका

धवला

संपहि संत-सुत्त-विवरण-समत्ताणंतरं तेसिं परूवणं भणिस्सामो । परूवणा
णाम किं उत्तं होदि ? ओघादेसेहि गुणेषु जीवसमासेसु पज्जत्तीसु पाणेषु सण्णासु
गदीसु इंदिएसु काएसु जोगेषु वेदेषु कसाएसु णाणेषु संजमेषु दंसणेषु लेस्सासु भविएसु
अभविएसु सम्मत्तेसु सण्णि-असण्णीसु आहारि-अणाहारीसु उवजोगेषु च पज्जत्तापज्जत्त-
विसेसणेहि विसेसिऊण जा जीव-परिक्खा सा परूवणा णाम । उत्तं च—

गुण जीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ य ।

उवजोगो वि य कमसो वीसं तु परूवणा भणियाँ ॥२१७॥

सत्प्ररूपणाके सूत्रोंका विवरण समाप्त हो जानेके अनन्तर अब उनकी प्ररूपणाका वर्णन करते हैं—

शंका—प्ररूपणा किसे कहते हैं ?

समाधान—सामान्य और विशेषकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें, जीवसमासोंमें, पर्याप्तियोंमें, प्राणोंमें, संज्ञाओंमें, गतियोंमें, इन्द्रियोंमें, कार्योंमें, योगोंमें, वेदोंमें, कषायोंमें, ज्ञानोंमें, संयमोंमें, दर्शनोंमें, लेश्याओंमें, भ्रव्योंमें, अभ्रव्योंमें; सम्यक्त्वोंमें, संज्ञी-असंज्ञियोंमें, आहारी-अनाहारियोंमें और उपयोगोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणोंसे विशेषित करके जो जीवोंकी परीक्षा की जाती है, उसे प्ररूपणा कहते हैं । कहा भी है—

गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणापं और उपयोग, इस प्रकार क्रमसे घीस प्ररूपणाएं कही गई हैं ॥ २१७ ॥

१ गो. बी. २.

सेसाणं परूवणाणमत्थो वुत्तो । पाण-सण्णा-उवजोग-परूवणाणमत्थो वुच्चदे । प्राणिति जीवति एभिरिति प्राणाः । के ते ? पञ्चेन्द्रियाणि मनोबलं वाग्बलं कायबलं उच्छ्वासनिःश्वासौ आयुरिति । नैतेषामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिक्षयोपशमनिबन्धनानामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिजातिभिः साम्याभावात् । नेन्द्रियपर्याप्तावन्तर्भावः; चक्षुरिन्द्रियाद्यावरणक्षयोपशमलक्षणेन्द्रियाणां क्षयोपशमापेक्षया बाह्यार्थग्रहणशक्त्युत्पत्तिनिमित्तपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वाविरोधात् । न च मनोबलं मनःपर्याप्तावन्तर्भवति; मनोवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नात्मबलस्य चैकत्वाविरोधात् । नापि वाग्बलं भाषापर्याप्तावन्तर्भवति; आहारवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नायाः भाषावर्गणास्कन्धानां श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यपर्यायेण परिणमनशक्तेश्च साम्याभावात् । नापि कायबलं शरीरपर्याप्तावन्तर्भवति; वीर्यान्तरायजनितक्षयोपशमस्य खलरसभागनिमित्तशक्तिनिबन्धनपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वाभावात् । तथोच्छ्वासनिःश्वासप्राणपर्याप्त्योः कार्यकारणयोरात्मपुद्गलोपादा-

वीस प्ररूपणाओंमेंसे तीन प्ररूपणाओंको छोड़कर शेष प्ररूपणाओंका अर्थ पहले कह आये हैं, अतः यहाँ पर प्राण, संज्ञा, और उपयोग इन तीन प्ररूपणाओंका अर्थ कहते हैं। जिनके द्वारा जीव जीता है उन्हें प्राण कहते हैं।

शंका—वे प्राण कौनसे हैं ?

समाधान—पांच इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल, कायबल, उच्छ्वास-निश्वास और आयु ये दश प्राण हैं।

इन पांचों इन्द्रियोंका एकेन्द्रियजाति आदि पांच जातियोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है; क्योंकि, चक्षुरिन्द्रियावरण आदि कर्मोंके क्षयोपशमके निमित्तसे उत्पन्न हुई इन्द्रियोंकी एकेन्द्रियजाति आदि जातियोंके साथ समानता नहीं पाई जाती है। उसीप्रकार उक्त पांचों इन्द्रियोंका इन्द्रियपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, चक्षुरिन्द्रिय आदिको आवरण करनेवाले कर्मोंके क्षयोपशमस्वरूप इन्द्रियोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाह्य पदार्थोंको ग्रहण करनेकी शक्तिके उत्पन्न करनेमें निमित्तभूत पुद्गलोंके प्रचयको एक मान लेनेमें विरोध आता है। उसीप्रकार मनोबलका मनःपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, मनोवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयको और उससे उत्पन्न हुए आत्मबल (मनोबल) को एक माननेमें विरोध आता है। तथा वचनबल भी भाषापर्याप्तिमें अन्तर्भूत नहीं होता है, क्योंकि, आहारवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई भाषावर्गणाके स्कन्धोंका श्रोत्रेन्द्रियके द्वारा ग्रहण करने योग्य पर्यायसे परिणमन करनेरूप शक्तिका परस्पर समानताका अभाव है। तथा कायबलका भी शरीरपर्याप्तिमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वीर्यान्तरायके उदयाभाव और उपशमसे उत्पन्न हुए क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्तभूत शक्तिके कारण पुद्गलप्रचयकी एकता नहीं पाई जाती है। इसीप्रकार उच्छ्वासनिःश्वास प्राण कार्य है और आत्मोपादानकारणक है तथा उच्छ्वासनिःश्वासपर्याप्ति कारण है और पुद्गलोपा-

नयोर्भेदोऽभिधातव्य इति ।

सण्णा चउव्विहा आहार-भय-मेहुण-परिग्रह-सण्णा चेदि । मैथुनसंज्ञा वेदस्या-
न्तर्भवतीति चेन्न, वेदत्रयोदयसामान्यनिबन्धनमैथुनसंज्ञाया वेदोदयविशेषलक्षणवेदस्य
चैकत्वानुपपत्तेः । परिग्रहसंज्ञापि न लोभेनैकत्वमास्कन्दति; लोभोदयसामान्यस्यालीढ-
बाह्यार्थलोभतः परिग्रहसंज्ञामादधानतो भेदात् । यदि चतस्रोऽपि संज्ञा आलीढबाह्यार्थाः,
अप्रमत्तानां संज्ञाभावः स्यादिति चेन्न, तत्रोपचारतस्तत्सच्चाभ्युपगमात् । स्वपरग्रहण-
परिणाम उपयोगः । न स ज्ञानदर्शनमार्गणयोरन्तर्भवति; ज्ञानदृगावरणकर्मक्षयोपशमस्य
तदुभयकारणस्योपयोगत्वविरोधात् ।

अथ स्यादियं विंशतिविधा प्ररूपणा किमु सूत्रेणोक्ता उत नोक्तेति ? किं चातः ?
यदि नोक्ता, नेयं प्ररूपणा भवति; सूत्रानुक्तप्रतिपादनात् । अथोक्ता, जीवसमासप्राणपर्या-

दाननिमित्तक है, अतएव इन दोनोंमें भेद समझ लेना चाहिये ।

संज्ञा चार प्रकारकी है; आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा ।

शंका—मैथुनसंज्ञाका वेदमें अन्तर्भाव हो जायगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीनों वेदोंके उदय सामान्यके निमित्तसे उत्पन्न हुई
मैथुनसंज्ञा और वेदोंके उदय-विशेष-स्वरूप वेद, इन दोनोंमें एकत्व नहीं बन सकता है । इसीप्रकार
परिग्रहसंज्ञा भी लोभकषायके साथ एकत्वको प्राप्त नहीं होती है; क्योंकि, बाह्य पदार्थोंको
विषय करनेवाला होनेके कारण परिग्रहसंज्ञाको धारण करनेवाले लोभसे लोभकषायके उदय-
रूप सामान्य लोभका भेद है । अर्थात् बाह्य पदार्थोंके निमित्तसे जो लोभ होता है उसे परिग्रह-
संज्ञा कहते हैं, और लोभकषायके उदयसे उत्पन्न हुए परिणामोंको लोभ कहते हैं ।

शंका—यदि ये चारों ही संज्ञाएं बाह्य पदार्थोंके संसर्गसे उत्पन्न होती हैं तो अप्रमत्त-
गुणस्थानवर्ती जीवोंके संज्ञाओंका अभाव हो जाना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तोंमें उपचारसे उन संज्ञाओंका सङ्काव स्वीकार
किया गया है ।

स्व और परको ग्रहण करनेवाले परिणामविशेषको उपयोग कहते हैं । वह उपयोग
ज्ञानमार्गणा और दर्शनमार्गणामें अन्तर्भूत नहीं होता है; क्योंकि, ज्ञान और दर्शन इन दोनोंके
कारणरूप ज्ञानावरण और दर्शनावरणके क्षयोपशमको उपयोग माननेमें विरोध आता है ।

शंका—यह वीस प्रकारकी प्ररूपणा रही आओ, किन्तु यह बतलाइये कि यह प्ररूपणा
सूत्रानुसार कहीं गई है, या नहीं ?

प्रतिशंका—इस प्रश्नसे क्या प्रयोजन है ?

शंका—यदि सूत्रानुसार नहीं कहीं गई है तो यह प्ररूपणा नहीं हो सकती है,
क्योंकि, यह सूत्रमें नहीं कहे गये विषयका प्रतिपादन करती है । और यदि सूत्रानुसार
कहीं गई है, तो जीवसमास, प्राण, पर्याप्ति, उपयोग और संज्ञाप्ररूपणाका मार्गणाओंमें

प्युपयोगसंज्ञानां मार्गणासु यथान्तर्भावो भवति तथा वक्तव्यमिति । न द्वितीयपक्षोक्त-
दोषोऽनभ्युपगमात् । प्रथमपक्षेऽन्तर्भावो वक्तव्यश्चेदुच्यते । पर्याप्तिजीवसमासाः काये-
न्द्रियमार्गणयोर्निलीनाः; एकद्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियसूक्ष्मबादरपर्याप्तापर्याप्तभेदानां तत्र प्रति-
पादितत्वात् । उच्छ्वासभाषामनोबलप्राणाश्च तत्रैव निलीनाः; तेषां पर्याप्तिकार्यत्वात् ।
कायबलप्राणोऽपि योगमार्गणातो निर्गतः; बललक्षणत्वाद्योगस्य । आयुःप्राणो गतौ
निलीनः; द्वयोरन्योन्याविनाभावित्वात् । इन्द्रियप्राणा ज्ञानमार्गणायां निलीनाः; भावेन्द्रियस्य
ज्ञानावरणक्षयोपशमरूपत्वात् । आहारे या तृष्णा कांक्षा साहारसंज्ञा । सा च रतिरूपत्वान्-
मोहपर्यायः । रतिरपि रागरूपत्वान्मायालोभयोरन्तर्भवति । ततः कषायमार्गणाया-
माहारसंज्ञा द्रष्टव्या । भयसंज्ञा भयात्मिका । भयञ्च क्रोधमानयोरन्तर्लीनम्; द्वेषरूपत्वात् ।
ततो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रभवा । मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रभेदः; स्त्रीपुंनपुंसकवेदानां
तीव्रोदयरूपत्वात् । परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्गणोद्भूता; बाह्यार्थालीढलोभरूपत्वात् । साका-

जिसप्रकार अन्तर्भाव होता है उसप्रकार कथन करना चाहिये ?

समाधान—दूसरे पक्षमें दिया गया दूषण तो यहां पर आता नहीं है; क्योंकि, वैसा
माना नहीं गया है । तथा प्रथम पक्षमें जो जीवसमास आदिके चौदह मार्गणाओंमें अन्तर्भाव
करनेकी बात कही है, सो कहा जाता है । पर्याप्ति और जीवसमास प्ररूपणा काय और इन्द्रिय
मार्गणामें अन्तर्भूत हो जाती हैं; क्योंकि, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय,
सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्तरूप भेदोंका उक्त दोनों मार्गणाओंमें प्रतिपादन किया गया
है । उच्छ्वासनिःश्वास, वचनबल और मनोबल, इन तीन प्राणोंका भी उक्त दोनों मार्गणाओंमें
अन्तर्भाव होता है; क्योंकि, ये तीनों प्राण पर्याप्तियोंके कार्य हैं । कायबलप्राण भी योगमार्ग-
णासे निकला है; क्योंकि, योग काय, वचन और मनोबलस्वरूप होता है । आयुप्राण गति-
मार्गणामें अन्तर्भूत है; क्योंकि, आयु और गति ये दोनों परस्पर अविनाभावी हैं । अर्थात्
विवक्षित गतिके उदय होने पर तज्जातीय आयुका उदय होता है और विवक्षित आयुके उदय
होने पर तज्जातीय गतिका उदय होता है । इन्द्रियप्राण ज्ञानमार्गणामें अन्तर्लीन हो जाते हैं, क्योंकि,
भावेन्द्रियां ज्ञानावरणके क्षयोपशमरूप होती हैं । आहारके विषयमें जो तृष्णा या आकांक्षा
होती है उसे आहारसंज्ञा कहते हैं । वह रतिस्वरूप होनेसे मोहकी पर्याय (भेद) है । रति
भी रागरूप होनेके कारण माया और लोभमें अन्तर्भूत होती है । इसलिये कषायमार्गणामें आहार-
संज्ञा समझना चाहिये । भयसंज्ञा भयरूप है, और भय द्वेषरूप होनेके कारण क्रोध और मानमें
अन्तर्भूत है, इसलिये भयसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई समझना चाहिये । मैथुनसंज्ञा
वेदमार्गणाका प्रभेद है; क्योंकि, वह मैथुनसंज्ञा स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके तीव्र उदयरूप
है । परिग्रहसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई है; क्योंकि, यह संज्ञा बाह्य पदार्थोंमें व्याप्त
लोभरूप है । साकार उपयोग ज्ञानमार्गणामें और अनाकार उपयोग दर्शनमार्गणामें

१ इन्द्रियाएलीणा जीवा पञ्जति आणमासमणो । जोगे काओ पाणे अक्खा गदिमग्गणे आऊ ॥ गो. जी. ५.

२ मायालोहे रदिपुच्चाहारं कोहमाणगग्धि मयं । वेदे मेहुणसण्णा लोहग्धि परिग्गहे सण्णा ॥ गो. जी. ६.

रोषयोगो ज्ञानमार्गणायामनाकारोषयोगो दर्शनमार्गणायां (अन्तर्भवति) तयोर्ज्ञानदर्शन-
रूपत्वात् । न पौनरुक्त्यमपि; कथञ्चित्तेभ्यो भेदात् । प्ररूपणायां किं प्रयोजनमिति
चेदुच्यते, सूत्रेण सूचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विंशतिविधानेन प्ररूपणोच्यते ।

तत्थ 'ओषेण अत्थि मिच्छाइट्ठी सिद्धा० चेदि' एदस्स ओष-सुत्तस्स ताव
परूषणा वुच्चदे । तं जहा- *अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि चोदस-गुणट्ठाणादीद-गुणट्ठाणं
पि अत्थि । अत्थि चोदस जीवसमासा । के ते ? एइंदिया दुविहा बादरा सुहुमा ।

अन्तर्भूत होते हैं; क्योंकि, वे दोनों ज्ञान और दर्शनरूप ही हैं । ऐसा होते हुए भी उक्त प्ररू-
पणाओंके स्वतन्त्र कथन करनेमें पुनरुक्ति दोष भी नहीं आता है; क्योंकि, मार्गणाओंसे उक्त
प्ररूपणाएं कथंचित् भिन्न हैं ।

शंका—प्ररूपणा करनेमें क्या प्रयोजन है ?

समाधान—सूत्रके द्वारा सूचित पदार्थोंके स्पष्टीकरण करनेके लिये बीस प्रकारसे
प्ररूपणा कही जाती है ।

' सामान्यसे मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि,
संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक,
अनिवृत्तिकरण प्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, सूक्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें
उपशमक और क्षपक, उपशांतकषाय-वीतराग-छद्मस्थ, क्षीणकषाय-वीतराग-छद्मस्थ, सयोग-
केवली और अयोगकेवली जीव होते हैं । तथा सिद्ध भी होते हैं ।' पहले इस सामान्य सूत्रकी
प्ररूपणा कहते हैं । वह इसप्रकार है—चौदहों गुणस्थान हैं और चौदह गुणस्थानोंसे अतीत-
गुणस्थान भी है । चौदहों जीवसमास हैं ।

शंका—वे चौदहों जीवसमास कौनसे हैं ?

१. सागारो उवजोगो णाणे मग्गभिह् दंसणे मग्गे । अणगारो उवजोगो लीणो त्ति जिणेहि णिदिट्ठे ॥ गो. जी. ७.

२. जी. सं. सू. ९-२३.

*

सामान्य जीवोंके सामान्य आलाप.

गु. जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का. यो.	वे. क.	क्षा. से. द.	ले.	म. स.	सं.	आ.	उ.
१४ १४	६प. ६अ.	१०, ७	४ ४	५ ६	२५ ३	४ ८	७ ४	२ ६	२ ६	२ २	२ २
अ. गु. अ.	५प. ५अ.	९, ७	क्षीण स.	अ. जो.	अ. का.	अ. यो.	अपरा. वे.	अकषा.	अत.	अ. अ.	अ. अ.
अ. जी. अ.	४प. ४अ.	८, ६	सि. ग.	अ. जो.	अ. का.	अ. यो.	अपरा. वे.	अकषा.	अत.	अ. अ.	अ. अ.
	अ. प.	७, ५									
		६, ४									
		४, ३									
		४, २									
		१									
		अ. प्रा.									
											साका. अना. तथा यु. उ.

बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । वीहंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । तीहंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । चउरिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो । सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि' । एदे चोइस जीवसमासा अदीद-जीवसमासा वि अत्थि । अत्थि छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीद-पज्जत्ती वि अत्थि । आहारपज्जत्ती सरीरपज्जत्ती इंदियपज्जत्ती आणापाणपज्जत्ती भासापज्जत्ती मणपज्जत्ती चेदि । एदाओ छ पज्जत्तीओ सण्णिपज्जत्ताणं । एदेसिं चैव अपज्जत्तकाले एदाओ चैव असमत्ताओ छ अपज्जत्तीओ भवंति । मणपज्जत्तीए विणा एदाओ चैव पंच पज्जत्तीओ असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्तप्पहुडि जाव वीहंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । तेसिं चैव अपज्जत्ताणं एदाओ चैव अणिप्पणाओ पंच अपज्जत्तीओ वुच्चंति । एदाओ चैव भासा-मणपज्जत्तीहि विणा चत्तारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदेसिं चैव अपज्जत्तकाले एदाओ चैव असंपुण्णाओ चत्तारि अपज्जत्तीओ भवंति । एदासिं छण्हम-

समाधान—' एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । सूक्ष्म जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । छीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, संज्ञी और असंज्ञी । संज्ञी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । असंज्ञी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त' । इसप्रकार ये चौदह जीवसमास होते हैं ।

अतीत-जीवसमास भी जीव होते हैं । छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां और चार अपर्याप्तियां हैं । तथा अतीतपर्याप्ति भी है । आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, आनापानपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मनःपर्याप्ति ये छह पर्याप्तियां हैं । ये छहों पर्याप्तियां संज्ञी-पर्याप्तिके होती हैं । इन्हीं संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त-कालमें पूर्णताको प्राप्त नहीं हुई ये ही छह अपर्याप्तियां होती हैं । मनःपर्याप्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याप्तियां असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तोंसे लेकर छीन्द्रिय-पर्याप्तक जीवोंतक होती हैं । अपर्याप्तक अवस्थाको प्राप्त उन्हीं जीवोंके अपूर्णताको प्राप्त ये ही पांच अपर्याप्तियां होती हैं । भाषापर्याप्ति और मनःपर्याप्तिके विना ये ही चार पर्याप्तियां एकेन्द्रिय पर्याप्तोंके होती हैं । इन्हीं एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालमें अपूर्णताको प्राप्त ये ही चार अपर्याप्तियां होती हैं । तथा इन छह पर्याप्तियोंके अभावको अतीतपर्याप्ति

भावो अदीद-पञ्जत्ती णाम । उत्तं च —

आहार-सरीरिंदिय-पञ्जत्ती आणपाण-भास-मणो ।
चत्तारि पंच छव्वि य एइंदिय-विगल-सण्णीणं' ॥२१८॥
जह पुण्णापुण्णाइं गिह-घड-वत्थाइयाइ दब्बाइं ।
तह पुण्णापुण्णाओ पञ्जत्तियरा मुणेयब्बा' ॥ २१९ ॥

अत्थि दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अठ्ठ पाण छप्पाण सत्त पाण
पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दोण्णि पाण एक पाण
अदीद-पाणो वि अत्थि । चक्खु-सोद-घाण-जिह्व-फासमिदि पंचिंदियाणि, मणबल वचिबल
कायबल इदि तिण्णि बला, आणापाणो आऊ चेदि एदे दस पाणा । उत्तं च—

पंच वि इंदिय-पाणा मण-वचि-काएण तिण्णि बलपाणा ।
आणप्पाणप्पाणा आउगपाणेण होंति दस पाणा' ॥ २२० ॥

कहते हैं । कहा भी है—

आहार, शरीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन ये छह पर्याप्तियां हैं ।
उनमेंसे एकेन्द्रिय जीवोंके चार, विकलत्रय और असंखी-पंचेन्द्रियोंके पांच और संखी जीवोंके
छह पर्याप्तियां होती हैं ॥ २१८ ॥

जिसप्रकार गृह, घट और वस्त्र आदि द्रव्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकारके होते हैं,
उसीप्रकार जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकारके होते हैं उनमेंसे पूर्ण जीव पर्याप्तक और
अपूर्ण जीव अपर्याप्तक कहलाते हैं ॥ २१९ ॥

दश प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच
प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण होते हैं
तथा अतीतप्राणस्थान भी है । चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और
स्पर्शनेन्द्रिय ये पांच इन्द्रियां; मनोबल, वचनबल, कायबल ये तीन बल, श्वासोच्छ्वास और
आयु ये दश प्राण होते हैं । कहा भी है—

पांचों इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल और कायबल श्वासोच्छ्वास और आयु ये दश
प्राण हैं ॥ २२० ॥

१ गो. जी. ११९.

२ गो. जी. ११८.

३ गो. जी. ११०.

एदे दस पाणा पंचिदिय-सण्णिपज्जत्ताणं । आणापाण-भासा-मणेहि विणा सण्णि-
पंचिदिय-अपज्जत्ताणं सत्त पाणा भवंति । दसण्हं पाणाणं मज्झे मणेण विणा णव पाणा
असण्णि-पंचिदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदेसिं चैव अपज्जत्ताणं भासा-आणापाण-
पाणेहि विणा सत्त पाणा भवंति । पुब्बिल्ल-णव-पाणेसु सोदिदिय-पाणे अवणिदे चदुरिदिय-
पज्जत्तस्स अट्ट पाणा भवंति । एदेसिं चैव चदुरिदिय-अपज्जत्ताणं आणावाण-भासाहि विणा
छप्पाणा भवंति । पुब्बिल-अट्टण्हं पाणाणं मज्झे चक्खिदिए अवणिदे तीइंदिय-पज्जत्तयस्स
सत्त पाणा भवंति । तेसु सत्तसु आणावाण-भासापाणे अवणिदे तीइंदिय-अपज्जत्तयस्स
पंच पाणा भवंति । तीइंदियस्स बुत्त-सत्तण्हं पाणाणं मज्झे घाणिदिए अवणिदे बीइंदिय-
पज्जत्तयस्स छप्पाणा भवंति । तेसु छसु आणावाण-भासाहि विणा बीइंदिय-अपज्जत्तयस्स
चत्तारि पाणा भवंति । बीइंदिय-पज्जत्तयस्स बुत्त-छण्हं पाणाणं मज्झे जिब्भदियपाणे
भासापाणे अवणिदे एइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । तेसु आणावाणपाणे
अवणिदे एइंदिय-अपज्जत्तयस्स तिण्णि पाणा भवंति । उत्तं च—

दस सण्णीणं पाणा सेसेगूणंतिमस्स वे ऊणा ।

पज्जत्तेसिदरेसु य सत्त दुगे सेसगेगूणा^१ ॥ २२१ ॥

पूर्वोक्त दश प्राण पंचेन्द्रिय-संज्ञी-पर्याप्तकोंके होते हैं । आनापान, वचनबल और मनोबल इन तीन प्राणोंके विना शेष सात प्राण संज्ञी-पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । दश प्राणोंमेंसे मनोबलके विना शेष नौ प्राण असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं । और अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त इन्हीं जीवोंके वचनबल और आनापान प्राणके विना शेष सात प्राण होते हैं । पूर्वोक्त नौ प्राणोंमेंसे श्रोत्रेन्द्रिय प्राणको कम कर देने पर शेष आठ प्राण चतुरिन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं । इन्हीं चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आनापान और वचनबलके विना शेष छह प्राण होते हैं । पूर्वोक्त आठ प्राणोंमेंसे चक्षु इन्द्रियके कम कर देने पर शेष सात प्राण त्रीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं । उन सात प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल प्राणके कम कर देने पर शेष पांच प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । द्वीन्द्रिय जीवोंके कहे गये सात प्राणोंमेंसे घ्राणेन्द्रियके कम कर देने पर शेष छह प्राण द्वीन्द्रिय पर्याप्तकोंके होते हैं । उन छह प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबलके कम कर देने पर शेष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । द्वीन्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल-प्राणके कम कर देने पर शेष चार प्राण एकेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं । उनमेंसे आनापान प्राणके कम कर देने पर शेष तीन प्राण एकेन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । कहा भी है—

संज्ञी जीवोंके दश प्राण होते हैं । शेष जीवोंके एक एक प्राण कम करना चाहिये ।

१ इंदियकायाऊणि य पुण्णापुण्णेसु पुण्णगे आणा । वीइंदियादिपुण्णे वचीमणो सण्णिपुण्णेव ॥ गो. जी. १३२.

२ गो. जी. १३३.

दसण्हं पाणाणमभावो अदीदपाणो णाम । अत्थि चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि । काओ चत्तारि सण्णाओ इदि चे ? वुच्चदे—आहारसण्णा भयसण्णा मेहुणसण्णा परिग्गहसण्णा चेदि । एदासिं चउण्हं सण्णाणं अभावो खीणसण्णा णाम । अत्थि चत्तारि गदीओ, सिद्धगदी वि अत्थि । एहंदियादी पंच जादीओ, अदीद-जादी वि अत्थि । अत्थि पुढविकायादी छक्काया, अदीदकाओ वि अत्थि । अत्थि पण्णरह जोगा, अजोगो वि अत्थि । अत्थि तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि । अत्थि अट्ट णाणाणि । अत्थि सत्त संजमा, णेव संजमो णेव संजमासंजमो णेव असंजमो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि दंसणाणि । दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि । भवसिद्धिया वि अत्थि, अभवसिद्धिया वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि । छ सम्मत्ताणि अत्थि । सण्णिणो वि अत्थि, असण्णिणो वि अत्थि, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि । आहारिणो

किन्तु अन्तिम अर्थात् एकेन्द्रिय जीवोंके दो प्राण कम होते हैं । यह कम पर्याप्तकोंका है । किन्तु अपर्याप्तक जीवोंमें संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात, सात प्राण होते हैं । तथा शेष जीवोंके उत्तरोत्तर एक एक कम प्राण होते हैं ॥ २२१ ॥

विशेषार्थ—केवली भगवानके पांच इन्द्रियां और मनोबलको छोड़कर शेष चार प्राण होते हैं । तथा योग निरोधके समय वचनबलका अभाव हो जाने पर कायबल आनापान और आयु ये तीन प्राण होते हैं और अन्तमें कायबल और आयु ये दो प्राण होते हैं । तथा चौदहवें गुणस्थानमें केवल एक आयुप्राण होता है ।

इन दशों प्राणोंके अभावको अतीत-प्राण कहते हैं । चारों संज्ञापं होती हैं और क्षीण-संज्ञा भी होती है ।

शंका—वे चार संज्ञापं कौनसी हैं ?

समाधान—आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा ये चार संज्ञापं हैं ।

इन चारों संज्ञाओंके अभावको क्षीणसंज्ञा कहते हैं ।

चार गतियां होती हैं और सिद्धगति भी है । एकेन्द्रियादि पांच जातियां होती हैं और अतीत-जातिरूप स्थान भी है । पृथिवीकाय आदि छह काय होते हैं और अतीतकाय स्थान भी है । पन्द्रह योग होते हैं और अयोग स्थान भी है । तीन वेद होते हैं और अपगतवेद स्थान भी है । चार कषायें होती हैं और अकषाय स्थान भी है । आठ ज्ञान होते हैं । सात संयम होते हैं और संयम, संयमासंयम और असंयम रहित भी स्थान है । चार दर्शन होते हैं । द्रव्य और भावके भेदसे छह लेश्यापं होती हैं और अलेश्यास्थान भी है । भव्यसिद्धिक जीव होते हैं, अभव्य-सिद्धिक जीव होते हैं और भव्यसिद्धिक तथा अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । छह सम्यक्त्व होते हैं । संज्ञी भी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं और संज्ञी तथा, असंज्ञी

वि अत्थि, अण्णाहारिणो वि अत्थि । सागारुवजुत्ता वि अत्थि, अण्णागारुवजुत्ता वि अत्थि, सागार-अण्णागारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

पञ्चन-विसिद्धे औघे भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणद्वयानि, अदीदगुणद्वयानि गत्थि; पञ्चत्तेसु तस्स संभवाभावादो । सत्त जीवसमासा, अदीदजीवसमासो गत्थि; छ पञ्चत्तीओ पंच पञ्चत्तीओ चत्तारि पञ्चत्तीओ, अदीदपञ्चत्ती गत्थि; दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, अदीदपाणो गत्थि; चत्तारि सण्णा, स्त्रीणसण्णा वि अत्थि; चत्तारि गर्दीओ, सिद्धगर्दी गत्थि; एइंदियादी पंच जादीओ अत्थि, अदीदजादी गत्थि; पुटवीकायादी छकाया अत्थि, अकाओ गत्थि; ओरालिय-वेउक्खिय-आहारविस्स-कम्मइयकायजोगेहि विणा एकारह जोग, अजोगो वि अत्थि; तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थि; चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि; अट्ट पाण, सत्त संजम, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो गत्थि; चत्तारि दंसण, दच्च-भावेहि

विकल्प रहित भी स्थान होता है । आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगसे युक्त भी होते हैं अनाकार उपयोगसे भी युक्त होते हैं और साकार उपयोग तथा अनाकार उपयोग इन दोनोंसे युगपत् युक्त भी होते हैं ।

पर्याप्त-अवस्थासे युक्त जीवोंके ओघालाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान होते हैं । अतीत-गुणस्थानरूप स्थान नहीं होता है, क्योंकि, पर्याप्तकोंमें अतीत-गुणस्थान अर्थात् सिद्ध अवस्थाकी संभावना नहीं है । पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास होते हैं, किन्तु अतीत जीवसमास (सिद्ध अवस्था) रूप स्थान नहीं है । संज्ञी जीवोंके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकल-त्रयोंके पांच पर्याप्तियां और एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां होती हैं, किन्तु अतीत-पर्याप्तिरूप स्थान नहीं होता है । संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, त्रीन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, और एकेन्द्रियके चार प्राण होते हैं, किन्तु अतीत-प्राणरूप स्थान नहीं है । चारों संज्ञाएँ होती हैं और क्षीणसंज्ञारूप स्थान भी होता है । चारों गतियां होती हैं, किन्तु सिद्धगति नहीं होती है । एकेन्द्रियादि पांचों जातियां होती हैं, किन्तु अतीत-जातिरूप स्थान नहीं होता है । पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं, किन्तु अकाय-रूप स्थान नहीं होता है । औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोगके विना ग्यारह योग होते हैं और अयोग-स्थान भी होता है । तीनों वेद होते हैं और अपगतवेद-स्थान भी होता है । चारों कषायें होती हैं और अकषाय-स्थान भी होता है । आठों ज्ञान होते हैं । सातों संयम होते हैं किन्तु संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान नहीं होता है । चारों दर्शन होते हैं । द्रव्य और भावके भेदसे छहों लक्ष्याएँ होती

छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि; दब्बेण छ लेस्सेत्ति भणिदे सरीरस्स छव्वण्णा वेत्तव्वाX ।
भावेण छ लेस्सा त्ति भणिदे जोग-कसाया छब्भेदं ट्ठिदा वेत्तव्वा* । भवसिद्धिया अभव-
सिद्धिया, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया णत्थि; छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो
असण्णिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि; आहारिणो अणाहारिणो,
सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा, सागारणगारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

संपदि अपज्जत्ति-पजाय-विसिद्धे ओघे भण्णमाणे अत्थि भिच्छाइट्ठी सासणसम्मा-
इट्ठी असंजदसम्माइट्ठी पमत्तसंजदा एजोगिकेवालि त्ति पंच गुणङ्काणाणि, सत्त जीव-
समासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण

हैं और अलेस्यास्थान भी होता है । द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर
शरीरसंबन्धी छह वर्णोंका ग्रहण करना चाहिये । भावसे छहों लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन
करने पर योग और कषायोंकी छह भेदोंको प्राप्त मिश्रित अवस्थाका ग्रहण करना चाहिये ।
भव्यसिद्धिक होते हैं और अभव्यसिद्धिक होते हैं, किंतु भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन
दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान नहीं होता है । छहों सम्यक्त्व होते हैं । संज्ञी होते हैं, असंज्ञी भी
होते हैं, तथा तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानकी अपेक्षा संज्ञी और असंज्ञी विकल्प रहित भी
जीव होते हैं । आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगवाले होते हैं,
अनाकार उपयोगवाले होते हैं और साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे गुणपत्
उपयुक्त भी होते हैं ।

अब अपर्याप्त-पर्यायसे युक्त अपर्याप्तक जीवोंके, ओघालाप कहने पर—मिध्यादृष्टि,
सासादनसम्यग्दृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच
गुणस्थान होते हैं । अपर्याप्तरूप सात जीवसमास होते हैं । अपर्याप्त संज्ञीके
छहों अपर्याप्तियां, अपर्याप्त असंज्ञी और विकल्पत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां और
अपर्याप्त एकेन्द्रिय जीवोंके चार अपर्याप्तियां होती हैं । संज्ञी, असंज्ञी, चतुर्गिन्द्रिय,

X वर्णोदयेण जणिदी सरीरवण्णो दु दब्बदो लेस्सा ॥ गो. जी. ४९४.

* जोगपउत्ती लेस्सा कसायउदयाणरंजिया होई ॥ गो. जी. ४९५.

नं. १

पर्याप्त जीवोंके सामान्य-आलाप.

गु.जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.ज्ञा.	संय.	द.छे.	म.	सं.संज्ञी.	आ.	उ.
१४.७	६प.	१०१९	४	४	५	६	११	३	४	८	७	४	६	२
	प.	५प.	८१७				ओ.मि.				मा.३.	म.	सं.	आहा. साका.
		४प.	६१४				वे.मि.	उप.कं.			अम.	असं.	अवा.	अनाका.
							आ.मि.							सु.कं.
							कर्म. के.विना							

छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, अदीदसण्णा वि अत्थि; चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुठ्ठवाकायादी छक्काया, ओरालियमिस्स-वेउव्वियामिस्स-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेत्ति चत्तारि जोगा, तिण्णि वेद, अवगद्वेदो वि अत्थि; चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि; मणपज्जव-विभंगणाणेहि विणा छण्णाण, चत्तारि संजम सामाइय-छेदोवट्ठावण-जहाक्खादासंजमेहि, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; जम्हा सव्व-कम्मस्स विस्ससोवचओ सुक्किलो भवदि तम्हा विग्गहगदीए वट्टमाण-सव्व-जीवाणं सरीरस्स सुकलेस्सा भवदि । पुणो सरीरं घेत्तूण जाव पज्जत्तीओ समाणेदि ताव छव्वण्ण-परमाणु-पुंज-णिप्पज्जमाण-सरीरत्तादो तस्स सरीरस्स लेस्सा काउलेस्सेत्ति भण्णदे', एवं दो सरीर-लेस्साओ भवंति । भावेण छ लेस्सेत्ति वुत्ते णेरइय-तिरिक्ख-भवणवासिय-वाणवेतर-जोइसियदेवाणमपज्जत्तकाले किण्ह-णील-काउलेस्साओ भवंति । सोधम्मदि-उवरिम-

त्रांन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंकी अपेक्षा कमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों सजाए होती हैं और अतीत-संज्ञारूप स्थान भी होता है। चारों गतियां होती हैं। एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां होती हैं। पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं। औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मणकाय इसप्रकार चार योग होते हैं। तीनों वेद होते हैं और अपगतवेदरूप भी स्थान होता है। चारों कषायें होती हैं और कषायरहित भी स्थान होता है। मनःपर्यय और विभंग-ज्ञानके बिना छह ज्ञान होते हैं। सूक्ष्मसांपराय, परिहार-विशुद्धि और संयमासंयमके बिना सामायिक, छेदोपस्थापना, यथाख्यात और असंयम ये चार संयम होते हैं। चारों दर्शन होते हैं। द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या होती है और भावलेश्याकी अपेक्षा छहों लेश्याएं होती हैं। अपर्याप्त अवस्थामें द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्याएं ही क्यों होती हैं, आगे इसीका समाधान करते हैं कि जिस कारणसे संपूर्ण कर्मोंका विस्रसोपचय शुक्ल ही होता है, इसलिये विग्रहगतिसमें विद्यमान संपूर्ण जीवोंके शरीरकी शुक्ललेश्या होती है। तदनन्तर शरीरको ग्रहण करके जबतक पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है तबतक छह वर्णवाले परमाणुओंके पुंजोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उस शरीरकी कापोत लेश्या कही जाती है। इसप्रकार अपर्याप्त अवस्थामें शरीर-संबन्धी दो ही लेश्याएं होती हैं। भावकी अपेक्षा छहों लेश्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर नारकी, तिर्यच, भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके अपर्याप्त-कालमें कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं होती हैं। तथा सौधर्मादि ऊपरके देवोंके अपर्याप्त कालमें पीत, पद्म और

१X...सव्व विग्गहे सुक्का । सव्वो मिस्सो देहो कब्बोद्वण्णो ह्वे णियमा ॥ गो. जी. ४९८.

देवाणमपज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ भवंति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

संपहि मिच्छाइट्ठीणं ओघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चौदस जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकयादी छकाया, आहार-दुगेण विणा तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

शुद्ध लक्ष्याणं होती हैं ऐसा जानना चाहिये। भव्यसिद्धिक होते हैं और अभव्यसिद्धिक भी होते हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व होते हैं। संज्ञी होते हैं, असंज्ञी होते हैं और संज्ञी, असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और युगपत् उन दोनों उपयोगोंसे युक्त भी होते हैं।

अब मिथ्यादृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संज्ञीके दश प्राण, सात प्राण; असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, छह प्राण; त्रीन्द्रियके सात प्राण, पांच प्राण; द्वीन्द्रियके छह प्राण, चार प्राण; एकेन्द्रियके चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाणं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पाचों जातियां, पृथिवीकायको आदि लेकर छहों काय, आहारकद्विक अर्थात् आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असेयम, अशु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. २

अपर्याप्त जीवोंके सामान्य-भालाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञी.	आ.	उ.
५	७	६ अप.	७	४	४	५	६	४	३	४	६	४	४	६.२२	२	५	२	२
मि.	अप.	५	७	सं.				ओ. मि.	अप.	अक.	मनः	सामा.		का.	म.	सं.	आहा.	साक.
सा.		४	६	ज्ञ.				वे. "	अप.	अक.	विभं.	छे.		शु.	अ.	असं.	अना.	अना.
अवि.			५					आ. "			विना	यथा.		भा.६		अतु.		यु-उ.
प्र.			४					कर्म.,"				असं.				सम्य.		
सयो.			३															

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होति ।

तेसिं चैव मिच्छाइड्डीणं पज्जत्तोघे भण्णमाणे अत्थि एव गुणट्ठाणं, सत्त जीव-समासा, छ वज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी

द्रव्य और भावकी अपेक्षा छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक और असंज्ञिक; आहारक और अनाहारक; साकार (ज्ञान) उपयोगी और अनाकार (दर्शन) उपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, संज्ञीके दश प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, त्रिन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, एकेन्द्रियके चार प्राण, चारों

नं. ३

मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६ प.	१०७	४	४	५	६	१३	३	४	३	१	२	६	२	१ २	२	२
मि.		६ अप.	९७					आ.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	द्र.	म.	मि.	आहा.	साका.
		५ प.	८६					द्रि.					अचक्षु.	६	अम.	असं.	अना.	अना.
		५ अप.	७५					विना						मा				
		४ प.	६४															
		४ अप.	४३															

नं. ४

मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६ प.	१०	४	४	५	६	१०	३	४	३	१	२	६	२	१ २	१	२
मि.		५ प.	९					म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	द्र.	म.	मि.	आहा.	साका.
		४ प.	८					व. ४					अचक्षु.	६	अम.	असं.	अना.	अना.
		७						औ. १						मा				
		४						वै. १										

पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छल्लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

तेसिं चैव अपज्जत्तोघे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय-आदि छहों काय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्र-योंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संज्ञीके सात प्राण, असंज्ञीके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, एकेन्द्रियोंके तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंगावधि-ज्ञानके विना दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या, भावकी अपेक्षा छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५

मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त-आलाप.

गु.जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स. संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६ अप.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	२	१	२
मि.	अप.	५	७			औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.
		४	६			वे.मि.			कुक्षु.		अच.	शु.	अभ.	असं.	अना.	साका.
			५			कार्म.						भा.६			आना.	
			४													
			३													

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा ह्येति ।

सासणसम्माइट्ठीणमोधे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पञ्ज-
त्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो
दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वि अत्थि ।

तेसिं चेव सासणसम्माइट्ठीणं पञ्जत्ताणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं,
एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो
दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त
और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; छहों अपर्याप्तियां, दश प्राण, सात
प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, आहारकादिकके विना तेरह
योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य
और भावरूप छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, अनाहारक,
साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक
दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों
गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकादिक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश
योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और
भावरूप छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी

नं. ६

सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	सांक्षि.	आ.	उ.
१	२	६ फ.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं प.	६ अ.	७			पंचे	त्रस.	आ.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	सासा	सं.	आहा.	साका.
	सं अ.							द्रि.					अच.					अना.	अना.
								विना.											

वजुत्ता वि होंति अणागारुवजुत्ता वि ।

तेसिं चैव अपज्जत्तार्णं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वार्णं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदी णिरयगदीए विणा, पंचिंदियजादी तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विहंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, आहारकमिश्रके विना अपर्याप्त-संबन्धी तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंग-ज्ञानके विना दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ७

सासादन सम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.	प.				पंचे	त्रस.	म. ४			अज्ञा	असं.	चक्षु	भा. ६	म. सासा	सं.	आहा.	साका.	अना.
	पं.							व. ४					अचक्षु.						
								ओ. १											
								वे. १											

नं. ८

सासादन सम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.	अ.	अप.	अप.		न.	पंच.	त्रस.	ओ		कुम.	असं.	चक्षु	२	म. सासा	सं.	आहा.	साका.	अना.
						विना.			वे		कुधु.		अच.	का.				अना.	अना.
								कर्म.						शु.					
														मा. ६					

सम्मामिच्छाद्द्विणीमंघालवे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, अण्णाण-मिस्साणि तिण्णि णाणाणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माद्द्विणीमोघ-परुवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पञ्चतीओ छ अपञ्चतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि

सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक तीसरा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषायें, अज्ञान-मिश्रित आदिके तीनों ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विशेष—मिश्रगुणस्थानवाले जीव पर्याप्तक ही होते हैं, इसलिये मिश्रगुणस्थानके उक्त सामान्यालाप ही पर्याप्तकके समझना चाहिये ।

असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दश प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीन ज्ञान, असंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन

नं. ९.

सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.				पंचे.	त्रस.	म. ४				ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म. सम्य.	सं.	आहा.	साका.	
	प.						व. ४	ओ. १			अज्ञा.		अचक्षु.					अना.	
							वे. १				मिश्र.								

सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अगाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा हँति अणा-
गारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माइट्ठीणं पज्जत्ताणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ
जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो,
तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्माओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा ।

सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुण-
स्थान, संज्ञी-पर्याप्त एक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विक और अपर्याप्तसंबन्धी तीन योगोंके बिना दश योग,
तीनों वेद, चारों कषायें, तीन ज्ञान, असंयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूप
छहों लेख्याणं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व,
संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १०

असंयतसम्यग्दृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इ.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	१०	४	४	१	२	१३	३	४	३	३	६	१	३	१	२
अवि.	सं. प.	६ अ.	७		पंचे	त्रस.	आ. द्वि.		म.	असं.	के.	भा. ६	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
	मं. अ.						विना.		शु.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
									अव.					क्षायो.			

नं. ११

असंयतसम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इ.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	३	६	२	३	२	२
अवि.	सं. प.	६	७		पंचे	त्रस.	म	४		म	असं.	के. द.	भा. ६	म.	ओ.	सं.	आहा.
							व. ४		शु.		विना.				क्षा.		साका.
							ओ. १		अव.						क्षायो.		अना.
							वे. १										

तेसिं चैव अपज्जत्ताणमोघपरूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि गाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; गिरयादो आगंतूण मणुस्सेसुप्पण-असंजदसम्माइट्ठीणमपज्जत्तकाले किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ लब्भंति । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मचाणि, अणादिय-मिच्छाइट्ठी वा सादिय-मिच्छाइट्ठी वा चदुसु वि गदीसु उवसमसम्मत्तं वेत्तूण द्विदजीवा ण कालं करंति । तं कथं णव्वदि त्ति वुत्ते आइरिय-वयणादो वक्खाणदो य णव्वदि । चारित्तमोह उवसामगा मदा देवेषु उववज्जंति ते अस्सिदूण अपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । वेदगसम्मत्तं पुण देव-मणुस्सेसु अपज्जत्तकाले लब्भदि, वेदगसम्मत्तेण सह गद-देव-मणुस्साणमण्णोण-गमणागमण-विरोहाभावादो । कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं तिरिक्ख-णेइयाणमपज्जत्त-काले लब्भदि । खइयसम्मत्तं पि चदुसु वि गदीसु पुव्वायु-बंधं पडुच्च अपज्जत्तकाले

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और आनापानके विना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कर्मण ये तीन योग, खीवेदके विना दो वेद, चारों कपायें, मति, श्रुत और अवाधि ये तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु, अचक्षु और अवाधि ये तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्या, भावसे छहों लेश्याएं होती हैं । छहों लेश्याएं होनेका यह कारण है कि नरकगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले असंयत-सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालमें कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएं पार्यीं जातीं हैं । लेश्याओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व होते हैं, क्योंकि, अनादि मिथ्यादृष्टि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीव चारों ही गतियोंमें उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करके पाये जाते हैं, किन्तु मरणको प्राप्त नहीं होते हैं ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है कि, उपशम-सम्यग्दृष्टि जीव मरण नहीं करते हैं ?

समाधान—आचार्योंके वचनसे और (सूत्र) व्याख्यानसे जाना जाता है कि उपशम-सम्यग्दृष्टि जीव मरते नहीं हैं । किन्तु चारित्रमोहके उपशम करने वाले जीव मरते हैं और देवोंमें उत्पन्न होते हैं, अतः उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्व पाया जाता है । वेदक-सम्यक्त्व तो देव और मनुष्योंके अपर्याप्तकालमें पाया ही जाता है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ मरणको प्राप्त हुए देव और मनुष्योंके परस्पर गमनागमनमें कोई विरोध नहीं पाया जाता है । कृतकल्येदककी अपेक्षा तो वेदकसम्यक्त्व तिर्यंच और नारकी जीवोंके अपर्याप्त कालमें भी पाया जाता है । श्रायिक सम्यक्त्व भी सम्यग्दर्शनके पहले बांधी गई आयुके बंधकी अपेक्षासे चारों ही गतियोंके अपर्याप्तकालमें पाया जाता है, इसलिये असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके अपर्याप्तकालमें तीनों ही सम्यक्त्व होते हैं ।

लब्धदि तेण तिण्णि सम्मत्ताणि अपञ्जत्तकाले भवन्ति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा ।

संजदासंजदाणभोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; केइं सरीर-णिच्चत्तणद्वमागद-परमाणु-वण्णं वेत्तुण संजदासंजदादीण भावलेस्सं परूवयंति । तण्ण घडदे, कुदो ? दब्ब-भावलेस्साणं भेदाभावादो ' लिम्पतीति लेश्या ' इति वचनव्याघाताच्च । कम्म-लेव-हेदो जोग-कसाया चैव भाव-लेस्सा ति गेण्हदब्बं । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि,

सम्यक्त्वके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत जीवोंके औघालाप कहने पर—एक पांचवा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दसों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यञ्च और मनुष्य ये दो गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औद्धारिककाय ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषायें, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा छहों लेश्याएं, भावकी अपेक्षा तेज, पञ्च और शुक्लेश्याएं होती हैं ।

कितने ही आचार्य, शरीर-रचनाके लिये आधे हुए परमाणुओंके वर्णको लेकर संयता-संयतादि गुणस्थानवर्ती जीवोंके भावलेश्याका वर्णन करते हैं । किन्तु यह उनका कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, वैसा माननेपर द्रव्य और भावलेश्यामें फिर कोई भेद ही नहीं रह जाता है और ' जो लिम्पन करती है उसे लेश्या कहते हैं ' इस आगम वचनका व्याघात भी होता है । इसलिये ' कर्मलेपका कारण होनेसे योग और कषायसे अनुरजित प्रवृत्ति ही भावलेश्या है ' ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिये ।

लेश्याओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और

नं १२

असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अर्प्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	२	३	२	४	३	१	३	२	१	३	१	१	२
क	सं.अ.	अप.	अप.		पं.			भौ. मि. १	स्त्री.		मति.	असं.	के. द.	का. सु.	भ.	आ.	सं.	आहा.	साका
								वे. मि. १	विना.		श्रुत.		विना.	भा. ६		क्षा.		अना.	अना.
								कर्म. १			अव.					क्षायी.			

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

प्रमत्तसंजदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छप्पज्जत्तीओ, छ अपज्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एककारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१४} ।

अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक गुणस्थान, दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दश प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, ब्रह्मकाय, ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुकु लेख्या, भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विशेषार्थ—यद्यपि टीकाकारने प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ गुणस्थानके सामान्या-

नं. १३

संयतासंयतोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
छे.	सं.प.				म.	पंचे.	वस.	म. ४			मति	संयमा.	के. द.	सा. ३	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका
					ति.			व. ४			श्रुत		विना.	शुभ.	क्षा.				अना.
								ओ. १			अव.				क्षायो.				

नं. १४

प्रमत्तसंयत-आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	१	३	४	४	३	३	६	१	३	१	१	२
प्रम.	सं.प.	प.	प.		म.	पंचे.	वस.	म. ४			के.	सा.	के. द.	सा. ३	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका
	सं.अ.	६	७					व. ४			विना.	छे.	विना.	शुभ.	क्षा.				अना.
	अप.	अप.						ओ. १			परि.				क्षायो.				
								आहा. २											

अप्रमत्तसंज्ञदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणङ्काणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, असादावेदर्णयिस्स उदीरणाभावादो आहार-सण्णा अप्रमत्तसंज्ञदस्स णत्थि । कारणभूद-कम्मोदय-संभवादो उवयारेण भय-मेहुण-परिग्रहसण्णा अत्थि । मणुसग्दी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद,

आलापोंके अतिरिक्त उनके पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्ररूपसे कथन किया है फिर भी छोटे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्र कथन न करके केवल ओघालाप ही कहा गया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि धवलाकारकी दृष्टि विग्रह-गतिसंबन्धी गुणस्थानोंमें ही पृथक् रूपसे आलापोंके दिखानेकी रही है अन्य अपर्याप्त संबन्धी गुणस्थानोंमें नहीं। गोम्मटसार जीवकाण्डकी टीकामें भी अन्तमें आलापोंका कथन करते हुए टीकाकारने इसी सरणीको ग्रहण किया है। अतएव मूलमें छोटे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका पृथक् रूपसे नहीं पाया जाना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। फिर भी सर्व साधारण पाठकोंके परिज्ञानार्थ वे यहां लिखे जाते हैं।

प्रमत्तसंयतके पर्याप्तसंबन्धी ओघालापके कहनेपर—एक छोटा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दसों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति-त्रसकाय, वैक्रियककाय और अपर्याप्तसंबन्धी चारों योगोंके विना दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल-ज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं और भावसे पाँच, पञ्च और शुक, ये तीन लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त उन्होंने प्रमत्तसंयतोंके ओघालाप कहनेपर—एक छोटा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मन, वचनबल और श्वासो-च्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, एक आहार-मिश्रकाययोग, एक पुरुष वेद, चारों कषाय, मनःपर्याय और केवलज्ञानके विना तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना संयम, केवल दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे पाँच, पञ्च और शुक लेश्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यग्दर्शन, संज्ञी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक सातवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दसों प्राण, आहार, भय और मैथुन ये तीन संज्ञाएं, होती हैं, क्योंकि, असातावेदनीय कर्मकी उदीरणाका अभाव हो जानेसे अप्रमत्तसंयतके आहारसंज्ञा नहीं होती है। किन्तु भय आदि संज्ञाओंके कारणभूत कर्मोंका उदय संभव है, इसलिये उपचारसे भय, मैथुन और परिग्रहसंज्ञाएं हैं। संज्ञाके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनो-योग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषायों, केवलज्ञानके

चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

अपूर्वकरणगुणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, ज्ञाणणिमपुव्वकरणं भवदु णाम वचिबलस्स अत्थित्तं भासापज्जत्ति-सण्णिद-पोगलखंध-जणिद-सत्ति-सव्भावादो । ण पुण वचिजोगो कायजोगो वा इदि ? न, अन्तर्जल्पप्रयत्नस्य कायगतसूक्ष्मप्रयत्नस्य च तत्र सत्त्वात् । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, परिहारसुद्धिसंजमेण विणा दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ,

विना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं और भावसे तेज पद्म और शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक आठवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं-मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग, एक औदारिक, काययोग ये नौ योग होते हैं ।

शंका—ध्यानमें लीन अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवोंके वचनबलका सद्भाव भले ही रहा आवे, क्योंकि, भाषापर्याप्तिनामक पौद्गलिक स्कन्धोंसे उत्पन्न हुई शक्तिका उनके सद्भाव पाया जाता है किन्तु उनके वचनयोग या काययोगका सद्भाव नहीं मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ध्यान-अवस्थामें भी अन्तर्जल्पके लिये प्रयत्नरूप वचन-योग और कायगत-सूक्ष्म-प्रयत्नरूप काययोगका सत्त्व अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके पाया ही जाता है इसलिये वहां वचनयोग और काययोग भी संभव हैं ।

योगोंके आंगे तीनों वेद, चारों कपायें, केवल ज्ञानके विना शेष चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे

नं. १५

अप्रमत्तसंयतोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	६	१	३	१	१	२
अप्र.	सं.प.		आहा.	म.पं.	तस.	म.	४	व.	४	विना.	क.	विना.	३	भा.	क्षायो.	सं.	सं.	साका.	
			विना.			आ.	१			परि.			शुभ.					अना.	

भवेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

पढम-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, अपुव्वकरणस्स चरिम-समए भयस्स उदीरणोदयो णट्ठो तेण भयसण्णा णत्थि । मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भवेण सुक्क-लेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{१२} ।

केवल शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ती जीवोंके ओवालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञा-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं होती हैं । दो संज्ञापं होने का कारण यह है कि अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समयमें भयकी उदीरणा तथा उदय नष्ट हो गया है, इसलिये यहांपर भय-संज्ञा नहीं है । उसके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषायें, केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्लेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १६

अपूर्वकरण-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	३	२	१	२	९	३	४	४	२	३	द. ६	१	२	१	१	१
लं.	पं.			आहा.	म.	पं.	पं.	म. ४			के.	सा.	ले.	मा. १	म.			आहा.	साका.
कं.				विना.				व. ४			विना.	ले.	शुक्ल						अना.
								औ. १											

नं. १७

अनिवृत्तिकरण-प्रथमभाग-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	२	१	१	१	९	३	४	४	२	३	द. ६	१	२	१	१	२
अनि.	सं प.			मं.	म.	पंचे.	वस.	म. ४			के.	सा.	के. द.	द. १	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
प्र.				परि.				व. ४			विना.	ले.	विना.	१	क्षा.				आना.
मा.								औ. १						मा.					

त्रिदिय-द्वान-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, अंतरकरणं काऊण पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण वेदोदओ णट्ठो तेण मेहुणसण्णा णत्थि । मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तदिय-द्वान-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पजत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, तिण्णि कसाय, वेदेषु खीणेषु पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण कोधोदयो णस्मदि तेण कोधकसाओ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके द्वितीय भागवतीं जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा होती है । एक परिग्रह संज्ञाके होनेका यह कारण है कि अन्तरकरण करनेके अनन्तर अन्तर्मुहूर्त जाकर वेदका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये द्वितीय भागवतीं जीवोंके मैथुनसंज्ञा नहीं रहती है । संज्ञा आलापके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, चारों कषायों, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं और भावसे शुकुलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीयभागवतीं जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, क्रोधकषायके बिना तीन कषायों होती हैं । तीन कषायोंके होनेका यह कारण है कि तीनों वेदोंके क्षय हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त जाकर क्रोधकषायका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये इस भागमें क्रोधकषाय नहीं है । आगे केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक और

नं. १८

अनिवृत्तिकरण-द्वितीयभाग-आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	४	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि.	सं प.			परि.	म.	पंचे.	त्रस.	म.	४	अपग.	के.	सा.	के. द.	द्र.	म.	आ.	सं.	आहा.	साका
द्वि.							व	४		विना.	के.	के.	विना.	१	म.	आ.	सं.	आहा.	अना.
भा.							औ.	१						मा.					

दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवमिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

चउ-द्वाण-द्विद-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, कोधोदए विणट्ठे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण माणोदओ वि णस्सदि तेण माणकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवमिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थभागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, एक परिग्रह संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषायें होती हैं। दो कषायोंके होनेका यह कारण है कि क्रोधकषायके उदय नष्ट होने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर मानकषायका उदय भी नष्ट हो जाता है इसलिये मानकषाय इस भागवर्ती जीवोंके नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १९

अनिवृत्तिकरण-तृतीयभाग-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	२	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि.	सं.प.			प्रा.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	अपग.	माया.	के.	सा.	के.द.	द.	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
वृ.				प्रा.			व. ४	आ.	अपग.	लोभ.	विना.	छे.	विना.	१		क्षा.			अना.
भा.							आ. १		को.					मा.					

नं. २०

अनिवृत्तिकरण चतुर्थभाग-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	२	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि.	सं.प.			प्रा.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	अपग.	माया.	के.	सा.	के.द.	द.	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
चतु.							व. ४	आ.	अपग.	लोभ.	विना.	छे.	विना.	१		क्षा.			अना.
भा.							आ. १							मा.					

पंचम-द्वारण-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, माणोदये विणद्वे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण माओदओ वि णस्सदि तेण मायाकसाओ तत्थ गत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सुहुमसांपराइयाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय है। लोभकपाय होनेका यह कारण है कि मानकपायके उदयके नष्ट हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर मायाकपायका उदय भी नष्ट हो जाता है, इसलिए मायाकपाय इस भागमें नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशामिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक दशवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक काययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकपाय, केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सूक्ष्मसाम्परायविशुद्धि संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक,

नं. २१

अनिवृत्तिकरण-पंचमभाग-आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	२	१	१	२	९	०	१	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि.	सं.प.			प.		वस.		म. ४	अपना.		के. विना.	सा. छे.	के. द. विना.	द्र. १	भ. मा.	आ. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.
पंच.								व. ४											
भा.								ओ. १											

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

उवसंतकसायाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; केण कारणेण सुक्कलेस्सा? कम्म-णोकम्म-लेव-णिमित्त-जोगो अत्थि त्ति । भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक ग्यारहवां गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंज्ञा होती है । संज्ञाके उपशान्त होने का यह कारण है कि यहांपर मोहनीय कर्मका पूर्ण उपशम रहता है, इसलिये उसके निमित्तसे होनेवाली संज्ञाप भी उपशान्त ही रहती हैं, अतएव यहां उपशान्तसंज्ञा कही । आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकषाय, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे शुक्क-लेक्ष्या होती है ।

शंका—जब कि इस गुणस्थानमें कषायोंका उदय नहीं पाया जाता है, तो फिर यहां शुक्कलेक्ष्या किस कारणसे कही ?

समाधान—यहां पर कर्म और नो कर्मके लेपके निमित्तभूत योगका सन्नाश पाया जाता है, इसलिये शुक्कलेक्ष्या कही है ।

लेक्ष्याके आगे भव्यासिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक,

नं. २२

सूक्ष्मसाम्पराय-आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	१	३	६	१	२	१	१	२
सू.	सं.	प.		पू.	प.	म.	पू.	म. ४		सू. लो.	के. सूक्ष्म.	के. द.	द्र. विना.	द्र. १	म. १	औ. १	सं.	आहा.	साका.
							पू.	व. ४			विना.		विना.	मा. शु.		क्षा.			अनाका.
							पू.	औ. १											

वजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा ।

खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा ।

सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जनीओ,

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्षीणकषाय गुणस्थानघर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक बारहवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंज्ञा होती है। क्षीणसंज्ञाके होनेका यह कारण है कि कषायोंका यहां पर सर्वथा क्षय हो जाता है, इसलिये संज्ञाओंका क्षीण हो जाना स्वाभाविक ही है। आगे मनुष्यजाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदागिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, क्षीणकषाय, केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिक सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सजोगिकेवलियोंके ओघालाप कहने पर—एक तेरहवां गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां होती हैं।

नं. २३

उपशान्तकषाय-आलाप.

गु. जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	३	१	२	१	२
उप.	सं. प.		उप.	म	प. त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	अप.	अक.	के. वि.	यथा.	के. द. विना.	भा. शु.	म.	आ. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.	

नं. २४

क्षीणकषाय-आलाप.

गु. जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	३	१	२	१	२
क्षीण.	सं. प.		क्षी.	म.	पं.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	अप.	के. विना.	यथा.	के. द. विना.	भा. शु.	म.	क्षा.	सं.	आ.	साका. अना.	

छ अपज्जत्तीओ, केवली कवाड-पदर-लोगपूरण-गओ पज्जत्तो अपज्जत्तो वा ? ण ताव पज्जत्तो, 'ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं' इच्चेदेण सुत्तेण तस्स अपज्जत्तसिद्धीदो । सजोगिं मोत्तूण अण्णे ओरालियमिस्सकायजोगिणो अपज्जत्ता 'सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदा-संजद-संजदट्ठाणे गियमा पज्जत्ता' ति सुत्त-णिहेसादो । ण, आहारमिस्सकायजोग-पमत्तसंजदाणं पि पज्जत्तयत्त-प्पसंगादो । ण च एवं, 'आहारमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं' ति सुत्तेण तस्स अपज्जत्तभाव-सिद्धीदो । अणवगासत्तादो एदेण सुत्तेण

शंका—कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुदातको प्राप्त केवली पर्याप्त हैं या अपर्याप्त ?

समाधान—उन्हें पर्याप्त तो माना नहीं जा सकता, क्योंकि, 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे उनके अपर्याप्तपना सिद्ध है, इसलिये वे अपर्याप्तक ही हैं ।

शंका—'सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संयतासंयत और संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इसप्रकार सूत्र-निर्देश होनेके कारण यही सिद्ध होता है कि सयोगीको छोड़कर अन्य औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक हैं । यहां शंकाकारका यह अभिप्राय है कि औदारिकमिश्रयोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं यह सामान्य विधि है और सम्यग्मिथ्यादृष्टि संयतासंयत और संयत जीव पर्याप्तक होते हैं यह विशेष विधि है और संयतोंमें सयोगियोंका अन्तर्भाव हो ही जाता है अतएव 'विशेषविधिना सामान्य-विधिर्बाध्यते' इस नियमके अनुसार उक्त विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित हो जाती है जिससे कपाटादि समुदातगत केवलीको अपर्याप्त सिद्ध करना असंभव है ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि, यदि 'विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित होती है' इस नियमके अनुसार 'औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं' यह सामान्य-विधि 'सम्यग्मिथ्यादृष्टि आदि पर्याप्तक होते हैं' इससे बाधो जाती है तो आहारमिश्रकाययोगवाले प्रमत्तसंयतोंको भी पर्याप्तक ही मानना पड़ेगा, क्योंकि, वे भी संयत हैं । किंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, 'आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे वे अपर्याप्तक ही सिद्ध होते हैं ।

शंका—'आहारमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है' यह सूत्र अनवकाश है,

१ जी. सं. सू. ७६, २ जी. सं. सू. ९०, ३ जी. सं. सू. ७८.

४ अन्तरंगादप्यपवादो बर्लायान् । परि. शे. पृ. ३५८. येन नाप्राप्तं यो विधिरारभ्यते स तस्य बाधको भवति । येन नाप्राप्ते इत्यस्य यत्कर्तुंकावश्यकप्राप्तावित्तरथो नञ्द्वयस्य प्रकृतार्थदादर्थबोधकत्वात् । एवं च विशेषशास्त्रीदेश्यविशेषधर्मावच्छिन्नवृत्तिसामान्यधर्मावच्छिन्नोद्देश्यकशास्त्रस्य विशेषशान्नेण बाधः । तदप्राप्तियोग्येऽचरितार्थं छेतस्य बाधकत्वे बीजम् । परि. शे. ३५९, ३६८.

‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि, ‘ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं’ ति एदेण ण बाहिज्जदि सावगासत्तेण बलाभावादो^१ । ण, ‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदस्स वि सुत्तस्स सावगासत्तदंसणादो । सजोगिट्ठाणं दोसु वि सुत्तेसु सावगासेसु जुगवं दुक्केसु ‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदेण सुत्तेण ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं’ ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि परत्तादो^२ । ण, परसदो इट्ठवाचओ^३ ति घेप्पमाणे पुब्बेण बाहिज्जदि ति अणेयंतियादो । णियम-सदो

अर्थात् इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये कोई दूसरा स्थल नहीं है, अतः इस सूत्रसे ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक ही होते हैं’ यह सूत्र बाधा जाता है। किंतु औदारिक-मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ इस सूत्रसे ‘संयतोंके स्थानमें जीव पर्याप्तक ही होते हैं’ यह सूत्र नहीं बाधा जाता, क्योंकि, ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है’ यह सूत्र सावकाश होनेके कारण, अर्थात्, इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये सयोगियोंको छोड़कर अन्य स्थल भी होनेके कारण, निर्बल है अतः आहारकसमुद्धातगत जीवोंके जिस-प्रकार अपर्याप्तपना सिद्ध किया जा सकता है उसप्रकार समुद्धातगत केवलियोंके नहीं किया जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होता है’ यह सूत्र भी सावकाश देखा जाता है, अर्थात्, सयोगीको छोड़कर अन्य स्थलमें भी इस सूत्रकी प्रवृत्ति देखी जाती है, अतः निर्बल है और इसलिये ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ इस सूत्रकी प्रवृत्तिको नहीं रोक सकता है।

शंका—पूर्वोक्त समाधानसे यद्यपि यह सिद्ध हो गया कि पूर्वोक्त दोनों सूत्र सावकाश होते हुए भी सयोगी गुणस्थानमें युगपत् प्राप्त हैं, फिर भी ‘परो विधिर्बाधको भवति’ अर्थात्, पर विधि बाधक होती है, इस नियमके अनुसार ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं’ इस सूत्रके द्वारा ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ यह सूत्र बाधा जाता है, क्योंकि, यह सूत्र पर है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ‘परो विधिर्बाधको भवति’ इस नियममें पर शब्द इष्ट अर्थात् अभिप्रेत अर्थका वाचक है, पर शब्दका ऐसा अर्थ लेनेपर जिसप्रकार ‘संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं’ इस सूत्रसे ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता

१ जी. सं. सू. ९०.

२ जी. सं. सू. ७८.

३ अपवादो यदन्यत्र चरितार्थस्तर्हि अन्तरंगेण वाध्यते निरवकाशत्वरूपस्य बाधकत्वव्रीजस्याभावात् । परि. शं. पृ. ३८६.

४ पूर्वापरं बलवत् विप्रतिषेधशास्त्रात् (विप्रतिषेधे परं कार्यमिति सूत्रात्) पूर्वस्य परं बाधकमिति यावत् । परि. शं. पृ. २३७.

२ विप्रतिषेधसूत्रस्थपरशब्दस्येष्टवाचित्वम् । परि. शं. पृ. २४५.

सप्यञ्जणो णिप्पञ्जणो ? ण विदिय-पक्खो, पुप्फयंत-वयण-विणिग्गयस्स णिप्फलत्त-विरोहादो । ण चेदस्स सुत्तस्स णिच्चत्त-पयासण-फलं, णियम-सह-वदिरत्त-सुत्ताणमणिच्चत्त-प्पसंगादो । ण च एवं, 'ओरालियकायजोगो पज्जत्ताणं' ति सुत्ते णियमाभावेण अपज्जत्तेसु वि ओरालियकायजोगस्स अत्थित्त-प्पसंगादो । तदो णियम-सहो णावओ । अण्णहा अणत्थयत्त-प्पसंगादो । किमेदेण जाणाविज्जदि ? 'सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदासंजद-संजद-ट्ठाणे णियमा पज्जत्ता' ति एदं सुत्तमणिच्चमिदि तेणं उत्तरसररीमुट्ठाविद-सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदासंजद संजदाण कवाड-पदर-लोगपूरण-गद-सजोगीणं च सिद्धम-

है' यह सूत्र बाधा जाता है, उसीप्रकार पूर्व अर्थात् 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, यह सूत्र भी बाधा जाता है, अतः शंकाकारके पूर्वोक्त कथनमें अनेकान्त दोष आ जाता है ।

शंका—जब कि कपाट-समुद्घातगत केषली-अवस्थामें अभिप्रेत होनेके कारण 'औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' यह सूत्र पर है तो 'संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इस सूत्रमें आये हुए नियम शब्दकी क्या सार्थकता रह गई ? और ऐसी अवस्थामें यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि उक्त सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द सप्रयोजन है कि निष्प्रयोजन ?

समाधान—इन दोनों विकल्पोंमेंसे दूसरा विकल्प तो माना नहीं जा सकता है, क्योंकि पुष्पदन्तके वचनसे निकले हुए तत्त्वमें निरर्थकताका होना विरुद्ध है । और सूत्रकी नित्यताका प्रकाशन करना भी नियम शब्दका फल नहीं हो सकता है, क्योंकि, ऐसा माननेपर जिन सूत्रोंमें नियम शब्द नहीं पाया जाता है उन्हें अनित्यताका प्रसंग आ जायगा । परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर 'औदारिककाययोग पर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रमें नियम शब्दका अभाव होनेसे अपर्याप्तकोंमें भी औदारिककाययोगके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होगा, जो कि इष्ट नहीं है । अतः सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द ज्ञापक है नियामक नहीं । यदि ऐसा न माना जाय तो उसको अनर्थकपनेका प्रसंग आ जायगा ।

शंका—इस नियम शब्दके द्वारा क्या ज्ञापित होता है ?

समाधान—इससे यह ज्ञापित होता है कि 'सम्यग्मिथ्यादृष्टि संयतासंयत और संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं' यह सूत्र अनित्य है । अपने विषयमें सर्वत्र समान प्रवृत्तिका नाम नित्यता है और अपने विषयमें ही कहीं प्रवृत्ति हो और कहीं न हो इसका नाम अनित्यता है । इससे उत्तरशरीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि, और संयतासंयतोंके तथा कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्घातको प्राप्त केवलियोंके अपर्याप्तपना

१ कृताकृतप्रसंगि नित्यं तद्विपरीतमनित्यम् । परि. शे. पृ. २५०.

२ जी. सं. सू. ७६.

३ जी. सं. सू. ९०.

४ प्रतिपु 'मि तेण' इति पाठः ।

पञ्जत्तं ।

अद्वारद्व सरीशं अपञ्जत्तो णाम । ण ण सजोअम्मि सरीर-पट्टवणमत्थि, तदो ण तस्स अपञ्जत्तमिदि ण, छ-पञ्जत्ति-सत्ति-वज्जियस्स अपञ्जत्त-ववणसादो । छहि इन्दि-एहि विणा चत्तारि पाणा दो वा । दब्बेदियाणं णिण्णत्ति पडुच्च के वि दस पाणे भवन्ति । तण्ण घडदे । कुदो ? भाविंदियाभावादो । भाविंदियं णाम पंचण्हमिदियाणं खओवसमो । ण सो खीणावरणे अत्थि । अथ दब्बिदियस्स जदि भूणं कीरदि तो सण्णीणमपञ्जत्त-काले सत्त पाणा पिंडिदूण दो चेव पाणा भवन्ति, पंचण्हं दब्बेदियाणमभावादो । तम्हा

सिद्ध हो जाता है ।

विशेषार्थ— सम्मामिच्छाइडि-संजदासंजद संजद-द्वारेण णियमा पञ्जत्ता ' इस सूत्रको अनित्य बतलाकर उत्तरशरीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि और संयतासंयतोको भी जो अपर्याप्तक सिद्ध किया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इस कथनसे टीकाकारका यह अभिप्राय होगा कि तीसरे गुणस्थानमें उत्तरवैक्रियिक और उत्तर-औदारिक तथा पांचवें गुण-स्थानमें उत्तर-औदारिकको उत्पन्न करनेवाले जीव जबतक उस उत्तर-शरीरकी पूर्णता नहीं कर लेते हैं तबतक अपर्याप्तक कहे गये हैं। जिसप्रकार तेरहवें गुणस्थानमें पर्याप्त नामकर्मका उद्भव रहते हुए और शरीरकी पूर्णता होते हुए भी योगकी अपूर्णतासे जीव अपर्याप्तक कहा जाता है, उसीप्रकार यहाँपर भी पर्याप्त नामकर्मका उद्भव रहते हुए, योगकी पूर्णता रहते हुए और मूल शरीरकी भी पूर्णता रहते हुए केवल उत्तर शरीरकी अपूर्णतासे अपर्याप्तक कहा गया है।

शंका— जिसका आरंभ किया हुआ शरीर अर्ध अर्थात् अपूर्ण है उसे अपर्याप्त कहते हैं। परंतु सयोगी-अवस्थामें शरीरका आरंभ तो होता नहीं, अतः सयोगीके अपर्याप्तपना नहीं बन सकता है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, कपाटादि समुद्धात-अवस्थामें सयोगी छह पर्याप्तिरूप शक्तिसे रहित होते हैं, अतएव उन्हें अपर्याप्त कहा है।

सयोगी जिनके पांच आवेन्द्रियां और भावमन नहीं रहता है, अतः इन छहके विना चार प्राण पाये जाते हैं। तथा समुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें वचनबल और श्वासोच्छ्वासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें आयु और काय ये दो ही प्राण पाये जाते हैं। परंतु कितने ही आचार्य द्रव्येन्द्रियोंकी पूर्णताकी अपेक्षा दश प्राण कहते हैं; परंतु उनका ऐसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, सयोगी जिनके भावेन्द्रियां नहीं पाई जाती हैं। पांचों इन्द्रियावरण कर्मोंके क्षयोपशमको भावेन्द्रिय कहते हैं। परंतु जिनका आवरणकर्म समूल नष्ट हो गया है उनके वह क्षयोपशम नहीं होता है। और यदि प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका ही ग्रहण किया जावे तो संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त कालमें सात प्राणोंके स्थानपर कुल दो ही प्राण कहे जायेंगे, क्योंकि, उनके द्रव्येन्द्रियोंका अभाव होता है। अतः यह सिद्ध हुआ कि सयोगी जिनके चार

१ प्रतिष्ठा ' सरीरादवण ' इति पाठः ।

२ प्रतिष्ठा ' दब्बेदियाणि.....भवन्ति ' इति पाठः ।

सजोगिकेवलिसस चत्तारि पाणा दो पाणा वा । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग, सच्चमणजोगो असच्चमोसमणजोगो सच्चवचिजोगो असच्चमोसवचिजोगो ओरालियकायजोगो कवाडगदस्स ओरालियमिस्सकायजोगो पदर-लोग-पूरणेसु कम्मइयकायजोगो, एवं सजोगिकेवलिसस सत्त जोगा भवन्ति । अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता होंति ।

अजोगिकेवलीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, पुव्विल्ल-पज्जत्तीओ तथा चेव द्विदाओ चि छ पज्जत्तीओ भणिदाओ । ण पुग पज्जत्ती-जणिद-कज्जमत्थि । आउअ-पाणो एक्को चेव । केण कारणेण ? ण ताव पाणा-

अथवा दो ही प्राण होते हैं । प्राण आलापके आगे क्षीण संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सात योग होते हैं । वे सात योग कौनसे हैं ? आगे इसीका स्पष्टीकरण करते हैं— सत्यमनोयोग, अनुभय-मनोयोग, सत्यवचनयोग, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, कपाट-समुद्धातगत केवलीके औदारिकमिश्रकाययोग और प्रतर तथा लोकपूरण समुद्धातगत केवलीके कामणकाययोग इस प्रकार सयोगिकेवलीके सात योग होते हैं । योग आलापके आगे अप-गतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाव्यातगुद्धि संशय, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्याएं, और भावसे शुक्ललक्ष्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिक सम्पत्त्व, संज्ञी और असंज्ञी विकल्पसे रहित आहारी, अनाहारी; साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपद् उपयुक्त होते हैं ।

अयोगिकेवली गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओलाटाप कहनेपर—एक चौदहवां गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां होती हैं । छहों पर्याप्तियोंके होनेका यह कारण है कि पूर्वसे आरंभ हुई पर्याप्तियां नथेव स्थित रहती हैं, इसलिये यहापर छहों पर्याप्तियां कही गई हैं । किन्तु यहापर पर्याप्तजनित कोई कार्य नहीं होता है, अतः आयुनामक एक ही प्राण होता है ।

शंका एक आयुधानके होनेका क्या कारण है :

समाधान - ज्ञानवर्णकर्मके क्षयोपशमस्वरूप पांच इन्द्रिय प्राण तो अयोगकेवलीके

नं. २५

सयोगिकेवलीके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	से.	ग.	द.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	जा.	उ.
१	२	६	४२	०	२	२	१	७	०	०	१	१	१	६	१	१	०	२	२
सं.प.	प.			म.	पंचे.	वस.	म.	२	उपप.	अ.	के.	यथा.	के.द.	सा.	१	म.	क्षा.	अनु.	आहा.
छ	सं.थ.	३		मरण			व.	२	अप.					श.				अना.	साका.
	अप.			क			ओ.	२											अना.
							का.	१											यु. उ.

वरण-खओवसम-लक्खण-पंचिदियपाणा तत्थ संति, खीणावरणे खओवसमाभावादो । आणा-
वाण-भासा-मणपाणा वि णत्थि, पज्जत्ति-जणिद-पाण-सण्णिद-सत्ति-अभावादो । ण सरीर-
बलपाणो वि अत्थि, सरीरोदय-जणिद-कम्म-णोकम्मागमाभावादो । तदो एक्को चेव
पाणो । उवयारमस्सिऊण एक्को वा छ वा सत्त वा पाणा भवंति । एस पाणो पुण

हैं नहीं, क्योंकि, ज्ञानावरणादि कर्मोंके क्षय हो जानेपर क्षयोपशमका अभाव पाया जाता है ।
इसीप्रकार आनापान, भाषा, और मनःप्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि, पर्याप्तजनित प्राण-
संज्ञावाली शक्तिका उनके अभाव है । उसीप्रकार उनके कायबल नामका भी प्राण नहीं है,
क्योंकि, उनके शरीर नामकर्मके उदय-जनित कर्म और नोकर्मोंके आगमनका अभाव है । इस-
लिये अयोगकेवलीके एक आयुप्राण ही होता है ऐसा समझना चाहिये । किन्तु उपचारका
आश्रय लेकर उनके एक प्राण, छह प्राण अथवा सात प्राण भी होते हैं ।

विशेषार्थ— वास्तवमें अयोगी जिनके एक आयु प्राण ही होता है फिर भी उपचारसे
उनके यहां पर एक या छह या सात प्राण बतलाये हैं । ' जहां मुख्यका तो अभाव हो किन्तु
उसके कथन करनेका प्रयोजन या निमित्त हो वहां पर उपचारकी प्रवृत्ति होती है ' उपचारकी
इस व्याख्याके अनुसार यहां चौदहवें गुणस्थानमें क्षयोपशमरूप मुख्य इन्द्रियोंका तो अभाव है ।
फिर भी अयोगी जिनके पंचेन्द्रियजाति नामकर्मका उदय पाया जाता है और वह जीवविपाकी
है, इस निमित्तसे उन्हें पंचेन्द्रिय कहना बन जाता है । इसलिये उनके पांच इन्द्रिय प्राणोंका
कथन करना भी सप्रयोजन है । इसप्रकार पांच इन्द्रियोंमें आयुको मिला देने पर छह प्राण
हो जाते हैं । यहां पर इन्द्रियोंसे अभिप्राय उस शक्तिसे है जिससे अयोगी जिनमें पंचेन्द्रिय-
पनेका व्यवहार होता है । परंतु उस शक्तिके सम्पादनका या पांच इन्द्रियोंका आधार शरीर है,
अतः इस निमित्तसे अयोगी जिनके कायबलका कथन करना भी सप्रयोजन है । इसप्रकार पूर्वोक्त
छह प्राणोंमें कायबलके और मिला देने पर सात प्राण हो जाते हैं । यद्यपि उनके पहलेकी छह
पर्याप्तियां उसीप्रकारसे स्थित हैं, अतः वे पर्याप्तक कहे जाते हैं । तथा पर्याप्तक अवस्थामें
मनःप्राण भी होता है, इसलिये उनके मनःप्राणका भी कथन करना चाहिये था । परंतु उसके
कथन नहीं करनेका यह कारण प्रतीत होता है कि उनमें संज्ञीव्यवहार लुप्त हो गया है । औप-
चारिक संज्ञीव्यवहार भी उनमें नहीं माना गया है, अतः अयोगियोंके मनः प्राण नहीं कहा ।
इसीप्रकार वचनबल और श्वासोच्छ्वासके अभावका भी कारण समझ लेना चाहिये । ऊपर सयोगी
जिनके जो पांच इन्द्रियां और एक मन इसप्रकार छह प्राणोंका निषेध करके केवल चार ही प्राण
बतलाये हैं वह मुख्य कथन है । अतः जिस उपचारकी अपेक्षा यहां छह अथवा सात प्राण कहे
हैं वही उपचार वहां भी लागू होता है । आयु प्राण तो अयोगियोंके मुख्य प्राण है फिर भी उसे
भी उपचारमें ले लिया है, इसलिये इसे कथनका विवक्षाभेद ही समझना चाहिये । यहां
उपचारका प्रयोजन ऐसा प्रतीत होता है कि विवक्षित पर्यायमें रखना जो आयुका काम है

अप्पपाणो । खीणसण्णा, मणुसग्दी, पंचिदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; लेव-कारण-जोग-कसायाभावादो । भवसिद्धिया, खइयसम्माइड्डिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति ।

सिद्धाणं ति भण्णमाणे अत्थि एयं अदीद-गुणट्ठाणं, अदीद-जीवसमासो, अदीद-पञ्जत्तीओ, अदीद-पाणा, खीणसण्णा, सिद्धग्दी, अणिदिया, अकाया, अजोगिणो, अवगदवेदा, खीणकसाया, केवलणाणिणो, णेव संजदा णेव असंजदा णेव संजदासंजदा, केवलदंसण, दब्ब-भावेहिं अलेस्सिया, णेव भवसिद्धिया, खइयसम्माइड्डिणो, णेव सण्णिणो

वह यहां भी पाया जाता है, इसलिये तो वह मुख्य प्राण है। फिर भी जीवनका अवस्थान अल्प है। और अवस्थानके कारणभूत नये कर्मोंका आना, योगप्रवृत्ति आदि भी नष्ट हो गये हैं, अतः आगु भी इस अपेक्षासे औपचारिक प्राण कहा जाता है। इसप्रकार अयोगियोंके उपचारसे एक या छह या सात प्राण कहे गये हैं।

प्राण आलापके आगे-क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोग, अपगत-वेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे लेश्यारहितस्थान होता है। लेश्याके नहीं होनेका यह कारण है कि कर्म-लेपके कारण-भूत योग और कषाय, इन दोनोंका ही उनके अभाव है। लेश्या आलापके आगे-भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और असंज्ञी विकल्पसे रहित, अनाहारक, साकारोपयोग तथा अना-कारोपयोग इन दोनों ही उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

सिद्धपरमेष्ठीके औघालाप कहनेपर—एक अतीत-गुणस्थान, अतीत-जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत-प्राण, क्षीण, संज्ञा, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, अयोगी, अवेदी, क्षीणकषाय, केवलज्ञानी, संयत, असंयत और संयतासंयत विकल्पोंसे विमुक्त; केवलदर्शनी, द्रव्य और भावसे अलेश्य, भव्यसिद्धिक-विकल्पातीत, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों

नं. २६

अयोगिकेवलीके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	म.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१	१	१	१	१	०	०	०	१	१	१	६	१	१	१	१	२
अप्प.	प.		आप्प.		म.	पंच.	त्रस.	अयो.	अप्रा.	अक.	क.	यथा.	के. द.	द.	म.	क्षा.	अनु.	अना.	साका.
													के. द.	द.	म.				अना.
													के. द.	द.	म.				यु. उ.
													के. द.	द.	म.				

पञ्चकाले शरीरलेखा भवति । विग्रहगदीए पुग णेरइयादि-सञ्च-जीवाणं द्रव्यलेखा सुक्का चैव भवति, कम्म-विस्समोवचयस्स भवत्वर्णं मोत्तूण अण्ण-वण्णाभावादे । शरीर-गहिद-पढम-समय-पहुडि जाव अपञ्चक-काल-चरिम-समओ चि ताव शरीरस्स काउलेखा चैव, संवलिद-सयल-वण्णादे । भावेण किण्ह-णील-काउलेखाओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्चकाले भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्चतीओ, दस प्राण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, कृष्णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, द्रव्येण काला-कालाभासलेखाओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेखाओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ

शरीरलेश्या होती है। किन्तु विग्रहगतिमें नारकी आदि सभी जीवोंकी द्रव्यलेश्या युक्त ही होती है, क्योंकि, कर्मोंके विनासोपनयका धवलवर्ण छोड़कर अन्यवर्ण नहीं होता है, तथा शरीर-द्रव्य करनेके प्रथम समयसे लगाकर अपर्याप्तकालके चरम समयतक शरीरकी कापोतलेश्या ही होती है, क्योंकि, उस समय शरीर संवलित सञ्चल वर्णवाला होता है। भावकी अपेक्षा तो कृष्ण, नील और कापोतलेश्या होती है। लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक-छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालकालाभास कृष्णलेश्या और भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. २८

नारकसामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	द्र. ३	२	६	१	२	२
	सं.प.	प.	७		न.	पं.	व.	म. ४	न.	अज्ञा.	३	असं.	के.द.	कृ.	म.		सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	६						व. ४		ज्ञा.	३	विना.		का.	अ.			अना.	अना.
		अ.						व. २						शु.					
								कर्म. १						मा. ३					
														अशु.					

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्ताओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णत्तंसयवेदो, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं खइयसम्मत्तं^२ मिच्छत्तं च । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और असंयत. सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, ल्हों अपर्याप्तियां. सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, विभंगज्ञानके विना कुमति और कुश्रुति ये दो अज्ञान तथा मति, श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञान, इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व क्षायोपशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं । इनमें वेदकसम्यक्त्व तो कृत्यकवेदककी अपेक्षा होता है और उसमें क्षायिक और मिथ्यात्वके मिला देने पर नारकियोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन सम्यक्त्व होते हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रथमायां पृथिव्यां पर्याप्तापर्याप्तकानां क्षायिकं क्षायोपशमिकं चास्ति । स. सि. १, ७.

नं. २९

नारकसामान्य पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	द. १	२	६	१	१	२
मि.	सं.	प.			न.			म. ४	न.		अज्ञा. ३	असं.	के. द.	कृ.	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.	पं.							व. ४			ज्ञा. ३		विना.	मा. ३	अ.				अना.
सं.								वै. १						अशु.					
अ																			

नं. ३०

नारकसामान्य अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५	१	३	द. २	२	३	१	२	२
मि.	सं.	अ. अप.			न.			वै. मि	न.		कुम.	असं.	के. द.	का. शु	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
अवि.								कर्म.			कुश्रु.		विना.	मा. ३	अ.	क्षा.		अना.	अना.
											ज्ञा. ३			अशु.		क्षायो.			

संपहि णेरइय-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-

अब नारकी मिथ्यादृष्टिजीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभासलेइया और अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेइयाएँ, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसम्बन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और कार्मणकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभासकृष्ण-

नं. ३१

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वें.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	२	२	११	१	४	३	१	२	३	२	१	१	२	२
मि.	स.प.	प.	प.	न.	पुं.	नर.	म.	४	न.	ज्ञा.	असं.	च.	क.	म.	मिथ्या.	सं.	आहा.	साका.	
	सं.अ.	६	७				व.	४					अ.	का.	अ		अना.	अना.	
		अ.	अ.				वे.	२						शु.					
							कार्म.	१						मा	३				
														अशु.					

भासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दोण्णि अण्णाण, अमंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

लेख्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञा-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, इव्यसे कापोत और गुरु लेख्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ३२

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	५	१	४	३	१	२	द्र.१	२	१	१	१	२
मि.	सं.अ.				न.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. १	न.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	क. मा. ३ अशु.	म. अ.	मिथ्या.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ३३

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं. अ.	उप. अप.			न.	पंचे.	त्रस.	वे. मि. कार्म.	नपुं.		कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. शु. मा ३ अशु.	म. अ.	मिथ्या.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

सासणसम्मइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४} ।

सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तिहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ; भवसिद्धिया,

नारकी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहनेपर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैश्विकिकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास लेख्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नारकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैश्विकिकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास लेख्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक

नं. ३४

नारकसामान्य-सासादन आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	म.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आं.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सा	सं.	प.			न	पंचे	त्रस	म. ४	अ.		अज्ञा.	अवे.	च.	क.	म. सासा	सं.	आहा.		साका.
								व. ४	वि				अच.	भा ३					अना.
								वे. १						अशु.					

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्ज-
चीओ छ अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,
तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण क्किण्ह-णील-काउ-
लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ताःवा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासा, छ

सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नारकी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि
गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और
छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति,
त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और
कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, आदिके तीन ज्ञान, असंयम,
आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा कापोत और शुक्ल लेश्याणं,
भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोप-
शमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-
पयोगी होते हैं।

नं. ३५

नारकसामान्य-सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
संय.	सं. प.				न.	पंच.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. १	नपुं.		ज्ञान. मिश्र. अज्ञा.	असं.	च. अन.	क. मा. ३ अणु	म.सम्य.	सं.	सं.	आहा.	साका- अनाका.

नं. ३६

नारकसामान्य-असंयत सम्यग्दृष्टिके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	३	द्र. ३	१	३	१	२	२
अवि.	सं. अ.	प. अ.	७		न.	पंच.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. २ कार्म.	नपुं.		मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	क. अ. मा. ३ अणु.	म. अ.	आ.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^{३३} ।

पढमादि-मत्तहं पुढवीणं लेस्साओ जाणावेई एसा गाहा—

काऊ काऊ काऊ णीला णीला य णील-किण्हा य ।

किण्हा य परमकिण्हा लेस्सा पढमादिपुढवीणं ॥ २२२ ॥

पढमाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, दो जीव-
समामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ,
णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कमाय,

संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रथमादि सातों पृथिवियोंकी लेश्याओंको यह निम्न गाथा बतलाती है—

कापोत, कापोत, कापोत और नील, नील, नील और कृष्ण, कृष्ण तथा परमकृष्ण
लेश्या प्रथमादि पृथिवियोंमें क्रमशः जानना चाहिये ॥ २२२ ॥

विशेषार्थ—प्रथम पृथिवीमें जघन्य कापोतलेश्या होती है । दूसरी पृथिवीमें
मध्यम कापोतलेश्या होती है । तीसरी पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेश्या और जघन्य नीललेश्या
होती है । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेश्या होती है । पांचवीं पृथिवीमें उत्कृष्ट नीललेश्या
और जघन्य कृष्णलेश्या होती है । छठी पृथिवीमें मध्यम कृष्णलेश्या होती है और सातवीं
पृथिवीमें परमकृष्णलेश्या होती है ॥

प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान,
संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां,
दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग
चारों बचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह

१ गो. जी. ५२९. प्रतिपु ' काऊ काऊ तद् काओ णीलं णीला य णील किण्हा य ' इति पाठः ।

नं. ३८

नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	गं.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	२	१	२	१	४	३	१	३	द्र.२	१	२	१	२	२
कं.	सं.अ.	अप.	अप.		न.	पुं.	तस.	वै.मि.	न.		मति.	असं.	के.द.	का.	भ.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
कं.		अप.	अप.					कर्म.			श्रुत.		विना.	सु.	भा.३	क्षायो.		अना.	अना.
											अव.			मा.३	अशु.				

छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ^{३३} ।

तेमिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकाला-भासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्य-

नं. ३९

प्रथमपृथिवी-नारकसामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६ प.	१०	४	१	१	१	११	१	४	६	२	३	द्र. ३	२	६	१	२	२
मि.	सं. प.	६ अ.	७		न.	पुं.	त्रस.	म. ४	मृ.		ज्ञान. ३	असं.	के. द.	कृ. का.	भ. म.		सं.	आहा.	साका.
सा.	सं. अ.							व. ४			अज्ञा.		विना.	शु.	अम.			अना.	अना.
सम्य.								वे. २			३			मा. १					
अवि.								का. १						का.					

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ. सुक्कलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—मिथ्यादृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिथ्र और कर्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायं, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेश्यापं, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, श्वायोपशमिक और श्वायिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४०

प्रथमपृथिवी-नारक पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
४	२	६	१०	४	२	१	१	९	२	४	९	१	३	१	२	६	१	२	२	
मि.	पं.			न.	पंच.	त्रस.	वै.मि.	म. ४	न.	ज्ञा.	अज्ञा. ३	असं.	द्र.	म.		सं.	आहा.	साका.	अना.	
सा.	मं.						वै. ४	व. ४					कु.	अम.						
स.							वै. १						भा. १							
अ.													का.							

नं. ४१

प्रथमपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५	१	३	द्र. २	२	३	१	२	२
मि.	सं.अ.			न.	पंच.	त्रस.	वै.मि.	वै.मि.	न.	कुम.	कुश्रु.	असं.	के.द.	का.	मं.	मि.	सं.	आहा.	साका.
अवि.	कं.						कर्म.			ज्ञा. ३	कुश्रु.	विना.	विना.	शु.	कं.	क्षा.	अना.	अना.	आना.
													भा. ३	का.	क्षायो.				
													का.						

संपहि पढम-पुढवि-मिच्छाइटीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण

अब प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास लेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल-लेश्याएं, भावसे जघन्य कापोत लेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. ४२

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	११	१	४	३	१	२	३	२	१	१	२
मि.	सं	प.	प.	७	न.	पुं.	म.	व.	अज्ञा.	असं.	च.	वृ.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं.	अ.	६			वस.	व.	न.		अच.		का.	अम.			अना.	अना.
		अ.					वै.					शु.					
							का.					मा.					
							१					का.					

कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक अभव्य-सिद्धिक मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हांते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नारकगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैकृतिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेश्याएँ, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी हांते हैं ।

१ प्रतिपु 'अभवसिद्धिया' इति पाठो नास्ति.

नं. ४३

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.				न.	पंचे.	तस.	म. ४	न.		अज्ञा.	असं.	च.	कृ.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४					अच.	मा. १	अ.				अना.
								वे. १						का.					

नं. ४४

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	ज.				न.	पं.	तस.	वे. मि.	मं.		कुम.	असं.	च.	का.	म. मि.	सं.	सं.	आहा.	साका.
								कर्म.			कुश्रु.		अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
														मा १					
														का.					

सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-
चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-
भासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-
रिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव
जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम,
दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया,

प्रथम-पृथिवी-गत सासादनसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सासादन
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ
योग, नपुंसकवेद चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे
कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व,
संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

प्रथम-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग,
नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान-मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे
कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,

नं ४५

प्रथमपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				न.	पंचे.	वस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	च.	क.	म.		सं.	आहा.	साका.
								व. ४					अच.	मा १					अना.
								व. १						का.					

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाग सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाणं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ललेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४६

प्रथमपृथिवी-नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द. १	१	१	१	१	२
सं.प.					न.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	वे. १	ज्ञान.	असं.	च.	कृ.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
									नपुं.		अज्ञा.		अ.	मा. १					अना.
											मिश्र			का.					

नं. ४७

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	२	१	११	१	४	३	१	३	द. ३	१	३	१	२	२
अधि.	सं.प.	६अ.	७		न.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	वे. २	मति.	असं.	के.द.	कृ.	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.							व. ४	नपुं.		श्रुत.		विना	का.		क्षायो.		अना.	अना.
								का. १			अव.			गु.					
														मा. १					
														का.					

तेमिं चैव पञ्जत्तणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काला-कालाभामलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेमिं चैव अपञ्जत्तणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे जघन्य कापोतलेइया; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेइयापं, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, उप-शमसम्यक्त्वके विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

नं. ४८

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द. १	१	३	१	१	२
लि.	सं.				न.	पके.	नाम.	म. ४	न.		मति.	असं.	के. द.	क.	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
लं.	पं.							व. ४			श्रुत.		त्रिना.	भा. १	क्षा.				अना.
								वे. १			अव.			का.	क्षायो.				

सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

विदियाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरय-गदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णटुंसयवेद, चत्तारि कषाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नारकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालभास कृष्णलेइया तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्रु लेइयापं, भावसे मध्यम कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिक सम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४९

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यदृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द. २	१	२	१	२	२
अवि.	सं.अ.	अप.			न.	पुं	पुं	वे. मि. काम.	न.	मति.	असं.	के.द.	का. श.	म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.	
									श्रुत.			विना.	मा. १	का.	क्षायो.		अना.	अना.	

नं. ५०

द्वितीयपृथिवी-नारक सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	६	१	३	द. ३	२	५	१	२	२
मि.	सं.प.	प.	७		न.	पं.	त्र.	म. ४	न.	अज्ञा.	३	असं.	के.द.	कृ.	म.	आ.	सं.	आहा.	साका.
सा.	सं.अ.	६						व. ४		ज्ञान.	३	विना.	का.	श.	अ.	क्षायो.		अना.	अना.
सम्य.	अ.							वे. २						मा. १		सासा.			
अ.								का. १						का.		सम्य.			

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्म-त्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अगागारुवजुत्ता वा^३ ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, गिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिकसम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेश्याएं, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और

नं. ५१

द्वितीयपृथिवी-नारक पर्याप्त आलाप.

ग.	जा.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	क.	या.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	२	१	१	९	१	४	६	१	३	द्र. १	२	५	१	१	२
मि.	प.			न	पके.	अण.	म. ४	व. ४	नं.	ज्ञा. ३	असं.	के द.	विना.	कृ. १	अ.	सासा.	सं.	आहा	साका.
सा.	सं.						व. ४	व. १		अज्ञा. ३				मा. १	सासा.				अना.
स.														का.	सम्य.				
अ.															क्षायी.				

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

मिच्छाद्दृष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

अनाकारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२

द्वितीयपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	ज.	अ.			न.	पं.	नस.	वै. मि. कार्म.	चक्षु.	कुम.	कुक्षु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. भा. १ का.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. ५३

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	१०	४	२	१	२	११	१	४	३	१	२	द्र. ३	२	१	१	२	२
मि.	ज.	प.	७		न.	पं.	नस.	म. ४ व. ४ वै. २ का १	चक्षु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. भा. १ का.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तेसिं चैव पञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे मध्यम कापोत-लेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संब्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेइयापं, भावसे मध्यम कापोतलेइया, भव्य-

नं. ५३

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	४	३	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
मि.	सं. प.		न.	पंचे.	यस.	म	४	४	अज्ञा.	असं.	च.	क.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
						व. ४					अच.	मा	१. अ.				अना.
						वे. १						का.					

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यास्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत सासादनसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कसाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५५

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं.	अ.			न.	पंचे.	त्रस.	वै. मि. कामे.	नपुं.		कुम. कुशु	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. शु. मा. का.	म. अ.			आहा. अना.	साका. अना.

नं. ५६

द्वितीयपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सा.	पं.	सं.			न.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ वै. १	नपुं.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. मा. का.	म. सासा.			आहा.	साका. अना.

सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा दो

द्वितीय-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाय-योग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानमिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अन्त्रक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोत-लेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक,

नं. ५७

द्वितीय-पृथिवी-नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प	प्रा.	सं.	ग.	हं	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	३०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.				न.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. १	नपुं.		ज्ञान.	असं.	च. अच.	क. भा. १ का.	म.सम्य.		सं.	आहा.	साका. अनाका.

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

एवं तदिय-पुढवि-आदि जाव सत्तम-पुढवि त्ति चदुहं गुणद्वानाणमालावो वत्तव्वो । णवरि विसेसो तदियाए णवण्हं इंदयाणं मज्झे उवरिम-अड्डसु इंदएसु उक्कस्सिया काउलेस्सा भवदि । हेट्टिमए णवमे इंदए केसिंचि जीवाणमुक्कस्सिया काउलेस्सा केसिंचि जहणिया णीललेस्सा । कुदो ? जहणुक्कस्स-णिल-काउलेस्साणं सत्त-सागरोवम-काल-णिहेसादो । तेण तदिय-पुढवीए उक्कस्सिया काउलेस्सा जहणिया णीललेस्सा च वत्तव्वा । चउत्थीए पुढवीए मज्झिमा णीललेस्सा । पंचमीए पुढवीए चउण्हमुवरिम-इंदयाणं उक्कस्सिया णीललेस्सा चेव भवदि । पंचए उक्कस्सिया णीललेस्सा जहणा किण्हलेस्सा च भवदि । कुदो ? जहणुक्कस्स-किण्ह-णिललेस्साणं सत्तारम-सागरोवम-काल-णिहेसादो ।

ध्यायिकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और ध्यायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार तृतीय-पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक नारकियोंमें चारों गुणस्थानोंके आलाप कहना चाहिये । इतनी विशेषता है कि तृतीय पृथिवीके नौ इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके आठ इन्द्रक बिलोंमें उत्कृष्ट कापोतलेश्या होती है और नीचेके नौवें इन्द्रक बिलमें कितने ही नारकी जीवोंके उत्कृष्ट कापोतलेश्या होती है, तथा कितने ही नारकोंके जघन्य नीललेश्या होती है, क्योंकि, जघन्य नीललेश्या और उत्कृष्ट कापोतलेश्याकी सात सागरोपम स्थितिका आगममें निर्देश है । अतएव तीसरी पृथिवीके नौवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट कापोत और जघन्य नीललेश्या बन सकती है । इसप्रकार तृतीय पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेश्या और जघन्य नीललेश्या कहना चाहिए । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेश्या है । पांचवीं पृथिवीके पांच इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके चार इन्द्रक बिलोंमें उत्कृष्ट नीललेश्या ही है, और पांचवें इन्द्रक बिलमें उत्कृष्ट नीललेश्या तथा जघन्य कृष्णलेश्या है, क्योंकि, जघन्य कृष्णलेश्या और उत्कृष्ट नीललेश्याका आगममें सबह सागरप्रमाण कालका निर्देश किया

नं. ५८

द्वितीयपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	हा	संय.	द.	ले.	म.	स.	संनि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. १	१	२	१	१	२
अवि.	सं. प.				न. पंचे.	वस.	म. ४	व. ४	व. १	मति.	असं.	क. द.	विना	भा. १	का.	म.	औप.	सं.	आहा.
										श्रुत.	अव.					क्षायो.			साका.
																			अना.

एदाओ दो लेस्साओ पंचम-पुढवी-गेरइयाणं भवंति। छट्टीए पुढवीए गेरइयाणं मज्झिम-किण्हलेस्सा भवदि। सत्तमीए पुढवीए गेरइयाणं उक्कस्सिया किण्हलेस्सा भवदि।

तिरिक्खगईए तिरिक्खाणं भण्णमाणे तिरिक्खा पंचविधा भवंति, तिरिक्खा पंचि-दियतिरिक्खा पंचिदियतिरिक्खपज्जत्ता पंचिदियतिरिक्खजोणिणी पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्ता चेदि। तत्थ तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, चौदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि क्कमाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

गया है। अतएव पांचवी पृथिवीके पांचवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट नीललेश्या और जघन्य कृष्णलेश्या बन सकती है। इसप्रकार ये दोनों ही लेश्याएं पांचवीं पृथिवीके नारकी जीवोंके होती हैं। छठी पृथिवीके नारकोंके मध्यम कृष्णलेश्या होती है। सातवीं पृथिवीके नारकोंके उत्कृष्ट कृष्णलेश्या होती है।

इसप्रकार नरकगतिके आलाप समाप्त हुए।

अब तिर्यंचगतिके आलापोंको कहते हैं। तिर्यंच पांच प्रकारके होते हैं, १ तिर्यंच, २ पंचेन्द्रिय तिर्यंच, ३ पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच, ४ पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यंच, और ५ पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच। इनमेंसे सामान्य तिर्यंचोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी और विकल्पत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, छह प्राण; त्रीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, पांच प्राण; द्वीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण, चार प्राण; और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण, तीन प्राण; क्रमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों क्कमाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और वैश-संयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी

वञ्जुत्ता ह॑न्ति अणागारुवञ्जुत्ता वा^० ।

तेसिं^० चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगई, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पृथ्विकायादी छक्काया, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, छण्णाण, दो संजम,

और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यच्चोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुण-स्थान, पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संज्ञी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यच्चोंके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्यच्चोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यच्चोंके चार पर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, त्रिन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, द्विन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण होते हैं । चारों संज्ञाणं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियादि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कमाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्य-

नं. ५९

सामान्य तिर्यच्चोंके आलाप.

गु. जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	१४	६ प.	१०, ७	४	१	५	६	११	३	४	६	२	३	३	६	२	२	२
मि.		६ अ.	९, ७				म. ४			ज्ञा ३	असं.	के. द.	मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.		५ प.	८, ६				व. ४			अ. ३	देश.	विना.		अ.		असं.	अना	अना.
स.		५ अ.	७, ५				औ. २											
अ.		४ प.	६, ४				कर्म. १											
देश.		४ अ.	४, ३															

नं. ६०

सामान्य तिर्यच्चोंके पर्याप्त आलाप.

गु. जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	७	६	१०	४	१	५	६	९	३	४	६	२	३	३	६	२	२	२
मि.	पर्या.	५	९				म. ४			ज्ञान. ३	असं.	के. द.	मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.		४	८				व. ४			अज्ञा. ३	देश.	विना.		अ.		असं.	अना.	अना.
सम्य.			७				औ. १											
अवि.			६															
देश.			४															

तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छ काया, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणेण विणा पंच पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ । कि कारणं ? जेण तेउ-पम्मलेस्सिया वि देवा तिरिक्खे-सुप्पज्जमाणा णियमेण णट्ठ-लेस्सा भवंति त्ति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं एवं चत्तारि सम्मत्तं,

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यचोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और अचिरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातों जीव-समास, संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तोंके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रियों और विकलद्वयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके तीन प्राण होते हैं । चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेश्याएं, भावसे कृष्ण नील और कापोत लेश्याएं, होती हैं ।

शंका—सामान्य तिर्यचोंके अपर्याप्तकालमें तीनों अशुभ लेश्याएं ही क्यों होती हैं ?

समाधान—क्योंकि, तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावाले भी देव यदि तिर्यचोंमें उत्पन्न होते हैं तो नियमसे उनकी शुभलेश्याएं नष्ट हो जाती हैं, इसलिये तिर्यचोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन अशुभ लेश्याएं ही होती हैं ।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व और कृतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व इस प्रकार चार सम्यक्त्व, संज्ञिक,

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणआहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणआगारुवजुत्ता वा ।

संपहि तिरिक्ख-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ

असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अब तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौबहों जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी पंचेन्द्रियों और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संज्ञी पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण और सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके आठ प्राण और छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण, एकेन्द्रियोंके चार प्राण और तीन प्राण क्रमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं । चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रिय जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तिनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. ६१

सामान्य तिर्यञ्चोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	७	६अ.	७	४	१	५	६	२	३	४	५	१	३	द्र. २	२	४	२	२	२
मि.	अ.प.	५, ११	७		ति.			ओ.मि.			कुम.	असं.	के.द.	का.	मं.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४, ११	६					कर्म.			कुभु.			शु.	कं.	सा.	असं.	अना.	आना.
अभि.			५								मति.			भा. ३		क्षा			
			४								श्रुत.			अशु.		क्षायो.			
			३								अव.								

नं. ६२

सामान्य तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६प.	१०, ७	४	१	५	६	११	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.		६अ.	९, ७		ति.			म. ४			अज्ञा.	असं.	च.	मा. ६	मं.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		५प.	८, ६					व. ४					अच.		अम.	असं.	अना.	अना.	
		५अ.	७, ५					ओ. २											
		४प.	६, ४					का. १											
		४अ.	४, ३																

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छप्पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्वव-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ

छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हेते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, द्वीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अन्नक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हेते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां,

नं. ६३

सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

पु.	जी	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	मय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	१	५	६	९	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२.	१	२
मि.		५	९		ति.			म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८					व. ४					अच.		अ.	असं			अना.
			७					ओ. १											
			६																
			४																

अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तिरिक्ख-सासणसम्माइटीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वान्, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, षंदिंदियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संज्ञीके सात प्राण, असंज्ञीके सात प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके छह प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रिय जीवोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील, और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संन्निक, असंन्निक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक सासादन-गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और

नं. ६४

सामान्य तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अप.	७	४	१	५	६	२	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२
मि.	अप.	५	७	ति.			औ.मि.				कुम.	असं.	च.	का.	म.मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	६				कार्म.				कुश्रु.		अच.	शु.	अ.	असं.	अना.	अना.
			५											भा ३				
			४											अशु.				
			३															

असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि क्कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों क्कसाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ६५ सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

ग.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	११	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२
सा.	सं. प.	६अ.	७	ति	पंचे.	वस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.
	सं. अ.						व. ४					अच.					साका.
							ओ. २										अना.
							का. १										

नं. ६६ सामान्य तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

ग.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	९	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२
सा.	सं. प.			ति.	पंचे.	वस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.
							व. ४					अच.					साका.
							ओ. १										अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया, सासणम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिरिक्ख-सम्मामिच्छाड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, गव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहिं भिम्मणि, असंजम, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेम्भा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं सामान्य तिर्यच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और दृक्क लेख्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याणं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यच-गति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याणं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,

नं. ६७

सामान्य तिर्यच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	२	२	२	२	२	४	२	२	२	द. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.	अप.		ति.			ओ.मि.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	गु.	म.	साया.	सं.	आदा.	साका.	
							कर्म.		कुश्रु.		अच.	मा. ३	अशु.				अना.	अना.	

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिरिक्ख-असंजदसम्महाड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यञ्च असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेट्याणं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्वः संज्ञिक, आहारक, अनाहारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ६८

सामान्य तिर्यञ्च सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	द. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.				ति.	पंचे.	वस.	म. ४			ज्ञान.	असं.	च.	भा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४			३		अ.						अना.
								ओ. १			अज्ञा.								
											मिश्र								

नं ६९

सामान्य तिर्यञ्च असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	३	द. ६	१	३	१	२	२
अभि.	सं.प.	६	७		ति.	पंचे.	वस.	म. ४			मति.	असं.	के द.	भा. ६	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
		अ.						व. ४			श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
								ओ २			अव.					क्षायो.			
								का. १											

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^० ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्हीं सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्वः संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्य-सिद्धिक, उपशमसम्यक्त्वके विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं ।

नं. ७०

सामान्य तिर्यंच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	द. ६	१	३	१	१	२
लक्षि.	सं.	प.			ति.	पुं.	त्रस.	म. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. ६	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४			श्रुत.		विना			क्षा.			अना.
								ओ. १			अव.					क्षायो.			

सम्मत्तं । मणुस्सा पुव्ववद्द-तिरिक्खयुगा पञ्चा सम्मत्तं घेत्तूण दंसणमाहणीयं खविय खइयसम्माइट्ठी होदूण असंखेज्ज-वस्सायुगेसु तिरिक्खेसु उप्पज्जंति ण अण्णत्थ, तेण भोगभूमि-तिरिक्खेसुप्पज्जमाणं पेक्खिऊण असंजदसम्माइट्ठि-अपज्जत्तकाले खइयसम्मत्तं लब्भदि । तत्थ उप्पज्जमाण-कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं लब्भदि । एवं तिरिक्ख-असंजदसम्माइट्ठिस्स अपज्जत्तकाले दो सम्मत्ताणि हवंति । सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा ॥ १ ।

तिरिक्ख-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण

पूर्वाक्त दो सम्यक्त्वोंके होनेका यह कारण है कि जिन मनुष्योंने सम्यग्दर्शन होनेके पहले तिर्यच आयुको बांध लिया है वे पीछे सम्यक्त्वको ग्रहण कर और दर्शनमोहननीयको क्षपण करके क्षायिकसम्यग्दृष्टि होकर असंख्यात वर्षकी आयुवाले भोगभूमिके तिर्यचोंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यत्र नहीं । इस कारण भोगभूमिके तिर्यचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंकी अपेक्षाले असंयतसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्तकालमें क्षायिकसम्यक्त्व पाया जाता है । और उन्हीं भोगभूमिके तिर्यचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके कृतकृत्यवेदकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व भी पाया जाता है । इसप्रकार तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालमें दो सम्यक्त्व होते हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके

१ प्रतिपु 'अट्ठिप्पट्ठि' इति पाठः ।

नं. ७१

सामान्य तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द.२	१	२	१	२	२
अनि.	सं.अ.	अप.	अप.		ति.	पके.	वस.	औ.मि.	पु.	कर्म.	मति.	असं.	के.द	का.	भ.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
											शुत.		विना	शु.	भा.१	क्षायी.		अना.	अना.
											अव.			का.					

छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं । केण कारणेण ? तिरिक्ख-संजदासंजदा दंसणमोहणीयं कम्मं ण खवेति, तत्थ जिणाणमभावादो । मणुस्सा पुवं बद्ध-तिरिक्खायुगा खइयमम्माइट्टिणो कम्मभूमीसु ण उपज्जंति किंतु भोगभूमीसु । भोगभूमीसुप्पण्णा वि ण संजमासंजमं पडिवज्जंति, तेण तिरिक्ख-संजदासंजदट्टाणे खइयसम्मत्तं णत्थि । सण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^३ ।

पंचिदिय-तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्टाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह

विना दो सम्यक्त्व होते हैं। क्षायिकसम्यक्त्वके नहीं होनेका कारण यह है कि संयतासंयत तिर्यच दर्शनमोहनीय कर्मका क्षपण नहीं करते हैं, क्योंकि, वहांपर जिन अर्थान् केवली या श्रुतकेवलीका अभाव है। और पूर्वमें तिर्यच आयुको बांधकर पीछे क्षायिकसम्यग्दृष्टि होनेवाले मनुष्य कर्मभूमियोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं; किन्तु भोगभूमियोंमें ही उत्पन्न होते हैं। परंतु भोगभूमियोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यच संयमासंयमको प्राप्त नहीं होते हैं, इसलिये तिर्यचोंके संयतासंयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यक्त्व नहीं होता है। सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएँ, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद,

नं. ७२

सामान्य तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	क.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	य.	संज्ञि.	आ.	य.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
देश.	क.	प.			ति.	पंच.	वष्ट.	म. ४			माति.	देश.	के.द.	मा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
							व. ४	आ. १			श्रुत.	विना.	शुभ.		क्षायो.				अना.
											अव.								

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तैसिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचदिय-जादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि

चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण और असंज्ञीके नौ प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम

नं. ७३

पंचेन्द्रिय तिर्यच जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	४	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	६	२	३	द्र.६	२	६	२	२	२
मि.	सं.प.	६	अ.	७	ति.	पं.	व.	म. ४			ज्ञान. ३	असं.	के.द.	भा. ६	अ.	सं.	आहा.	साका.	
सा.	स.अ.	५	प.	९				व. ४			अज्ञा. ३	देश.	विना.		अ.	असं.	अना.	अना.	
सम्य.	अ.प.	५	अ.	७				औ. २											
अवि.	अ.अ							का. १											
देश.																			

नं. ७४

पंचेन्द्रिय तिर्यच जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	२	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	६	२	३	द्र.६	२	६	२	१	२
मि.	सं.प.	५	९		ति.	पं.	व.	म. ४			ज्ञान. ३	असं.	के.द.	भा. ६	अ.	सं.	आहा.	साका.	
सा.	असं.							व. ४			अज्ञा. ३	देश.	विना.		अ.	असं.	अना.	अना.	
सम्य.	प.							औ. १							अ.				
अवि.																			
देश.																			

दंसण, दव्व भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणहाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिक्खिखगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं उवसमसम्मत्तं णत्थि, भिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तमिदि चत्तारि सम्मत्तं । सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संबिक, असंबिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच्चोंके अपर्याप्तकालसेवन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान; संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाणं, तिर्यच्चगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक होते हैं । इनके सम्यग्मिथ्यात्व और उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है, किन्तु मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व और कृतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व ये चार सम्यक्त्व होते हैं । संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ७५

पंचेन्द्रिय तिर्यच्च जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	२	६अ.	७	४	१	१	१	२	३	४	५	१	३	द्र. २	२	४	२	२	२
मि.	सं.अप.	५, ७			ति.	प.	वस.	ओ.मि.			कुम.	असं.	के.द.	का.	मं.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.	असं.							कर्म.			कुश्रु.		त्रिना.	शु.	७	वा.	असं.	अना.	अना.
अ.											मति.			भा.३	७	धा.			
											श्रुत.			अशु.		क्षायो.			
											अव.								

पंचिन्द्रियतिरिक्ख-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीव-समास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिक-मिथ्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये स्वारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्याणं, भव्यसाद्धिक, अभव्यसाद्धिक; मिथ्यात्व, सांक्षिक, असांक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो

नं. ७६

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	मा	सं.	ग.	इ.	का	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	म.	संज्ञी.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	१	१	११	३	४	३	१	२	६	६	२	१	२	२	२
मि	सं. प.	६अ.	७		ति.		म. ४			अज्ञा.	अज्ञा.	चक्षु.		मा	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	,, अ.	५प.	९			पंच.	व. ४					अच.			अ.		असं.	अना.	अना.
	असं.प.	५अ.	७				आ. २												
	,, अ.						का. १												

असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जावसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सांज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां; संज्ञीके सात प्राण और असंज्ञीके सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सांज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ७७

पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा. संय.	द. ले.	म. स.	सांज्ञि.	आ.	उ.							
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	६	२	१	२	१	२
मि.	सं. अ.	५	९	ति.	पंचे.	त्रस.	म	४	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.	६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	अना.
	असं.						व.	४			अच.			अ.	असं.				
	प.						औ.	१											

नं. ७८

पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा. संय.	द. ले.	म. स.	सांज्ञि.	आ.	उ.							
१	२	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	२	२	१	२	२	२
मि.	सं. अ.	५	७	ति.	पंचे.	त्रस.	म	४	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.	६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	अना.
	असं.						व.	४			अच.			अ.	असं.				
	प.						औ.	१											

पंचिदियतिरिक्ख-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासा-दन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां: दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग: तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सास-दन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग: तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु

नं. ५९

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	२	६	१	१	१	२	२
सा.	सं.	प.	७	ति	प.	त्रस.	म.	४			अज्ञा.	असं	चक्षु.	भा.६	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.	अ.					व.	४					अच.					अना.	अना.
							ऑ.	२											
							का	१											

छ लेसाओ, भवसिद्धिया, सायणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तैसि चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-गुक्क-लेसाओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेसाओ; भवसिद्धिया, सायणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

और अत्रशु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेस्याणं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाणं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अन्नान, असंयम, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेस्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेस्याणं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ८०

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र.६	१	१	१	१	२
सा.	सं.	अ.	अ.	ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	अज्ञा.	असं.	चश्रु	मा.६	म.	मा.	सं.	आहा.	साका.	अना.	
							ओ. १					अच.							

नं. ८१

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.	अ.	अ.	ति.	पंचे.	त्रस.	ओ.मि.	कर्म.	कुम.	असं.	चश्रु.	अच.	चश्रु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
									कुश्रु.				अच.	शु.	मा. ३			अना.	अनाका.
														मा. ३					
														अश्रु.					

पंचिन्द्रियतिरिक्ख-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

पंचिन्द्रियतिरिक्ख-असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीव-समासां, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंच-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राणः चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक

नं. ८२

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	या.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.				ति. पंचि.	त्रस.	म. ४	व. ४	अज्ञा.	मिश्र.	ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म. सम्य.	सं.	आहा.	साका.	अना.

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तैसि चैव पञ्चत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, इहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे इहों लेस्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ८३ पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	२	२	२	११	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अति.	सं.प.	प.	७		ति.	पंच.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. २ का. १			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	ओ.प.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	अ.									श्रुत.		विना			क्षा		अना.	अना.
											अव.					क्षायो.			

नं. ८४ पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	२	२	२	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अति.	सं.प.	प.			ति.	पंच.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.										श्रुत.		विना			क्षा		अना.	अना.
											अव.					क्षायो.			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा ।

पंचिंदियतिरिक्ख-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुककलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे जघन्य कापोतलेश्या; भव्य-सिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेश्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व,

नं. ८५

पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र.२	१	२	१	२	२
अति.	सं.अ.	अप.		ति.	पु.	त्रस.	औ.मि.कर्म.	पु.	मति.श्रुत.अव.		असं.के.द.विना.		का.शु.मा.१.का.	म.क्षायो.क्षा.		सं.	आहा.अना.	साका.अना.	

विणां दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइट्ठि-प्पहुडि जाव संजदासंजदा ति पंचिंदियतिरिक्ख-भंगो । णवरि विसेसो पुरिस-णवुंसयवेदा दो चेव भवंति, इत्थिवेदो णत्थि । अथवा तिण्णि वेदा भवंति ।

पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, चत्तारि जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं

संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक पंचेन्द्रिय तिर्यच सामान्यके आलापोंके समान ही आलाप समझना चाहिये। विशेष बात यह है कि इनके वेद स्थानपर पुरुष और नपुंसक ये दो ही वेद होते हैं, स्त्रीवेद नहीं होता है। अथवा तीनों ही वेद होते हैं।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके दो ही वेद बतलानेका यह अभिप्राय है कि योनिमती जीवोंका पर्याप्तक भेदमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, योनिमतियोंका स्वतंत्र भेद गिनाया है। अथवा पर्याप्त और योनिमती तिर्यच इन दोनों भेदोंको गौण करके पर्याप्त शब्दके द्वारा सभी पर्याप्तकोंका ग्रहण किया जावे तो पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके आलापमें तीनों वेदोंका भी सद्भाव सिद्ध हो जाता है।

पंचेन्द्रिय-तिर्यच योनिमतियोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त, असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; संज्ञीके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. ८६

पंचेन्द्रिय तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	२
देश.	पं.			ति.	पं.	म. ४		मति.	देश.	के.द.	मा. ३	म.	औप.	१	१	२
	अं.				अं.	व. ४		श्रुत.		विना.	शुभ.		क्षायो.	सं.	आहा.	साका.
						औ. १		अव.							अना.	

छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खड्यसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणीओ, असण्णिणीओ, आहारिणी, अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता हीति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

“तासिं चैव पज्जत्तजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस षाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्व भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं,

छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिक सम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; खविद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसंयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिकसम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी;

नं. ८७

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतीके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा. सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	४	६	१०	४	१	१	१	१	४	६	२	३	द्र. ६	२	५	२	२	२
मि.	सं. प.	६	अ. ७		ति.	पं.	म. ४	स्त्री.	ज्ञा ३	असं.	के. द.	मा. ६	म. क्षा.	सं.	आहा.	साका.		
सा.	सं. अ.	५	प. ९			पं.	व. ४		अ. ३	देश.	विना.		अ.	वि.	असं.	अना.	अना.	
स.	असं. प.	५	अ. ७				औ. २											
अ.	असं. अ.						कर्म. १											
देश.																		

नं. ८८

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतीके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा. सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	२	६	१०	४	१	१	१	१	४	६	२	३	द्र. ६	२	५	२.	१	२
मि.	सं. प.	५	९		ति.	पं.	म. ४	स्त्री.	अज्ञा.	असं.	के. द.	मा. ६	म. क्षा.	सं.	आहा.	साका.		
सा.	असं. प.	५					व. ४		३	देश.	विना.		अ.	विना.	असं.	अना.	अना.	
स.		५					औ. १		ज्ञान.									
अ.									३									
देश.																		

सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्तजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्टाणाणि, दो जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तमिदि दो सम्मत्तं, सण्णिणी अस-ण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिदियतिरिक्खजोणिणी-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, चत्तारि

आहारक, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-दृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी और असंज्ञीके सात सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाय-योग और कार्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादन-सम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी; आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीव-

नं. ८९

पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमतीके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	से.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	२	२	२
मि.सं.अ.सा.	सं.अ.सा.	असं.सा.	७		ति.	कृष्.	वस	औ.मि.कार्म.	स्त्री		कुम.कुश्रु.	असं.	चक्षु.अच.	का.शु.भा.अशु.	म.मि.असा.	सं.असं.	आहा.अना.	साका.अना.

जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

पज्जत्तपंचिंदियतिरिक्खजोणिणी-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

समास, संज्ञिनीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञिनीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; संज्ञिनीके दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञिनीके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; खीवेद, चारों कषाय तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी; आहारिणी, अनाहारिणी; साकारो-पयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, और असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, और असंज्ञीके नौ प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; खीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक;

नं. २०

पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती मिथ्यादृष्टिके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	१	१	११	१	४	३	१	२	द्र.६	२	१	२	२
मि.	सं.प.	६अ.	७	ति	पंचे.	त्रस.	म.४	खी.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.६	म.	मि.	सं.	आहा.
	सं.अ.	५प.	९				व.४					अच.		अ.	असं.	अना.	साका.
	असं.प.	५अ.	७				औ.२										अना.
	असं.अ.						का.१										

मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तामिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणी असण्णिणी, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

मिथ्यात्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी; आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञिनीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञिनीके पांच अपर्याप्तियां; संज्ञिनी अपर्याप्तके सात प्राण, असंज्ञिनी अपर्याप्तके सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, खीवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिनी, असंज्ञिनी; आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

नं ९१

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादृष्टिके पर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	सं. प.	५	९		ति.	पंचे.	वस.	म. ४	खी.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.प.						ब ४					अच.	अ		असं.			अना.
							औ. १											

नं. ९२

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती मिथ्यादृष्टिके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६अ	७	४	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	सं. अप.	५,	७		ति.	पंचे.	औ.मि.	खी.		कुम.	असं.	चक्षु.	का. शु.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं ,						कर्म.			कुश्रु.		अच.	मा. ३	अ.	असं		अना.	अना.
													अशु.					

पंचिदियतिरिखलजोणिणी-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ, छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिखलगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्ताओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{३३} ।

तासिं चैव पञ्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिखलगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

पंचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्यग्दृष्टि योनिमतियोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं. तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; छीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्यग्दृष्टि योनिमतियोंके पर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं ९३ पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती सासादन सम्यग्दृष्टिके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प.	प.	७		ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	६						व. ४					अच.					अना.	अना.
		अ.						औ. २											
								का. १											

नं. ९४ पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती सासादन सम्यग्दृष्टिके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	च.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४					अ.						अना.
								औ. १											

जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

तासिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अप-ज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ण-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

पंचिदियतिरिक्खजोणिणी-सम्माभिच्छाड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदिय-

और औदारिककाययोग ये नौ योग; खीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हों पंचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संश्लि-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, खीवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संश्लि-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं,

नं. ९५ पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती सासादनसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.	अ.	अ.		ति.			ओ.मि. कार्म.	खी.	कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. सु. भा. ३ अणु.	म. सासा.			सं.	आहा. अना.	साका. अनाका.

जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णा-
णेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मा-
मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{१०} ।

पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणिणी-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं,
एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदिय-
जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि
दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खड्यसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं,
सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{१०} ।

तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-
काययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, तीनों अहानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु
और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,
संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय-तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-
सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों
संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-
काययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,
द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी,
आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

नं. ९६ पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	२	१	९	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	२	१	१	२
सम्य.	सं.प.				ति. पंचे.	त्रस.	म. ४	खी.			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म. सम्य.		सं.	आहा.	साका.
							व. ४				३		अच.						अना.
							औ. १				अज्ञा.								
											मिश्र.								

नं. ९७ पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती असंयतसम्यग्दृष्टियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	२	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अवि.	सं.प.				ति. पंचे.	त्रस.	म. ४	खी.			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
							व. ४				श्रुत.		विना.			क्षायो.			अना.
							औ. १				अव.								

पंचिन्द्रिय-तिरिक्ख-जोणिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

पंचिन्द्रिय-तिरिक्ख-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, वे जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच संयतासंयत योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; छीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, असंज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील, और कापोत लेश्यापं; भव्य-

नं. ९८

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती संयतासंयतोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
देह.	सं.	प.		ति.	पं.	ज्ञा.	म. ४	व. ४	खी.	मति.	श्रुत.	देश.	के. द.	भा-३	शुभ.	म. क्षायो.	सं.	आहा.	साका.
							अ. १			अव.		विना.							अना.

लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

एवं तिरिक्खिगदी समत्ता ।

मणुसा चउच्चिहा हवंति मणुस्सा मणुस-पज्जत्ता मणुसिणीओ मणुस-अपज्जत्ता चेदि । तत्थ मणुस्साणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदा वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो,

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इस प्रकार तिर्यंचगतिके आलाप समाप्त हुए ।

मनुष्य चार प्रकारके होते हैं—मनुष्य, मनुष्य-पर्याप्त, मनुष्यिनी और लब्धपर्याप्त मनुष्य । उनमेंसे मनुष्यसामान्यके आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण सात प्राण, चारों संज्ञापं, और क्षीणसंज्ञारूप भी स्थान होता है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग और वैक्रियिकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तथा अयोग-स्थान भी होता है, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी होता है । चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी होता है । आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्यापं तथा अलेक्ष्या-स्थान भी होता है । भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । आहारक, अनाहारक; साकारो-

नं. १९

पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	सं. अ.	अ.	७		ति.	पं.	त्रस.	औ. मि. कर्म.	किं		कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. शु. मा. ३ अशु.	म. अ.	मि.	सं. असं.	आहा. अना.	साका. अना.

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१०} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग ओरालिय-आहार-मिस्स-कम्मइएहि विणा दस वा अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो

पयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तथा क्षीणसंज्ञारूप भी स्थान होता है; मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग वैक्रियिकमिश्र-काययोगके विना तेरह योग; अथवा पूर्वोक्त दो और औदारिकमिश्रकाययोग आहारकमिश्र-काययोग और कर्मणकाययोग इन पांच योगोंके विना दशयोग तथा अयोग-स्थान भी है; तीनों वेद तथा अपगत-वेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, तथा अलेश्या-स्थान भी है; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित

नं. १००

सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	थो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	२	६	१०	४	१	१	१३	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	१	२	२
	सं. प. प.	७		म.	पंचे.	त्रस.	वै. द्वि.	अपा.	अकषा.				भा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	६		क्षीणसं.			विना.						अठि. अ.			अनु.	अना.	अना.
	अ.						अयो.											यु. उ.

वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, अजोगि-भयवंतस्स सररीर-णिमित्तमागच्छमाण-परमाणुणमभावं पेक्खिऊण पज्जत्ताणमणाहारित्तं लब्भदि । सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१०१} ।

भी स्थान है; आहारक, और अनाहारक भी होते हैं। मनुष्योंके पर्याप्त अवस्थामें अनाहारक होनेका कारण यह है कि अयोगिकेवली भगवान्के शरीरके निमित्तभूत आनेवाले परमाणुओंका अभाव देखकर पर्याप्तक मनुष्योंके भी अनाहारकपना बन जाता है। साकारोपयोगी अनाकारो-पयोगी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ—ऊपर योग आलापका कथन करते हुए वैक्रियिकद्विक, आहारकमिश्र, औदारिकमिश्र और कर्मणकाययोगके बिना दश अथवा केवल वैक्रियिकद्विकके बिना तेरह योग बतलाये हैं। दश योग तो मनुष्योंकी पर्याप्त-अवस्थामें होते ही हैं, परंतु अपर्याप्त-अवस्थामें होनेवाले औदारिकमिश्र आहारकमिश्र और कर्मणकाययोगको मनुष्योंकी पर्याप्त अवस्थामें बतानेका यह कारण है कि यद्यपि तेरहवें गुणस्थानमें समुद्रातके समय योगोंकी अपूर्णता रहती है फिर भी उस समय पर्याप्त-नामकर्मका उदय विद्यमान रहता है और शरीरकी पूर्णता भी रहती है, इसलिये पर्याप्त-नामकर्मके उदय और शरीरकी पूर्णताकी अपेक्षा कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्रातगत केवली भी पर्याप्त हैं और इसप्रकार पर्याप्त अवस्थामें औदा-रिकमिश्र तथा कर्मणकाययोग बन जाते हैं। इसीप्रकार छठवें गुणस्थानमें आहारमिश्रकाय-योगके समय भी पर्याप्त-नामकर्मका उदय रहता है, इसलिये ऐसा निर्वृत्तिसे अपर्याप्त होता हुआ भी जीव पर्याप्त-नामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्याप्त ही है; अतः आहारमिश्रकाययोग भी पर्याप्त-अवस्थामें बन जाता है। इसप्रकार उपर्युक्त तीनों योग विवक्षा भेदसे पर्याप्त-अवस्थामें भी बन जाते हैं इसलिये मनुष्योंकी पर्याप्त-अवस्थामें तेरह योग भी गिनाये हैं ।

नं. १०१

सामान्य मनुष्योंके पर्याप्त आलाप.

गुं.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यी.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	मं.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	१	६	१०	४	१	१	१	१३	३	४	८	७	४	द.६	२	६	१	२	२
	पं.			क्षणसं.	म.	पंच.	त्रसं.	वे.२ विना.	अपां.	अकषां.				मा.६ म.		सं.	आहा.	साका.	
	कं							१०।म.४						अले. अ	अनु.	अना.	अना.	यु. उ.	
								व. ४											
								औ.१आ.१											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ अदीदसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सेण सह तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, पंच णाण केवलणाणेण छ णाण, असंजम सामाइय-छेदोवट्ठावण-जहाकखादेहि चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त-उवसमसम्मत्तेण विणा चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो अणुमओ वा, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता हेति अणागारु-वजुत्ता वा तदुभया वा^{१६} ।

उन्हीं सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं तथा अतीतसंज्ञा स्थान भी है; मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारमिश्रकाययोगके साथ औदारिक-मिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग इसप्रकार तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय स्थान भी है, कुमति, कुश्रुत तथा आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान और केवलज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापता और यथाख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्व और उपशमसम्यक्त्वके विना चार सम्यक्त्व, संज्ञिक, और अनुभय अर्थात् संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अना-हारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

नं. १०२

सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	१	इअ.	७	४	१	१	१	३	३	४	६	४	४	द्र. २	२	४	१	२	२
मि.	सं. अ.			क्षीणसं.	मं.	पं.	त्रस.	औ.मि. आ.मि. कर्म.	अपय. अकषा.		त्रिमं. मनः. विना.	असं. सामा. छेदो. यथा.		का. शु. मा.६	म. अ.	मि. सा. क्षा. क्षायो.	सं. अनु.	आहा. अना.	साका. अना. यु. उ.

मणुस-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, और संज्ञी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक,

नं. १०३

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	म.	इ.	का.	यो.	वे	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि	सं. ४	प. ७			म.	पं.	त्रस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. ५	अ.						व. ४					अच.		अ.			अना.	अना.
	सं. ५	अ.						ओ. २											
	सं. ५	अ.						का. १											

होति अणागारुवजुत्ता वा^{१०५} ।

तेसिं चैव अपज्जत्तार्णं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा^{१०६} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, उन्हीं अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १०४

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	द्र.६	२	६	१	१	२
मि.	सं.प.				म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १			अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	मा.६	अ. भ.	मि.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. १०५

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं.अ.				म.	पं.	त.	औ.मि. कर्म.			कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. ३ अश्रु.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

मणुस्स-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०६} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

सासादनसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं. १०६

सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	२	६	१	१	१	२	२
सा.	सं. प.	६अ.	७		म.	पुं.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. २ का. १		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	द्र. ६ भा. ६	म.	मासा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.	

अणामारुवजुत्ता वा^{१०७} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हणील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणामारुवजुत्ता वा^{१०८} ।

मणुस्स-सम्मामिच्छाद्द्वानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-

नं. १०७ सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	३	४	३	१	२	द. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.			म.	पंचे.	तस.	म. ४ व. ४ औ. १			अज्ञा.	असं.	च. अ.	मा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. १०८ सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	अ.	७	४	१	१	२	३	४	२	१	२	द. २	२	१	१	२	२
सा.	सं.अ.			म.	कुं. पं.	तस	औ.मि. कार्म.				कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. ३ अशु.	म.	सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा ।

“मणुस-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योगः तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानः संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सान प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योगः तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

नं १००.

सामान्य मनुष्य सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

ग.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	छ. द.	१	१	१	१	२
सं.	सं.प.				म.	पंचे.	त्रस.	म. ४			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४			३		अच.						अना.
								औ. १			अज्ञा.								
											मिश्र.								

नं. ११०

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके सामान्य आलाप.

ग.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	२	१	१	२१	३	४	३	१	३	द. ६	१	३	१	२	२
सं.	सं.प.	६अ.	७		म.	पंचे.	त्रस.	म. ४			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
सं.	सं.अ.							व. ४			श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
								औ. २			अव.					क्षायी.			
								का. १											

तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद । देव-णेरइअ मणुस्स-असंजदसम्माइड्डिणो जदि मणुस्सेसु उप्पज्जंति तो

द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, एक पुरुषवेद होता है । केवल एक पुरुषवेद होनेका यह कारण है कि देव, नारकी और मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टि जीव मरकर यदि मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, तो

नं १११

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	द्र.६	१	३	१	१	२
पुं.	सं. प.				म.	पंचे.	त्रस.	म. ४			मति.	असं.	के.द.	मा.६	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
ल								व ४			भुत.		विना.			क्षा.			अना.
								औ.१			अव.					क्षायो.			

णियमा पुरिसवेदेसु चैव उप्पज्जंति ण अण्णवेदेसु, तेण पुरिसवेदो चैव भणियो । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ । तं जहा—णेरइया असंजदसम्माइट्ठिणो पढम-पुढवि-आदि जाव छट्ठी-पुढवि-पज्जवसाणासु पुढवीसु ट्ठिदा कालं काऊण मणुस्सेसु चैव अप्पप्पणो पुढवि-पाओग्ग-लेस्साहि सह उप्पज्जंति त्ति किण्ह-गील-काउलेस्सा लब्भंति । देवा वि असंजदसम्मा-इट्ठिणो कालं काऊण मणुस्सेसु उप्पज्जमाणा तेउ-पम्म-सुककलेस्साहि सह मणुस्सेसु उववज्जंति, तेण मणुस्स-असंजदसम्माइट्ठिणमपज्जत्तकाले छ लेस्साओ हवंति । भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

मणुस्स-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

नियमसे पुरुषवेदी मनुष्योंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यवेदवाले मनुष्योंमें नहीं; इससे एक पुरुष-वेद ही कहा है। वेद आलाप के आगे चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुकु लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं होती हैं। अधिरतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त मनुष्योंके छहों लेश्याएं होनेका कारण यह है कि प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी-पर्यंत पृथिवियोंमें रहनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टि नारकी मरण करके मनुष्योंमें अपनी अपनी पृथिवीके योग्य लेश्याओंके साथही उत्पन्न होते हैं, इसलिये तो उनके कृष्ण, नील और कापोत-लेश्याएं पाई जाती हैं। उसीप्रकार असंयतसम्यग्दृष्टि देव भी मरण करके मनुष्योंमें उत्पन्न होते हुए अपनी अपनी पीत, पद्म और शुकु लेश्याओंके साथ ही मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, इसलिए मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्तकालमें छहों लेश्याएं बन जाती हैं। सम्यक्त्व आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संयतासंयत सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक

नं. ११२

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र.२	१	२	१	२	२
अभि.	सं.अ.	अ.		म.	म.	वस.	वस.	औ.भि. पु.	कर्म.		मति.	असं.	के.द.	का.	भ.	क्षा.	सं.	आहा	साका.
											श्रुत.		विना	शु.	भा.६	क्षायो.		अना.	अना.

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२३३} ।

संपहि पमत्तसंजद-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति ताव मूलोघालावो अणूणो अण-धिओ वत्तव्वो । मणुस्स-पज्जत्तारणं भण्णमाणे मिच्छाड्डि-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति ताव मणुस्सोघभंगो । अथवा इत्थिवेदेण विणा दो वेदा वत्तव्वा एत्थियमेत्तो चेव विमेसो ।

संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं. मनुप्रगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पीत, पद्म और शुक्लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अब प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक न्यूनता और अधिकतासे रहित मूल ओघालाप कहना चाहिये, अर्थात् गुणस्थानोंकी अपेक्षा जो आलाप छटे गुणस्थानसे लेकर चौदहवें गुणस्थान तक कह आये हैं वे ही यहां मनुष्योंके छटे गुण-स्थानसे चौदहवें गुणस्थान तकके समझना चाहिये, क्योंकि छटेसे आगेके सभी गुणस्थान मनुष्योंके ही होते हैं, इसलिये सामान्य कथनमें और इस कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

मनुष्य-पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक मनुष्य-सामान्यके आलापोंके समान आलाप जानना चाहिये । अथवा वेद आलाप कहते समय स्त्रीवेदके बिना दो वेद ही कहना चाहिये, क्योंकि सामान्य मनुष्योंसे पर्याप्त मनुष्योंमें इतनी ही विशेषता है ।

विशेषार्थ—जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंकी विचक्षा न करके पर्याप्त शब्दके द्वारा सामान्यसे सभी पर्याप्त मनुष्योंका ग्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंमें तीनों वेद-

नं. ११३

सामान्य मनुष्य संयतासंयतोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा. सं.	ग. ई. का.	यो.	वे. क. ज्ञा.	संय. द. ले.	म. स.	संज्ञि	आ.	उ.
२	१	६ १० ४	१ १ १	९	३ ४ ३	१ ३ ६	१ ३	१	१	२
सं. प.			म.	म. ४ व. ४ औ. १	मति. भुत. अव.	देश. के. द. विना.	म. औ. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

मनुसिणीं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा, छप्पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसग्दी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, एत्थ आहार-आहारमिस्सकायजोगा णत्थि । किं कारणं ? जेसिं भावो इत्थिवेदो दव्वं पुण पुरिसवेदो, ते वि जीवा संजमं पडिवज्जंति । दव्वित्थिवेदा संजमं ण पडिवज्जंति, सचेलत्तादो । भावित्थिवेदानं दव्वेण पुंवेदानं पि संजदानं णाहाररिद्धी समुप्पज्जदि दव्व-भावेहि पुरिस-वेदानमेव समुप्पज्जदि तेणित्थिवेदे पि णिरुद्धे आहारदुगं णत्थि, तेण एगारह जोगा भणिया । इत्थिवेदो अवगद्वेदो वि अत्थि, एत्थ भाववेदेण पयदं ण दव्ववेदेण । किं कारणं ?

वालोकका ग्रहण हो जाता है, अतः इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप सामान्य मनुष्योंके समान बतलाये गये हैं । परंतु जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंमेंसे पर्याप्त मनुष्योंका ग्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंसे पुरुष और नपुंसक वेदी मनुष्योंका ही ग्रहण होता है, क्योंकि स्त्रीवेदी मनुष्योंका स्वतंत्र भेद गिनाया है । मनुष्यके अवान्तर भेदोंमें पर्याप्त शब्द पुरुष और नपुंसकवेदी मनुष्योंमें ही रूढ है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप कहते समय स्त्रीवेदको छोड़कर आलाप कहे हैं ।

मनुष्यनी (योनिमती) स्त्रियोंके आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञारूप भी स्थान है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; तथा अयोगरूप भी स्थान है । इन मनुष्यनियोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये दो योग नहीं होते हैं ।

शंका—मनुष्य-स्त्रियोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—यद्यपि जिनके भावकी अपेक्षा स्त्रीवेद और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेद होता है वे (भावस्त्री) जीव भी संयमको प्राप्त होते हैं । किन्तु द्रव्यकी अपेक्षा स्त्रीवेदवाले जीव संयमको नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि, वे सचेल अर्थात् चलसहित होते हैं । फिर भी भावकी अपेक्षा स्त्रीवेदी और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेदी संयमधारी जीवोंके आहारकद्वि उत्पन्न नहीं होती है, किन्तु द्रव्य और भाव इन दोनों ही वेदोंकी अपेक्षासे पुरुषवेदवाले जीवोंके ही आहारकद्वि उत्पन्न होती है । इसलिये स्त्रीवेदवाले मनुष्योंके आहारकद्विकके विना ग्यारह योग कहे गए हैं । योग आलापके आगे स्त्रीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है । यहां भाववेदसे प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं । इसका कारण यह है कि यदि यहां द्रव्यवेदसे

‘अवगदवेदो वि अत्थि’ त्ति वयणादो । चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जव-
णाणेण विणा सत्त णाण, परिहार-संजमेण विणा छ संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि
छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणीओ
णेव सण्णिणी णेव असण्णिणी वि अत्थि, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारिहि जुगवदुवजुत्ता वा^{३५} ।

तासिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो,
छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, एगारह जोग णव वा अजोगो वि अत्थि, इत्थिवेद अवगदवेदो वि
अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, छ संजम, चत्तारि दंसण,

प्रयोजन होता तो अपगतवेदरूप स्थान नहीं बन सकता था, क्योंकि, द्रव्यवेद चौदहवें गुण-
स्थानके अन्ततक होता है। परन्तु ‘अपगतवेद भी होता है’ इस प्रकारका वचन-निर्देश
नौवें गुणस्थानके अवेदभागसे किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि यहां
भाववेदसे ही प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं। वेद आलापके आगे चारों कषाय, तथा
अकषाय-स्थान भी होता है। मनःपर्ययज्ञानके बिना सात ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके बिना
छह संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, तथा अलेश्यारूप भी स्थान होता
है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिनी तथा संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन
दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी,
अनाकारोपयोगिनी; तथा साकार और अनाकार उपयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होती हैं।

उन्हीं मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, एक
संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तथा क्षीणसंज्ञा-स्थान
भी है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग,
आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन चार योगोंके बिना ग्यारह योग, अथवा,
उपर्युक्त चार और औदारिकमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग इन छह योगोंके बिना नौ योग
तथा अयोग स्थान भी होता है। खीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है। चारों कषाय,
तथा अकषाय स्थान भी होता है। मनःपर्ययज्ञानके बिना सात ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके

नं. ११४

मनुष्यनी स्त्रियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	७	६	४	६, ६	२	६	१	२	२
	सं.प.	प.	७		म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.	अकषा.	मनः.	परिहा.		भा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	६						व. ४	अपा.	अकषा.	विना.	विना.		अले.	अ.		अनु.	अना.	अना.
	अ.			क्षीणसं.				ओ. २									अनु.	अना.	यु. उ.
								का. १											

द्व-भावेहिं छ लेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणीओ णेव सण्णिणी णेव असण्णिणी, आहारिणी, अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{११} ।

तासिं चेव अपज्जत्तार्णं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेदो अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अक-साओ वा, दो अण्णाण केवलणाणेण तिण्णि णाण, असंजमो जहाक्खादेण दोण्णि संजम,

बिना छह संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं तथा अलेश्या स्थान भी होता है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिनी, तथा संज्ञिनी और असंज्ञिनी विकल्पसे रहित भी स्थान होता है। आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी, अनाकारोपयो-पयोगिनी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होती हैं।

विशेषार्थ—पर्याप्त सामान्य मनुष्योंके तेरह अथवा दश योगोंके होनेका स्पष्टीकरण ऊपर कर आये हैं, उसीप्रकार पर्याप्त मनुष्यनियोंके ग्यारह अथवा नौ योगोंके संबन्धमें भी ज्ञान लेना चाहिये। यहां इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदियोंके आहारक ऋद्धि नहीं होती है, अतएव इनके आहार और आहारमिश्र ये दो योग नहीं पाये जाते हैं। इसप्रकार स्त्रीवेदियोंके पर्याप्त अवस्थामें ग्यारह अथवा नौ योग ही होते हैं।

उन्हीं मनुष्यनियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि और सयोगकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्या-प्तिथां, सात प्रण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञा स्थान भी है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कामर्णकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, तथा अपगत-वेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपाय स्थान भी है। कुमति और कुशुत ये दो अज्ञान तथा सयोगकेवली गुणस्थानकी अपेक्षा केवल ज्ञान, इसप्रकार तीन ज्ञान, असं-यम और यथाख्यातविहारशुद्धि ये दो संयम, चक्षु, अचक्षु और केवल ये तीन दर्शन,

नं. ११५

मनुष्यनी स्त्रियोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे.	क	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	१	६	१०	४	१	१	११	१	४	७	६	४	द्र. ६	२	६	१	२
	सं. प.			क्षीणसं.	म. पं. व.	पूर्वोक्त.	स्त्री	अपना.	अकपा.	मनः, परि. विना.	विना.		मा. ६ अले.	म. अ.	सं. अनु.	आहा. अना.	साका. अना. यु. उ.

केवलदंसणेण तिण्णि दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा सुक्कलेस्साए चत्तारि वा; भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तेण तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ अणुभयाओ वा, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा^{११६} ।

^{११७}मणुसिणी-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्या; अथवा शुक्लेश्याके साथ उक्त तीनों लेश्याएं मिलकर चार लेश्याएं होती हैं। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिनी और अनुभय अर्थात् संज्ञिनी असंज्ञिनी विकल्प-रहित स्थान भी होता है। आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी अनाकारोपयोगिनी तथा उभय उपयोगसे उपयुक्त होती हैं।

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, और संज्ञी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो

नं. ११६

मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	या.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	१	६	७	४	१	१	२	२	१	४	३	२	३	द्र. २	२	३	१	२	२
मि.	सं.अ.	अ.		धणिस.	म.	पणे.	त्रस.	औ.मि.	स्त्री.	अकपा.	कृम.	असं.	चक्षु.	का. शु.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.							कर्म.	अप्या.	कुक्षु.	क.	यथा.	अच.	कव.	भा. ४	अ.	सा.	अनु.	अना.	अनाका.
सा.														अशु. ३	शु १	क्षा.			यु. उ.

नं. ११७

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	या.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	२	२	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	सं.प.	६अ	७		म.	प्र	म.	४	स्त्री.		अज्ञा	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
स.अ							व. ४	औ. १					अच.		अ.			अना.	अना.
							का. १												

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मिच्छाइद्धि-पज्जत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मगुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कप्पाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ अभवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ^{११८} ।

मिच्छाइद्धि-अपज्जत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कप्पाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी: साकारोपयोगिनी तथा अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनिर्योके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग तथा औदारिककाययोग ये नौ योग; त्थिवेद, चारों कप्पाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक: मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, त्थिवेद, चारों कप्पाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. ११८

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनिर्योके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	६	२	१	१	१	२
मि	प			म.		पुं.	लं.	म. ४	स्त्री.	अज्ञा	असं.	चक्षु	मा. ६	म. ६	मि.	सं.	आहा.	साका.	
	प							व. ४					अच.		अ			अना.	
								औ. १											

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारु-वजुत्ताओ वा^१ ।

मणुसिणी-सासणसम्माइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कप्पाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं. भावसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अष्टुभ-लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये न्यारह योग; स्त्रीवेद, चारों कप्पाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

नं. ११९

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं. अ.				म.	पंचे.	त्रस.	औ. मि. स्त्री. कार्म.			कुम. कुक्षु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. भा. ३ अशु.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. १२०

सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं. प. सं. अ.	प. ६ अ.	७		म.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. २ का. १			अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	भा. ६	म. सासा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.	

पञ्जत्त-मणुसिणी-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सासणसम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारु-वजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{११} ।

अपञ्जत्त-मणुसिणी-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पर्याप्त सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अपर्याप्त सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अशुभ लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी; साकारोप-

नं. १२१

सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनिर्योके पर्याप्त आलाप.

ग.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	२	९	१	४	३	१	२	द्र. द.	१	१	१	१	१
सा.	सं.प.				म.	पे.	नस.	म. ४ व. ४ ओ. १	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	भा. द. म.		सासा.	सं.	आहा.	साका- अना.

सण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११३} ।

मणुसिणी-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{११३} ।

मणुसिणी-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो,

योगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनु-

मं. १२२

सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.	अ.	अ.		म	पंच.	प्रस.	म. ४	मि. ४	स्त्री	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सास.	सं.	आज्ञा.	साका.
								कर्म.			कुश्रु.		अचक्षु.	सु.	मा. ३			अना.	अना.
														मा. ३	अज्ञ.				

मं. १२३

सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.				म.	पंच.	प्रस.	म. ४	स्त्री		ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सम्य.	सं.	आज्ञा.	साका.
								व. ४			अज्ञा.		अच.						अना.
								औ. १			मिश्र.								

छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{११} ।

^{११}मणुसिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ,

प्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

संयतासंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक

नं. १२४

असंयतसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अधि.	सं.प.			म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	औ. १		मति.	असं.	के.द.	भा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
											श्रुत.		विना.			क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

नं. १२५

संयतासंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
दृष्ट.	सं.प.			म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	औ. १		मति.	देश.	के.द.	भा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
											श्रुत.		विना.	सुम.		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-प्रमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद-णवुंसयवेदाणमुदए आहारदुगं मणपज्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो च णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दच्च्रेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२६} ।

मणुसिणी-अप्रमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहारसण्णाए विणा तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी,

ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं । नौ योगोंके होनेका कारण यह है कि ख्रिवेद और नपुंसकवेदके उदय होने पर आहारक-काययोग, आहारकमिश्रकाययोग, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होते हैं योग आलापके आगे ख्रिवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार-संज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिक-

नं. १२६

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	२०	४	२	१	१	९	३	४	३	२	३	द्र.६	१	३	२	२	२
सं.प.					म.	पं.	व.	म. ४ व. ४ ओ. १	ख्री.		मति. श्रुत. अव.	सामा. छेदो.	के द. विना.	शुभ.	म. क्षायो.	ओ.	सं.	आहा.	साका. अना.

तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^{२१०} ।

^{२१०}मणुसिणी-अपुव्वकरणणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणी,

काययोग ये नौ योग; खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पञ्च और शुक्ल ये तीन शुभ लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ल-लेश्या; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व,

नं. १२७

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अपू.	सं.प.			आहा. विना.	म.	प.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	खी.		मति. श्रुत. अव.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	भा. ३ शुभ.	म.	औ. क्षा. क्षायो.	सं. आहा.		साका. अना.

नं. १२८

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अपू.	सं.प.			आहा. विना.	म.	प.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १	खी.		मति. श्रुत. अव.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	भा. ३ शु.	म.	औ. क्षा.	सं. आहा.		साका. अना.

आहारिणी, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-पढम-अणियट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहार-भयसण्णाहि विणा दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिवा, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ताओ ह्येति अणागारुवजुत्ताओ वा^{११} ।

मणुसिणी-विदिय-अणियट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण

संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार और मयसंज्ञाके विना शेष दो संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; छविदे, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्क लेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके द्वितीय भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्कलेश्या;

नं. १२९

अनिवृत्तिकरण प्रथमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	२	१	१	१	९	१	४	३	२	३	३	१	२	१	१	२
अ.	सं.	प.		मै.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	खी.		मति.	सामा.	के.द.	भा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
प्र.				परि.				व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शु.		क्षा.			अना.
भा.								औ. १			अव.								

सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३०} ।

मणुसिणी-तदिय-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, कोधकसाय विणा तिण्णि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३१} ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीय भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औद्धारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, क्रोधकषायके विना शेष तीन कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुकुलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

नं. १३०

अनिवृत्तिकरणके द्वितीयभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	४	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अ.	सं. प.		प.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	अपग.		मति.	सामा.	के. द.	मा. १	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
द्वि.							औ. १	औ. १			श्रुत.	छेदो.	विना.	शु.		क्षा.			अना.
मा.											अव.								

नं. १३१

अनिवृत्तिकरणके तृतीयभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	३	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अ.	सं. प.		प.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	अपग.		मति.	सामा.	के. द.	मा. १	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
द्वि.							औ. १	औ. १			श्रुत.	छेदो.	विना.	शु.		क्षा.			अना.
मा.											अव.								

मणुसिणी-चउत्थ-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, तिण्णि णाण, अग्गि-दद्व-बीए अंकुरो व्व इत्थि णवुंसय-वेदोदय-दूसिय-जीवे वेदोदए फिड्ढे वि ण मणपज्जवणाणमुप्पज्जदि । दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भाव्णेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३२} ।

मणुसिणी-पंचम-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थ भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं। यहांपर ख्रिवेदके नष्ट हो जाने पर भी मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका कारण यह है कि जैसे अग्निसे दग्ध हुए बीजमें अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता है, उसीप्रकार ख्री और नपुंसकवेदके उदयसे वृषित जीवमें, वेदोदयके नष्ट हो जाने पर भी, मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये यहां पर भी तीन ज्ञान ही कहे गये हैं। ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्याएं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्प्रक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, एक परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं १३२

अनिवृत्तिकरणके चतुर्थभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.जी.	प.प्रा.	सं.ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	२	१	१	१	२	२	३	६	१	२	१	१	२
अ.सं.			प.	म.	पंचे.	त्रस.	म.४	माया	सामा.	के.द.	मा.१	म.	ओ.	सं.	आहा.	साका.
व.प.						व.४	लोभ.	भ्रुत.	छेदो.	विना.	शु.		ज्ञा.			अना.
भा.					औ.१			अव.								

जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३३} ।

^{१३४}मणुसिणी-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिण्णि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, लोभकषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामा-
यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे
शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिनी, आहारिणी,
साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसा-
ंपराय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परि-
ग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और
ओदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकषाय, आदिके तीन ज्ञान, सूक्ष्म-
सांपरायशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्य-

नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	९	०	१	३	२	३	३	द्र.६	१	२	१	१	२
अ.	सं.			परि.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	अपग.	लो.	मति.	सामा.	के द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
पं.	प.										श्रुत.	छेदो.	विना.	शु.	क्षा.				अना.
भा.											अव.								

नं. १३४ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	९	०	१	३	१	३	३	द्र.६	१	२	१	१	२
सू.	सं.			सू.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	अपग.	सूक्ष्म.	मति.	सूक्ष्म-	के द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
पं.	प.									लोभ.	श्रुत.	सां.	विना.	शु.	क्षा.				अना.
भा.										अव.									

सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीसु उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीसु खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण,

सिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक उपशान्तकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकषाय, आदिके तीन ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्लेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, क्षीणकषाय, आदिके तीन ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके

नं. १३१

उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यी.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	०	१	१	१	०	०	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
सं.प.			उ. सं.	म.	वस	म. ४	व. ४	ओ. १	उ. क.	मति. श्रुत. अव	यथा	के.द. विना.	मा. १	म. शु.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२९} ।

^{२३०}मणुसिणी-सजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो वा, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग, अवगदेवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं,

तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगि-केवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा समुदा-तकी अपर्याप्त अवस्थामें, वचनबल और श्वासोच्छ्वासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं । क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदा-रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये सात योग, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों

नं. १३६

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	१०	०	२	१	१	९	०	०	३	१	३	द्र.६	१	१	१	१	२
क्षीण.	सं.प.			क्षीणसं.	मं.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ ओ. १	अपग.	क्षीणक.	मति. शुत. अव.	यथा.	के.द. विना.	शु.	म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. १३७

सयोगिकेवली गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	४	०	१	१	१	७	०	०	१	१	१	द्र.६	१	१	०	२	२
सयो.	प. अ.	६अ.	२	क्षीणसं.	मं.	पंचे.	त्रस.	म. २ व. २ ओ. २ का. १	अपग.	अकषा.	के.	यथा.	के.द.	शु.	म.	क्षा.	अनु.	आहा. अना.	साका. अना. यु. उ.

णैव सण्णिणीओ णैव असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ताओ वा होंति ।

मणुसिणी-अजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, एओ पाणो, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, णैव सण्णिणीओ णैव असण्णिणीओ, अणाहारिणीओ, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ताओ वा होंति^{१३८} ।

लद्धि-अपज्जत्त-मणुस्साणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे

विकल्पोसे विमुक्त, आहारिणी, अनाहारिणी; साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होती हैं ।

अयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, एक आयु प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोगस्थान, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवल-ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे अलेश्यास्थान; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों विकल्पोसे मुक्त, अनाहारिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होती हैं ।

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद,

नं. १३८

अयोगिकेवली गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१	०	१	१	१	०	०	१	१	१	६	१	१	०	१	२
अया.	पर्या.	ए.	आयु.	क्षणसे.	म.	पुं.	त्रस.	अयोग.	अपग.	अकषा.	के.	यथा.	के.द.	के.द.	म.	क्ष.	उम.	साका.
													मा.			विना.	अना.	यु. उ.

जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हौति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

एवं मणुसगदी समत्ता ।

“ देवगदीए देवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण,

चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत्त ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भाषसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार मनुष्योंके आलाप समाप्त हुए ।

देवगतिमें सामान्य देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों घवन-योग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,

नं. १३९

लब्धपर्याप्तक मनुष्यके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं. अ.				म.	पं.	वस.	औ. मि. कार्म.	न.		कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. भा. ३ अशु.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. १४०

देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	२	४	६	१	३	द्र. ६	२	६	१	२	२
मि.	सं. प.	६अ	७		दे.		पि	म. ४ व. ४ वै. २ का. १	छी. पु.		अज्ञा. ३ ज्ञान. ३	असं.	के. द. विना.	मा. ६	म. अ.		सं.	आहा. अना.	साका. अना.

असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ एत्थ सिस्सो भणदि — देवाणं पज्जत्तकाले दव्वदो छ लेस्साओ ह्वंति त्ति एदं ण घडदे, तेसिं पज्जत्तकाले भावदो छ-लेस्साभावादो । मा भवंतु देवाणं भावदो छ लेस्साओ दव्वदो पुण छ लेस्सा भवंति चैव, दव्व-भावणमेगत्ताभावादो । इदि एदमत्रि वयणं ण घडदे, जम्हा जा भावलेस्सा तल्लेस्सा चैव ओरालिय-वेउच्चिय-आहारसररीणोकम्म-घस्माणवो आगच्छंति । तं कथं णव्वदि त्ति भणिदे सोधम्मादिदेवाणं भावलेस्साणुरुव-दव्वलेस्सापरुवणादो णव्वदि । ण च देवाणं पज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ मोत्तूण्णलेस्साओ अत्थि, तम्हा देवाणं पज्जत्तकाले दव्वदो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साहि होदव्वमिदि । एत्थ उवउज्जंतीओ गाहाओ—

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, (यहां तीन अशुभ लेश्याएं अपर्याप्तकालकी अपेक्षा जानना चाहिये ।) भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती हैं ।

शंका — यहांपर शिष्य कहता है कि देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती हैं यह वचन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उनके पर्याप्तकालमें भावसे छहों लेश्याओंका अभाव है । यदि कहा जाय कि देवोंके भावसे छहों लेश्याएं मत हों, किन्तु द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती ही हैं, क्योंकि, द्रव्य और भावमें एकताका अभाव अर्थात् भेद है । सो ऐसा कथन भी नहीं बनता है, क्योंकि, जो भावलेश्या होती है, उसी लेश्यावाले ही औदारिक, वैक्रियिक और आहारकशरीरसंबन्धी नोकर्म परमाणु आते हैं । यदि यह कहा जाय कि उक्त बात कैसे जानी जाती है, तो उसका उत्तर यह है कि सोधर्म आदि कल्पवासी देवोंके भाव-लेश्याके अनुरूप ही द्रव्य लेश्याका प्ररूपण किये जानेसे उक्त बात जानी जाती है । तथा देवोंके पर्याप्तकालमें तेज, पद्म और शुकु इन तीन लेश्याओंको छोड़कर अन्य लेश्याएं होती नहीं हैं, इसलिये देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यकी अपेक्षा भी तेज, पद्म और शुकु लेश्याएं होना चाहिये । इस प्रकारमें निम्न गाथाएं उपयुक्त हैं—

किण्हा भमरसमण्णा णीळा पुण णीलगुलियसंकासा ।

काओ कओदवण्णा तेऊ तवणिज्जवण्णा य ॥ २२३ ॥

पम्मा पउमसवण्णा सुक्का पुण कासकुसुमसंकासा ।

किण्हादि-दव्वलेस्सा-वण्णविसेसो मुणेयव्वो ॥ २२४ ॥

भावलेस्सा-लिगं थोरुच्चएण एसा गाहा जाणावेई—

णिम्मूलखंधसाहुवसाहं वुच्चित्तु वाउ-पडिदाई ।

अव्भंतरलेस्साणं मिदइ एदाई वयणाई ॥ २२५ ॥

कृष्णलेश्या भौरके समान अत्यन्त काले वर्णकी होती है, नीललेश्या नीलकी गोलीके समान नीलवर्णकी होती है, कापोतलेश्या कपोतवर्णवाली होती है, तेजोलेश्या सोनेके समान वर्णवाली होती है, पद्मलेश्या पद्मके समान वर्णवाली होती है और शुक्ललेश्या कांसके फूलके समान श्वेतवर्णकी होती है । इसप्रकार कृष्णादि द्रव्यलेश्याओंके वर्ण-विशेष जानना चाहिए ॥ २२३, २२४ ॥

भावलेश्याओंके स्वरूपका थोड़ेमें संग्रहरूपसे यह गाथा ज्ञान करा देती है—

जड़-मूलसे वृक्षको काटो, स्कन्धसे काटो, शाखाओंसे काटो, उपशाखाओंसे काटो फलोंको तोड़कर खाओ और वायुसे पतित फलोंको खाओ, इसप्रकारके ये वचन अभ्यन्तर अर्थान् भावलेश्याओंके भेदको प्रकट करते हैं ॥ २२५ ॥

विशेषार्थ—गोम्मटसार जीवकांडमें उक्त अर्थ इस प्रकारसे स्पष्ट किया गया है कि फलोंसे लदे हुए वृक्षको देखकर कृष्णलेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षको जड़-मूलसे उखाड़कर फलोंको खाना चाहिये । नीललेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षको स्कन्ध अर्थात् मूलसे ऊपरके भाग को काटकर फलोंको खाना चाहिये । कापोतलेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी शाखाओंको काटकर फलोंको खाना चाहिये । तेजोलेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी उपशाखाओंको काटकर फलोंको खाना चाहिये । पद्मलेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षके फलोंको तोड़कर खाना चाहिये । शुक्ललेश्यावाला विचार करता है कि इस वृक्षके वायुसे गिरे हुए फलोंको खाना चाहिये । उक्त प्रकारके भावोंसे छहों लेश्याओंके तारतम्यको जान लेना चाहिये ।

१ 'णीळा पुण' इति स्थाने 'आ, क' प्रत्योः 'णीळायण' इति पाठः । 'अ' प्रतो 'णीळावण' इति पाठः ।

२ पंचसं. १, १८३, १८४. (दि. हस्तलिखित)

३ णिम्मूलखंधसाहुवसाहं वुच्चित्तु मिणित्तु पडिदाई । खाउं फलाहं इदि जं मणेण वयणं इवे कम्मं ॥ गो. जी. ५०८.

तेऊ तेऊ तेऊ पम्मा पम्मा य पम्म-सुक्का य ।

सुक्का य परमसुक्का लेस्ससमासो मुणेयव्वो' ॥ २२६ ॥

तिण्हं दोण्हं दोण्हं छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।

एत्तो य चौदसण्हं लेस्सामेदो मुणेयव्वो' ॥ २२७ ॥

एत्थ परिहारो उच्चदे—ण ताव एदाओ गाहाओ तो पक्खं साहेति, उभय-पक्ख-साधारणादो । ण तो उत्त-जुत्ती वि घडदे, ण ताव अपज्जत्तकालभावलेस्समणुहरइ दव्व-लेस्सा, उत्तमभोगभूमि-मणुस्साणमपज्जत्तकाले असुह-ति-लेस्साणं गउरवण्णाभावापत्तीदो । ण पज्जत्तकाले भावलेस्सं पि गियमेण अणुहरइ पज्जत्त-दव्वलेस्सा, छव्विह-भावलेस्सासु परियट्ठंत-तिरिक्ख-मणुसपज्जत्ताणं दव्वलेस्साए अणियमप्पसंगादो । धवलवण्ण-वलायाए

तीनके तेजोलेश्याका जघन्य अंश, दोके तेजोलेश्याका मध्यम अंश, दोके तेजोलेश्याका उत्कृष्ट एवं पद्मलेश्याका जघन्य अंश, छहके पद्मलेश्याका मध्यम अंश, दो के पद्मलेश्याका उत्कृष्ट एवं शुक्र लेश्याका जघन्य अंश, तेरहके शुक्रलेश्याका मध्यम अंश तथा चौदहके परमशुक्रलेश्या होती है। इस प्रकार तीनों शुभ लेश्याओंका भेद जानना चाहिये ॥ २२६, २२७ ॥

विशेषार्थ—भवनवासी, चानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन तीन जातिके देवोंके जघन्य तेजोलेश्या होती है। सौधर्म और पेशान इन दो स्वर्गवाले देवोंके मध्यम तेजोलेश्या होती है। सानत्कुमार और माहेन्द्र इन दो स्वर्गवाले देवोंके उत्कृष्ट तेजोलेश्या और जघन्य पद्मलेश्या होती है। ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र और महाशुक्र इन छह स्वर्गवालोंके मध्यम पद्मलेश्या होती है। शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पद्मलेश्या और जघन्य शुक्रलेश्या होती है। आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ त्रैवेयक इन तेरह विमानवालोंके मध्यम शुक्रलेश्या होती है। इसके ऊपर नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर इन चौदह विमान-वालोंके उत्कृष्ट या परमशुक्रलेश्या होती है।

समाधान—शंकाकारकी पूर्वोक्त शंकाका अब परिहार कहते हैं—उपर कही गई ये गाथाएं तो तुम्हारे पक्षको नहीं साधन करती हैं, क्योंकि, वे गाथाएं उभय पक्षमें साधारण अर्थात् समान हैं। और न तुम्हारी कही गई युक्ति भी घटित होती है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—द्रव्यलेश्या अपर्याप्तकालमें होनेवाली भावलेश्याका तो अनुकरण करती नहीं है, अन्यथा अपर्याप्तकालमें अशुभ तीनों लेश्यावाले उत्तम भोगभूमियां मनुष्योंके गौर वर्णका अभाव प्राप्त हो जायगा। इसीप्रकार पर्याप्तकालमें भी पर्याप्त-जीवसंबन्धी द्रव्यलेश्या भाव-लेश्याका नियमसे अनुकरण नहीं करती है; क्योंकि, वैसा मानने पर छह प्रकारकी भाव-लेश्याओंमें निरन्तर परिवर्तन करनेवाले पर्याप्त तिर्यंच और मनुष्योंके द्रव्यलेश्याके अनियम-

१ गी. जी. ५३५. परं तत्र चतुर्थचरणस्त्वयम्—' भवणतिया पुण्णे असुहा । प्रतिपु प्रथमपत्ती ' तेऊ तेऊ तह तेऊ पम्मं पम्मा य ' इति पाठः

२ गी. जी. ५३४. परं तत्र चतुर्थचरणस्त्वयम्—' लेस्सा भवणादिदेवाणं ' ।

भावदो सुक्कलेस्सप्पसंगादो । आहारसरीराणं धवलवण्णाणं विग्गहगदि-ट्टिय-सव्वजीवाणं धवलवण्णाणं भावदो सुक्कलेस्सावत्तीदो चेव । किं च, दव्वलेस्सा णाम वण्णणामकम्मो-दयादो भवदि, ण भावलेस्सादो । ण च दोण्हमेगत्तं णाम, वण्णणामं-मोहणीयाणं अघादि-घादीणं पोग्गल-जीवविवागीणं एगत्त-विरोहादो । विस्ससोवचयवण्णो भावलेस्सादो भवदि, ओरालिय-वेउव्विय-आहारसरीराणं वण्णा वण्णणामकम्मादो भवंति, अदो ण एस दोसो । इदि ण, 'चंडो ण मुयदि वेरं' इच्चादि-बाहिरकज्जुप्पायणे ट्टिदिबंधे पदेसबंधे च भावलेस्सा-वावार-दंसणादो । अदो दव्वलेस्साए ण कारणं भावलेस्सा त्ति सिद्धं । तदो वण्णणामकम्मोदयदो भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियाणं दव्वदो छ लेस्साओ भवंति, उवरिमदेवाणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ भवंति । पंच-वण्ण-रस-कागस्स कसण-ववएसो च्व एगवण्ण-ववहार-विरोहाभावादो । भवेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया

पनेका प्रसंग प्राप्त हो जायगा । और यदि द्रव्यलेश्याके अनुरूप ही भावलेश्या मानी जाय, तो धवल-वर्णवाले बगुलेके भी भावसे शुक्ललेश्याका प्रसंग प्राप्त होगा । तथा धवलवर्णवाले आहारक शरीरोंके और धवलवर्णवाले विग्रहगतिमें विद्यमान सभी जीवोंके भावकी अपेक्षासे शुक्ललेश्याकी आपत्ति प्राप्त होगी । दूसरी बात यह भी है कि द्रव्यलेश्या वर्णनामा नामकर्मके उद्भयसे होती है, भावलेश्यासे नहीं । इसलिये दोनों लेश्याओंको एक कह नहीं सकते; क्योंकि, अघातिया और पुद्गलविपाकी वर्णनामा नामकर्म, तथा घातिया और जीवविपाकी (चारित्र) मोहनीय कर्म इन दोनोंकी एकतामें विरोध है । यदि कहा जाय कि कर्मोंके विस्त्रलोपचयका वर्ण तो भावलेश्यासे होता है, और औदारिक, वैक्रियिक, आहारकशरीरोंके वर्ण वर्णनामा नामकर्मके उद्भयसे होते हैं, इसलिए हमारे कथनमें यह उक्त दोष नहीं आता है, सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, 'कृष्णलेश्यावाला जीव चंडकर्मा होता है, वैर नहीं छोड़ता है' इत्यादि रूपसे बाहरी कार्योंके उत्पन्न करनेमें, तथा स्थितिबन्ध और प्रदेशबन्धमें ही भावलेश्याका व्यापार देखा जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध होती है कि भावलेश्या द्रव्यलेश्याके होनेमें कारण नहीं है । इसप्रकार उक्त विवेचनसे यह फलितार्थ निकला कि वर्णनामा नामकर्मके उद्भयसे भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके द्रव्यकी अपेक्षा उहाँ लेश्याएं होती हैं, तथा भवनत्रिकसे ऊपरके देवोंके तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं होती हैं । जैसे पांचों वर्ण और पांचों रसवाले काकके अथवा पांचों वर्णवाले रसोंसे युक्त काकके कृष्ण व्यपदेश देखा जाता है, उसी प्रकार प्रत्येक शरीरमें द्रव्यसे उहाँ लेश्याओंके होने पर भी एक वर्णवाली लेश्याके व्यवहार करनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

१ प्रतिष्ठा 'वण्णणाम' इति पाठो नास्ति ।

अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^{१२२} ।

तेसिं चैव अपज्जत्तारणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वारणाणि, एओ जीवसमासो,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तत्तकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, विभंगमाणेण विणा पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण,
दच्चेण काउ सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-
मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति
अणागारुवजुत्ता वा^{१२३} ।

द्रव्यलेश्या आलापके आगे भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-
सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हों देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि
और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,
सात प्राण, चारों संज्ञार्थ, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकामिश्र और कर्मण ये दो
योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कषाय, विभंगज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके
तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साका-
रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १४१

देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	२०	४	१	१	१	९	२	४	६	१	३	द्र. ६	२	६	१	२	२
मि.	पं.			दे.	पंच.	व.	म. ४	स्त्री.	अज्ञा. ३	असं.	के. द.	मा. ३	म.			सं.	आहा.	साका.	
सा.	सं.						व. ४	पु.	ज्ञान. ३		विना.	शुभ.	अ						अना.
अ							वे. १												

नं. १४२

देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	५	१	३	द्र. २	२	५	१	२	२
मि.	सं. अ.			दे.	पं.	व.	वे. मि.	स्त्री.	कुम.	असं.	के. द.	मा. ३	म.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.	अ.	अप.	अप.				कर्म.	पु.	कुशु.		विना.	शु.	अ.	मा. ६	सासा.	औ.		अना.	अना.
अ.									मति.					मा. ६	क्षायो.				

देव-मिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२३} ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्यापं; भव्यसिद्धिक,

नं. १४३

मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	२०	४	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	सं. प.	प.	७	दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	बी.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
	सं. अ.	६					व. ४	पु.			अच.		अ.			अना.	अना.	
		अ.					वे. २											
							का. १											

आहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेषां चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्ताओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

देव-सासणसम्मइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ

अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञायं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यायं, भावसे छहों लेश्यायं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान,

नं. १४४

मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.				दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. १	स्त्री. पु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	मा. ३ शुभ. ४		मि.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. १४५

मिथ्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं. अ.	अ.			दे.	पंचे.	त्रस.	वै. मि. स्त्री. कार्म. पु.	स्त्री. पु.		कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. ६ सु. ६	म.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

^{१०}तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण

संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेह्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देव-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और

नं. १४६

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सासा.	सं. प.	६अ.	७		दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.							व. ४	पु.				अच.					अना.	अना.
								वै. २											
								का. १											

नं १४७

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.				दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ३	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	प.							व. ४	पु.				अच.	शुभ.					अना.
								वै. १											

तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुकक-
लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, अणा-
हारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१४८} ।

देव-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो

अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं. भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेख्याएं; भव्यसिद्धिक,
सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासा-
दन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापएं,
देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो
योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कसाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम,
चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे छहों लेख्याएं;
भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-
दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापएं,
देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग
ये नौ योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कसाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आविके
तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज,

नं. १४८

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.	उप.		दे.	पुं.	नर.		वै मि. कार्म.	स्त्री. पु.	कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. ६		भ. सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अनाका.	

दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२९} ।

देव-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३०} ।

पद्म और शुक्ल लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १४९

सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	२	१	१	२	४	३	१	२	द. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.	प.		दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.	व. ४	पु.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ३	म.	सम्य.	स.	आहा.	साका.
							वे. १				ज्ञान.		अच.	शुभ.					अना.
											मिश्र.								

नं. १५०

असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	३	द. ६	१	३	१	२	२
ल.	सं.प.	प.	७	दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.	व. ४	पु.	म ति.	असं.	के.द.	मा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
ल.	सं.अ.	अ.					वे. २				श्रुत.		विना.	शुभ.		क्षा.		अना.	अना.
							का. १				अव.					क्षायी.			

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२२} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संबन्धी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संबन्धी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

नं. १५१

असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	३	द्र.६	१	३	१	१	२
सं.प.	प.			दे.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ वै. १	खी. पु.		मति. श्रुत. अव.		अस. के. विना.	द. मा. ३ शुभ.		म. ओप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.		साका. अना.

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२२} ।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, दो जीविसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२३} ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर-आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे अपर्याप्त-कालकी अपेक्षा कृष्ण, नलि और कापोत लेइया, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा तेजोलेइया; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; श्रायिकसम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १५२

असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इ. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	३	३	३	१	२	२
अवि. सं. अ.				दे.	पं.	त्र.	वै. मि. पु. कर्म.	मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	का. शु. मा. ३ शुम.	म. औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. १५३

भवनत्रिक देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इ. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	१०	४	१	१	१	१	३	३	३	५	१	२	२
मि. सं. प. सा. सं. अ. स. अ.	प. ७		दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ धै. २ का. १	क्षी. पु. अज्ञा. ३	असं.	के. द. विना.	मा. ४ अ. तेजो. १	म. क्षायि. विना.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.	

तेसिं चैव पञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण क्किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

उन्हीं भवनत्रिक देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकषेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे जघन्य तेजोलेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; क्षायिकसम्यवत्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारिक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, और सासादनसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकषेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासा-

नं. १५४

भवनत्रिक देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	जा.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	५	२	४	६	१	३	प्र.६	२	५	१	१	२
मि.	सं.प.	प.		वे.	कु	प्रस.	म. ४	स्त्री.			ज्ञान. ३	असं.	के. प्र.	मा. १	म.	क्षायि.	सं.	आहा.	साका.
सा.							व. ४	पु.			अज्ञा. ३		विना.	ते.	अ.	विना.			अना.
स.							वै. १												
अ.																			

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

भवनवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेवमिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

दन ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मिथ्यादृष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संश्लि-पर्याप्त और संश्लि-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा कृष्ण, नील और कापोतलेइया, तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा जघन्य तेजोलेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १५५

भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	२	१	२	२
मि. सा.	सं. अ.	प. क.		दे.	पंचे.	त्रस.	वै. मि. कार्म.	स्त्री. पु.			कुम. कुक्षु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु.	म. अ.	मि. सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.
													मा. ३ अशु.						

नं. १५६

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि. सा.	सं. प. सं. अ.	प. अ.	७		दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व वै. कार्म. १	स्त्री. पु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	मा. ४ अशु. तेज. १	म. अ.	मि. सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा^{१००} ।

^{१००}तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक-काययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे जघन्य तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-

नं. १५७

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	द्र.६	२	१	१	१	२
मि.	सं.	प.			दे.	पंचे.	त्रस.	म.४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.१	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	प.					वै. १	व. ४	पुं.					अच.	तेज.	अ.				अना.

नं. १५८

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र.६	२	१	१	२	२
मि.	सं.	अ.			द.	पंचे.	त्रस.	वै.मि.	स्त्री.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	अ.	अप.				वै. १	कर्म.	पुं.		कुक्षु.			अच.	गु.	अ.			अना.	अना.
														मा.३	अशु.				

जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेव-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण-ट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णिण अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा जहण्णा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१५} ।

काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्र-काययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे अपर्याप्तकालकी अपेक्षा कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; तथा पर्याप्तकालकी अपेक्षा जघन्य तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १५९

भवनत्रिक सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सं.प.	प.	७		दे.	पं.	त्रस.	म. ४	व. ४	खी.	अज्ञा	असं.	चक्षु.	भा. ४	म. सासा.			सं.	आहा.	साका.
सं.अ.	अ.						वै. २	पु.				अच.	अशु. ३	तेज. १				अना.	अना.
							का. १												

तेसिं चैव पज्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण जहणिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३०} ।

तेसिं चैव अपज्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि भवनत्रिक देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे जघन्य तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

नं. १६०

भवनत्रिक सासादनसम्यग्दष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग. ई.	का.	यो.	वे.	क. ज्ञा.	संय. द.	ले.	भ. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	२	१	२	४	३	१	३	३
सासा.	सं. प. प.			दे.	पुं.	त्रस.	म. ४ व. ४ वै. १	खी. पु.	अज्ञा	असं चक्षु अच.	द्र. ६ र. १	भ. सासा. सं.	आहा.	साका-अना.

हरिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६१} ।

भवनवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेव-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण छ लेस्सा, भावेण जहणिया तेउ-लेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{१६२} ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके आलाप कहने पर— एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित भाक्षिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे जघन्य तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, सांख्यिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १६१

भवनत्रिक सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं. अ	अ.			दे.	पं.	त्रस.	वे. मि. कार्म.	स्त्री. पु.		कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अचक्षु.	का. शु. भा. ३ अशु.	भ.	सा. सं.	सा. सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. १६२

भवनत्रिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.	प.			दे.	पं.	त्रस.	म. ४ व. ४ व. १	स्त्री. पु.		ज्ञान. ३ अज्ञा. मिश्र.	असं.	चक्षु. अच.	भा. १ तंज.	भ.	सम्य.	सं.	आहा.	साका. अना.

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेव-असंजदसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिगया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, खइय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{१६३} ।

एसो इत्थि-पुरिसवेदानमोघालावो समत्तो । एवं चेव पुरिसवेदस्स वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव ठवेदव्वो । एवं चेव इत्थिवेदणिरुंभणं काऊण वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ इत्थिवेदो चेव ठवेदव्वो ।

असंयतसम्यग्दष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे जघव्य तेजोलेइया; भव्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार भवनत्रिक स्त्रीवेदी और पुरुषवेदियोंके संयुक्त सामान्य आलाप समाप्त हुए । इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें पुरुषवेदके आलाप कहना चाहिये । विशेषता केवल यह है कि ऊपर जहां भवनत्रिक देवोंके सामान्य आलापमें दो वेद स्थापित किये गये है, वहां एक पुरुषवेद ही स्थापित करना चाहिये । इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें स्त्रीवेदका आश्रय करके आलाप कहना चाहिये । विशेष बात यह है कि पहले जहां सामान्य आलापमें दो वेद स्थापित किये गये हैं, वहां एक स्त्रीवेद ही स्थापित करना चाहिये ।

विशेषार्थ—ऊपर जो भवनत्रिक देवोंके आलाप कह आये है, वे सामान्यालाप हैं । उनमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदका भेद नहीं किया गया है । परंतु उर्ध्व आलापोंमें दो वेदके

नं. १६३

भवनत्रिक असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अवि.	सं.	प.		दे.	पुं.	त्रस.	म. ४	स्त्री.			मति	असं.	के. द.	भा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
प.							व. ४	पु.			श्रुत.		विना.	तेज.		क्षायो.			अना.
							कै. १				अव.								

सौधर्मीसाणदेवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुकक-मज्झिमततेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हौति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

स्थानमें केवल पुरुषवेद या केवल स्त्रीवेद इसप्रकार एक वेदके स्थापित कर देने पर वे आलाप पुरुषवेदी और स्त्रीवेदी भवनत्रिकोंके हो जाते हैं। भवनत्रिकके सामान्य आलापोंसे विशेष आलापोंमें इससे अधिक और कोई विशेषता नहीं है।

सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसक-वेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेश्या, भावसे मध्यम तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये मौ

१ प्रतिपु ' दब्बेण काउ-सुकलेस्सा मज्झिमां तेउलेस्सा भावेण ' इति पाठः ।

नं. १६४

सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	द्विप.	१०	४	२	१	१	११	२	४	६	१	३	द्र. ३	२	६	१	२
मि.	सं. प.	६अ	७		वे.			म. ४	स्त्री		ज्ञान. ३	असं.	के. ४	का.	म.	सं.	आहा.	साका.
सा.	सं. अ.				पुं.			व. ४	पु.		अज्ञा. ३		विना.	शु. ते.	अ.		अना.	अना.
स.								वै. २						मा. १				
अ.								का. १						तेज.				

दो वेद, चत्वारि कषाय, छण्णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

तेहिं चैव अपजत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्वारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्वारि कषाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं । उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेट्ठिहि मद-संजदे पडुच्च सोधम्मादि-उवरिम-देवाणमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे मध्यम तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व होते हैं । यहां पर औपशमिकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि औपशमिकसम्यक्त्वके साथ उपशम श्रेणीमें मरे हुए संयतोंकी अपेक्षा सौधर्म आदि ऊपरके देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है ।

नं. १६५

सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	६	१	३	द्र.१	२	६	१	१	२
मि.	पं.			दे.	पिं.	जस.	म. ४	व. ४	वै. १	व्री.	ज्ञान. २	असं.	के. द.	भा. १	भ.		सं.	आहा.	साका.
सा.	सं.							पु.			अज्ञा. ३		विना.	तेज.	अ				अना.
अ.																			

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६६} ।

सोधम्मसाणदेव-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणङ्काणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा^१, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६७} ।

सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

नं. १६६

सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	५	१	३	द्र. २	२	५	१	२	२
मि.	सं.अ.	पु.		दे.	पं.	त्र.	वे.मि.	स्त्री.	कुम.	अस.	के.द.	विना.	का.	शु.	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
सा.		कु.					कर्म.	पु.	कुक्षु.						अ.	क्षा.		अना.	अना.
अ.									मति.				भा. १.	तेज.	क्षायो.				
									श्रुत.						मिथ्या.				
									अव.						सासा.				

१ प्रतिपु ' दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा ' इति पाठः ।

नं. १६७

मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ३	२	१	१	२	२
मि.	सं.अ.	प.प.	७	दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	का.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सं.अ.		अ.					व. ४	पु.					अच.	शु.ते	अ.			अना.	अना.
							वै. २							भा. १.					
							का. १							तेज.					

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कषाय, तिण्णिण अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६८} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कषाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक-काययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेस्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकामिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेस्यापं, भावसे मध्यम तेजोलेस्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-

नं. १६८

मिथ्यादृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	२	९	२	४	३	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.	प.			दे.	पंचि.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. १	खी. पु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	मा. १ तेज.	भ. अ.	मि.	सं.	आहा.	साका. अना.

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१९} ।

सोधम्मीसाण-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१९} ।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १६९

मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं.	अ.			दे.	पं.	त्रस.	वै. मि. कर्म.	स्त्री.	कुम. कुक्षु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. १ तेज.	म. मि. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.	

नं. १७०

सासादनसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	द्र. ३	१	१	१	२	२
संसा.	सं. प.	६अ.	७		दे.	पं.	त्रस.	म. ४ व. ४ वे. २ का. १	स्त्री.	पु.	अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. १ तेज.	म.	सासा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणाभारुवजुत्ता वा^{१०१} ।

^{१००}तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्सा,

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धो आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कामण-काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो

नं १७१

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
ज्ञा.	सं.	प.			दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	तेज.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४	पुं.				अच.	भा. ३					अना.
								वे. १						तेज.					

नं. १७२

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
ज्ञा.	सं.	अ.			दे.	पंचे.	त्रस.	वै. मि.	स्त्री.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सा.	सं.	आहा.	साका.
		अप.						कर्म.	पुं.		कुक्षु.		अच.	शु.				अना.	अनाका.
														भा. १					
														तेज.					

भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णियो, आहारिणो अण्णहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सोधम्मीसाण-सम्मामिच्छाहट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, षव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णियो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१७३} ।

सोधम्मीसाण-असंजदसम्माहट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेइया; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादष्टि सौधर्म पेशान देवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादष्टि गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेइया, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग; नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,

नं. १७३

सम्यग्मिथ्यादष्टि सौधर्म पेशान देवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.	प.			दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.		अज्ञा.	असं.	वक्षु.	ते.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
								क. ४	पु.		३		अच.	मा. १					अना.
								कै. १			ज्ञान.			तेज.					
											मिश्र.								

तिष्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-मज्झिमततेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भव-
सिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति
अणागारुवजुत्ता वा^{१०५} ।

तेसिं चैव पञ्चत्तारणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ
पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग,
दो वेद, चत्तारि कसाय, तिष्णि णाण, असंजमो, तिष्णि दंसण, दब्ब-भावेहि मज्झिमा
तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, तिष्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति
अणागारुवजुत्ता वा^{१०५} ।

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम
तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक,
आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण,
चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग और
त्रैकियिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकयेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक,
क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १७४

असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	२	१	१	११	२	४	३	१	३	द्र. ३	१	३	१	२	२
जीव.	सं.प.	प.	७	दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	स्त्री.	पु.	मति.	असं.	के.द.	विना.	शु. ते.	भा. १	क्षायो.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	अ.					व. ४	वै. २		श्रुत.				तेज.				अना.	अना.
							का. १			अव.									

नं. १७५

असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	१	२
जीव.	सं.प.	प.		दे.	पंचे.	त्र.	म. ४	स्त्री.	पु.	मति.	असं.	के.द.	विना.	शु. ते.	भा. १	क्षायो.	सं.	आहा.	साका.
							व. ४	वै. १		श्रुत.				तेज.				अना.	अना.
										अव.									

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुकक-लेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं । देवासंजदसम्माइट्ठीणं कथमपञ्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि ? बुच्चदे—वेदगसम्मत्तमुवसामिय उवसमसेट्ठि-मारुहिय पुणो ओदरिय पमत्तापमत्तसंजद-असंजद-संजदासंजद-उवसमसम्माइट्ठि-ट्ठाणेहि मज्झिम-तेउलेस्सं परिणमिय कालं काऊण सोधम्मीसाण-देवेसुप्पणाणं अपञ्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । अथ ते चैव उक्कस्स-तेउलेस्सं वा जहण्ण-पम्मलेस्सं वा परिणमिय जदि कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह सणक्कुमार-माहिंदे उप्पजंति । अथ ते चैव उवसमसम्माइट्ठीणो मज्झिम-पम्मलेस्सं परिणमिय कालं करेति तो बह्व-बहोत्तर-लान्तव-काविट्ठ-सुकक-महासुककेसु उप्पजंति । अथ उक्कस्स-पम्मलेस्सं वा जहण्ण-सुककलेस्सं वा परिणमिय जदि ते कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह सदार-सहस्सारदेवेसु उप्पजंति ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संशी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे मध्यम तेजोलेइया; भव्यसािद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं ।

शंका - असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान—वेदकसम्यक्त्वको उपशमा करके और उपशमश्रेणी पर चढ़कर फिर वहांसे उतर कर प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, असंयत और संयतासंयत उपशमसम्यग्दष्टि गुणस्थानोंसे मध्यम तेजोलेइयाको परिणत होकर और मरण करके सौधर्म पेशान कल्प-वासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है । तथा, उपर्युक्त गुणस्थानवर्ती ही जीव उत्कृष्ट तेजोलेइयाको अथवा जघन्य पद्मलेइयाको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशमिकसम्यक्त्वके साथ सनत्कुमार और महेन्द्र कल्पमें उत्पन्न होते हैं । तथा, वे ही उपशमसम्यग्दष्टि जीव मध्यम पद्मलेइयाको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो ब्रह्म-ब्रहोत्तर, लान्तव, कापिट्ठ, शुक्र और महाशुक्र कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, वे ही उपशमसम्यग्दष्टि जीव उत्कृष्ट पद्मलेइयाको अथवा जघन्य शुक्लेइयाको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशमिकसम्यक्त्वके साथ शतार,

अथ उवसमसेटि चढिय पुणोदिण्णा चेव मज्झिम-सुक्कलेस्साए परिणदा संता जदि कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह आणद-पाणद-आरणच्चुद-णवगेवज्जविमाणवासिय-देवेषुप्पजंति । पुणो ते चेव उक्कस्स-सुक्कलेस्सं परिणमिय जदि कालं करेति तो उवसम-सम्मत्तेण सह णवाणुदिस-पंचाणुत्तरविमाणदेवेषुप्पजंति । तेण सोधम्मादि-उवरिम-सव्व-देवासंजदसम्माइट्ठीणमपजत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि त्ति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १११ ।

एवमित्थिपुरिसवेदानमोघालावो समत्तो ।

एवं चेव पुरिसवेद-देवाणमालावो वत्तव्वो । णवरि जत्थ दो वेदा वुत्ता तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव वत्तव्वो । एवं सोधम्मीसाणदेवीणं पि वत्तव्वं । णवरि जत्थ

सहस्रार कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, उपशमश्रेणी पर चढ़ करके और पुनः उतर करके मध्यम शुक्लेद्यासे परिणत होते हुए यदि मरण करते हैं तो उपशमसम्यक्त्वके साथ आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ त्रैवेयकविमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, पूर्वोक्त उपशमसम्यग्दृष्टि जीव ही उत्कृष्ट शुक्लेद्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो उपशमसम्यक्त्वके साथ नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर-विमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । इसकारण सौधर्म स्वर्गसे लेकर ऊपरके सभी असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है ।

सम्यक्त्व आलापके आगे—संज्ञी, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भेद न करके सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंके सामान्य आलाप समाप्त हुए ।

सौधर्म ऐशान रूपके देवोंके सामान्य आलापोंके समान ही पुरुषवेदी देवोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि सामान्य आलाप कहते समय जहाँ पर पहले स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दो वेद कहे गये हैं, वहाँ पर केवल एक पुरुषवेद ही कहना चाहिये । इसीप्रकार सौधर्म ऐशान स्वर्गकी देवियोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि

नं. १७६

असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	शा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र. २	२	३	१	२	२
अवि.	सं.अ.	उ.		दे.	पं.	त.	वै.मि.	कर्म.	पु.		मति.	असं.	के.द.	का.	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
											भुत.		धिना.	शु.		क्षा.		अना.	अना.
											अव.			मा. १		क्षायो.			
														तेज.					

पुरिसवेदो वुत्तो तत्थ इत्थिवेदो चैव वत्तव्वो । असंजदसम्माइद्धिस्स इत्थिवेदमिह उप्पत्ती
णत्थि त्ति तस्स पज्जत्तालावो एक्को चैव वत्तव्वो । पज्जत्तालावे उच्चमाणे वि खइयसम्मत्तं
णत्थि त्ति वत्तव्वं, देवेषु दंसणमोहणीयस्स खवणाभावादो । एत्तिओ चैव विसेसो ।

सणक्कुमार-माहिंददेवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी,
पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम,
त्तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुकक-उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ-
जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

पुरुषवेदी देवोंके आलापोंमें जहां पुरुषवेद कहा गया है वहां केवल स्त्रीवेद ही कहना चाहिए ।
यहां इतना और समझना चाहिये कि असंयतसम्पददृष्टि जीवोंकी स्त्रीवेदमें उत्पात्ति नहीं
होती है, इसलिये स्त्रीवेदी असंयतसम्पददृष्टिका एक पर्याप्त-आलाप ही कहना चाहिए । और
पर्याप्त-आलाप कहते समय भी क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है, अर्थात् स्त्रीवेदी पर्याप्तोंके
(देवियोंके) दो ही सम्यक्त्व होते हैं, ऐसा कहना चाहिए; क्योंकि, देवोंमें दर्शनमोहनीय कर्मके
क्षपणका अभाव है । सौधर्म और पेशानके पुरुषवेदी और स्त्रीवेदी आलापोंमें उनके सामान्य
आलापोंसे इतनी ही विशेषता है ।

सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गोंके देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार
गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-
प्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों
मनोयोग, चारों घञ्चनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग
ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें काफेत और शुद्ध लेइयाएं तथा पर्याप्त-
कालमें उत्कृष्ट पीत और जघन्य पद्मलेइया, भावसे उत्कृष्ट तेजोलेइया और जघन्य पद्मलेइया;
भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिपु ' उक्कस्सतेउ ' इति पाठो नास्ति

नं. १७७

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	२०	४	२	२	२	२२	१	४	६	१	३	द.४का.	२	६	१	२	२
मि.	सं. प.	प.	७		दे.	प्रा.	वस.	म. ४	पु.		ज्ञा. ३	असं.	के. द.	शु.ते.प.	भ.		सं.	आहा.	साका.
सा.	सं. अ.	६						व. ४			अज्ञा. ३		विना.	भा. २	अ.			अना.	अना.
सा.		अ.						वै. २						ते. उ.					
अ.								का. १						प. ज.					

तेसिं चेष पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि उक्कस्स-तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०८} ।

तेसिं चेष अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिस वेद, चत्तारि कसाय, पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच

उन्हीं सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेजोलेश्या और जघन्य पद्मलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान तथा आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेश्याएं; भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अना-

नं. १७८

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	द्र,२ते.उ.	२	६	१	२
मि.	सं.प.	प.			दे.	पुं	त्रस.	म. ४	पु.		ज्ञान. ३	असं.	के. द.	प. ज.	भ.	सं.	आहा.	साका.
सा.								व. ४			अज्ञा. २		विना	मा. २	अ.			अना.
स.								वै. १						ते. उ.				
अ.														प. ज.				

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

संपहि मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्ठि ति ताव चदुण्हं गुणट्ठाणाणं सोधम्म-भंगो । णवरि उवरि सव्वत्थ इत्थिवेदो णत्थि, पुरिसवेदो चैव वत्तव्वो । ओघालावे भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ । तेसिं चैव अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ ति चैव विसेसो ।

बम्ह-बम्हुत्तर-लांतव-कापिट्ठ-सुक्क-महासुक्ककप्पदेवाणं सणक्कुमार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमपम्मलेस्साओ, भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण

हारकः साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके मिथ्यावाष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्वाष्टि गुणस्थान तक चारों गुणस्थानोंके आलाप सौधर्म देवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेषता केवल इतनी है कि ऊपर सभी कल्पोंमें खीवेद नहीं है, अतः एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए । उसमें भी ओघालाप कहते समय द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं, इतनी विशेषता है ।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिट्ठ और शुक्क-महाशुक्क कल्पवासी देवोंके आलाप सानत्कुमार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम पद्म लेख्या होती है, तथा भावसे केवल मध्यम पद्मलेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है ।

नं. १७९

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	२	६	७	४	१	१	२	१	४	५कुम	१	३	द्र. २	२	५ औप.	१	२	२
मि.	सं.	अ.		द.	पंचे.	चस.	वै.मि.	पु.		कुशु.	असं.	के. द	का.शु.	भ.	क्षा.	आहा.	साका.	
सा.	अ.	अप.				चस.	कर्म.			मति.		विना.	मा. २	अ.	क्षायो.	अना.	अना.	
अ.										क्षुत.		ते. उ.	प. ज.	मि.	सासा.			
										अव.								

काउ-सुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा । एत्तियमेत्तो चव विसेसो । सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं बम्हलोग-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दब्बेण काउ-सुकक-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । पज्जत्त-काले दब्ब-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । अपज्जत्तकाले दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमोघ-सुप्पबुद्ध-जसोधर-सुबुद्ध-सुविसाल-सुमण-सउमणस-पीदिकरमिदि एदेसिं चदु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दब्बेण काउ-सुकक-मज्झिमसुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुककलेस्सा । पज्जत्तकाले दब्ब-भावेहि मज्झिमा सुककलेस्सा । अपज्जत्तकाले दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुककलेस्सा ।

अच्चि-अच्चिमालिणी-वइर-वइरोयण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेश्या होती है । इतनीमात्र ही विशेषता है ।

शतार और सहस्रार कल्पवासी देवोंके आलाप ब्रह्मलोकके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेश्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेश्याएं होती हैं । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेश्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेश्याएं होती हैं ।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविशाल, सुमनस, सौमनस और प्रीतिकर इन चार और नौ इस प्रकार तेरह कल्पोंके आलाप शतार-सह-स्रार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम शुक्ल लेश्याएं होती हैं, तथा भावसे मध्यम शुक्ललेश्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्ललेश्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं तथा भावसे मध्यम शुक्ललेश्या होती है ।

अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूप, अंक, स्फटिक, आदित्य, इन

१ 'सुभद्र' इति पाठः । त. रा. वा. पृ. १६७.

२ अर्ची य अर्चिमालिणि वइरे वइरोयणा अणुदिसगा । सोमो य सोमरूवे अंके फलिके य आइच्चे ॥ त्रि. सा. ४५६. तत्रानुदिशविमानानि येन्वेक एवाऽऽदिसो नाम विमानप्रस्तारः । तत्र दिक्षु विदिक्षु चत्वारि चत्वारि श्रेणिविमानानि । प्राच्यां दिशि अर्चिर्विमानं, अपाच्यामर्चिमाली, प्रतीच्यां वैरोचनं, उदीच्यां प्रभासं, मध्ये आदि-त्यार्यं । विदिक्षु पुष्पप्रकीर्णकानि चत्वारि । पूर्वदक्षिणस्यामर्चिप्रभं । दक्षिणापरस्यां अर्चिर्मध्यं । अपरोत्तरस्यां अर्चिरावर्तं । उत्तरपूर्वस्यामर्चिर्विशिष्टं । त. रा. वा. पृ. १६७. त्रैताम्बरप्रथेषु अनुदिशविमानानामुल्लेखो नास्ति ।

वइजयंत-जयंत-अवराइद-सव्वट्टसिद्धि ति एदेसिं णव-पंच-अणुदिसाणुत्तराणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्ससुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि उक्क-

नौ अनुदिश विमानोंके तथा विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि इन पांच अनुत्तर विमानोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेश्याएं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट शुक्लेश्या, भावसे उत्कृष्ट शुक्ल-लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-

नं. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	३	द्र. ३	१	३	१	२	२
सं.प.	प.	७		दे.	पंचे.	त्रस.	म. ४	पु.		मति	असं.	के.द.	का. शु.	म. औप.	सं.	आहा.	साका.		
सं.अ.	अ.						वे. ४			भुत.		विना.	शु. उ.	मा. १	क्षा.	अना.	अना.		
							कर्म. १			अव.			शु. उ.		क्षायो.				

स्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं । केण कारणेण उवसमसम्मत्तं णत्थि ? बुच्चदे— तत्थ द्विदा देवा ण ताव उवसमसम्मत्तं पडिवज्जंति, तत्थ मिच्छाइट्ठीणमभावादो । भवदु णाम मिच्छाइट्ठीणमभावो, उवसमसम्मत्तं पि तत्थ द्विदा देवा पडिवज्जंति; को तत्थ विरोधो ? इदि ण, ' अणंतरं पच्छदो य मिच्छत्तं ' इदि अणेण पाहुडसुत्तेण सह विरोहादो । ण तत्थ द्विद-वेदगसम्माइट्ठीणो उवसमसम्मत्तं पडिवज्जंति, मणुसगदि-वेदिरित्तण्णगदीसु वेदगसम्माइट्ठीजीवाणं दंसणमोहुवसमणहेदुपरिणाभावादो । ण य वेदगसम्माइट्ठित्तं पडि मणुस्सेहिंतो विसेसाभावादो मणुस्माणं च

सम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व होते हैं ।

शंका— नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंके पर्याप्तकालमें औपशमिक सम्यक्त्व किस कारणसे नहीं होता है ?

समाधान— नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानोंमें विद्यमान देव तो औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते नहीं हैं, क्योंकि वहां पर मिथ्यादृष्टि जीवोंका अभाव है ।

शंका— भले ही वहां मिथ्यादृष्टि जीवोंका अभाव रहा आवे, किन्तु यदि वहां रहनेवाले देव औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त करें, तो इसमें क्या विरोध है ?

समाधान— ऐसा कहना भी युक्ति-युक्त नहीं है, क्योंकि, औपशमिक सम्यक्त्वके अनन्तर ही औपशमिकसम्यक्त्वका पुनः ग्रहण करना स्वीकार करने पर ' अनादि मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें ही मिथ्यात्वका उदय नियमसे होता है । किन्तु जिसके द्वितीय, तृतीयादि चार उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई है, उसके औपशमिक सम्यक्त्वके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें मिथ्यात्वका उदय भाज्य है, अर्थात् कदाचित् मिथ्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्व या उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है, कदाचित् सम्यग्मिथ्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है इत्यादि' । इस कषायप्राभृतके गाथासूत्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है । यदि कहा जाय कि अनुदिश और अनुत्तर विमानोंमें रहनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टि देव औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं, सो भी झूठ नहीं है; क्योंकि, मनुष्यगतिके सिवाय अन्य तीन गतियोंमें रहनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके दर्शनमोहनीयके उपशमन करनेके कारणभूत परिणामोंका अभाव है । यदि कहा जाय कि वेदकसम्यग्दृष्टिके प्राप्ति मनुष्योंसे अनुदिशादि विमानवासी देवोंके कोई विशेषता नहीं है, अतएव जो दर्शनमोहनीयके उपशमन योग्य परिणाम मनुष्योंके पाये जाते हैं वे

१ सम्मत्तपदमलंभस्साणंतरं पच्छदो य मिच्छत्तं । लंभस्स अपटमस्स दु भजियच्चो पच्छदी होदि ॥ (कसाय-पाहुड) सम्मतस्स जी पटमलंभो अणादियमिच्छाइट्ठिसओ तस्साणंतरं पच्छदो अणंतरपच्छिमात्राणु मिच्छत्तमेव होइ । तत्थ जाव पटमद्विदिचरिससओ ति ताव मिच्छतोदर्यं मोत्तण पयारंतरासंभवादो । लंभस्स अपटमस्स दु जो खलु अपटमो सम्मतपडिलंभो तस्स पच्छदो मिच्छतोदयो भजियच्चो होइ । जयध. अ. पृ. ९६१.

दंसणमोहुवसमणजोगपरिणामेहि तत्थ णियमेण होदव्वं, मणुस्स-संजम-उवसमसेटिसमा-
रुहणजोगत्तणेहि भेददंसणादो । उवसमसेटिम्हि कालं काऊणुवसमसम्मत्तेण सह देवे-
सुप्पण्णजीवा ण उवसमसम्मत्तेण सह छ पज्जत्तीओ समाणेंति, तत्थतणुवसमसम्मत्त-
कालादो छ-पज्जत्तीणं समाणकालस्स बहुत्तुवलंभादो । तम्हा पज्जत्तकाले ण एदेसु
देवेषु उवसमसम्मत्तमत्थि चि सिद्धं । सण्णिणो, आहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति

अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें नियमसे होना चाहिए । सो भी कहना युक्ति-संगत नहीं है, क्योंकि, संयमको धारण करनेकी तथा उपशमश्रेणीके समारोहण आदिकी योग्यता मनु-
ष्योंके ही होनेके कारण अनुदिश और अनुत्तरविमानवासी देवोंमें और मनुष्योंमें भेद देखा जाता है । तथा उपशमश्रेणीमें मरण करके औपशमिक सम्यक्त्वके साथ देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव औपशमिक सम्यक्त्वके साथ छह पर्याप्तियोंको समाप्त नहीं कर पाते हैं, क्योंकि, अपर्याप्त अवस्थामें होनेवाले औपशमिक सम्यक्त्वके कालसे छहों पर्याप्तियोंके समाप्त होनेका काल अधिक पाया जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध हुई कि अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालमें औपशमिक सम्यक्त्व नहीं होता है ।

विशेषार्थ—उपशमसम्यग्दृष्टि जीव औपशमिक सम्यक्त्वसे पुनः औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त नहीं होता है किन्तु यदि उसके मिथ्यात्वका उदय हो जाये तो मिथ्यादृष्टि हो जाता है, यदि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय हो जाये तो सम्यग्मिथ्यादृष्टि हो जाता है, यदि सम्यक्प्रकृतिका उदय हो जाये तो वेदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है और यदि अनन्तानुबन्धीमेंसे किसी एक प्रकृतिका उदय हो जाये तो सासादनसम्यग्दृष्टि हो जाता है । इस नियमके अनुसार नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दृष्टि जीव फिरसे उपशमसम्यक्त्वको तो ग्रहण कर नहीं सकता है और मिथ्यात्व गुणस्थान उसके होता नहीं है, क्योंकि, अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानको छोड़कर उसके दूसरे कोई गुणस्थान नहीं पाये जाते हैं, इसलिए मिथ्यात्वसे भी पुनः वह उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण नहीं कर सकता है । वेदकसम्यक्त्वसे कदाचित् उसके उपशमसम्यक्त्व माना जाय सो ऐसा मानना भी ठीक नहीं है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वसे उपशमश्रेणीके सन्मुख मनुष्योंके ही उपशम (द्वितीयोपशम) सम्यक्त्व होता है अन्य गतियोंमें नहीं । तथा पूर्व पर्यायसे आया हुआ उपशमसम्यक्त्व अपर्याप्त अवस्थामें ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके कालसे छह पर्याप्तियोंके पूरा करनेका काल अधिक होता है । इसप्रकार इतने कथनसे यह निष्कर्ष निकला कि नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दृष्टि जीव नियमसे वेदकसम्यग्दृष्टि ही हो जाता है और जो वेदकसम्यग्दृष्टि उत्पन्न होता है वह भी अन्त तक

१ प्रतिपु ' छ-पज्जत्तीओ ' इति पाठः ।

२ उवसमसम्मत्तद्धा छावलिमेघो दु समयमेत्तो ति । अवसिद्धे आसाणो अणअणदरुदयदो होदि ॥
अंतोमुहुत्तमदं सव्वोक्कसमेण होदि उवसंतो । तेण परं उदओ खडु तिण्णेकरस्स कम्मस्स ॥

ल. क्ष. १००, १०२.

अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि गाण, असंजम, तिण्णि दंसग, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण उकस्सिया सुकलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हौंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} । एवं देवगदी

सिद्धगदीए सिद्ध-भंगो ।

एवं गइमग्गणा समत्ता ।

वेदकसम्यग्दाष्टि ही रहता है ।

सम्यक्त्व आलापके आगे संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संबि-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे उत्कृष्ट शुक्ल लेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं । इसप्रकार देवगतिके आलाप समाप्त हुए ।

सिद्ध गतिके आलाप सिद्धोंके ओघालापके समान जानना चाहिये ।

इसप्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई ।

नं. १८१ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	४	३	१	३	द्र. १	१	२	१	१	२	२
अ.	सं.	प.		दे.	पुं.	सं.	म.	४	व.	मति	असं.	के. द.	शु. उ.	म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.	अना.
							व.	४	वै.	श्रुत.		विना.	मा. १	शु. उ.	क्षायो.				

नं. १८२ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अ.	सं.	अ.		दे.	पं.	त्र.	वै.	मि.	पु.	मति	असं.	के. द.	का.	शु.	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
							कर्म.			श्रुत.		विना.	मा. १	शु. उ.	क्षायो.			अना.	अना.

इंदियाणुवादेण अणुवादो मूलोघो । णवरि अत्थि अदीदगुणट्टाणाणि, अदीद-जीवसमासा, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, सिद्धगदी वि अत्थि, अण्दिद्या वि अत्थि, अकाया वि अत्थि, णेव संजदा णेव असंजदा णेव संदजासंजदा वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया अत्थि । एदे आलावा ण वत्तन्वा, सिद्धाणमेइंदियादि-जादिणाम-कम्मस्सुदयाभावादो ।

सामण्णेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, पुढवि-वणप्फई अस्सिदूण सरीरस्स छ लेस्साओ हवंति । भवेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि अतीतगुणस्थान, अतीतजीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक रहित स्थान इतने आलाप नहीं कहना चाहिए; क्योंकि, सिद्धजीवोंके एकेन्द्रियादि जाति नामकर्मका उदय नहीं पाया जाता है ।

सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त, बादर-अपर्याप्त, सूक्ष्म-पर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, मनः-पर्याप्ति और भाषापर्याप्तिके बिना चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; पर्याप्तकालमें—स्पर्शनेन्द्रिय, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, अपर्याप्तकालमें श्वासो-च्छ्वासके बिना तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावर काय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं होती हैं, क्योंकि, पृथिवी और धनस्पतिकायिक जीवोंके शरीरकी अपेक्षा शरीरकी छहों लेश्यापं पायी जाती हैं । भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

नं. १८३

सामान्य एकेन्द्रियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	४	४	४	१	१	५	३	१	४	२	१	१	२	२	२
मि.	बा.	प.	प	३	ति.	वस.	ओ. २	कृम.	असं.	अच.	मा. ३	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	बा.अ.	४			विना.	का. १	कुश्रु.				अशु.	अ.			अना.	अना.
	पू. प.	अ.														
	पू. अ.															

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{२१} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपञ्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और सूक्ष्म-पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-अपर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक,

नं. १८४

सामान्य एकेन्द्रियोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	४	४	४	१	१	५	१	१	४	२	१	१	द्र.६	२	१	१	१	२
मि.	वा.	प.	प.		ति.	एकः	त्रस.	औदा.	नपुं:		कुम.	असं.	अच.	भा.३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	सू.	प.					विना				कुश्रु.			अशु.	अ.				अना.

असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८५} ।

बादरेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८६} ।

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिध्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त और बादर-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिध्यात्व, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १८५

सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	१	द्र.२	२	१	१	२	२
मि.	बा.अ.	अ.		ति.		वस.	औ.मि.	कर्म.	पुं.		कुम.	असं.	अच.	का.शु.	म.अ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	सू.अ.					विना.	विना.				कुश्रु.			मा.३				अना.	अना.
														अशु.					

नं. १८६

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४प.	४	४	१	१	५	३	१	४	२	१	१	द्र.६	२	१	१	२	२
मि.	बा.प.	४अ.	३	ति.	बा.ए.	वस.	औ.२	का.१	पुं.		कुम.	असं.	अच.	मा.३	म.अ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	मा अ				जाति.	विना.	विना.				कुश्रु.			अशु.				अना.	अना.

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१७०} ।

“तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण,

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादर-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं; भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादर-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण

नं. १८७

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	बा.प.				ति.	बा.ए.	वस.	औदा.	नपुं.	कुम.	असं.	अच.	मा. ३	भ. अ.	मि.	सं.	आहा.	साका.	अना.
					जाति.	विना.				कुश्रु.			अशु.						

नं. १८८

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	बा.अ.	अप.			ति.	बा.ए.	वस.	औ.मि.	कुं.	कुम.	असं.	अच.	का. ३	भ. अ.	मि.	असं.	आहा.	साका.	अना.
					जाति.	विना.		कार्म.	किं	कुश्रु.			अशु.						

दव्वेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

एवं बादरेइंदियपज्जत्ताणं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । अपज्जत्तणामकम्मोदयाणं बादरेइंदियलद्धिअपज्जत्ताणं भण्णमाणे बादरेइंदियअपज्जत्ता-लाव-भंगो ।

“सुहुमेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, चत्तारि पज्ज-त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा;

काययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे पर्याप्तनामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए ।

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सूक्ष्म-पर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत,

१ प्रतिपु ' बादरेइंदियपज्जत्तालावो भंगो ' इति पाठः ।

नं. १८९

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं ग.	इ.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४ ४	४	२	२	५	३	१ ४	२	२	२	२	१	२	२	२
मि.	सू. प.	प.	३	ति.	सू. ए.	त्रस	ओ. २	कुम.	असं.	अच.	का.	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	सू. अ.	अ.			जाति.	विना	का. १	कुश्रु.			श.	अ.			अना.	अना.
											मा. ३					
											अशु.					

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णिण पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-

और शुक्ल लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाए, तिर्यंचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोतलेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाए, तिर्यंचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान,

१ प्रतिपु ' काउसुवकलेस्सा ' इति पाठः । सध्वंसिं सुहुमाणं कावोदा. गो. जी ४९७.

नं. १९०

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	४	४	१	५	१	१	४	२	१	१	द्र. १	२	१	१	१	२
मि.	सू.प.			ति.	सू.ए. जाति.	त्रस. विना.	ओदा.	पुं.		कुम. कुश्रु.	असं.	अच.	का. भा. ३ अ.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका. अना.

दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारु-वजुत्ता वा^{११} ।

एवं पञ्जत्त-णामकम्मोदय-सहियाणं सुहुमेइंदियणिव्वत्तिपञ्जत्ताणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । सुहुमेइंदियलद्विअपञ्जत्ताणं पि अपञ्जत्तणामकम्मोदय-सहियाणं एओ अपञ्जत्तालावो ।

वेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, वे जीवसमासा, पंच पञ्जत्तीओ पंच अप-जत्तीओ, छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइय-असच्चमोसवचिजोगा इदि चत्तारि जोग, णवुंसयवेद,

असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय लक्ष्यपर्याप्तकोंके एक अपर्याप्त आलाप जानना चाहिए ।

द्वीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय-पर्याप्त और द्वीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके बिना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये छह प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त छह प्राणोंमेंसे वचनबल और श्वासो-च्छ्वासके बिना चार प्राण; चारों संज्ञाणं, तिर्यचगति, द्वीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, कर्मणकाययोग और असत्यमृषावचनयोग ये चार योग; नपुंसक-

मं. १९१

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	व.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सू अ.	उप.			ति.	सू. ए.	वस.	औ. मि.	पुं	कुम.	असं.	अच.	का.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.	
					जाति.	विना.	कर्म.			कुशु.			मा. ३	जु.	अ.		अना.	अना.	

चत्वारि कषाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणगारुवजुत्ता वा^{१९१} ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, पंच पञ्जत्तीओ, छप्पाण, चत्वारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेड्दियजादी, तसकाओ, वे जोग, णडुंसयवेद, चत्वारि कषाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणगारुवजुत्ता वा^{१९२} ।

वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं द्वीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक द्वीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त छह प्राण, चारों संज्ञाए, तिर्यंचगति, द्वीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिक-काययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १९२

द्वीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	५	६	४	१	१	१	४	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	द्वी.	प.	४		ति.		त्रस.	औ. २	कुश्रु.		कुम.	असं.	अच.	मा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	द्वी.	अ.	५					का. १			कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.
		अ.						अनु.											

नं १९३

द्वीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	६	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	द्वी.				ति.		त्रस.	व. १	कुश्रु.		कुम.	असं.	अच.	मा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	प.							अनु.			कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.
								औ. १											

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जविसमासो, पंच अपञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णडुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११५} ।

एवं वीइंदिय-पञ्जत्तणामकम्मोदय-सहियाणं वीइंदियपञ्जत्ताणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । वेइंदिय-लद्धिअपञ्जत्तणामकम्मोदय-सहिदाणं एगो आलावो वत्तव्वो ।

तेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, पंच पञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी,

उन्हां द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि, गुणस्थान, एक द्वीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, कायबल और आयु ये चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, द्वीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक-अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे द्वीन्द्रियजाति और पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले द्वीन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । द्वीन्द्रियजाति और लब्ध्यपर्याप्तक नामकर्मके उदयवाले द्वीन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप ही कहना चाहिए ।

त्रीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, त्रीन्द्रिय-पर्याप्त और त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, वचनबल, कायबल, आयु, और श्वासोच्छ्वास ये सात प्राण; अपर्याप्तकालमें उक्त सात प्राणोंमेंसे वचनबल और श्वासो-

नं. १९४

द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग. इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स. संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	४	४	१	१	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२
मि.	द्वी.	अ.	अ.		ति	जा.	वस.	औ. मि. कर्म.	नपु.	कुम. कुक्षु.	असं.	अचक्षु.	का. शु. भा. ३ अक्षु.	मि. असं.	आहा. अना.	साका. अना.

तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-
दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,
मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

“तैसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, पंच
पज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खिगदी, तीइंदियजादी, तसकाओ, दो
जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा,

च्छ्वासके विना शेष पांच प्राण, चारों संज्ञापे, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभय-
वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये चार योग,
नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों
लेइयापे, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापे; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व,
असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-
स्थान, एक त्रीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त सात प्राण, चारों
संज्ञापे, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिककाययोग
ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षु-

नं. १९५

त्रीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	५प.	७	४	१	१	१	४	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	त्री.प.	५अ.	५		ति.	त्री.जा.	त्रस.	व. १ अनु. औ. २ का. १	नपुं.	कुम. कुश्रु.	असं.	अच.		मा. ३ अशु. अ.	भ. अ.	मि.	असं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. १९६

त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	त्री.प.				ति.	त्री.जा.	त्रस.	व. १ अनु. औ. १	नपुं.	कुम. कुश्रु.	असं.	अच.		मा. ३ अशु. अ.	भ. अ.	मि.	असं.	आहा.	साका. अना.

भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

एवं तीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्ताणं पज्जत्त-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । लद्धि-अपज्जत्ताणं पि अपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं एगो आलावो वत्तव्वो ।

चउरिंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ

दर्शन, द्रव्यसे ल्हों लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं त्रीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, आदिकी तीन इन्द्रियां, कायबल और आयु ये पांच प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अह्वान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले त्रीन्द्रिय निवृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले त्रीन्द्रिय लब्धपर्याप्तकोंके भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए ।

चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरि-

नं. १९७

त्रीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	५	५	४	१	१	१	२	१	४	२	२	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	जी.	अ.			ति.	जी.	ओ.मि.	कर्म.	पं.		कुम.	असं.	अच.	का.	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	अ.				जा.	सं.	कार्म.				कुश्रु.			शु.	अ.			अना.	अना.
														भा. ३					
														अशु.					

पंच अपज्जत्तीओ, अट्ट पाण छप्पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं. एओ जीवसमासो, पंच पज्जत्तीओ, अट्ट पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो,

न्द्रिय-पर्याप्त और चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, कायबल, वचनबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये आठ प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त आठ प्राणोंमेंसे वचनबल और श्वासोच्छ्वासके विना शेष छह प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त आठ प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिक-काययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-

नं. १९८

चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	५	८	४	१	१	१	४	१	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि	च.प.	प.	प.		ति.		त्रस.	व. १			कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	च.अ.	५	६				च.आ.	अनु.	नपुं.		कुश्रु.		अच.	अशु.	अ.			अना.	अना.
		अ.	अ.					का. १											

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

कारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच अपर्याप्तियां, आविकी चार इन्द्रियां, कायबल और आयु ये छह प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १९९

चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	८	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	च.	अ.			ति.	जा.	व.	अनु.	नपुं.		कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
						क.	ओ.	ओ.			कुश्रु.		अच.	अशु.	अ.				अना.

नं. २००

चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	५	६	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	च.	अ.			ति.	च.	व.	ओ. मि.	नपुं.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
						जा.	कर्म.				कुश्रु.		अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
														भा. ३					
														अशु.					

एवं चउरिंदियाणं पञ्जत्त-णामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । चउरिंदि-
याणमपञ्जत्त-णामकम्मोदयाणं एओ आलावो वत्तव्वो ।

पंचिंदियाणं भण्णमाणे अत्थि चोइस गुणद्वयाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ
पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव
पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण एय पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि
अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोम अजोगो वि अत्थि,
तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट पाण,
सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्वे-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया
अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले पर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवोंके सामान्य,
पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले
लक्ष्यपर्याप्तक चतुरिन्द्रिय जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए।

पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-
अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संज्ञी-पर्याप्त जीवोंके
छहों पर्याप्तियां, संज्ञी-अपर्याप्त जीवोंके छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके
मनःपर्याप्तिके विना पांच पर्याप्तियां, असंज्ञी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके पांच अपर्याप्तियां;
संज्ञी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके दशों प्राण, संज्ञी-अपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकाल-
भावी सात प्राण, असंज्ञी-पर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके मनोबलके विना नौ प्राण, असंज्ञी-अप-
र्याप्त पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालभावी सात प्राण, सयोगिकेवली जिनके वचनबल,
कायबल, आयु और स्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, केवलिसमुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें
आयु और कायबल ये दो प्राण, और अयोगिकेवली भगवान् के एक आयु प्राण होता है।
चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पंद्रहों
योग तथा अयोगस्थान भी है। तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा
अकषायस्थान भी है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों
लेश्यापं तथा अलेश्यास्थान भी है। भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सभ्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. २०१

पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	व.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	४	६प.	१०, ७	४	४	१ १	१५	३	४	८	७	४	द्र. ६ मा. ६ अलेश्या.	२	६	२	२	२
	सं. प.	६अ.	९, ७			पंच.	त्रस.							म.		सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	५प.	४, २				अयोवा.							अ.		असं.	अना.	अना.
	असं. प.	५अ.	१				क्षीणसं.									अनु.		यु. उ.
	असं. अ.																	

अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-
अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा, छ
पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ
खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि मदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग
अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि
अत्थि, अट्ट पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्सा अलेस्सा वि
अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव
असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा
सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

असंज्ञिक तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है । आहारक, अना-
हारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे
युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान,
संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां;
दशों प्राण, नौ प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी
है । चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-
काययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये न्यारह योग तथा अयोगस्थान भी
है । तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है । चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है ।
आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भाषसे छहों लेख्यापं तथा अलेख्यास्थान
भी है । भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञी और
असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है । आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी,
अनाकारोपयोगी और साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी
होते हैं ।

सं. २०२

पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	२	६	१०	४	४	१	१	११ म. ४	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	२	२
	सं. प.	५	९			पवे.	तस.	व. ४	अपम.	अकषा.				मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
	अ. प.	४ स.	१ अ.	क्षीणसं.				ओ. १	अपम.					अले.	अ.		असं.	अना.	अना.
								वै. १									अनु.		यु. उ.
								आ. १											
								अयो.											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्टाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीण-सण्णा वा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ पाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारु-वजुत्ता वा तदुभया वा^{१०३} ।

पंचिदिय-मिच्छाद्दृष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ

उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, तथा सयोगकेवलि-समुद्घातके अपर्याप्तकालमें दो प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। विभंगवाधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके विना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेद्रोपस्थापना और यथास्थान ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यापं; भावसे छहों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभयस्थान भी है। आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, पूर्वोक्त चार जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी पंचे-

नं. २०३

पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	२	६अ.	७	४	४	१	१	४	३	४	६	४	४	द. २	२	५	२	२	२
मि.	सं. अ.	५ अ.	७			पं.	अ. मि.	अपग.	अकषा.	विभं.	असं.		का. म.	मि.	सं.	आहा.	साका.		
सा.	असं. अ.		क्षीणस.				वे. मि.			मनः	सामा.		शु. अ.	सा.	असं.	अना.	अना.		
अ.							आ. मि.			विना.	छेदो.		भा. ६	औप.	अनु.		यु. उ.		
प्र.							कर्म.				यथा.			क्षा.					
स.														क्षायो.					

पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

न्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; संक्षी पंचेन्द्रियोंके दशों प्राण, सात प्राण; असंक्षी पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंक्षी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औद्धारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक,

नं. २०४

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	४	१	२	३	४	३	२	२	१	२	२	२
मि.	सं.प.	६अ.	७			आ.द्रि.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	५प.	९		पंचे.	विना.				अच.		अ.		असं.	अना.	अना.
	असं.प.	५अ.	७													
	असं.अ.															

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, नसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २०५

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	सं.प.	५	९			पंच.	वस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.							व. ४					अच.		अ.		असं.		अना.
	प.							औ. १											
								वे. १											

नं. २०६

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	४	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	सं.अ.	अ.	७			पंच.	वस.	औ. मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.अ.	५						वे. मि.			कुश्रु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.	अना.
	अ.							कर्म.						भा. ६					

सासणसम्माइट्टिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोव-भंगो । एवं सण्णिपंचि-
दियाणं पज्जत्त-णामकम्मोदयाणं मिच्छाइट्टिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति जाणिऊण
सकलालावा वत्तव्वा ।

असण्णि-पंचिदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, पंच
पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी,
पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,
असंजम, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया
अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति
अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, पंच
पज्जत्तीओ, णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

सामान्य पंचेन्द्रिय जीवोंके सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली
गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए । इसीप्रकार पर्याप्त
नामकर्मके उदयवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली
गुणस्थान तकके समस्त आलाप जानकर कहना चाहिए ।

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,
असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां;
नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग,
औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद,
चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं,
भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक,
आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तक लसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि
गुणस्थान, एक असंज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, नौ प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति,

नं. २०७

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	५प.	९	४	१	१	१	४	३	४	२	१	२	२	१	१	२	२
मि.	असं. प.	५अ.	७		ति.	पं.	ज्ञ.	व. १ अनु. औ. २ का. १		कुम. कुशु.	असं.	अच. अच.	द्र. ६ मा. ३ अशु.	भ. मि. अ.	मि.	असं.	आहा. अना.	साका. अना.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्तानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३९} ।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभववचनयोग और औदारिककाययोग ये दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक असंज्ञो-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २०८

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	९	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	असं.				ति.	पंच.	त्रस.	व. १			कुम.	असं.	चक्षु	भा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	प.							अनु.			कुश्रु.		अच.	अशु.	अ.				अना.
								औ. १											

नं. २०९

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	असं.	अ.			ति.	पंच.	त्रस.	औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
		ऊप.						कार्म.			कुश्रु.		अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
														भा. ३					
														अशु.					

संपहि पंचिदियलद्विअपज्जत्ताणं अपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदि-तिरिक्खगदीओ चि दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, साभारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

सण्णिपंचिदिय-लद्विअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति और तिर्यच-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति और तिर्यचगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व,

नं. २१०

पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६अ	७	४	२	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	सं. अ.	१अ	७		म.	पंचे.	वस.	औ.मि.	कर्म.	चक्षु.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.अ				ति			कर्म.	चक्षु.		कुश्रु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.	अना.
														भा. ३					
														अशु.					

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२११} ।

असण्णिपंचिंदिय-लद्धिअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णामाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२१२} ।

अणिदियाणं सिद्ध-भंगो ।

एवं विदियमग्गणा समत्ता ।

संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक असंज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञार्ण, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिन्द्रिय जीवोंके आलाप सिद्धोंके आलापोंके समान समझना चाहिए ।

इसप्रकार दूसरी इन्द्रिय मार्गणा समाप्त हुई ।

नं. २११

संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	२	१	४	२	१	२	द्र.२	२	१	१	२
मि.	सं.	अ.	अ.		म.	पंचे.	त्रस.	औ.मि.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
					ति.		कर्म.	कुश्रु.			अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
												मा.३					
												अशु.					

नं. २१२

असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	५	७	४	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र.२	२	१	१	२
मि.	असं.	अ.			ति.	पंचे.	त्रस.	औ.मि.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	अ.						कर्म.	कुश्रु.			अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
												मा.३					
												अशु.					

कायाणुवादेण ओघालावे भण्णमाणे^१ अत्थि चोद्दस गुणट्टाणाणि, दो वा तिण्णि वा, चत्तारि वा छव्वा, छव्वा णव वा, अट्ट वा बारह वा, दस वा पण्णारह वा, बारस वा अट्टारह वा, चोद्दस वा एकव्वीस वा, सोलस वा चउवीस वा, अट्टारह वा सत्तावीस वा, वीस वा तीस वा, बावीस वा तेत्तीस वा, चउवीस^२ वा छत्तीस वा, छव्वीस वा एगुणचालीस वा, अट्टावीस वा बायालीस^३ वा, तीस वा पंचेतालीस वा, बत्तीस वा अट्टतालीस वा, चउत्तीस वा एकपंचास वा, छत्तीस वा चउपंचास वा, अट्टत्तीस वा सत्तपंचास वा जीवसमासा । दो जीवसमासेत्ति भणिदे पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि सव्वे जीवा दुविहा भवंति, अदो दो जीवसमासा वुच्चंति । तिण्णि जीवसमासेत्ति वुत्ते णिव्वत्तिपज्जत्ता णिव्वत्ति-अपज्जत्ता लद्धिअपज्जत्ता इदि तिण्णि जीवसमासा हवंति । चत्तारि वा इदि वुत्ते तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, थावरकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चत्तारि जीवसमासा । छव्वा इदि वुत्ते दो णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा दो णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दो लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं छ जीवसमासा । अधवा थावर-

कायमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान होते हैं । दो अथवा तीन, चार अथवा छह, छह अथवा नौ, आठ अथवा बारह, दश अथवा पन्द्रह, बारह अथवा अठारह, चौदह अथवा इक्कीस, सोलह अथवा चौवीस, अठारह अथवा सत्तावीस, बीस अथवा तीस, बावीस अथवा तेत्तीस, चौवीस अथवा छत्तीस, छव्वीस अथवा उनचालीस, अट्टावीस अथवा बायालीस, तीस अथवा पैतालीस, बत्तीस अथवा अट्टतालीस, चौत्तीस अथवा एकावन, छत्तीस अथवा चौपन, अट्टतीस अथवा सत्तावन जीवसमास होते हैं । आगे इन्हींका स्पष्टीकरण करते हैं—

दो जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे सभी जीव दो प्रकारके होते हैं; अतएव दो जीवसमास कहे जाते हैं । तीन जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर निर्वृत्तिपर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्धपर्याप्तक इसप्रकार तीन जीवसमास होते हैं । चार जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार जीवसमास कहे जाते हैं । छह जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर त्रस और स्थावरके दो निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दो निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दो लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं । अथवा, स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके

१ प्रतिपु 'ओघालावे भण्णमाणे' इति पाठो नास्ति । २ प्रतिपु 'अट्टावीस वा' इति पाठः ।

३ प्रतिपु 'चौवीस वा तेत्तीस वा' इति पाठव्युत्क्रमः । अत उपरि प्रतिपु 'चउत्तीस वा' इति पाठोऽधिकः ।

४ प्रतिपु 'एतालीस' इति पाठः ।

काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगल्लिंदिया विगल्लिंदिया, सगल्लिं, दिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, विगल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि छ जीव-समासा । तिण्णि णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा तिण्णि णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा तिण्णि लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं णव जीवसमासा हवंति । थावरकाइया दुविहा बादरा सुहुमा, बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगल्लिंदिया वियल्लिंदिया त्ति, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, विगल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं अट्ट जीवसमासा । चत्तारि णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा चत्तारि णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा चत्तारि लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं बारस जीव-समासा हवंति । थावरकाइया दुविहा बादरा सुहुमा, बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पंचिंदिया अपंचिंदिया, पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो, सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अप-ज्जत्ता, असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अपंचिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं दस जीवसमासा हवंति । पंच णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा पंच णिव्वत्तिअपज्जत्त-

होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं । एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रियके तीन निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, तीन निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और तीन लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार नौ जीवसमास होते हैं । स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्म जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार आठ जीवसमास होते हैं । बादर स्थावरकायिक, सूक्ष्म स्थावरकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके चार निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, चार निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और चार लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार बारह जीवसमास होते हैं । स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्मकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पंचेन्द्रिय और अपंचेन्द्रिय (विकलेन्द्रिय) । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संश्लिक और असंश्लिक । संश्लिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । असंश्लिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अपंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार दस जीवसमास होते हैं । बादर स्थावरकायिक, सूक्ष्म स्थावरकायिक, संश्लिक

जीवसमासा पंच लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं पण्णारस जीवसमासा हवंति । पुढवि-
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउ
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फइ-
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं वारस
जीवसमासा हवंति । छ णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा छ णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा छ
लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवमट्टारस जीवसमासा हवंति । एइंदिया दुविहा बादरा
सुहुमा, बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वेइंदिया
दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, चउरिंदिया दुविहा
पज्जत्ता अपज्जत्ता, पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो, सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता
अपज्जत्ता, असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता त्ति एवं चोइस जीवसमासा हवंति ।
सत्त णिव्वत्तिपज्जत्ता सत्त णिव्वत्तिअपज्जत्ता सत्त लद्धिअपज्जत्ता एदे सव्वे धेत्तूण

पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, पांच
निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पांच लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार पन्द्रह जीवसमास
होते हैं । पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अकायिक
जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते
हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और
अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । प्रस-
कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार बारह जीवसमास
होते हैं । छहों कायिक जीवोंकी अपेक्षा छ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, छ निर्वृत्यपर्याप्तक
जीवसमास और छह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार अठारह जीवसमास होते हैं ।
एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर दो प्रकारके होते हैं, पर्या-
प्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्म दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । द्वीन्द्रिय
जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं,
पर्याप्तक और अपर्याप्तक । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्या-
प्तक । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संज्ञिक और असंज्ञिक । संज्ञिक जीव दो प्रकारके
होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । असंज्ञिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और
अपर्याप्तक । इसप्रकार चौदह जीवसमास होते हैं । बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय,
द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय इन सात प्रकारके
जीवोंकी अपेक्षा सात निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सात निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और
सात लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलकर इक्कीस जीवसमास होते हैं । पृथिवी-

एकवीस जीवसमासा हवंति । पुढाविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, साधारणसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सयलिंदिया वियलिंदिया चेदि, सयलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवं सोलस जीवसमासा हवंति । णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा अट्ट, णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा वि अट्ट, अट्टण्हमपज्जत्तजीवसमासाणं मज्जे अट्ट लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा हवंति एवं चउवीस जीवसमासा । पुढाविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फदिकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोदपडिड्डिदा बादरणिगोदअपडिड्डिदा चेदि, बादरणिगोदपडिड्डिदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता,

कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अण्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर । प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारणशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार सोलह जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, अण्कायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा आठ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, आठ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और आठ अपर्याप्तक जीवसमासोंमें आठ लब्धपर्याप्तक जीवसमास होते हैं । इसप्रकार सब मिलाकर चौबीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । जलकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अग्निकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर । प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोदप्रतिष्ठित और बादरनिगोदअप्रतिष्ठित । बादरनिगोदप्रतिष्ठित जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक ।

बादरणिगोदपडिड्ढिद्वदिरित्त-पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, साधारण-सरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा वियल्लिंदिया सयल्लिंदिया चेदि, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, एवमद्वारस जीवसमासा हवंति । णव णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा णव णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा णव लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा' एदे सव्वे वि घेत्तूण सत्तावीस जीवसमासा हवंति । पुव्विल्ल-अद्वारस-जीवसमासाभंतरे साधारण-वणप्फइपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अवणिय साधारणवणप्फइकाइया दुविहा णिच्चणिगोदा चदुगादिणिगोदा चेदि । णिच्चणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, चदुगादिणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि जीवसमासे पक्खित्ते वीस जीवसमासा हवंति । दस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा दस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एदे तीस जीवसमासा हवंति । पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणप्फकाइया एदे सव्वे दुविहा

बादरनिगोदप्रतिष्ठितसे भिन्न अर्थात् बादरनिगोदअप्रतिष्ठितप्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारणशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार ये अठारह जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय इन नौ प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा नौ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, नौ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और नौ लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर सत्तावीस जीवसमास होते हैं । पूर्वमें कहे गये अठारह जीवसमासोंमेंसे साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर साधारणवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद । नित्यनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । चतुर्गतिनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । ये चार जीवसमास मिलाने पर बीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, नित्यनिगोद, चतुर्गतिनिगोद, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय इन दश प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा दश निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दश निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दश लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक ये पांचों कायके जीव दो दो प्रकारके होते हैं, बादर

१ प्रतिपु ' णवलाद्धि...समासा ' इति पाठो नास्ति ।

बादरा सुहुमा त्ति, सव्वे बादरा सव्वे च सुहुमा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चउव्विहा हवंति, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवमेदे बावीस जीवसमासा । णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह, णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह एवं तेत्तीस जीवसमासा हवंति । बावीस-जीवसमासा-णमम्भतरे तसपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अवणिय तसकाइया दुविहा हवंति समणा अमणा चेदि, समणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अमणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एदे चत्तारि पक्खित्ते चउवीस जीवसमासा हवंति । बारस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा वारस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा वारस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे छत्तीस जीवसमासा हवंति । पुव्विल्ल-चउवीसण्हं मज्झे अमणाणं पज्जत्त-अपज्जत्त-दो-जीवसमासे अवणिय अमणा दुविहा सयल्लिंदिया वियल्लिंदिया चेदि, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि पक्खित्ते छव्वीस जीवसमासा हवंति । तेरस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा तेरस णिव्वत्तिअपज्जत्तजीव-

और सूक्ष्म । ये सभी बादर और सभी सूक्ष्म जीव पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं । इसप्रकार प्रत्येक एक एक कायके जीव चार चार प्रकारके हो जाते हैं । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार ये सब मिलाकर बाबीस जीवसमास हो जाते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद होते हैं और त्रसकायिक इन ग्यारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा ग्यारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, ग्यारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और ग्यारह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार सब मिलाकर तेत्तीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त बावीस जीवसमासोंमेंसे त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकालकर त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, समनस्क (संज्ञी) और अमनस्क (असंज्ञी) । समनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक, अपर्याप्तक । अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । ये चार जीवसमास मिलाने पर चौबीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद और समनस्क त्रसकायिक तथा अमनस्क त्रसकायिक इन बारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा बारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, बारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और बारह लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त चौबीस जीवसमासोंमेंसे अमनस्क जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इन चार जीवसमासोंको मिला देने पर छव्वीस जीवसमास होते हैं । पांचो स्थावरकायिक जीवोंके बादर और

समासा तेरस लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे सव्वे धेत्तूण एगूणचालीस जीव-
समासा हवंति । छव्वीसण्हं मज्जे वणप्फइकाइयाणं चत्तारि जीवसमासे अवणिय
वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अप-
ज्जत्ता, साधारणसरीरा दुविहा बादरा सुहुमा, ते दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे
छ जीवसमासे पक्खित्ते अट्ठावीस जीवसमासा हवंति । चोइस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा
चोइस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा चोइस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे बायालीस
जीवसमासा । अट्ठावीसण्हं मज्जे पत्तेयसरीर-पज्जत्तापज्जत्ता दो जीवसमासे अवणिय
पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोयजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, तेवि सव्वे दुविहा
पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि एदे चत्तारि भंगे पक्खित्ते तीस जीवसमासा हवंति । णिव्वत्ति-
पज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, लद्धि-अपज्जत्तजीव-

सूक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा विकलेन्द्रिय, असमनस्क पंचेन्द्रिय और समनस्क पंचेन्द्रिय
इन तेरह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा तेरह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, तेरह निर्वृत्यपर्याप्तक
जीवसमास और तेरह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर उनतालीस
जीवसमास होते हैं । छव्वीस जीवसमासोंमेंसे वनस्पतिकायिक जीवोंके चार जीवसमास
निकाल कर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर ।
प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारण-
शरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं बादर और सूक्ष्म । ये दोनों प्रकारके जीव भी
दो दो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । ये छह जीवसमास मिला देने पर अट्ठावीस
जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारण-
वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, विक-
लेन्द्रिय, समनस्कपंचेन्द्रिय और असमनस्कपंचेन्द्रिय इन चौदहों प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा
चौदह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, चौदह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और चौदह लब्ध्य-
पर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर ब्यालीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त
अट्ठावीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो
जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोद्योनिक और
बादरनिगोदअयोनिक । ये भी सब दो दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इस
प्रकार ये चार भंग मिला देने पर तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक,
अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीर इनके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा
सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति और अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति, विकलेन्द्रिय, असमनस्कपंचेन्द्रिय
और समनस्कपंचेन्द्रिय इसप्रकार इन पन्द्रह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा पन्द्रह निर्वृत्तिपर्याप्तक
जीवसमास, पन्द्रह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पन्द्रह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास

समासा पण्णारस एवमेदे सव्वे वि पंचेदालीस जीवसमासा हवंति । पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-साधारणसरीरवणप्फइकाइया पत्तेयं पत्तेयं बादर-सुहुमपज्जत्तापज्जत्तभेदेण चउच्चिहा हवंति, पत्तेयसरीरा वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-सण्णिपंचिंदिया पत्तेयं पत्तेयं पज्जत्ता अपज्जत्ता दुविहा हवंति एदे सव्वे मिलिदे वत्तीस जीवसमासा हवंति । सोलस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा सोलस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा सोलस लद्धि-अपज्जत्त-जीवसमासा च मेलिदे अड्डतालीस जीवसमासा हवंति । वत्तीस-जीवसमासेसु पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे अवणिय पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोदजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, ते च पत्तेयं पज्जत्तापज्जत्तभेदेण दुविहा एदे चचारि पक्खिखत्ते चोत्तीस जीवसमासा हवंति । सत्तारस णिव्वत्तिपज्जत्ता सत्तारस णिव्वत्ति-अपज्जत्ता सत्तारस लद्धि-अपज्जत्ता एदे सव्वे एक्कावण जीवसमासा हवंति । पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-णिच्चणिगोद-चउग्गदिणिगोदा बादरा

इसप्रकार ये सब मिलाकर पैंतालीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीरवनस्पतिकायिक ये पांच प्रकारके जीव पृथक् पृथक् बादर, सूक्ष्म और उनमें भी पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार चार प्रकारके होते हैं । प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय ये छहों प्रत्येक प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । इसप्रकार ये सब मिलाने पर बत्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेदरूप तथा प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सोलह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सोलह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सोलह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिला देने पर अड्डतालीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त बत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोदयोनिक (प्रतिष्ठित) और बादरनिगोद अप्रतिष्ठित । ये दोनों पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । ये चार जीवसमास मिला देने पर चौतीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, और साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येक-वनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठितप्रत्येक-वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञिकपंचेन्द्रिय और संज्ञिकपंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सत्रह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सत्रह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सत्रह लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर इकावन जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, निरयनिगोद-

सुहुमा च पज्जत्तापज्जत्तभेएण दुविहा हवंति, पत्तेयवणप्फदि-वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असाण्णि-सण्णिपंचिंदिय-पज्जत्तापज्जत्तभेएण एदे वि पत्तेयं दुविहा हवंति एदे सच्चे वि छत्तीस जीवसमासा हवंति । अट्टारह णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चैव णिव्वत्तिअपज्जत्त-जीवसमासा वि अट्टारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि अट्टारह सच्चेदे एगट्ठे कदे चउपण्ण जीवसमासा । पुणो पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे छत्तीस-जीवसमासेसु अवाणिय पत्तेय-सरीरबादरणिगोद-पदिट्ठिदापदिट्ठिद'-पज्जत्तापज्जत्त-सण्णिद-चदुसु जीवसमासेसु पक्खि-त्तेसु अट्ठतीस जीवसमासा हवंति । एत्थ एगुणवीस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चैव णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा हवंति, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि तेत्तिया

साधारणवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोदसाधारणवनस्पतिकायिक ये छहों प्रकारके जीव बादर और सूक्ष्मके भेदसे बारह प्रकारके होते हैं । और वे प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीव ये सभी पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । इसप्रकार उक्त चौबीस और निम्न बारह ये सभी जीवसमास मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद साधारणवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्म भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अठारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, उतने ही अठारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और अठारह लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब इकट्ठे करने पर चौपन जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त छत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरसंबन्धी बादरनिगोद प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित इन दोनोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक इन चार जीवसमासोंके मिलाने पर अट्ठतीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद साधारणशरीरवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणशरीरवनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्म भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंसंबन्धी उन्नीस निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास होते हैं, उन्नीस ही निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं और उन्नीस ही लब्धपर्याप्तक जीवसमास होते हैं । ये सब मिलाकर सत्तावन जीवसमास होते

१ प्रतिपु ' पदिट्ठिद-पज्जत्ता—' इति पाठः ।

चेव सव्वेदे सत्तावण्ण जीवसमासा हवंति । एदे जीवसमासमेयां सव्व-ओघेसु वत्तव्वा ।

छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगव-

हैं । ये उपर्युक्त जीवसमासोंके भेद समस्त ओघालापोंमें कहना चाहिए ।

जीवसमास आलापके आगे संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालमें और अपर्याप्तकालमें छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलत्रय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः चार पर्याप्तियां; चार अपर्याप्तियां; संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः आठ प्राण, छह प्राण; त्रिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः सात प्राण, पांच प्राण; द्वीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः छह प्राण, चार प्राण; एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः चार प्राण, तीन प्राण; सयोगकेवली जिनोंके चार प्राण, तथा समुदातकी अपर्याप्त अवस्थामें दो प्राण और अयोगकेवली जिनोंके एक आयु प्राण होता है । चारों संज्ञाप तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगत वेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याणं तथा अलेश्याणस्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है,

१ प्रतिपु ' वीए ' इति पाठः ।

२ सामण्णजाव तसथावरेसु इगिगिगलसयलचरिमदुगे । इदिधकाये धरिमस्स य दुत्तिचदुपणगभेदजुदे ॥ पणजुगले तससिहिये तसस्स दुत्तिचदुरपणगभेदजुदे । छदुगपत्तेयमिह य तसस्स तियचदुरपणगभेदजुदे ॥ सगजुगळमिह तसस्स य पणभंगजुदेसु हंति उणवीसा । एयादुणवीसोत्ति य इगिवित्तिगुणिदे ह्वे ठाणा ॥ सामण्णेण तिपंती पढमा भिदिया अपुण्णेगे इदरे । पज्जते लद्धिअपज्जत्तेऽपढमा इवे पंती ॥ गो. जी. ७५-७८.

दुवजुत्ता वा^{२३} ।

तेसि चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणद्वाणाणि, एक्को वा दो वा तिण्णि वा चत्तारि वा पंच वा छव्वा सत्त वा अट्ठ वा णव वा दस वा एक्कारह वा बारह वा तेरह वा चउद्दस वा पण्णारह वा सोलस वा सत्तारस वा अट्ठारह वा एगुणवीस वा जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एहंदिज्जादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छकाया, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं षट्-कायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी एक, अथवा दो, अथवा तीन, अथवा चार, अथवा पांच, अथवा छह, अथवा सात, अथवा आठ, अथवा नौ, अथवा दश, अथवा ग्यारह, अथवा बारह, अथवा तेरह, अथवा चौदह, अथवा पन्द्रह, अथवा सोलह, अथवा सत्रह, अथवा अठारह, अथवा उन्नीस जीवसमास होते हैं, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां और चार पर्याप्तियां; पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग और अयोग-स्थान भी है; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और

नं. २१३

षट्कायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	५७	प.अ.	१०,७ ९,७	४	४	५	६	१५	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	२	२
			६,६	८,६	७,५									मा. ६	म.	सं.	आहा.	साका.	
			५,५	६,४	४,३			अयोग.	अपर.	अकषा.				अले.	अ.	असं.	अना.	अना.	
			४,४	४,२	१											अनु.		यु. उ.	

सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{२५} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणद्वानाणि, एगो वा दो वा, दोण्णिं
वा चत्तारि वा, तिण्णि वा छव्वा, चत्तारि वा अट्ट वा, पंच वा दस वा, छव्वा बारस
वा, सत्त वा चोद्दस वा, अट्ट वा सोलस वा, णव वा अट्टारह वा, दस वा वीस वा,
एक्कारस वा बावीस वा, बारस वा चउवीस वा, तेरस वा छव्वीस वा, चोद्दस वा
अट्टावीस वा, पण्णारस वा तीस वा, सोलस वा बत्तीस वा, सत्तारस वा चोत्तीस वा,
अट्टारस वा छत्तीस वा, एगुणवीस वा अट्टत्तीस वा जीवसमासा; छ अपज्जत्तीओ पंच

असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी,
अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त
भी होते हैं ।

विशेषार्थ—उपर सत्तावन जीवसमास बतला आये हैं उनमें उन्नीस जीवसमास
पर्याप्तसंबन्धी हैं और अट्टत्तीस अपर्याप्तसंबन्धी । उनमेंसे यहां पर्याप्तसंबन्धी उन्नीसका
ही ग्रहण करना चाहिये । जिनका प्रकृतमें 'एक अथवा दो' इत्यादि रूपसे उल्लेख किया
गया है ।

उन्हीं षट्-कायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि,
सासावनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान,
पूर्वमें कहे गये अपर्याप्तक जीवोंसंबन्धी एक अथवा दो, दो अथवा चार, तीन अथवा छह,
चार अथवा आठ, पांच अथवा दश, छह अथवा बारह, सात अथवा चौदह, आठ अथवा
सोलह, नौ अथवा अठारह, दश अथवा बीस, ग्यारह अथवा बाईस, बारह अथवा चौबीस,
तेरह अथवा छब्बीस, चौदह अथवा अट्टाईस, पन्द्रह अथवा तीस, सोलह अथवा बत्तीस,
सत्रह अथवा चौत्तीस, अठारह अथवा छत्तीस, उन्नीस अथवा अट्टत्तीस जीवसमास होते
हैं । छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह

१ प्रतिपु ' तिण्णि ' इति पाठः ।

नं. २१४

षट्कायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	१९	६	१०	४	४	५	६	११	३	४	८	७	४	द्र. ६	१	६	२	२	२
		५	९	८				म. ४	अपना	अज्ञा.				मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
		४	७	५				व. ४						अले.	अ.		असं.	अना.	अना.
		४	४	१				औ. १									अनु.		यु. उ.
								वै. १											
								आ. १											

अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ पाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभया वा^{२५} ।

प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिथ्र, वैक्रियिकमिथ्र, आहारकमिथ्र और कार्मण ये चार योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावधि और मनः-पर्ययज्ञानके बिना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे छहों लेख्याएं; भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संबिक, असंबिक तथा अनुभयस्थान भी है; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और उभय उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ — ऊपर जो सत्तावन जीवसमास कहे हैं उनमें अपर्याप्त सामान्यके उच्चीस हैं जिनका यहां पर 'एक अथवा दो, दो अथवा चार, इत्यादि संख्याओंके कथनमें आई हुई पूर्ववर्ती संख्याओंका एक, दो, तीन इत्यादि संख्याओंसे निर्देश किया है । अपर्याप्तके निर्वृत्य-पर्याप्त और लब्धपर्याप्त ऐसे दो भेद कर लेने पर उनका निर्देश दो, चार, छह इत्यादि संख्याओंके द्वारा किया गया है । यहां पर इतना और समझ लेना चाहिये कि पूर्व पूर्ववर्ती संख्याएं जीवसमासोंको सामान्यरूपसे और उत्तर उत्तरवर्ती संख्याएं उनको विशेषरूपसे बतलाती हैं । इसका यह अभिप्राय हुआ कि किसी भी संख्याके द्वारा संपूर्ण अपर्याप्त जीव संग्रहीत कर लिये गये हैं । भिन्न भिन्न संख्याएं केवल उनके भेद-प्रभेदोंको सूचित करनेके लिये ही दी गईं

नं. २१५

षट्कायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	३८	६अ.	७	७	४	५	६	४	३	४	६	४	४	द्र. २	२	५	२	२
मि.		५	६	५			औ मि.	अपा.	अकषा.	विमं	असं.		का.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	षाका.
सा.		४	५	४			वे.मि.			मनः	सामा.		शु.	अ.	विना.	असं.	अना.	अना.
अ.			४	४			आ.मि.			विना.	छेदो.		भा. ६			अनु.		यु. उ.
प्र.			३				कार्म.				यथा.							
स.			२															

मिच्छाइडिप्पहुडि जाव अकाया त्ति मूलोघ-भंगो । णवरि मिच्छाइडिस्स तिचि-
हस्स वि कायाणुवाद-मूलोघब्भुत्तजीवसमासा वत्तच्चा । णत्थि अणत्थ विसेसो ।

^{२१६}पुढविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि
पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,
तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो
अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

हैं। पर्याप्त जीवसमासके उन्नीस विकल्पोंमें भी यही क्रम जान लेना चाहिये। गोमटसार
जीवकाण्डमें जीवसमासोंको बतलाते हुए तीन पंक्तियां कर दी हैं। पहली पंक्तिमें एक, दो,
आदि उन्नीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन सामान्यकी अपेक्षा किया है। दूसरी
पंक्तिमें दो, चार आदि अड़तीसतक जीवसमास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त और अपर्याप्त
इन दो भेदोंकी अपेक्षा किया है। तथा तीसरी पंक्तिमें तीन, छह आदि सत्तावनतक जीव-
समास लिये हैं और यह कथन पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त इन तीन भेदोंकी
अपेक्षा किया है।

सामान्य षट्कायिक जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अकायिक अर्थात् सिद्ध
जीवों तकके आलाप मूल ओघालापके समान ही जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि
सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इन तीनों ही प्रकारके मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहते समय
कायानुवादके मूलोघालापमें कहे गये सभी जीवसमास कहना चाहिए। इसके अतिरिक्त
अन्यत्र अन्य कोई विशेषता नहीं है।

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,
बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त और
सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां;
चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिककाय-
योग, औदारिकमिभकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय,
कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण

नं. २१६

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	बा.प.	प.	प.		ति.	पुं.	पृ.	औ.२	पुं.		कुम.	असं.	अच.	मा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	,, अ.	४	३					कर्म.			कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.
	सू.प.	अ.	अ.																
	,, अ.																		

लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा चत्तारि वि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइदिय-जादी, पुढविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{२१७} ।

नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंशिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उम्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, बाह्यपृथिवीकायिक-पर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये दो जीवसमास, अथवा शुद्ध बाह्यपृथिवीकायिक-पर्याप्त शुद्ध सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त, खर बाह्यपृथिवीकायिक-पर्याप्त और खर सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संश्रमं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुम्भति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंशिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विशेषार्थ — ऊपर पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप कहते समय दो अथवा चार जीवसमास बतलाये हैं । उनमें दो जीवसमास बतलानेका कारण तो स्पष्ट ही है । परंतु विकल्पसे जो चार जीवसमास बतलाये गये हैं उसके दो कारण प्रतीत होते हैं एक तो यह कि गोम्मटसारकी जीवप्रबोधिनी टीकामें जीवसमासोंका विशेष वर्णन करते समय पृथिवीके शुद्धपृथिवी और खरपृथिवी ऐसे दो भेद किये हैं । ये दो भेद बाह्य और सूक्ष्मके भेदसे दो दो प्रकारके हो जाते हैं । इसप्रकार पर्याप्त अवस्था विशिष्ट इन चारों भेदोंके ग्रहण करने पर चार

मं. २१७

पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	साक्षि.	आ.	उ.
१	२	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	प्र. इ. २	१	१	१	१	२
मि.	बा. प.				ति.	एकं.	पृ.	औ. शि.	नपु.		कुम.	असं.	अच.	भा. २	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	सू. प.										कुशु.			अयु.	अ.			आहा.	अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

जीवसमास हो जाते हैं। दूसरा कारण ऐसा प्रतीत होता है कि वीरसेनस्वामीने स्वयं बादर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके अतिरिक्त बादर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इसप्रकार तीन प्रकारके आलाप और बतलाये हैं। इनमेंसे प्रथम सामान्यालापमें पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन तीनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव हो जाता है और निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्यालापमें पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक इन दो प्रकारके जीवोंके आलापोंका ही अन्तर्भाव होता है। दूसरे पर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम और द्वितीय दोनों पर्याप्तालापोंमें वास्तवमें कोई विशेषता नहीं है, क्योंकि, निर्वृत्तिसे पर्याप्तक जीव ही दोनों जगह पर्याप्तरूपसे ग्रहण किये गये हैं। अपर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम अपर्याप्तालापमें निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन दोनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव होता है। परंतु निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके अपर्याप्तालापमें केवल एक निर्वृत्यपर्याप्तक कालसंबन्धी आलापोंका ही ग्रहण होता है। इनमेंसे निर्वृत्तिपर्याप्तककी अपर्याप्तावस्थामें पर्याप्तनामकर्मका उदय तो रहता है परंतु उसकी पर्याप्तियां पूर्ण न होनेके कारण वह अपर्याप्त कहा जाता है। इसप्रकार निर्वृत्यपर्याप्तक पर्याप्तनामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्याप्त भी है। प्रतीत होता है कि इसी विवक्षाको ध्यानमें रखकर वीरसेनस्वामीने यहां पर चार आलाप कहे हैं। यद्यपि प्रथम कल्पना गोममट्टसारकी जीवप्रबोधिनी टीकाके आधारसे दी गई है परंतु उसकी यहां पर मुख्यता प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि, आगे जलकायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान बतलाये हैं। परंतु जल आदिके उसी टीकामें शुद्ध आदि भेद नहीं किये हैं। अथवा इसी बातको ध्यानमें रखकर उक्त टीकामें केवल पृथिवीके चार भेद किये गये हैं। इसप्रकार पृथिवीकायिक जीवोंके दो या चार जीवसमास जान लेना चाहिये।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चारों अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक,

असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२८} ।

वादरपुढविकाइयाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादरपुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२९} ।

आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, वादरपृथिवीकायिकपर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, वादर-पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे उहाँ लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २१८

पृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	वा.	अ.			ति.	एके.	पृ.	औ.	मि.	पुं.	कुम.	असं.	अच.	का.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	सू.	अ.						कर्म.			कुश्रु.			शु.	अ.			अना.	अना.
														भा. ३					
														अशु.					

नं. २१९

वादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	वा.	प.	प.	३	ति.	एके.	पृ.	औ.	२	पुं.	कुम.	असं.	अव.	भा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	अ.	अ.						कर्म.	१		कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, बादरपुढविकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खु-दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२०} ।

२२० तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपञ्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरपुढवि-

उन्हीं बादरपृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व; असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं बादरपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिकमिश्रकाययोग

नं. २२०

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	बा.प.				ति.	एके.	पृ.	औदा.	नपुं.		कुम.	असं.	अच.	भा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			अशु.	अ.				अना.

नं. २२१

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	बा.अ.	अ.			ति.	कृष्.	पृ.	औ.मि.	कर्म.		कुम.	असं.	अच.	का. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			शु. ३	अ.			अना.	अना.
														अशु.					

काओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारु-वज्जुत्ता वा ।

एवं बादरपुढविणिव्वत्तिपज्जत्तस्स तिण्णि आलावा वत्तव्वा । बादरपुढविलद्धि-अपज्जत्तस्स बादरेइंदिय-अपज्जत्त-भंगो । सुहुमपुढवीए सुहुमेइंदिय-भंगो । णवरि सुहुम-पुढविकाइओ त्ति वत्तव्वं ।

आउकाइयाणं पुढवि-भंगो । णवरि सामण्णालावे भण्णमाणे आउकाइओ, दब्बेण काउ-सुक्क-फलिहवण्ण-लेस्साओ वत्तव्वाओ । तेसिं चेव पज्जत्तकाले दब्बेण सुहुमआऊणं काउलेस्सा वा बादरआऊणं फलिहवण्णलेस्सा । कुदो ? घणोदधि-घणवलयागास-पदिद-पाणीयाणं धवलवण्ण-दंसणादो । धवल-किसण-णील-पीयल-रत्ताअंब-पाणीय-दंस-णादो ण धवलवण्णमेव पाणीयमिदि के वि भणंति, तण्ण घडदे । कुदो ? आयारभावे

और कर्मणकाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, असांखिक, आहारक, अनाहारक; साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिये । बादर पृथिवीकायिक लक्ष्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । सूक्ष्म पृथि-वीकायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेषता यह है कि 'सूक्ष्म एकेन्द्रिय' के स्थानपर 'सूक्ष्म पृथिवीकायिक' ऐसा आलाप कहना चाहिए ।

अण्कायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेष बात यह है कि सामान्य आलाप कहते समय 'पृथिवीकायिक' के स्थानपर 'अण्कायिक' और लेश्या आलाप कहते समय द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेश्याएं और पर्याप्तकालमें स्फटिकवर्णवाली अर्थात् शुक्ल लेश्या कहना चाहिए । उन्हीं सूक्ष्म अण्कायिक जीवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत लेश्या कहना चाहिए । तथा बादरकायिक जीवोंके स्फटिकवर्णवाली शुक्ल लेश्या कहना चाहिए, क्योंकि, घनोदधिघात और घनवलयघात द्वारा आकाशसे गिरे हुए पानीका धवलवर्ण देखा जाता है । यहां पर कितने ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि, धवल, कृष्ण, नील, पीत, रक्त और आताम्र वर्णका पानी देखा जानेसे पानी धवलवर्ण ही होता है, ऐसा कहना नहीं बनता है ? परंतु उनका यह

मट्टियाए संजोगेण जलस्स बहुवण्ण-ववहार-दंसणादो । आऊणं सहाववण्णो पुण धवलो चेव ।

एवं चेव बादरआउकायस्स वि तिण्णि आलावा वत्तव्वा । णवरि पज्जत्तकाले दव्वेण फलिहलेस्सा एक्का चेव । णत्थि अण्णत्थ विसेसो । बादरआउकाइयाणिव्वत्तिपज्जत्ताणं पि तिण्णि आलावा एवं चेव वत्तव्वा । बादरआउलद्धिअपज्जत्ताणं बादरआउणिव्वत्ति-अपज्जत्त-भंगो । सुहुमआउकाइयाणं सुहुमपुढविकाइय-भंगो । सुहुमआउकाइयाणिव्वत्ति-पज्जत्तापज्जत्ताणं सुहुमआउकाइयलद्धिअपज्जत्ताणं च सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-भंगो ।

तेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं बादरतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्ता-पज्जत्ताणं च पज्जत्त-णामकम्मोदयतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं बादर-तेउलद्धिअपज्जत्ताणं च, आउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं बादरआउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं पज्जत्तणामकम्मोदयआउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं

कहना युक्ति-संगत नहीं है: क्योंकि, आधारके होने पर मट्टीके संयोगसे जल अनेक वर्णवाला हो जाता है ऐसा व्यवहार देखा जाता है। किन्तु जलका स्वाभाविक वर्ण धवल ही है।

इसप्रकार बादर अप्कायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए। विशेष बात यह है कि उनके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे एक स्फटिक वर्णवाली शुक्ल लेइया ही होती है, इसके सिवाय अन्य पृथिवीकायिकके आलापोंसे अप्कायिकके अन्य आलापोंमें और कोई विशेषता नहीं है। इसीप्रकार बादर अप्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके उक्त तीन आलाप कहना चाहिए। बादर अप्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए। सूक्ष्म अप्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। सूक्ष्म अप्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक, सूक्ष्म अप्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तक और सूक्ष्म अप्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके समान जानना चाहिए।

तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, बादरतैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं बादरतैजस्कायिक पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-वाले तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्त अपर्याप्त भेदोंके तथा बादर तैजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, बादर अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-वाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा बादर अप्कायिक

१ प्रतिष्ठा 'पज्जत्तापज्जत्तणामकम्मोदयाणं' इति पाठः ।

बादरआउकाइयलद्धिअपज्जत्ताणं च जहाकमेण भंगो । णवरि तेउकाइयाणं दब्बेण काउ-सुकक-त्तवणिज्जलेस्साओ । तेसिं चैव पज्जत्ताणं दब्बेण काउ-त्तवणिज्जलेस्साओ । एवं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं दोण्हं पि वत्तव्वं । बादरकाइयाणं तेउ-भंगो । एवं चैव तेसिं-पज्जत्ताणं । णवरि दब्बेण तवणिज्जलेस्सा । एवं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं पि दब्बलेस्सा वत्तव्वा ।

सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुम-भंगो । वाउकाइयाणं तेउ-भंगो । णवरि दब्बेण काउ-सुक-गोमुत्त-मुग्गवण्णलेस्साओ । तेसिं पज्जत्ताणं काउ-गोमुत्त-

लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान यथाक्रमसे जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—तैजस्कायिक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं, इस बातके ध्वनित करनेके लिये मूलमें 'इव' या 'सदश' ऐसा कोई पठ नहीं दिया है । परंतु पहले अप्कायिक जीवोंके संपूर्ण भेद-प्रभेदोंके आलाप कह आये हैं और यहां तैजस्कायिक जीवोंके आल.पोंके कथन करनेका प्रकरण है । इसलिये प्रकृतमें तैजस्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलापोंके समान बतलाये हैं यही समझना चाहिए । मूलमें आये हुए 'जहाकमेण' पदसे भी इसी कथनकी पुष्टि होती है ।

विशेष बात यह है कि तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यसे कापोत, शुक्र और तपनीय लेख्या होती है । तथा उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्मजीवोंके द्रव्यसे कापोतलेख्या और पर्याप्तक बादर-जीवोंके तपनीय लेख्या होती है । इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सामान्य और पर्याप्त इन दोनोंही प्रकारके तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेख्या कहना चाहिए । बादर तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सामान्य तैजस्कायिकके आलापोंके समान जानना चाहिए । इसीप्रकार बादर तैजस्कायिक पर्याप्त जीवोंके आलाप भी होते हैं । विशेषता यह है कि इनके द्रव्यसे तपनीय अर्थात् शुक्रलेख्या होती है । इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले तैजस्कायिक जीवोंके भी द्रव्यलेख्या कहना चाहिए ।

सूक्ष्म तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म अप्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । वायुकायिक जीवोंके आलाप तैजस्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि द्रव्यसे कापोत, शुक्र, गोमूत्र और मूंगके घर्णवलो लेख्याएं होती हैं । उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्म जीवोंके कापोतलेख्या और बादर पर्याप्त जीवोंके गोमूत्र

१ बादरआउत्तु सुक्का तेऊ य X X । गो. जी. ४९७.

२ तत्र घनोदधयो सुद्रसन्निभाः, घनव्राता गोमूत्रवर्णाः, अव्यक्तवर्णास्तनुवाताः । त. रा. वा. ३. १. ७ X X वायुकायाणं । गोमुत्तमुग्गवण्णा कमसो अच्चसत्तणो य । गो. जी. ४९७. गोमुत्तमुग्गवण्णावण्णाणं घर्णवुत्तण-तणूण इवे । वादाणं बलयतयं क्वक्खस्स तयं व लोगस्स ॥ वि. सा. १२३.

मुग्गवण्णलेस्साओ । एवं बादरवाऊणं तेसिं पञ्जत्ताणं च दब्बलेस्साओ हवंति । जदि वि मुग्गा अणेयवण्णा, तो वि रूढिवसा सामलवण्णो मुग्गवण्णो ति वेप्पदि । सुहुम-वाऊणं सुहुमतेउ-भंगो ।

वणप्फइकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, वारस जीवसमासा, चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, वणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो

और मूंगके वर्णवाली लेश्याएं होती हैं । इसीप्रकार बादर वायुकायिक सामान्य जीवोंके और उन्हीं बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंके द्रव्य लेश्याएं होती हैं । यद्यपि मूंग अनेक वर्णवाली होती है, तो भी रूढिके वशसे 'श्यामलवर्ण' ही मूंगका वर्ण प्रकृतमें ग्रहण किया गया है । सूक्ष्म वायुकायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म तैजस्क्यायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए ।

वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, और बारह जीवसमास होते हैं, जिनमें सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, सप्रति-ष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, अप्रति-ष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, इसप्रकार प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके चार जीवसमास होते हैं । बादरनित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, बादरनित्य-निगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, बादरचतुर्गतिनिगोद-साधारण-वनस्पतिकायिक-पर्याप्त, बादरचतुर्गतिनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, सूक्ष्म-चतुर्गतिनिगोद-साधारणवनस्पतिकायिक-पर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-साधारण-वनस्पतिकायिक-अपर्याप्त, इसप्रकार साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके आठ जीवसमास होते हैं । चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्रण, तीन प्राण, चारों संज्ञापं तिर्यञ्च-गति, पकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तनि योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान,

नं. ३२२

वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१२	४प.	४	४	२	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	साधा.	४अ.	३		ति.	इं.	का.	औ. २	पुं.		कुम.	असं.	अच.	मा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	८							का. १			कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.
	४																		

अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, छ जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्फदिकाओ, ओरालियकायजोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिंं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, छ जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वणप्फइकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण

असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सामान्य आलापोंमें बताये गये बारह जीवसमासोंमेंसे पर्याप्तकालसंबन्धी छह जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सामान्य आलापोंमें कहे गये बारह जीवसमासोंमेंसे छह अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति

नं. २२३

वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	६	४	४	४	२	१	१	१	१	४	२	१	१	द. ६	२	१	१	१	२
मि.	साधा.				ति.	एके.	वम.	औदा.	पुं		कुम.	असं.	अच.	मा. ३	म. अ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	४										कुश्रु.			अशु.					अना.
	प्रत्ये.																		
	२																		

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४} ।

पत्तेयसरीरवणप्फईणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पत्तेयवणप्फदिकाओ, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचवसुंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचञ्चुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंखिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रत्येकशरीर-घनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, प्रत्येकशरीर-घनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगाते. एकेन्द्रिय-जाति, प्रत्येकघनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कामणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचञ्चु-दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंखिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २२४

घनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	६	४	३	४	१	१	२	१	४	२	१	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	साधा.	अ.			ति.	एक.	वत.	औ. मि.	न.	कुम.	असं.	अच.	का.	शु.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
	४							कामे.		कुश्रु.				मा. ३	अ.			अना.	अना.
	२													अशु.					

नं. २२५

प्रत्येकघनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	प्र. प.	प.	३		ति.	एक.	वन.	औ. २	न.	कुम.	असं.	अच.	मा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.	
	प्र. अ.	४						का. १		कुश्रु.				अशु.	अ.			अना.	अना.
	अ.																		

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पत्तेयसरीर-वणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, पत्तेयसरीरवणप्फइकाओ, दो जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

उन्हीं प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धीआलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशरीर-वनस्पति-काय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक,

नं. २२६

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प	प्रा.	सं	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि	प्र.प.				ति.	एक	द्व.	औदा.	न.		कुम.	असं.	अच.	सा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			अशु.	अ.				अना.

अणागारुवजुत्ता वा^{१२७} ।

एवं णिव्वत्तिपज्जत्तस्स वि तिण्णि आलावा वत्तन्वा । लद्धिअपज्जत्ताणं पि एगो आलावो पत्तेयवणप्फइ-अपज्जत्ताणं जहा तहा वत्तन्वो । जहा पत्तेयसरीराणं, तहा बादरणिगोदपडिड्ढिदाणं पि वत्तन्वं ।

साधारणवणप्फइकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, अट्ठ जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो,

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार निर्वृत्तिपर्याप्तक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । लब्धपर्याप्तक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंका एक अपर्याप्त आलाप प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवोंके आलापके समान कहना चाहिए । तथा, जिसप्रकार अभी प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप कहे हैं, उसीप्रकारसे बादरनिगोद-प्रतिष्ठितवनस्पतिकायिक जीवोंके भी आलाप कहना चाहिए ।

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद इन दोनोंके बादर और सूक्ष्म ये दो दो भेद तथा इन चारोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे आठ जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, साधारण-वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन; द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक;

नं. २२७

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	प्र.	अ.			ति.	हं	औ.मि.	कर्म.	हं		कुम.	असं.	अच.	का.	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			शु.	अ.			अना.	अना.
														सा.३					
														अशु.					

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८८} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, ओरालियक्कायजोगो, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया; मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणा-गारुवजुत्ता वा^{१८९} ।

मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बाह्यरनित्यनिगोद-पर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-पर्याप्त, बाह्यचतुर्गति-निगोद-पर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अह्वान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं; भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २२८

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	८	४प.	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.		४अ	३		ति.	एके.	वन.	औ. २	नपु.		कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
								का. १			कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.

नं २२९

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.					ति.	एके.	वन.	औदा.	नपु.		कुम.	असं.	अच.	भा. ३	म.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			अशु.	अ.				अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२३०} ।

बादरसाधारणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरसाधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-

उन्हीं साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-अपर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-अपर्याप्त, बादर-चतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गति-निगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं. भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

बादर साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-पर्याप्त बादर नित्यनिगोद-अपर्याप्त बादरचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त और बादरचतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरसाधारणवनस्पति-काय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे

नं. २३०

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२
मि.		अ.			ति.	एकं.	वण.	औ. मि. कामे.	नं.		कुम. कुश्रु.	असं.	अच.	का. शु. मा. ३ अशु.	म. अ.	मि. असं.	आहा. अना.	साका. अना.

णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

तेसिं चव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खमदी, एइंदियजादी, बादरसाधारणवणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-पर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय-जाति, बादरसाधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २३१

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.		प.	३		ति.	एके.	वन.	औ.	२	पुं.	कुम.	असं.	अच.	भा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
		४						कार्म. १		न.	कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.

नं. २३२

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	१
मि.					ति.	एके.	वन.	औदा.	नपुं.		कुम.	असं.	अच.	भा. ३	भ.	मि.	असं.	आहा.	साका.
											कुश्रु.			अशु.	अ.			अना.	अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, बादरणिगोद-वणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अगागारु-वजुत्ता वा ।

एवं साधारणसरीरवादरवणप्फइणं पज्जत्तणामकम्मोदयणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । लद्धि-अपज्जत्ताणं पि एगो अपज्जत्तालावो वत्तव्वो । सव्वसाधारणसरीरसुहुमाणं सुहुम-पुढवि-भंगो । णवरि चत्तारि जीवसमासा, सुहुमसाधारणसरीरवणप्फइकाओ ति वत्तव्वो । चउगदिणिगोदाणं साधारणसरीरवणप्फइकाइय-भंगो । तेसिं बादरणं बादरसाधारणसरीर-

उन्हीं बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-अपर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बादर निगोद वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले साधारणशरीर बादर वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । लब्धपर्याप्तक साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंका भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए सभी सूक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंको आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि जीवसमास आलाप कहते समय 'चार जीवसमास' और काय आलाप कहते समय 'सूक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकाय' ऐसा कहना चाहिए । चतुर्गति निगोद वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप साधारणशरीर वन-

नं. २३३

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	४ ३	४ १	१ १	१	२	१ ४	२	१	१	द.२	२ १	१	२	२
मि.		अ.	ति.	ति.	वन.	औ. मि. कर्म.	पुं.	कुम. कुश्रु.	असं.	अच.	का. शु. मा. ३ अशु.	म. मि. अ.	असं.	आहा. अना.	साका. अना.

वण्णकइ-भंगो । तेसिं चैव सुहुमाणं सभेदानं साधारणसरीरसुहुमवण्णकइकाइय-भंगो । णवरि चउगदिणिगोदो ति वत्तव्वं । एवं णिच्चणिगोदानं पि, णवरि एत्थ णिच्चणिगोदो ति वत्तव्वं ।

^{२२५} तसकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्टाणाणि, दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण दो पाण एण पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण,

स्पतिक्रायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। उन्हीं बादर चतुर्गति निगोद वनस्पतिक्रायिक जीवोंके आलाप बादर साधारणशरीर वनस्पतिक्रायिके आलापोंके समान होते हैं। सामान्य पर्याप्त अपर्याप्त भेदसहित उन्हीं सूक्ष्म चतुर्गति निगोद जीवोंके आलाप साधारणशरीर सूक्ष्म वनस्पतिक्रायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं। विशेष बात यह है कि साधारण शरीरके साथमें 'चतुर्गति निगोद' इतना और कहना चाहिए। इसीप्रकार नित्यनिगोद साधारणशरीर-वनस्पतिक्रायिक जीवोंके भी आलाप होते हैं। विशेष बात यह है कि यहां पर 'नित्यनिगोद' इस पदको कहना चाहिए।

त्रसकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असेत्री पंचेन्द्रिय और संत्री पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे दश जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, दो प्राण; एक प्राण; चारों संज्ञापं, तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों

नं. २३४

त्रसकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१४	१०	६	१०,७	४	४	४	१	१५	३	४	८	७	४	६	२	६	३	२	२			
		६	९,७	क्षीणसं.		द्वी.	तस.	अयोग.	अपन.	अक्षय.				भा.	म.		सं.	आहा.	साका.			
		५	८,६		त्री.											अलेश्य.	अ.		असं.	अना.	अना.	
		५	७,५		चतु.														अनु.			यु. उ.
		५	६,४		पंचे.																	
			४,२,१																			

द्व्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वञ्जुत्ता होंति अणागारुवञ्जुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवञ्जुत्ता वा ।

२३ तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणाणि, पंच जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदी, वेहंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, द्व्व-भावेहिं छ लेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो

लेश्यापं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; उहों सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक तथा संश्लिक और असंश्लिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, उहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योगोंको छोड़कर शेष ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे उहों लेश्यापं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; उहों सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक तथा संश्लिक और असंश्लिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान

नं. २३५

त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१४	५	६	१०	४	४	४	१	११ म. ४	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	१	२
	द्वी.प.	५	९	क्षीणसं.		द्वी.	त्रस.	व. ४	अपग.	अकषा.				भा. ६ म.			सं.	आहा.	साका.
	त्री.प.		८			त्री.		औ. १						अले. अ.			असं.		अना.
	चतु.प.		७			च.		वै. १									अनु.		पु. उ.
	सं.प.		६			पं.		आ. १											
	असं.प.		४	१				अयोग.											

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

“तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग चत्तारि वा, तिण्णि वेद अवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ

है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार उप-योगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ — त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलापोंका वर्णन करते समय उन्हें अनाहारक भी कहनेका कारण यह है कि सयोगकेवली गुणस्थानमें केवलिसमुद्रातके प्रतर और लोकपूरणरूप अवस्थाओंमें नोकर्म वर्गणाओंके नहीं आनेके कारण जीव अनाहारक तो होता है परंतु उस समय पर्याप्त नामकर्मका उदय और वर्तमान शरीरके पूर्ण होनेके कारण वह पर्याप्त भी है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त अवस्थामें भी अनाहारकता बन जाती है । इन्द्रिय मार्गणामें पंचेन्द्रिय मार्गणाके आलापोंका कथन करते हुए पर्याप्त आलापोंका कथन करते समय इसीप्रकार अनाहारक कहा है । वहां पर भी अनाहारक कहनेका ऊपर कहा हुआ कारण जान लेना । इसीप्रकार दूसरे स्थलोंमें भी जानना चाहिए ।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्पदृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंसंबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और दो प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी तीन योग अथवा चार योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावधि

नं. २३६

त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	५	६अ.	७	४	४	४	१	४	३	४	६	४	४	२	२	५	२	२
मि.	द्वी.अ.	५	७	६	द्वी.	१	औ.मि.	अपु.	अकषा.	विभं.	असं.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
सा.	त्री. ”	५	६	५	त्री.	त्रसं.	वै.मि.	अपु.	अकषा.	मनः	सामा	शु.	अ.	सा.	जसं.	अनो.	अना.	
अ.	च. ”	५	५	५	च.		आ.मि.			बिना.	उेदो.	सा.६		औप.	अनु.	अनु.	यु. उ.	
प्र.	अ. ”	४	४	४	पं.		कर्म.				यथा.			क्षा.				
स.	सं. ”	२	२	२										क्षायो.				

वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तद्दुमएणुवजुत्ता वा ।

तसकाइय-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि

और मनःपर्यय ज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभय स्थान भी है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, आनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ — यहां पर विकल्पसे तीन अथवा चार योग बतलाये हैं इसका कारण यह है कि जन्मके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तपर्यंत औदारिकमिश्र और वैक्रियिकमिश्र ये दो योग होते हैं और विग्रहगतिसमें कर्मणकाययोग होता है इसलिये ये तीनों योग अपर्याप्त अवस्थामें बन जाते हैं । परंतु आहारकमिश्रकाययोग आहारकशरीरकी अपेक्षा अपर्याप्त अवस्थामें होता तो अवश्य है । फिर भी औदारिकशरीरकी अपेक्षा वहां पर्याप्तता भी है, इसलिये जब छठवे गुणस्थानमें होनेवाले आहारकशरीरकी अपेक्षा अपर्याप्तताकी अविबक्षा कर दी जाती है तब तीन योग कहे जाते हैं, और जब उसकी विवक्षा कर ली जाती है तब अपर्याप्त अवस्थामें चार योग भी कहे जाते हैं ।

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पर्याप्त अपर्याप्तके भेदसे दश जीवसमास; संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां; असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; संज्ञी-पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और सात प्राण, असंज्ञी-पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण

नं. २३७

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१०	६प.	१०,७	४	४	४	१	१३	३	४	३	१	२	३	१	२	२
मि.	द्वी. २	६अ.	९,७			द्वी.	आ-द्वि.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा.६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	त्री. २	५प.	८,६			त्री.	विना.				अच.		अ.		असं.	अना.	अना.
	चतु. २	५अ.	७,५			च.											
	असं. २		६,५			पं.											
	सं. २																

सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, पंच जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा,

और सात प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण और छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण: चारों संज्ञापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां; संज्ञी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवों तक क्रमसे दश प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, और छह प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, आहारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु

नं. २३८

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	५द्वी.प.	६	१०	४	४	४	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	त्री. ,,	५	९			द्वी.	त्रस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	च. ,,		८			त्री.		व. ४					अच.		अ.		असं.		अना.
	असं. ,,		७			च.		औ. १											
	सं. ,,		६			पं.		वै. १											

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेइंदियजादि-भादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२३९} ।

और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंखी पंचेन्द्रिय और संखी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, संखी पंचेन्द्रियोंके छहों अपर्याप्तियां, असंखी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां; संखी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवोंतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रिय-जातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २३९

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संखि.	आ.	उ.
१	५	६अ.	७	४	४	४	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२
मि.	द्वी. अ.	५अ.	७			द्वी.	प्र.	औ.मि.		कुम.	असं.	चक्षु	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	त्री. ,,		६			त्री.		वै.मि.		कुक्षु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.	अना.
	चतु. ,,		५			चतु.		कर्म.					सा.६					
	असं. ,,		४			पंचे.												
	सं. ,,																	

सासणसम्माइड्ढिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि मूलोच-भंगो ।

अकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणट्टाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीद-पञ्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, चट्टुगदिमदीदो, अणिदिओ, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवलदंसण, दव्व-भावेहि अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{२०} ।

एवं तसकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तस्स मिच्छाइड्ढिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि मूलोच-भंगो ।

तसकाइय-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण,

असकायिक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंसे लेकर अयोगिकेवली जिन तकके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए ।

अकायिक जीवोंके आलाप कहने पर—अतीत गुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीत पर्याप्त, अतीत प्राण, क्षीणसंज्ञा, अतीत चतुर्गति, अतीन्द्रिय, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनों विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेश्य, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

इसीप्रकार असकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए ।

असकायिक लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रियतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण,

नं. २४०

अकायिक जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	व.
अतीतगु.	अतीतजी.	अतीतप.	अतीतप्रा.	क्षीणसं.	अतीतग.	अतीन्द्रिय.	अकाय.	अयोगा.	अपग.	अकषा.	के.	अतीतसं.	के.द.	अलेश्य.	अतीत. म. अ.	क्ष.	अतीत. संज्ञि. असं.	अना.	२ साका. अना. पु. व.

चत्वारि सण्णाओ, दो गदीओ, बीइंदियजादि-आदी चत्वारि जादीओ, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चत्वारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

एवं कायमग्गणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण अणुवादो मूलोघ-भंगो । णवरि विसेसो तेरह गुणद्व्याणाणि, अजोगि-गुणद्व्याणं अदीदगुणद्व्याणं च णत्थि, तदो जाणिऊण मूलोघालावा वत्तच्चा ।

मणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्व्याणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण । केई वचि-कायपाणे अवणेंति, तण्ण घडदे; तेसिं सत्ति-संभवादो ।

पांच प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंच और मनुष्य ये दो गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई ।

योगमार्गणाके अनुवादसे आलापोंका कथन मूल ओघ आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि यहां पर तेरह ही गुणस्थान होते हैं, अयोगिगुणस्थान और अतीतगुणस्थान नहीं होता है सो आगमाविरोधसे जानकर मूल ओघालाप कहना चाहिए ।

मनोयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण होते हैं । कितने ही आचार्य मनोयोगियोंके दश प्राणोंमेंसे वचन और काय प्राण कम करते हैं, किन्तु उनका वैसा करना घटित नहीं होता है, क्योंकि, मनोयोगी जीवोंके वचनबल और कायबल इन दो प्राणोंकी शक्ति पाई जाती है,

नं. २४१

त्रसकायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	५	६	७	४	२	४	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	द्वी. अ.	अ.	७		ति.	द्वी.	औ. मि.	कर्म.	किं	कुम.	असं.	वक्षु.	का.	म. मि.	सं.	आहा.	साका		
	त्री. ,,	५	६		म. त्री.	च.				कुशु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.		अना.
	चतु. ,,	अ.	५		प.								मा. ३						
	असं. ,,		४										अशु.						
	सं.																		

वचि-कायबलणिमित्त-पुग्गल-खंधस्स अत्थित्तं पेक्खिअ पज्जत्तीओ होंति त्ति सरिीर-वचि-पज्जत्तीओ अत्थि । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सूत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३२} ।

मणजोगि-मिच्छादृष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

इसलिये ये दो प्राण उनके बन जाते हैं । उसीप्रकार वचनबल और कायबल प्राणके निमित्तभूत पुद्गलस्कन्धका अस्तित्व देखा जानेसे उनके उक्त दोनों पर्याप्तियां भी पाई जाती हैं इसीलिये उक्त दोनों पर्याप्तियां भी उनके बन जाती हैं । प्राण आलापके आगे चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है । चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्यमनो-योग, असत्यमनोयोग, उत्तममनोयोग और अनुभयमनोयोग ये चार मनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है । चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । आहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

मनोयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. २५२

मनोयोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	८	७	४	६	२	६	१	१	२
अयो.	सं. प.			क्षीणसं.	पंच.	त्रस.	मनो.	अपग.	अकषा.					द्र. द. म. अ.			सं. अनु.	आहा.	साका. अना. यु. उ.

द्व्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४३} ।

मणजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, (तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्व्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४४} ।

मणजोगि-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो,

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,

नं. २४३

मनोयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.					पंचे.	त्रस.	मनो.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
													अच.		अ.				अना.

नं. २४४

मनोयोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सासा.	सं.प.					पंचे.	त्रस.	मनो.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
													अच.						अना.

छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय,) तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४५} ।

“मणजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अचिरतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठः प्रतिषु नास्ति ।

नं. २४५

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
संय.	सं. प.				पुं.	ज्ञा.	मनो.			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. २४६

मनोयोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अधि.	सं. प.				पुं.	ज्ञा.	मनो.			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औ.	सं.	आहा.	साका. अना.

होति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

मणजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पयोगी होते हैं ।

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यञ्चगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक

नं २४७

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	२	१	४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देह.	पं.			ति.	पंचे.	त्रस.	मनी.				मति.	देश.	के.द.	भा. ३	म.	औप	सं.	आहा.	साका.
	सं.			मं.							भ्रुत.		विना.	शुम.		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४८} ।

मणजोगि-अप्पमत्तसंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति ताव मूलोघ-भंगो । णवरि चत्तारि मणजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेवलिसस सच्चमणजोगो असच्चमोसमणजोगो इदि दो मणजोगा वत्तव्वा । सच्चमणजोगीणं मिच्छाइड्डिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति ताव मूलोघ-भंगो । णवरि सच्चमणजोगो एक्को चेव वत्तव्वो । एवमसच्चमोसमणजोगीणं पि, णवरि असच्चमोसमणजोगो एक्को चेव वत्तव्वो ।

मोसमणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्व्याणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, मोसमणजोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि

ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अप्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मनोयोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान ही हैं, विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय बारहवें गुणस्थानतक चारों ही मनोयोग कहना चाहिए । किन्तु सयोगिकेवलीके सत्यमनो-योग और असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोग ये दो ही मनोयोग कहना चाहिए ।

सत्यमनोयोगियोंके आलाप मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मूल ओघालापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक सत्यमनो-योग आलाप ही कहना चाहिए । इसीप्रकारसे असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोगियोंके भी आलाप होते हैं । विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक असत्यमृषा मनोयोग आलाप ही कहना चाहिए ।

मृषामनोयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है । चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, मृषामनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है ।

नं. २४८

मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	४	३	४	४	३	३	द्र. ६	२	३	१	१	२
प्रम.	सं. प.				म.	पि.	त्रस.	मनो.			मति.	सामा.	के. द.	विना.	शुम.	म.	औप.	आहा.	साका.
											श्रुत.	केदो.	विना.			क्षा.	सं.	आहा.	अना.
											अव.	परि.				क्षायो.			
											मनः								

कसाय अकसाओ वि अत्थि, केवलणाणेण विणा सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५९} ।

मोसमणजोगीणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव खीणसण्णाओ त्ति ताव मणजोगि-भंगो । णवरि एको चेव मोसमणजोगो वत्तव्वो । एवं सच्चमोसमणजोगीणं पि वत्तव्वं ।

वचिजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणद्वानाणि, पंच जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण, मण-सरीर-पञ्जत्तीहिंतो उप्पणसत्तीओ सरीर-मणबलपाणा उच्चंति । ताओ वि उप्पणसमयदो जाव जीविदचरिमसमओ त्ति ताव ण विणस्संति । जेण मण-वचि-कायजोगा पाणेसु ण गहिदा

चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । केवलज्ञानके बिना सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मृषामनोयोगी जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक मृषामनोयोग आलाप ही कहना चाहिए । इसीप्रकार सत्यमृषामनोयोगियोंके भी आलाप कहना चाहिए ।

वचनयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; संज्ञी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवोंतक क्रमशः दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छह प्राण होते हैं । मनःपर्याप्ति और शरीरपर्याप्तिसे उत्पन्न हुई शक्तियोंको मनोबलप्राण और कायबलप्राण कहते हैं । वे शक्तियां भी उनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर जीवनके अन्तिम समयतक नष्ट नहीं होती हैं । और जिसकारणसे मनोयोग, वचनयोग और काययोग प्राणोंमें नहीं प्रद्वण किये गये हैं, इसलिये. वचनयोगियोंके वचनयोगसे निरुद्ध अर्थात् युक्त अवस्थाके होने पर भी दशों

नं. २४९

मृषामनोयोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१२	१	६	१०	४	४	१	१	१	३	४	७	७	३	द. ६	२	६	१	१	२
सयो.	सं.प					पं.	नस.	मृषा.	अयो.	अकषा.	के.ज्ञा.		के.द.	भा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
अयो.											विना.		विना.		अ.				अना.
विना.																			

तेण वच्चिजोग-णिरुद्धे वि दस पाणा हवंति । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि वच्चिजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मसं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{५०} ।

वच्चिजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, पंच जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि वच्चिजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-

प्राण होते हैं। प्राण आलापके आगे चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रचित भी स्थान होता है; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वचनयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय जीवोंसे लगाकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तकके जीवोंकी अपेक्षा पांच पर्याप्त जीवसमासा; छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छह प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद, चारों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य

नं. २५०

वचनयोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२३	५	६	१०	४	४	४	१	४	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	१	२
अयो.	द्वी.प.	५	९		द्वी.		वच.							भा. ६	भ.		सं.	आहा.	साका.
विना.	त्री.प.	८		क्षीणसं.	त्री.		त्रस.	अपग.		अकषा.					अ.		असं.		अमा.
	चतु.प.	७			च.												अनु.		यु. उ.
	असं.प.	६			पं.														
	सं.प.																		

भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभावसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव मणजोगीणं भंगो । णवरि चत्तारि वचिजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेवलिस्स सच्चवचिजोगो असच्चमोसवचिजोगो च भवदि । सच्चवचिजोगस्स सच्चमणजोग-भंगो । णवरि जत्थ सच्चमणजोगो तत्थ तं अवणेऊण सच्चवचिजोगो वत्तव्वो । मोसवचिजोगस्स वि मोसमणजोग-भंगो । णवरि मोसवचिजोगो वत्तव्वो । एवं सच्चमोसवचिजोगस्स वि वत्तव्वं । असच्चमोसवचिजोगस्स वचिजोग-भंगो । णवरि असच्चमोसवचिजोगो एक्को चैव वत्तव्वो ।

और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके वचनयोगी जीवोंके आलाप मनोयोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि वचनयोग आलाप कहते समय चार वचनयोग कहना चाहिए । सयोगिकेवली जिनके सत्यवचनयोग और असत्यमृषावचनयोग ये दो ही वचनयोग होते हैं । सत्यवचनयोगके आलाप सत्यमनोयोगके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि आलाप कहते समय जहाँ पहले सत्यमनोयोग कहा गया है वहाँ उसे निकाल करके उसके स्थानमें सत्यवचनयोग कहना चाहिए । मृषावचनयोगके आलाप भी मृषामनोयोगके आलापोंके समान होते हैं । विशेषता यह है कि मृषामनोयोगके स्थान पर मृषावचनयोग कहना चाहिए । इसीप्रकारसे सत्यमृषावचनयोगके भी आलाप कहना चाहिये, अर्थात् उभयवचनयोगके आलाप सत्यमृषामनोयोगके आलापोंके समान जानना चाहिए । असत्यमृषावचनयोगके आलाप वचनयोग-सामान्यके आलापोंके समान होते हैं । विशेषता यह है कि असत्यमृषावचनयोग आलाप कहते समय एक असत्यमृषावचनयोग ही कहना चाहिए ।

नं. २५१

वचनयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्री.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	५	६	१०	४	४	४	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	जी. ,	५	९		द्री.	वस.	वच.				अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	च. ,	८			त्री.								अच.		अ.		असं.		अना.
	असं. ,	७			च.														
	सं. ,	६			पं.														

कायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्टाणाणि, चौद्दस जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि
अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच
पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि
सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ,
पुढवीकायादी छक्काय, सत्त कायजोग, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि
कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ
लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो
णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा
सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{३२२} ।

काययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, चौद्दहों जीवसमास,
छहों पर्याप्तियां छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां चार
अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच
प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण तीन प्राण; चार प्राण और दो प्राण; चारों संज्ञापं तथा
क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पांचों जातियां, पृथिवी-
कायको आदि लेकर छहों काय, सातों काययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों
कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे
छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संब्रिक, असंब्रिक तथा संब्रि
और असंब्रि इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी,
अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

नं. २५२

काययोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	१४	६प	१०, ७	४	४	५	६	७	३	४	८	७	४	३	६	२	२
अयो		६अ.	९, ७				काय.						भा. द.	भ.	सं	आहा.	साका.
विना.		५प	८, ६	क्षीणसं.				अप्रा.					अ.	असं	अना.	अना	
		५अ.	७, ५					अक्षया.						अनु.			गु. उ.
		४प.	६, ४														
		४अ.	४, ३														
			४. २														

तेतिं चैव पञ्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि तेरह् गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियादी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, वेउव्वियमिस्सेण विणा छ जोग तिण्णि वा, तिण्णि वेद अवगद्वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो आहारिणो चैव वा, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

उन्हीं काययोगी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके तेरह् गुणस्थान, पर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; वृशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आवि छहों काय, वैक्रियिकमिश्रकाययोगके विना छह काययोग अथवा औदारिक-काययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये तीन काययोग; तीनों वेद तथा अप-गतवेदस्थान भी है। चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों वृशिन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक; असंज्ञिक तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोसे रहित भी स्थान है; आहारक, अनाहारक अथवा आहारक ही होते हैं; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार-अनाकार उप-योगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ—ऊपर काययोगी जीवोंके पर्याप्तकालमें जो वैक्रियिकमिश्रके विना छह अथवा तीन योग बतलाये हैं। इसका कारण यह है कि छठवें और तेरहवें गुणस्थानमें आहारकसमुद्दात और केवलिसमुद्दातके समय भी विवक्षाभेदसे जब पर्याप्तता स्वीकार कर

नं. २५३

काययोगी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	७	६	१०	४	४	५	६	६	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	२	२
अयो.	पर्या.	५	९	४				वै.मि.	अपा.	अकषा.				भा. ६	भ.		सं.	आहा.	साका.
विना.		४	८	क्षीणसं.				विना	अथ.						अ.		असं.	अना.	अना.
			७					३									अनु.	अथ.	यु.उ.
			४	४														१	आहा.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच' गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छण्णाण, चत्तारि संजम,

ली जाती है तब उसकी अपेक्षा पर्याप्त अवस्थामें भी छहों योग बन जाते हैं और जब अपर्याप्तता मान ली जाती है तब पर्याप्त अवस्थामें औदारिक, आहारक और वैक्रियिक ये तीन योग ही बनते हैं। इसीप्रकार आहारमार्गणाके कथनमें पहले आहारक और अनाहारक ये दो आलाप बतलाये हैं अनन्तर एक आहारक आलाप ही बतलाया है। इसका भी कारण यह है कि तेरहवें गुणस्थानमें केवलसमुद्घातके समय भी पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेसे आहारक और अनाहारक दोनों आलाप बन जाते हैं। परंतु कपाट, प्रतर और लोकपूरण अवस्थामें केवल अपर्याप्तताके स्वीकार कर लेने पर अनाहारक आलाप काययोगियोंकी पर्याप्त अवस्थामें नहीं बनता है। इसका यह तात्पर्य हुआ कि जब काययोगियोंके पर्याप्त अवस्थामें छह योग कहे जावें, तब आहारक और अनाहारक ये दोनों ही आलाप कहना चाहिए और जब केवल तीन योग ही कहे जावें तब एक आहारक आलाप ही कहना चाहिए। सार्थ संयमोंके संबन्धमें भी यही विवक्षा भेद जान लेना चाहिये।

उन्हीं काययोगी जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अचिरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान; सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और दो प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीण संज्ञास्थान भी है; चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है; चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावाधि और मनःपर्ययज्ञानके विना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और

१ प्रतिपु ' चत्तारि ' इति पाठः ।

नं. २५४

काययोगी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	वे.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	७	६अ.	७	४	४	५	६	४	४	६	४	४	४	२	५	२	२	२
मि.	अपर्या.	५	७	४			औ मि.	अपर्या.	अकषा.	विमं	असं.	का.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.	
सा.		४	६	क्षीणसं.			वै.मि.			मनः	सामा	शु.	अ.	विना.	असं.	अना.	अना.	
अ.			५				आ.मि.			विना.	छेदो.	मा.६			अनु.		यु. उ.	
प्र.			४				कर्म.				यथा.							
स.			३	२														

चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-
सिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो,
सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा ।

कायजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ
पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ
चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त
पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,
चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुट्ठीकायादी छक्काया, पंच काय-
जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि
छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

यथाख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं;
भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक
तथा अनुभयरथान भी है; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों
उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों
जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार
पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण,
छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों
संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय,
आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना पांच काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय,
तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २५५

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६ प.	१०,७	४	४	५	६	५	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.		६ अ.	९,७					औ. २			अज्ञा	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		५ प.	८,६					वे. २					अच.		अ.	असं.	अना.	अना.	यु. उ.
		५ अ.	७,५					का. १											
		४ प.	६,४																
		४ अ.	४,३																

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५६} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया

उन्हीं काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्तक जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत,

नं. २५६

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	२	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९					औ. १			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८					वे. १					अच.		अ.	असं.			अना.
			७																
			६	४															

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५७} ।

कायजोगि-सासणसम्मइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५८} ।

और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना पांच काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २५७

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	अपर्या.	५अ.	७					ओ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४अ	६					वै.मि.			कुशु.		अच.	शु.	अ.	असं.	अना.	अना.	
			५					कर्म.						मा.६					
			४																
			३																

नं. २५८

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	५	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प.	प.	७				त्रस.	ओ.२			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	६				पंचे.		वै.२					अच.					अना.	अना.
		अ.						का.१											

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५९} ।

^{२६०}तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग,

नं. २५९

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प					पंचे.	त्रस.	औ. १ वै. १			कुम. कुशु. विभं.	असं.	चक्षु. अच.	मा. ६	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. २६०

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.	अ.			ति. म. वे.	पुं.	त्रस.	औ.मि. वै.मि. कर्म.			कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अच.	का. २ शु. मा. ६	भ.	सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुषकलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एसो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२६१} ।

कायजोगि-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ,

वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएँ, भावसे छहों लेइयाएँ; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएँ, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. २६१

काययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	प.				पंच.	त्रस.	ओ. १				ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
	सं.						वे. १				अज्ञा.		अच.						अना.
											मिश्र.								

पंचिदियजादी, तसकाओ, पंच जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{६६} ।

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि भदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं

त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये पांच योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, मव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २६२

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	५	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
उच्चि.	सं. प.	प.	७			पंचे.	त्रस.	ओ. २			मति.	असं.	के. द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	अ.					वे. २	का. १			श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.

नं. २६३

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अवि.	सं. प.					पंचे.	त्रस.	ओ. १			मति.	असं.	के. द.	विना.	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
							वे. १				श्रुत.					क्षा.			अना.

छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४} ।

कायजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तिधां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर— एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे

नं. २६४

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	द. २	१	३	२	२	२
अवि.	सं. अ.	अ.				पव.	तस.	औ. मि. वे. मि. न. कामे.	पु. न.		मति. श्रुत. अव.	अस.	के. द. विना.	का. शु. मा. ६	म. औप. क्षा. क्षायो.			आहा. अना.	साका. अना.

द्वेण छ लेस्ताओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्ताओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६५} ।

कायजोगि-पमत्तसंज्ञाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, ओरालिय-आहार-आहारमिस्ता इदि तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि' णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, द्वेण छ लेस्ताओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्ताओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६६} ।

तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं; भ्रूयसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त थे दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इसप्रकार तीन योग; तीनों वेद, चारों कसाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं; भ्रूयसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिपु ' तिण्णि ' इति पाठः ।

नं २६५

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
दृश.	पं.	सं.		ति.	पंचे.	म.	त्रस.	ओ.			मति.	देश.	के.द.	मा.	३म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
											श्रुत.		विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायी.			

नं. २६६

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	३	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम.	सं.प.	प.	७		म.		त्रस.	ओ.	१		के.व.	सामा.	के.द.	मा.	३म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	६						आहा.	२		विना.	छेदो.	विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
	अ.										परि.					क्षायी.			

कायजोगि-अप्रमत्तसंज्ञदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि पाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव खीणकसाओ चि ताव कायजोगीणं मूलोघ-भंगो । णवरि ओरालियकायजोगो चेव सव्वत्थ वत्तव्वो ।

कायजोगि-केवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो दो वा, छ पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइयकायजोगो इदि तिण्णि जोग, अवगदवेदो,

काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञापं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थपना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं, भव्यसिद्धिक; संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतक काययोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि काययोग आलाप कहते समय सर्वत्र केवल एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए ।

काययोगी केवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, अथवा समुद्रातकी अपेक्षा पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, चार प्राण और केवलिसमुद्रातकी अपर्याप्त भवस्थाकी अपेक्षा दो प्राण; क्षीणसंज्ञास्थान, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाय-

नं. २६७

काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	स.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	२०	३	२	१	२	१	३	४	४	३	३	द्र.६	१	३	१	१	२
अप्र.	सं.प.			आहा.	म.	पंचे.	वत्त.	औ.			मति.	सामा.	के.द	भा.३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
				बिना.							भुत.	छेदो.	विना.	गुभ.		क्षा.			अना.
											अव.	परि.				क्षायो.			
											मन.								

अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{२६८} ।

ओरालियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

योग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्कलेदया; भव्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संखी और असंखी इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, अनाहारक; साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

औदारिककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, पर्याप्तक जीवोंके सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिककाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक तथा संखी और असंखी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है;

नं. २६८

काययोगी केवली जिनके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय. द.	ले.	म. सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	४	०	१	१	१	३	०	०	१	१	१
सयो.	प.	२	२	०	१	०	०	१	१	१	१	२	२
	प.अ.		क्षीणसं.	म.	पंच.	त्रस.	औ. २	कर्म.	अपग.	अकषा.	के.	यथा, के.द. मा. १	शुक्क.
												म. क्षा.	अनु.
												आहा. अना.	साका. अना. यु. उ.

होति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{२९९} ।

ओरालियकायजोगि मिच्छाद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीव-
समासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ
पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-
आदी पंच जादीओ, पुढवीक्कायादी छ काय, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि
कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया
अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति
अणागारुवजुत्ता वा^{३००} ।

आहारक, साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे
युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

औदारिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,
सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण,
नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यंच और मनुष्य
ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिक-
काययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और
भावसे छहों लेख्यापं. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक,
साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २६९

औदारिक काययोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	७	६	१०	४	२	५	६	१	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	१	२
अयो.	पर्या.	५	९		ति.			औ.						मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
विना.		४	८		म.				अपग.	अकषा.					अ.		असं.		अना.
			७														अनु.		यु. उ.
			६	४															

नं. २७०

औदारिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	२	५	६	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९		ति.			औ.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८		म.								अच.		अ.		असं.		अना.
			७																
			६	४															

ओरालियकायजोगि-सासणसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा^{१०१} ।

^{१०२}ओरालियकायजोगि-सम्माभिच्चाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि

औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम; आविके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद,

नं. २७१ औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.	प.			ति.	पं.	त्रस.	ओ.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.	क्षम.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					म.	पं.	त्रस.				अज्ञा.		अच.						अना.

नं. २७२ औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.	प.			ति.	पं.	त्रस.	ओ.			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा.	क्षम.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
					म.	पं.	त्रस.				अज्ञा.		अच.						अना.
											मिथ.								

अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०३} ।

संजदासंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव कायजोगि-भंगो । णवरि सब्बत्थ ओरालियकायजोगो एक्को चेव वत्तव्वो । सजोगिकेवली च पज्जत्ता आहारि त्ति भणिदव्वा ।

चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिककाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यक्गति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिककाययोगी जीवोंके संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप काययोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सर्वत्र योग आलाप कहते समय एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए । और सयोगिकेवलीके जीवसमास कहते समय पर्याप्तक जीवसमास, तथा आहार आलाप कहते समय आहारक, इसप्रकार कहना चाहिए ।

नं. २७३

औदारिककाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
वि.	सं. प.			ति. मं.	प्रा.	ज्ञा.	औ.			मति. श्रुत. अव.	अंस.	के. द. विना.	भा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.	

ओरालियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, सत्त जीव-समासा, सण्णि-असण्णीहिंतो सजोगिकेवली वदिरित्तो त्ति अदीदजीवसमासेण सजोगिणा होदव्वं ? ण, दव्वमणस्स अत्थित्तं भावगद-पुव्वगइं च अस्सिरुण तस्स सण्णित्तब्भुवगमादो । पुठवी-आउ-तेउ-वाउ-पत्तेय-साहारणसरीर-तस-पज्जत्तापज्जत्त-चोदस-जीवसमासाणं सत्त-अपज्जत्तजीवसमासेसु सजोगि-सत्तब्भुवगमादो वा । एसो अत्थो सब्वत्थ वत्तव्वो । छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुठवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्स-कायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, विभंग-मणपज्जवणणेहि विणा छ णाणाणि, जहाक्खादसुद्धिसंजमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा । कि कारणं ? मिच्छाइट्ठि-सासण-असंजद-

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा सात अपर्याप्त जीवसमास होते हैं ।

शंका—जब कि सयोगिकेवली जिनेन्द्र संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों ही व्यपदेशोंसे रहित हैं, इसलिये सयोगी जिनको अतीत जीवसमासवाला होना चाहिए ?

समाधान—नहीं; क्योंकि, द्रव्यमनके अस्तित्व और भावमनोगत पूर्वगति अर्थात् भूतपूर्व न्यायके आश्रयसे सयोगिकेवलीके संज्ञीपना माना गया है । अथवा, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, प्रत्येकशरीरचरनस्पतिकायिक, साधारणशरीर-वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्तसंबन्धी चौदह जीवसमासोंमेंसे सात अपर्याप्त जीवसमासोंमें कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्घातगत सयोगिकेवलीका सत्त्व माना जानेसे उन्हें अतीत जीवसमासवाला नहीं कहा जा सकता है । यही अर्थ सर्वत्र कहना चाहिए ।

जीवसमास आलापके आगे छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और सयोगिकेवलीके कपाटसमुद्घातके कालमें दो प्राण होते हैं । चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, तिर्यच-गति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आवि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आवि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है । चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । विभंगावाधि और मनःपर्यय ज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, यथाख्यात-विहारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन और द्रव्यसे कापोतलेइया होती है ।

शंका—द्रव्यसे एक कापोतलेइया ही होनेका क्या कारण है ?

सम्माइट्टीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुंताणं सरीरस्स काउलेस्सा चेव हवदि; छव्वणोरालियपरमाणूणं धवल-विस्ससोपचय सहिद-छव्वणकम्मपरमाणूहि सह मिलिदाणं कावोद-वणुप्पत्तीदो । कवाडगद-सजोगिकेवलिस्स वि सरीरस्स काउलेस्सा चेव हवदि । एत्थ वि कारणं पुव्वं व वत्तव्वं । सजोगिकेवलिस्स पुव्विल्ल-सरीरं छव्वणं जदि वि हवदि तो वि तण्ण धेप्पदि; कवाडगद-केवलिस्स अपज्जत्तजोगे वडुमाणस्स पुव्विल्ल-सरीरेण सह संबंघाभावादो । अहवा पुव्विल्ल-छव्वण-सरीरमस्सिऊण उवयारेण दव्वदो सजोगिकेवलिस्स छ लेस्साओ हवंति । । भावेण छ लेस्साओ । किं कारणं ? मिच्छाइट्टि-सासण-सम्माइट्टीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुमाणं किण्ह-णील-काउलेस्सा चेव हवंति, कवाडगद-सजोगिकेवलिस्स सुक्कलेस्सा चेव भवदि, किंतु देव-गेरइयसम्माइट्टीणं मणुसगदीए उप्पणाणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुमाणं अविण्ह-पुव्विल्ल-भाव-लेस्साणं भावेण छ लेस्साओ लब्धंति ति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, उवसमसम्मत्त-

समाधान—औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके शरीरकी कापोतलेश्या ही होती है; क्योंकि, धवलविस्ससोपचय सहित छहों वर्णोंके कर्म-परमाणुओंके साथ मिले हुए छहों वर्णवाले औदारिकशरीरके परमाणुओंके कापोत वर्णकी उत्पत्ति बन जाती है, इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतलेश्या ही होती है ।

कपाटसमुद्घातगत सयोगिकेवलीके शरीरकी भी कापोतलेश्या ही होती है। यहाँ पर भी पूर्वके समान ही कारण कहना चाहिए। यद्यपि सयोगिकेवलीके पहलेका शरीर छहों वर्णवाला होता है, तथापि वह यहाँ नहीं ग्रहण किया गया है; क्योंकि अपर्याप्तयोगमें वर्तमान कपाट-समुद्घात-गत सयोगिकेवलीका पहलेके शरीरके साथ सम्बन्ध नहीं रहता है। अथवा, पहलेके षड्वर्णवाले शरीरका आश्रय लेकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा सयोगिकेवलीके छहों लेश्याएं होती हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंके भावसे छहों लेश्याएं होती हैं ।

शंका—औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके भावसे छहों लेश्याएं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्याएं ही होती हैं । और कपाटसमुद्घातगत औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके एक शुक्कलेश्या ही होती है। किन्तु जो देव और नारकी मनुष्यगतिमें उत्पन्न हुए हैं, औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान हैं और जिनकी पूर्वभव-सम्बन्धी भावलेश्याएं अभीतक नष्ट नहीं हुई हैं, ऐसे जीवोंके भावसे छहों लेश्याएं पाई जाती हैं; इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके छहों लेश्याएं कहीं गई हैं ।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; उपशमसम्यक्त्व और सम्य-

सम्मामिच्छतेहि विणा चत्तारि सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हँति अणागारुवज्जुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवज्जुत्ता वा^{२५४} ।

^{२५५}ओरालियमिस्सकायजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णिण पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णिण वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउलेस्सा,

गिथ्यात्वके विना शेष चार सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है। आहारक, साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

औदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएँ; भव्यसिद्धिक, अभव्य-

नं. २७४

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	७	६अ.	७	४	२	५	६	१	३	४	६	२	४	द्र. १	२	४	२	१	२
मि.	अप.	५	७	४	ति			औ.मि.	अपम.	अकषा.	विमं.	असं.		का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४	६	५	म.						मनः	यथा.		मा. ६	अ.	सा.	असं.		अना.
अ.			५								विना.					सा.	अनु.		
स.			४													क्षायो.			
			३	२															

नं. २७५

औदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	२	५	६	१	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	२	१	२
मि.	अप.	५अ.	७	४	ति			औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४अ	६	५	म.						कुशु.		अच.	मा. ३	अ.	मि.	असं.		अना.
			५											अशु.					
			४																
			३																

भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{३०६} ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, जहा देव-मिच्छाइट्ठि-

सिद्धिकः मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां; सात प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान; एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या और भावसे छहों लेश्यापं होती हैं । यहां पर भावसे छहों लेश्या-

नं. २७६ औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	१	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
सा.	सं.	अ.	अ.		ति.	कृ.	त्रस.	औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					म.	म.					कुशु.		अच.	मा. ३	अशु.				अना.

सासणसम्मादिट्ठिणो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सासु वट्टमाणा णट्ट-लेस्सा होऊण तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणा उप्पण्ण-पढम-समए चेव किण्ह-णील-काउलेस्साहि सह परिणमंति सम्माइट्ठिणो तथा ण परिणमंति, अंतोमुट्ठत्तं पुण्विल्ल-लेस्साहि सह अच्छिय अण्णलेस्सं गच्छंति । किं कारणं ? सम्माइट्ठिणं बुद्धि-ट्ठिय-परमेट्ठिणं मिच्छाइट्ठिणं मरणकाले संकिलेसाभावादो । णेरइय-सम्माइट्ठिणो पुण चिराण-लेस्साहि सह मणुस्सेसुप्पज्जंति ।

ओंके होनेका कारण यह है कि जिसप्रकार तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याओंमें, वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देव तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होते समय नष्टलेश्या होकरके अर्थात् अपनी अपनी पूर्व शुभ लेश्याओंको छोड़कर (तिर्यंच और मनुष्योंमें) उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही कृष्ण, नील और कापोत लेश्यारूपसे परिणत हो जाते हैं, उसप्रकारसे सम्यग्दृष्टि देव अशुभ लेश्यारूपसे नहीं परिणत होते हैं, किन्तु तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेके प्रथमसमयसे लगाकर अन्तर्मुहूर्ततक पूर्व भवकी लेश्याओंके साथ रह कर पीछे अन्य लेश्याओंको प्राप्त होते हैं, अतएव यहाँपर छहों लेश्याएं बन जाती हैं ।

शंका—तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दृष्टि देव अन्तर्मुहूर्ततक अपनी पहली लेश्याओंको नहीं छोड़ते हैं, इसका क्या कारण है ?

समाधान—इसका कारण यह है कि बुद्धिमें स्थित है परमेष्ठी जिनके अर्थात् परमेष्ठीके स्वरूप चिन्तनमें जिनकी बुद्धि लगी हुई है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके मरणकालमें मिथ्यादृष्टि देवोंके समान संक्लेश नहीं पाया जाता है; इसलिये अपर्याप्तकालमें उनकी पहलेकी शुभ-लेश्याएं ज्योंकी त्यों बनीं रहतीं हैं ।

विशेषार्थ—‘सम्माइट्ठिणं बुद्धि-ट्ठिय-परमेट्ठिणं मिच्छाइट्ठिणं मरणकाले संकिलेसा-भावादो’ इस वाक्यके दो अर्थ संभव हैं । एक तो यह कि मरणके समय मिथ्यादृष्टियोंको जिसप्रकार संक्लेश होता है उसप्रकार जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंको मरणके समय संक्लेश नहीं होता है । तथा दूसरा अर्थ इसप्रकारसे होता है कि सम्यग्दृष्टि देवोंके और जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं ऐसे मिथ्यादृष्टि देवोंके मरणके समय संक्लेश नहीं पाया जाता है । प्रथम अर्थ करते समय ‘मिच्छाइट्ठिणं’ पदके आगे ‘इव’ पदकी अपेक्षा है और दूसरा अर्थ करते समय ‘च’ पदकी । परंतु ‘मिच्छाइट्ठिणं’ इस पदके आगे इन दोनों पदोंमेंसे कोई भी पद नहीं पाया जाता है और प्रकरणको देखते हुए पहला अर्थ संगत प्रतीत होता है, इसलिये ऊपर अर्थमें पहले अर्थका ही ग्रहण किया है ।

किन्तु नारकी सम्यग्दृष्टि तो अपनी पुरानी चिरंतन लेश्याओंके साथ ही मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं ।

कारणं, जादिविसेसेण संकिलेसाहियादो । भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अगागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

औरालियमिस्सकायजोगि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, आयु-कालबलपाणा दो चेव होंति, पंचिदियपाणा णत्थि; खीणावरणे खओवसमाभावादो खओवसम लक्खण-भाविंदियाभावादो । ण च दर्विदिएण इह पओज्जणमत्थि, अपज्जत्तकाले पंचिदियपाणाणमत्थित्त-पटुप्पायण-संतसुत्तं-दंसणादो । मण-वचि-उस्सासपाणा वि तत्थ णत्थि, मण-वचि-उस्सासपज्जत्ती-सण्णिद-पोग्गलखंध-

शंका— नारकी सम्यग्दृष्टि जीव मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लेश्याओंको क्यों नहीं छोड़ते हैं ?

समाधान— इसका कारण यह है कि नारकी जीवोंके जातिविशेषसे ही अर्थात् स्वभावत संक्लेशकी अधिकता होती है, इसकारण मरणकालमें भी वे उन्हें नहीं छोड़ सकते हैं ।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्तक जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं । किन्तु पांच इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं, क्योंकि, जिनके ज्ञानावरणादि कर्म नष्ट हो गये हैं ऐसे क्षीणावरण सयोगिकेवलीमें आवरण कर्मोंका क्षयोपशम नहीं पाया जाता है, और इसलिये उनके क्षयोपशम लक्षण भावेन्द्रियां भी नहीं पाई जाती हैं । तथा इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंसे प्रयोजन है नहीं; क्योंकि, अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रिय प्राणोंके अस्तित्वका प्रतिपादन करनेवाला सत्प्ररूपणाका सूत्र देखा जाता है । मनोबलप्राण, वचनबलप्राण, और श्वासोच्छ्वासप्राण भी औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके नहीं होते हैं; क्योंकि, मनः पर्याप्ति, वचन पर्याप्ति और आनापान पर्याप्ति संश्लिक पौद्रलिक स्कन्धोंसे निर्मित

१ सं. सू. ३७, ६१, ७६.

नं. २७७ औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	१	१	४	३	१	३	द. १	१	२	१	१	२
अवि.	सं.	अ.	अ.		ति.	पुं.	ज्ञा.	ओ.मि.	इं.	मति.	असं.	के.द.	का.	भा.	म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
					म.				धुत.	अव.		विना.	भा.	६	क्षायो.				अना.

णिव्वत्तिद-सपाणसण्णा-संजुत्तसत्तीणं कवाडगद-केवलिम्हि अभावादो । अहवा तेसिं कारणभूद-पज्जत्तीओ अत्थि त्ति पुणो उवरिम-उट्टुसमयप्पहुडिं वत्ति-उस्सासपाणाणं समणा भवदि चत्तारि वि पाणा हवंति । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,

स्वप्राण संज्ञाओंसे अर्थात् मन, वचन और श्वासोच्छ्वास प्राणोंसे संयुक्त शक्तियोंका कपाट समुद्रात-गत केवलीमें अभाव पाया जाता है । अथवा, समुद्रातगत-केवलीके वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंकी कारणभूत वचन और आनापान पर्याप्तियां पाई जाती हैं, इसलिये लोकपूरणसमुद्रातके अनन्तर होनेवाले प्रतरसमुद्रातके पश्चात् उपरिम छठे समयसे लेकर आगे वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंका सञ्जाव हो जाता है, इसलिये सयोगिकेवलीके आहारमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी होते हैं ।

विशेषार्थ — समुद्रातगत केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें आयु और काय ये दो प्राण होते हैं शेष आठ प्राण नहीं होते हैं । उनमेंसे पांचों इन्द्रिय प्राण तो इसलिये नहीं होते हैं कि उनके ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम नहीं पाया जाता है । कदाचित् यह कहा जा सकता है कि केवलीके पांचों द्रव्येन्द्रियां पाई जाती हैं इसलिये द्रव्येन्द्रियोंकी अपेक्षा उनके पांच प्राण मान लेना चाहिये । परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका उपचारसे ही ग्रहण किया है, मुख्यतासे नहीं । यदि इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका मुख्यतासे ग्रहण करना स्वीकार किया जावे तो अपर्याप्तकालमें पांच इन्द्रिय प्राणोंका सञ्जाव नहीं बन सकता है । परंतु अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रियप्राण होते हैं ऐसा आगमवचन है, इसलिये यह सिद्ध हुआ कि इन्द्रिय प्राणोंमें मुख्यतासे पांच भावेन्द्रियोंका ही ग्रहण किया गया है और वे भावेन्द्रियां केवलीके होती नहीं है, इसलिये उनके पांचों इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं । उसीप्रकार केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें मनोबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण भी नहीं होते हैं, क्योंकि, इन तीनों प्राणोंकी कारणभूत मन, वचन और आनापान ये तीन पर्याप्तियां है । परंतु अपर्याप्त अवस्थामें ये तीनों पर्याप्तियां होती नहीं हैं, इसलिये पर्याप्तियोंके अभावमें उनके उक्त तीनों प्राण भी नहीं पाये जाते हैं । इसप्रकार इन आठ प्राणोंके अतिरिक्त केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें शेष दो प्राण पाये जाते हैं । अथवा, केवलीके विद्यमान शरीरकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्राणोंकी कारणभूत पर्याप्तियां रहती ही हैं, इसलिये छठे समयसे वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये दो प्राण और माने जा सकते हैं । इसप्रकार पूर्वोक्त दोनों प्राणोंमें इन दोनों प्राणोंके मिला देने पर केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी कहे जा सकते हैं । मनःपर्याप्तिके रहने पर भी केवलीके मनःप्राण नहीं माना है, इसका कारण यह है कि मनःप्राणमें भावमन और मनःपर्याप्ति ये दोनों कारण हैं, इसलिये इनमेंसे जहां केवल एक कारण होता है वहां मनःप्राण नहीं कहा गया है । केवलीके भावमन नहीं पाया जाता है, इसलिये मनःपर्याप्तिके रहने पर भी मनःप्राण नहीं कहा गया है और शेष संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त अवस्थामें भावमनका अस्तित्व होते हुए भी मनःपर्याप्ति

ओरालियमिस्सकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धि-संजमो, केवलदंसणं, दब्बेण काउलेस्सा, मूलसरीरस्स छ लेस्साओ संति ताओ किण्ण उच्चंति त्ति भणिदे ण, चौदस-रज्जु-आयामेण सत्त-रज्जु-वित्थारेण एक-रज्जुमादिं कादूण वड्ढिद-वित्थारेण बारिद-जीव पदेसाणं पुच्चसरीरेण संखेज्जंगुलोगाहणेण संबंधाभावादो । भावे वा जीवपदेस-परिमाणं सरीरं होज्ज । ण च एवं, वंधहरस्स' सरीरस्स तेत्तियमेत्तद्वाण-पसरण-सत्ति-अभावादो, ओरालियमिस्सकायजोगण्णहाणुववत्तीदो वा । ण चिराण-सरीरेण कवाडगद-केवलिस्स संबंधो अत्थि । भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव नहीं पाई जाती है, इसलिये मनःप्राण नहीं माना गया है ।

प्राण आलापके आगे क्षीणसंज्ञास्थान, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, अपगतवेदस्थान, अकपायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, और द्रव्यसे कापोत लेइया होती है ।

शंका—सयोगिकेवलीके मूलशरीरकी तो छहों लेइयाएं होती हैं, फिर उन्हें यहां क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कपाटसमुद्घातके समय चौदह राजु आयाम (लम्बाई) से और सात राजु विस्तारसे अथवा चौदह राजु आयामसे और एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए विस्तारसे व्याप्त जीवके प्रदेशोंका संख्यात अंगुलकी अवगाहनावाले पूर्व शरीरके साथ संबन्ध नहीं हो सकता है। यदि संबन्ध माना जायगा, तो जीवके प्रदेशोंके परिमाणवाला ही औदारिक शरीरको होना पड़ेगा। किन्तु ऐसा हो नहीं सकता; क्योंकि, विशिष्ट बंधको धारण करनेवाले शरीरके पूर्वोक्त प्रमाणरूपसे पसरने (फैलने) की शक्तिका अभाव है। अथवा, यदि मूलशरीरके कपाटसमुद्घात प्रमाण प्रसरणशक्ति मानी जाय तो फिर उनकी औदारिकमिश्रकाययोगता नहीं बन सकती है। तथा कपाटसमुद्घातगत केवलीका पुराने मूलशरीरके साथ संबन्ध है नहीं, अतएव यही निष्कर्ष निकलता है कि सयोगिकेवलीके मूलशरीरकी छहों लेइयाएं होनेपर भी कपाटसमुद्घातके समय उनका ग्रहण नहीं किया जा सकता है। किन्तु औदारिकमिश्रकाययोग होनेके कारण एक कापोतलेइया ही कही गई है।

विशेषार्थ—पूर्वाभिमुख केवलीके समुद्घात करने पर कपाटसमुद्घातमें जीवके प्रदेश ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते हैं और उत्तर दक्षिण सात राजु फैल जाते हैं। तथा उत्तराभिमुख केवलीके कपाटसमुद्घातके समय ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते हैं और पूर्व पश्चिम एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए विस्तारके अनुसार फैल जाते हैं, परंतु मूलशरीर संख्यात अंगुलकी अवगाहना प्रमाण ही होता है, इसलिये मूलशरीरकी लेइया औदारिकमिश्रकाययोगमें नहीं ली जा सकती है। किन्तु उस समय जो नोकर्मवर्णाएं आती हैं उन्हींकी लेइया ली जायगी। अतः केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगकी अवस्थामें द्रव्यसे कापोतलेइया कही है।

१ प्रतिषु ' ए बंधहरस्स ' इति पाठः ।

सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{२५८} ।

वेउव्वियकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी देवगदि त्ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५९} ।

द्रव्यलेश्या आलापके आगे भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, सांज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

वैक्रियिककाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २७८

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	सांज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	२	०	१	१	१	१	०	०	१	१	१	द्र. १ मा. १ शुक्ल.	१	१	०	१	२
सयो.	अप.	अ	अथवा ४	क्षीणसं.	म.	पंच.	त्रस.	ओ.मि.	अप्रा.	अकषा.	केव.	यथा.	के.द.	का.	म.	क्षा.	अनु.	आहा.	साका. अना.

नं. २७९

वैक्रियिककाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	सांज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	६	१	३	द्र. ६ मा. ६	२	६	१	१	२
मि. सा. सम्य. अवि.	मं.पं.				न. दे.	पंच.	त्रस.	वै.			ज्ञान. ३ अज्ञा. ३	असं.	के.द. बिना	मा. ६	म. अ.		सं.	आहा.	साका. अना.

वेउव्वियकायजोगि-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

^{१०}वेउव्वियकायजोगि-सासनसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी,

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, मव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों

नं. २८०

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.				न.	पंचे.	त्रस.	वै.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
					दे.							अच.			अ.				अना.

नं. २८१

वैक्रियिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
सा.	सं.प.				न.	पंचे.	त्रस.	वै.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका.
					दे.							अच.							अना.

तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेउव्वियकायजोगि-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{६६} ।

वेउव्वियकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो,

वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संबन्धी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिककाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्-दृष्टि गुणस्थान, एक संबन्धी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों

नं. २८२

वैक्रियिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२
संय.	पं.				न.	पंच.	त्रस.	वै.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
					द्वे.						ज्ञान.		अव.					अना.
											मिश्र.							

तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२३} ।

वेउच्चियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एगो जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउच्चियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच गणाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२४} ।

लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि, और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २८३

वैक्रियिककाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
छ.	सं. प.				न.	पं.	प्र.	वै.			मति.	असं.	के.द.	भा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					दृ.		प्र.				श्रुत.		विना.		क्षा.				अना.
											अव.				क्षायो.				

नं. २८४

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	२	६	७	४	२	१	१	१	३	४	५	२	३	द्र. १	२	५	१	१	२
मि.	सं.अ.	अ.			न.	पं.	प्र.	वै.	मि.		कुम.	असं.	के.द.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.					दे.						कुश्रु.		विना.	भा. ६	अ.	सासा.			अना.
अवि.											मति.				क्ष.	औ.			
											श्रुत.				क्षायो.				
											अव.								

वेउव्वियमिस्सकायजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५} ।

^{२६}वेउव्वियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी,

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबन्धी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत-लेस्या, भावसे छहों लेस्यापं; भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संबन्धी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति,

१ ण सासणो णारयापुण्णे । गो. जी. १२८.

नं. २८५

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	२	१	१	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
मि.	सं.अ.	अ.		न.	प.	त्रस.	वै.मि.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.मि.	सं.	आहा.	साका.	अना.		
				दे.					कुशु.		अच.	भा. ६	अ.						

नं. २८६

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	२	१	१	२	४	२	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
सा.	सं.अ.	अ.		दे.	प.	त्रस.	वै.मि.	स्त्री	पु.	कुशु.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म. सा.	सं.	आहा.	साका.	अना.
													अच.	भा. ६					

तसकाओ, वेउच्चियमिस्सकायजोगो, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेउच्चियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, वे गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेउच्चियमिस्सकायजोगो, पुरिस-णवुंसयवेदा त्ति दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८७} ।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे जघन्य कापोत लेश्या और तेज, पञ्च तथा शुद्ध लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संश्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २८७

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	२
वि.	सं.अ.	अ.		न.	पंचे.	ज्ञ.	वे.मि.	पु.		मति.	असं.	के.द	का.	म.	सं.	आहा.	साका.
ले.				दि.				न.		श्रुत.		विना.	सा.४	क्षी.			अना.
										अव.		विना.	का.ते.	क्षायो.			
												प.शु.					

आहारकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, आहार-कायजोगो, पुरिसवेदो, इत्थि-णउंसयवेदा णत्थि । किं कारणं ? अप्पसत्थवेदेहि सहा-हारिद्धी ण उप्पज्जदि त्ति । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, मणपज्जवणाणं णत्थि । कारणं, आहार-मणपज्जवणाणं सहाणवद्वानलक्खणविरोहादो । दो संजम, परिहारसुद्धिसंजमो णत्थि; एदेण वि सह आहारसरीरस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, उवसमसम्मत्तं णत्थि; एदेण वि सह विरोधादो । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८८} ।

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोग, एक पुरुषवेद होता है तथा स्त्री और नपुंसकवेद नहीं होते हैं ।

शंका—आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि, अप्रशस्त वेदोंके साथ आहारकक्राद्धि नहीं उत्पन्न होती है ।

वेद आलापके आगे चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं । मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका यह कारण है कि आहारकक्राद्धि और मनःपर्ययज्ञानका सहानवस्थानलक्षण विरोध है अर्थात् ये दोनों एक साथ एक जीवमें नहीं रहते हैं । ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं परंतु परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है; क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है । संयम आलापके आगे आदिके तीनों दर्शन, द्रव्यसे शुक्लेश्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं, परंतु उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है; क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है । सम्यक्त्व आलापके आगे संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ मणपज्जवपरिहारो पट्ठुवसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एकपगदे णत्थि त्ति असेसयं जाणे ॥

गो. जी. ७२८.

नं २८८

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप.

शु.जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	४	३	२	३	द्र. १	१	२	१	१	२
प्रम.	मं.प.				म.पंचे.	त्रस.	आहा.	पु.		मति.	सामा.	के.द.	शु.	मं.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
										श्रुत.	छेदो.	विना.	मा. ३		क्षायो.			अना.
										अव.			शुम.					

आहारमिस्सकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सकायजोगो, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, दो संजमा, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३००} ।

कम्मइयकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सजोगिकेवल्लिं पडुच्च दो पाण, सेसाणं सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण; चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं. मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं, भव्यसिद्धिक; क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कर्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अधिरतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंसे लेकर पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तकालभावी सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; प्रतर और लोकपूरण समुद्रातगत सयोगिकेवलीकी अपेक्षा आथु और कायबल ये दो प्राण होते हैं तथा शेष जीवोंके क्रमशः सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कर्मणकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी

१ प्रतिष्ठा ' काउ-सुक्कलेस्सा ' इति पाठः ।

नं. २८९

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	क्षा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	१	१	४	३	२	३	द्र. १	१	२	१	१	२
सं.	अ.	अ.			म.	पु.	त्रस.	आ.मि.	पु.		मति.	सामा.	के.द.	का.	भा.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
											भुत	छेदो.	विना.	भा. ३	शुम.	क्षायो.			अना.
											अव.								

कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जव-विभंगणाणेहि विणा छ णाणाणि, जहाक्खाद-विहारसुद्धिसंजमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, अहवा छहि पज्जत्तीहि पज्जत्त-पुव्वसरीरं पेक्खिखरुणुवयारेण दब्बेण छ लेस्साओ हवंति । भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, णोकम्मग्गहणाभावादो । कम्मग्गहणमत्थित्तं पडुच्च आहारित्तं किण्ण उच्चदि त्ति भणिदे ण उच्चदि; आहारस्स तिण्णिण-समय-विरहकालोव-लद्धीदो । सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा^{३९} ।

है, मनःपर्ययज्ञान और विभंगावधिज्ञानके विना छद्म ज्ञान, यथाख्यात विहारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे शुरुलेश्या होती है। अथवा, केवलीके छद्मों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त पूर्व शरीरको देखकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा छद्मों लेश्याएं होती हैं। भावसे छद्मों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिकः सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। अनाहारक होते हैं। आहारक नहीं होनेका कारण यह है कि कर्मणकाययोगी जीव नोकर्मवर्गणाओंको ग्रहण नहीं करते हैं।

शंका—कर्मणकाययोगकी अवस्थामें भी कर्मवर्गणाओंके ग्रहणका अस्तित्व पाया जाता है, इस अपेक्षा कर्मणकाययोगी जीवोंको आहारक क्यों नहीं कहा जाता ?

समाधान—ऐसा शंकाकारके कहने पर आचार्य उत्तर देते हैं कि उन्हें आहारक नहीं कहा जाता है, क्योंकि, कर्मणकाययोगके समय नोकर्मणाओंके आहारका अधिक से अधिक तीन समयतक विरहकाल पाया जाता है।

आहार आलापके आगे साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

नं. २९०

कर्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	७	६अ.	७	४	४	५	६	१	३	४	६	२	४	२	५	२	१	२
मि.	अप.	५	७	४			कर्म.	अपच.	अकृपा.	मनः.	असं.		शु.	भ.	मि.	सं.	अना	साका.
सासा.		४	६	अणसं.						विभं.	यथा.		अथ.	अ.	सा.	असं.		अना.
अवि.		५	४							विना.			६		क्षा.	अनु.		यु.उ.
सयो.		३,२											भा. ६		क्षायो.			
															औप.			

कम्मइयकायजोग-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

कम्मइयकायजोग-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया,

कर्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, अपर्याप्तकालभावी सात अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कर्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेइया, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कर्मणकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां; सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कर्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेइया, भावसे छहों

नं. २९१

कर्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	१	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	२	१
मि.	अप.	५अ.	७					कर्म.			असं.	चक्षु.	शु.	म.	मि.	सं.	अना.	साका.
		४अ	६								कुशु.	अच.	मा. ६	अ.	असं.		अना.	अना.
			५															
			४															
			३															

सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११२} ।

कम्मइयकायजोग-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जविसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, दो वेद, इत्थिवेदो णत्थि; चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११३} ।

लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कर्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कर्मणकाययोग, पुरुष और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, स्त्रीवेद नहीं होता है । चारों कषाय, आविके तीन ज्ञान, असंयम, आविके तीन दर्शन, द्रव्यसे शुक्लेश्या, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २९२

कर्मणकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	१	३	४	२	१	२	द्र. १	१	२	१	१	२
सा.	सं.	अ.	अ.		ति.	पूर्व.	त्रस.	कर्म.			कुम.	असं.	चक्षु.	शु	म.	सासा.	सं.	अना.	साका.
					दे.						कुशु.		अच.	भा. ६					अना.

नं. २९३

कर्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	२	१	१	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	२	१	२
जीव.	सं.	अ.	अ.			पूर्व.	त्रस.	कर्म.	न.		मति.	असं.	के.द.	शु.	म.	औप.	सं.	अना.	साका.
									पु.		श्रुत.		विना.	भा. ६		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			अना.

कम्मइयकायजोग-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ अपञ्जत्तीओ, दो पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खादसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, द्व्वेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, भावेण सुक्कलेस्सा चेव; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{११} ।

सुगममजोगीणं ।

एवं जोगमग्गणा समत्ता ।

वेदानुवादेण अनुवादो जहा मूलोघो णीदो तथा णेदव्वो^१ । णवरि णव गुणट्ठाणाणि त्ति वत्तव्वं; वेदे णिरुद्धे उवरिमगुणट्ठाणाभावादो । अत्थि खीणसण्णा, अवगदजोगो,

कर्मणकाययोगी सयोगिकेवलियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कर्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे शुक्लेश्या, अथवा औदारिकशरीरकी अपेक्षा छहों लेश्याएं होती हैं, किन्तु भावसे शुक्लेश्या ही होती है। भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिप्त और असंक्षिप्त इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

अयोगी जीवोंके आलाप सुगम ही हैं ।

इसप्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे कथन करने पर आलापोंका कथन जैसा मूल ओघालापमें लिया गया है वैसे यहाँ पर भी लेना चाहिये । विशेष बात यह है कि यहाँ आदिके नौ गुणस्थान होते हैं ऐसा कहना चाहिए; क्योंकि वेदनिरुद्ध अवस्थामें अर्थात् वेदोंसे युक्त रहने पर ऊपरके गुणस्थानोंका अभाव है । तथा यहाँ पर क्षीणसंज्ञा, अपगतयोग, अपगतवेद, अकषाय, अलेश्य,

१ अ प्रती ' तं जहा णेयव्वा ' क प्रती ' जं जहा णेदव्वो ' आ प्रती ' तम्हा णेदव्वो ' इति पाठः ।

नं. २९४

कर्मणकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	२	०	१	१	१	१	०	०	१	१	१	द.१	१	१	०	१	२
सयो.	अप.	पु.	आयु.	कीणसं.	म.	पं.	त्रस.	कर्म.	अपग.	अकषा.	केव.	यथा	के.	शु.	म.	क्षा.	अनु.	अना.	साका.
			काय,											अथ.६					अना.
														मा.१					यु. उ.
														शु.					

अवगदवेदो, अकसाओ, अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति चि एदे आलावा ण वत्तव्वा । केवलणाणं, केवलदंसणं, सुहुमसांपराइयसुद्धिमंजमो जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो च अवणेदव्वा । अण्णिदिया वि अत्थि, अकाइया वि अत्थि, एदे वि आलावा ण वत्तव्वा ।

“इत्थिवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्टाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, आहार-आहारमिस्सकायजोगेहि विणा तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, मणपज्जव-केवलणाणेहि विणा छ णाण, परिहार-सुहुमसांपराइय-जहाक्खादविहारसुद्धि-संजमेहि विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभव-

भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, संबन्धिक और असंबन्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त स्थान, इतने आलाप नहीं कहना चाहिए । तथा केवलज्ञान, केवलदर्शन, सूक्ष्मसाम्परायशुद्धिसंयम, और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम इतने आलाप भी निकाल देना चाहिए । और अनिन्द्रिय भी होते हैं, अकायिक भी होते हैं, ये आलाप भी नहीं कहना चाहिए ।

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; संज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण; असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना शेष छ ज्ञान, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयमके विना शेष चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व,

नं. २९५

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	३	१	१	१३	१	४	६	४	३	२	६	२	२	२
आदिके	सं. प.	६अ.	७	ति.	पं.	ज्ञा.	आहा. व	स्त्री.	मनः	असं	के द.	मा. ६	म.	सं.	आहा.	साका.		
	सं. अ.	५प.	९	म.	दे.	विना.	केर.	विना	स मा.	केदो.		अ.	असं.	अना.	अना.			
	असं. प.	५अ.	७															
	असं. अ.																	

सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वयाणि, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२६} ।

इत्थिवेद-अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणद्वयाणि, वे जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो,

संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २२६

स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	६	४	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
आदिक.	सं.प.	५	९	ति.	पं.	त्र.	म. ४	स्त्री.	मन.	असं.	के.द.	के.द.	मा. ६	भ.	अ.	सं.	सं.	आहा.	साका.
	असं.प.			म.	दे.		व. ४	औ. १	केव.	देश.	विना.	विना.	विना.			असं.	असं.		अना.
							वे. १				विना.	सामा.	लेदो.						

दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तमिदि दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा^{३१७} ।

“इत्थिवेद-मिच्छादृष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्पक्त्व ये दो सम्पक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण और सात प्राण, नौ प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. २९७

स्त्रीवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६अ.	७	४	३	१ १	३	१	४	२	१	२	द्र. २	२	२	२	२	२
मि.	सं. अप.	५	७		ति	पं. त्र.	औ. मि.	खी.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.	असं.	५			म.		वे. मि.			कुशु.		अच.	शु.	अ.	सा.	असं.	अना.	अना.
					दे.		कर्म.						भा. ३					
													अशु.					

नं. २९८

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	३	१ १	१३	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.	सं. प.	६अ.	७		ति	पं. त्र.	आहा. २	खी.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अप.	५प.	९		म.		विना.					अच.		अ.	असं.	अना.	अना.	अना.
	असं. प.	५अ.	७		दे.													
	असं. अप.																	

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२११} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, वे जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २१९

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क. ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	२	१	२	१	२
मि.	सं.प.	५	९		ति.	पंच.	तस.	म. ४	स्त्री.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.प.				म.		व. ४					अच.	अ.		असं.			अना.
					दे.		औ. १											
							वै. १											

असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३००} ।

इत्थिवेद-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जतीओ छ अपज्जतीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०१} ।

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्याएं; भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सांख्यिक, असंख्यिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सांख्यिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिषु 'तेड' इत्यधिकः पाठः समस्ति ।

नं. ३००

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	७	४	३	१	१	३	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	सं.अप	अ.	७		ति.प.	त्रस.	औ	मि.	स्त्री.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
	असं.	५			म.		वै.मि.	कर्म.		कुश्रु.		अच.	शु.	भा. ३	अ.	असं.	अना.	अना.	
		अ.			दे.								अशु.						

नं. ३०१

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	३	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प.	प.	७		ति.	पंचे.	त्रस.	आहा.	स्त्री.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सा.	सं.	आहा.	साका.	
	सं.अ.	६			म.		द्विक.	विना.				अच.					अना.	अना.	
		अ.			दे.														

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०२} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग; औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां; पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

१ प्रतिपु ' तेउ ' इत्यधिकः पाठः समास्ति ।

नं. ३०२

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.	प.			ति.	पुं.	त्रस.	म. ४	खी.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					दे.			व. ४					अच.						अना.
								औ. १											
								वै. १											

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२०२} ।

इत्थिवेद-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि गाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२०३} ।

इत्थिवेद-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो,

अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके घिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अहानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेस्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी असंयतसम्पग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुण-

नं. ३०३

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	१	४	२	१	२	द्र.२	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.	अ.			ति.	प.	यस.	औ.मि वै.मि. कर्म.	स्त्री.		कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अच.	का.शु. भा.३ अशु.		सा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. ३०४

स्त्रीवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र.६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.				ति.	पंचे.	यस.	म.४ व.४ औ.१ वै.१	स्त्री.		अज्ञा. ज्ञान. मिश्र.	असं.	चक्षु. अच.	भा.६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका. अना.

छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

^{३५} इत्थिवेद-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

खीवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और

नं. ३०५

खीवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अकि.	सं. प.			ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	खी.		मति.	अस.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
				म. ३			व. ४	औ. १			श्रुत.		विना.			क्षा.			अना.
				दे.				वै. १			अव.					क्षायो.			

नं. ३०६

खीवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देश.	सं. प.			ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	व. ४	खी.		मति.	देश.	के.द.	मा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
				मं.			व. ४	औ. १			श्रुत.		विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

^{३०७} इत्थिवेद-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, आहारदुगं णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, मणपज्जवणाणेण विणा तिण्णि णाण, परिहारसंजमेण विणा दो संजम, कारणं आहारदुग-मणपज्जवणाण-परिहारसंजमेहि वेददुगोदयस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं किन्तु आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होता है । योग आलापके आगे स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञानके विना आदिके तीन ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना आदिके दो संयम होते हैं । यहाँपर आहारकद्विक मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयमके नहीं होनेका कारण यह है कि आहारकद्विक, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयमके साथ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदय होनेका विरोध है । संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी

नं. ३०७

स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	सांज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र. ६	२	३	१	१	२
प्रम.	सं.प.				म.	पं.	मस.	म. ४ व. ४ औ. १	स्त्री.		मति. श्रुत. अव.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	भा. ३.म. शुभ.	औ. क्षा. क्षायो.		सं.	आहा.	साका. अना.

अणागारुवजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ, भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०८} ।

इत्थिवेद-अवुब्बयरणणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ; मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ

और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन,

नं. ३०८

स्त्रीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	१	१	४	३	२	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
ल	सं.प.			आहा. विना.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	स्त्री.		मति. श्रुत. अव.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	मा. ३ शुम.	म.	औप. क्षा. क्षायो	सं.	आहा.	साका. अना.

लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा, भवसिद्धिया, वेदगेण त्रिणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०९} ।

इत्थिवेद-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३१०} ।

द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्लेस्या; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं; मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्लेस्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३०९

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अप.	सं. प.			आहा विना.	म.	पंचे.	सं.	म. ४ व. ४ औ. १	स्त्री.		मति. भ्रुत. अव.	सामा. छेदी.	के.द. विना.	मा. १ शुक्.	म.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं ३१०

स्त्रीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अनि. अप. सं.				मै. म. प	म. पंचे.		त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	स्त्री.		मति. भ्रुत. अव.	सामा. छेदी.	के.द. विना.	मा. १ शुक्.	म.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

पुरिसवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण
सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग,
पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त पाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ
लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३११} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ
पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदीओ,
पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, सत्त पाण, पंच
संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

पुरुषवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त,
संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहों पर्याप्तियां,
छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण,
सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
पन्द्रहों योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय
और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों
लेक्ष्यापं, भव्यसाद्धिक, अभव्यसाद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक,
अनाहारक; साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पुरुषवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान,
संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों
प्राण, नौ प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारक-
काययोग ये ग्यारह योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान,
सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य

नं. ३११

पुरुषवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	मी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
९	४	६प.	१०	४	३	१	१	१५	१	४	७	५ असं.	३	द्र. ६	२	६	२	२	२
	सं. प.	६अ.	७		ति.	पंचे.	त्रस.		पु.		केव.	देश.	के.द.	भा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	५प.	९		म.						विना.	सामा.	विना.		अ.		असं.	अना.	अना.
	असं.प.	५अ.	७		दे.							छेदी.							
	असं.अ.											परि.							

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

^{३२३}तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता

और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये चार योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान; असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक;

नं. ३१२

पुरुषवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	११ म. ४	१	४	७	५ असं.	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
	सं.प.	५	९		ति. पं.	त्र.	व. ४	वु.			केव.	देश.	के.द.	मा. ६	भ.		सं.	आहा.	साका.
	असं.प.				म. दे.		औ. १				विना.	सामा.	विना.		अ.		असं.		अना.
							वै. १					छेदो.							
							आहा. १					परि.							

नं. ३१३

पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६अ.	७	४	३	१	१	४	१	४	५	३	३	द्र. २	२	५	२	२	२
मि.	सं. अ.	५अ.			ति.	म.	मि.	औ. मि.	पु.		कुम.	असं.	के.द.	का.	भ.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सा.	असं.अ.				म. दे.		मि.	वै. मि.			कुश्रु.	सामा.	विना.	शु.	अ.	विना.	असं.	अना.	अना.
अवि.							आ. मि.				मति.	छेदो.		मा. ६					
प्रम.							कर्म.				श्रुत.								
											अव.								

होति अणागारुवजुत्ता वा ।

पुरिसवेद-मिच्छाद्विणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, चत्तारि जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्ताओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग; पुरुष-वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां-पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. ३१४

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञी.	आ.	उ.
१	४	६प.	१०	४	३	१	१	२३	२	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.	सं. प.	६अ.	७		ति.	पं.	त्रस.	आहा.	पु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.	५प.	९		म.			द्विक.					अच.		अ.		असं.	अना.	अना.
	असं.प.	५अ.	७		दे.			विना.											
	असं.अ.																		

असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१११} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गर्इओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११२} ।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संश्ली-अपर्याप्त और असंश्ली-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३१५

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	२	२	१	२
मि.	स. प.	५	९		ति.	पंचे.	त्रस.	म. ४	पु.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.प.				म.	दे.		व ४					अच.		ज.	असं.			अना.
								औ. १											
								वे. १											

नं. ३१६

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	२	६अ.	७	४	३	१	१	३	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	स. अ.	५	७		ति.	पं.	त्र.	औ. मि.	पु.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	असं.अ.				म.	दे.		वे. मि.			कुशु.		अच.	शु.	ज.	असं.	अना.		अना.
								कर्म.						भा. ६					

पुरिसवेद-सासणसम्माइट्टिप्पहुडि जाव पढम-अणियट्टि चि ताव मूलोघ-भंगो ।
णवरि सव्वत्थ पुरिसवेदो चैव वत्तव्वो । सासण-सम्मामिच्छा-असंजदसम्माइट्टीणं तिण्णि
गदीओ वत्तव्वाओ ।

“णवुंसयवेदानं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्टाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अप-
ज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण
छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ देवगदी
णत्थि, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तेरह जोग, णवुंसयवेद,

पुरुषवेदी जीवोंके सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके
प्रथम भागतकके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि वेद
आलाप कहते समय सर्वत्र एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए । तथा सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य-
ग्मिथ्यादृष्टि और असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके गति आलाप कहते समय नरकगतिके विना
शेष तीन गतियां कहना चाहिए ।

नपुंसकवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, चौदहों
जीवसमास, संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी-पंचेन्द्रिय
और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रिय जीवोंके चार
पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंसे लगाकर एकेन्द्रिय जीवोंतक क्रमशः
पर्याप्त अपर्याप्तकालमें दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण;
सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगति,
तिर्यचगति और मनुष्यगति ये तीन गतियां होती हैं परंतु नपुंसकवेदी जीवोंके देवगति नहीं
होती है । एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग
और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञान

नं. ३१७

नपुंसकवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.	
९	१४	६प.	१०,७	४	३	५	६	१३	१	४	६	४	३	द्र. ६	२	६	२	२	
आदिके.		६अ.	९,७		न.			आहा.			मनः.	असं.	के.द.	भा. ६	म.		सं.	साका.	
		५प.	८, ६		ति.			द्विक.			केव.	देश.	विना.		अ.		असे.	अना.	
		५अ.	७, ५		म.			विना.			विना.	सामा.							अना.
		४प.	६, ४									छदी.							
		४अ.	४, ३																

चत्वारि कसाय, छण्णाण, चत्वारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्वारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्वारि पाण, चत्वारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्वारि कसाय, छ णाण, चत्वारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८} ।

और केवलज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुण-स्थान, पर्याप्तकालभावी सात जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञानके विना छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३१८

नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
९	७	६	१०	४	३	५	६	१०	१	४	६	४	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
आदिके.	पर्या.	५	९		न.			म. ४	न.		मनः	असं.	के.द.	सा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
		४	८		ति.			व. ४			केव.	देश.	विना.		अ.		असं.		अना.
		७	६		म.			औ. १			विना.	सामा.							
		४						वै. १				छेदी.							

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासण-खइय-वेदगमिदि चत्तारि सम-त्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हींति अणागारु-वजुत्ता वा^{३१} ।

णवुंसयवेद-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, चौदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ; दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छह पाण

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तकालभाषी सात जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासा-दन, श्वायिक और वेदक इसप्रकार चार सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदह जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण;

नं. ३१९

नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	७	६अ.	७	४	३	५	६	३	१	४	५	कुम.	१	३	२	२	४	२	२
मि.		५अ.	७		न.			ओ.मि.	न.		कुक्षु.	असं.	के.द	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सां.		४अ.	६		ति.			वै.मि.			मति.		विना.	धु.	अ.	सासा.	असं.	अना.	अना.
अ.			५		म.			कार्म.			श्रुत.			भा.३		ज्ञा.			
			४, ३								अव.			अशु.		सायो.			

सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया तेरह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

तेसिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण और चार प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; नपुंसकवेद; चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक;

नं. ३२०

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु. जी. प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१. १४. ६प.	२०, ७	४	३	५	६	१३	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.	६अ.	९, ७		न.		आहा.	छ		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहं.	संज्ञि.
	५प.	८, ६		ति.		द्विक.					अच.		अ.	असं.	अना.	अना.	अना.
	५अ.	७, ५		म.		विना.											
	४प.	६, ४															
	४अ.	४, ३															

मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वारणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२१

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	७	६	१०	४	३	५	६	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९		न.			म. ४	न.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८		ति.			व. ४					अच.		अ.	असं.			अना.
			७		म.			औ. १											
			६					वै. १											
			४																

नं. ३२२

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	७	६	७	४	३	५	६	३	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	प्रा.	५	७		न.			औ.मि.	न.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	छ	४	६		ति.			वै.मि.			कुशु.		अच.	शु.	अ.	असं.			अना.
			५		म.			कर्म.						मा. ३					अना.
			४											अज्ञु.					

णवुंसगवेद-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गइओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, सासणगुणेण जीवा गिरयगदीए ण उप्पज्जंति तेण वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{३३३} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विक, और वैक्रियिकमिश्रकाययोगके विना शेष बारह योग होते हैं। यहां पर वैक्रियिकमिश्रके नहीं होनेका कारण यह है कि सासादन गुणस्थानसे भर कर जीव नरकगतिमें नहीं उत्पन्न होते हैं, इसलिए यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है। नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक,

नं. ३२३

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	१२म.४	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प.	प.	७	न.	पुं.	पुं.	व. ४	न			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ	६		ति.			औ. २						अच.					अना.	अना.
	अ.			म.			वै. १												अना.
							का. १												

भवेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
ह्वेति अणागारुवजुत्ता वा^{३२४} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ
अवज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, देव-णिरयगदी णत्थि । पंचि-
दियजादी, तसकाओ, वे जोग, वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि
कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भवेण किण्ह-णील-
काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता ह्वेति अणागारुवजुत्ता वा^{३२५} ।

सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण,
चारों संज्ञापं, तिर्यन्वगति और मनुष्यगति ये दो गतियां होती हैं; किन्तु देवगति और
नरकगति नहीं होती है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मण-
काययोग ये दो योग होते हैं; किन्तु यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है । नपुंसकवेद,
चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल
लेद्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेद्यापं, भव्यसिद्धिक सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक,
आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२४

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०म.४	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				न.	पंचे.	त्रस.	व. ४	नपुं.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सा.	सं.	आहा.	साका.
					ति.		म.	औ. १					अच.					अना.	अना.
					म.			वै. १											

नं. ३२५

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.	अ.			ति.	पं.	त्रस.	औ.मि.	न.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.शु.	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका.
					म.			कर्म.			कुशु.		अच.	मा. ३				अना.	अना.
														अशु.					

णउंसयवेद-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३१६} ।

णउंसयवेद-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ,

नपुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत्त-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये बारह योग होते हैं। किन्तु यहां पर औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता। नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक

नं. ३२६

नपुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.	प.			न.	न.	त्रस.	म. ४	न.		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
					ति.	पुं.		व. ४			३		अव.						अना.
					म.			औ १			ज्ञान.								
								वै. १			मिश्र.								

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२७} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२८} ।

और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; नपुंसक-वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२७

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१२	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अति.	सं.प.	६अ.	७	न.	पुं.	नसं.	म. ४	न.		मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.	
	सं.अं.			म.			व. ४			श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.	
							औ. १			अव.					क्षायो.				
							वै. २												
							कर्म. १												

नं. ३२८

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अति.	सं.प.			न.	पुं.	नसं.	म. ४	न.		मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.	
				म.			व. ४			श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.	
							औ. १			अव.					क्षायो.				
							वै. १												

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णिणा काउलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं लद्धं । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२९} ।

णउंसयवेद-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे जघन्य कापोतलेश्याः भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, होते हैं; यहां पर क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके होनेका कारण यह है कि कृतकृत्यवेदकी अपेक्षासे यहां पर क्षायोपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है । संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों घचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं, भव्यसिद्धिक,

नं. ३२९

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द. २	१	२	१	२	२
क.	सं. अ.				न.	पं.	त्र.	वे. मि. कार्म.	न.		मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	का. शु. मा. १ का.	म.	क्षा. क्षायी.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

लेस्ता, भवेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्ता; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

णउंसयवेद-पमत्तसंजदप्पहुडि जाव पढम-अणियट्टि ति ताव इत्थिवेद-भंगो ।
णवरि सव्वत्थ णउंसयवेदो वत्तव्वो ।

अवगदवेदानं भण्णमाणे अत्थि छ गुणद्वानाणि अदीदगुणद्वानं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस पाण चत्तारि पाण दो पाण एम पाण अदीदपाणो वि अत्थि, परिग्गह-सण्णा खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो,

औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागतकके आलाप खीवेदी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि वेद आलाप कहते समय सर्वत्र एक नपुंसकवेद ही कहना चाहिए ।

अपगतवेदी जीवोंके आलाप कहने पर—अनिवृत्तिकरणके अवेद भागसे लेकर अन्तके छह गुणस्थान और अतीतगुणस्थान भी होता है, संज्ञा-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास स्थान भी होता है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीत-पर्याप्तस्थान भी होता है, दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी होता है, परिग्रहसंज्ञा तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी होता है, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी होती है, पंचेन्द्रियजाति तथा अतिन्द्रियस्थान भी होता है, त्रसकाय तथा अकायस्थान भी होता है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग तथा कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग और अयोगस्थान भी होता है, अपगतवेद, चारों कषाय

१ प्रतिषु ' पंचिदिय अणिदियत्तं अत्थि ' इति पाठः ।

नं. ३३०

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
सं.	प.				ति.	प.	त्रस.	म. ४	न.		मति.	देश.	के.द.	मा.३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
सं.					म.	प.		व. ४			श्रुत.		विना.	शुम.		क्षा.			अना.
								औ. १			अव.					क्षायो.			

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, चत्तारि संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{३३} ।

विदिय-अणियट्ठिप्पहुडि जाव सिद्धा त्ति ताव मूलोघ-भंगो ।

एवं वेदमग्गणा समत्ता ।

कसायाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगा । णवरि दस गुणट्ठणाणि वत्तव्वाणि । अदीदगुणट्ठणं, अदीदजीवसमासो, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी,

तथा अकषायस्थान भी होता है, मतिज्ञान आदि पांचों ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात ये चार संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यायं, भावसे शुक्कलेश्या तथा अलेक्ष्यास्थान भी होता है; भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

अपगतवेदी जीवोंके अनिवृत्तिकरणके द्वितीयभागसे लेकर सिद्ध जीवोंतकके प्रत्येक स्थानके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई ।

कषायमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि कषायमार्गणामें दश गुणस्थान कहना चाहिए । यहां पर अतीतगुणस्थान, अतीत-जीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, क्षीणसंज्ञा, सिद्धगति, अनिन्द्रियत्व, अकायत्व,

नं. ३३१

अपगतवेदी जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
६	२	६प.	१०,४	१	१	१	१	११	०	४	५	४	४	द्र. ६	१	२	१	२	२
अनि.	सं.प.	६अ.	२,१	प.	म.	पं.	त्र.	म. ४	अपग.	अकषा.	मति.	सा.		मा. १	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
से	सं.अ.	प.	प्रा.	क्षणसं.	सिद्धग.	अति.	अका.	व. ४			श्रुत.	ले.		शु.	अनु.	क्ष.	अनु.	अना.	साका.
अयो.	अती. जो.	अती. प.	अती. प्रा.	क्षणसं.	सिद्धग.	अति.	अका.	औ. २			अव.	सू.		अले.	अनु.			अना.	यु. उ.
अती. शु.	अती. जो.	अती. प.	अती. प्रा.	क्षणसं.	सिद्धग.	अति.	अका.	कर्म. १			मनः.	य.							यु. उ.
								अयो.			केव.	अनु.							

अणियद्वयत्तं अकायत्तं, अजोगो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसणं, दब्ब-भावेहि अलेस्साओ, पेव भवसिद्धिया, पेव सण्णिणो पेव असण्णिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ति गत्थि ।

क्रोधकसायाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाराणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एहंदिज्जादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद-अभवदवेदो वि अत्थि, क्रोधकसाय, सत्त पाण, पंच संजम सुहुम-जहाक्खादसंजमा गत्थि, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

अयोग, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेक्ष्यत्व, भव्यसिद्धिक विकल्पसे रहित, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त इतने स्थान नहीं होते हैं ।

क्रोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, चौदह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेंद्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, क्रोधकषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, पांच संयम होते हैं, किन्तु यहां पर सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयम नहीं होते हैं; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व; संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ आ प्रती 'अणियद्वयत्तं पि अत्थि' इति पाठः ।

न. ३३२

क्रोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२४	६ प.	२०, ७	४	४	५	६	२५	३	१	७	५	३	द. ६	२	६	२	२
		६ अ.	९, ७						उपग.	क्रो.	केव.	सूक्ष्म.	के. द.	मा. ६	म.	सं.	आहा.	साका.
		५ प.	८, ६						उपग.	विना.	यथा	विना.		अ.	असं.	अना.	अना.	
		५ अ.	७, ५								विना.							
		४ प.	६, ४															
		४ अ.	४, ३															

तेसिं चव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, कोधकसाओ, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ,

उन्हीं क्रोधकषायी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां; पृथिवीकाय आदि छहों काय, पर्याप्तकाल-भावी ग्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतवेदस्थान भी है, क्रोधकषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन वर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यपं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिक-

नं. ३३३

क्रोधकषायी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
९	७	६	१०	४	४	५	६	१२म.४	३	१	७	५	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
आदिके.	पर्या.	५	९					व. ४	उपप.	को.	केव.	सूक्ष्म.	के.द.	मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
		४	८					औ. १		विना.	विना.	यथा.	विना.		अ.		असं.		अना.
		७	६					वै. १											
		४						आ. १											

पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३४} ।

क्रोधकसाय-मिच्छाहृदीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ,

मिश्रकाययोग, आहारकामिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान; असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, चोद्दहों जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकामिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं,

नं. ३३४

क्रोधकषायी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इ. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	७	६अ.	७	४	४	५	६	४	३	१	५	३	३	३	२
मि.	अप.	५अ.	७					क्रो.	कुम.	असं.	के.द.	का.	म.सम्य.	सं.	आहा.
सा.		४अ.	६						कुश्रु.	सामा.	विना.	शु.	अ.	विना.	असं.
अभि.			५						मति.	छेदो.		मा.६		अना.	अना.
प्रम.			४						श्रुत.						
			३						अव.						

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३५} ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गंदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३६} ।

भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक; आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेस्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३३५

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६प.	२०, ७	४	४	५	६	१३	३	१	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.		६अ.	९, ७					आहा. २	क्रो.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	अच.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		५प.	८, ६					विना.							अ.	असं.	अना.	अना.	
		५अ.	७, ५																
		४प.	६, ४																
		४अ.	४, ३																

नं. ३३६

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	१	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.		पर्या.	५	९				म. ४	क्रो.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	अच.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
			४	८				व ४							अ.	असं.			अना.
			७					औ. १											
			६ ४					द्वै. १											

तेसिं चैव अपञ्जत्तानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३३७} ।

कोधकसाय-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां पांच अपर्याप्तियां; चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना शेष तेरह योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं,

नं. ३३७

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	१	२	१	२	द्र.२	२	१	२	२	२
मि.	अप.	५	७					औ.मि.	क्रो.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
		४	६					वै.मि.		कुशु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.	अना.	
		४	३					कर्म.					मा.	६					

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३८} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३९} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञायं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग; औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन; द्रव्य और भावसे छहों लेस्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों

नं. ३३८ क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१३	३	१	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सासा.	सं.प.	५अ.	७		पं.	त्र.	आहा.	२	क्रो.	अज्ञा.	असं.		चक्षु.	मा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.						विना.						अच.					अना.	अना.

नं. ३३९ क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	१	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सासा.	सं.प.					पं.	त्र.	म. ४		क्रो.	अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४					अच.						अना.
								औ १.											
								वै. १											

अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४०}।

क्रोधकसाय-सम्मामिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ,, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४१}।

संज्ञापं, नरकगतिको छोड़ कर शेष तीन गतियां; पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, क्रोधकसाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकषायी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों धचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३४० क्रोधकषायी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	३	२	१	३	३	२	२	२	२	द. २	१	१	१	२	२
सा.	कं			ति.	पंचे.	त्र.	औ.मि.	वै.मि.	को.	कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.	अना.
	कं			म.	दे.		कर्म.			कुक्षु.		अच.	सु.	भा.६				अना.	अना.

नं. ३४१ क्रोधकषायी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	२	६	१०	४	४	१	२	१०	३	२	३	१	२	द. ६	१	२	१	१	२	
सम्य.	सं. प.				पंचे.	त्रसं.	म. ४	व. ४	औ. १	वै. २	को.	ज्ञान.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
											अज्ञा.	मिश्र.	अच.					अना.	अना.	

क्रोधकसाय-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एणं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हेते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं ३४२

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	इ.
१	२	६प.	१०	४	४	२	१	१३	३	१	३	२	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
छ	सं.प.	६अ.	७				आहा.२	विना.	को.	माति.	असं.	के.द.	विना.	सा. ६म.	औप.	क्षा.	सं.	आहा.	साका.
छ	सं.अ.					पं.	विना.		क्षुत.	अव.					क्षा.		अना.		अना.

अणमात्स्वजुत्ता वा^{३४३} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद इत्थिवेदो णत्थि; क्रोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणगारुवजुत्ता वा^{३४४} ।

साकारोपयोगी और अमाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सप्त प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औहारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुष और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, किन्तु यहां पर श्लोके नहीं होता है; क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुद्ध लेख्यापं, भावसे छहों लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अमाकारोपयोगी होते हैं ।

न ३४३

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

सु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	१	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
जति.	कं.प.					पंच.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १ अ. १	क्रो.	मति.	श्रुत. अव.	असं.	के.द. विना.	भा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ३४४

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

सु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६अ.	७	४	४	२	२	३	२	२	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
जति.	कं.अ.					पं.	त्र.	औ. मि. वे. मि. कर्म.	पु. नं.	क्रो.	मति. श्रुत. अव.	असं.	के.द. विना.	का. शु. भा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

क्रोधकसाय-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासे, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

क्रोधकसाय-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, (मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ,) चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भव-

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशाविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लक्ष्यापं;

१ प्रतिषु क्रोधकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ३४५

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प. प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	ह.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	१	३	१	३	१	३	१	१	२
दिक.	सं. प.			ति म.	पिं.	जस.	म. ४ व. ४ ओ. १	को.	मति. क्षत. अव.	देश.	के. द. विमा.	द्र. इ. मा. ३ सुम.	म. औप. क्षा. क्षायो.	सं. आहा.	साका. अना.			

सिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५६} ।

क्रोधकसाय-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५७} ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शो प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तिनो वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेज, पञ्च और शुक्ल लेइयापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३४६

क्रोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	२०	४	१	१	१	११	३	१	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम.	सं.प.	६अ.	७	म.	पक्षे.	त्रस.	म. ४	व. ४	औ. १	आ. २	क्रो.	मति.	सामा.	के.द.	भा. ३	म. औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.										श्रुत.	छेदो.	विना.	शुम.		क्षा.			अना.
								औ. १			अव.	परि.				क्षायी.			
								आ. २			मनः.								

नं. ३४७

क्रोधकषायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	२०	३	१	१	१	९	३	१	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र.	प.			आहा.	म.	पं.	त्रस.	म. ४			क्रो.	मति.	सामा.	के.द.	भा. ३	म. औप.	सं.	आहा.	साका.
	स			विना.				व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुम.		क्षा.			अना.
								औ. १			अव.	परि.				क्षायी.			
											मनः.								

क्रोधकसाय-अपुच्वयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४८} ।

^{३४९} क्रोधकसाय-पढमअणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

क्रोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया; भव्यासिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी प्रथम भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं; मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, तीनों

नं. ३४८

क्रोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	१	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अपु.	प.			आहा	म.		म.	४	क्रो.	मति.	सामा.	के.द.	मा.	१	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.			विना.	पंचे.	त्रस.	व. ४	औ. १		भुत.	छेदो.	विना.	शुक्क.			क्षा.			अना.
										अव.									
										मनः.									

नं. ३४९

क्रोधकषायी प्रथम भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	१	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अनि.	प्र.			मै	म.		म.	४	क्रो.	मति.	सामा.	के.द.	मा.	१	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.प.			प.	पंचे.	त्रस.	व. ४	औ. १		भुत.	छेदो.	विना.	शुक्क.			क्षा.			अना.
										अव.									
										मनः.									

तिणि वेद, क्रोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिणि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

क्रोधकसाय-विदियअणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, क्रोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिणि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०} ।

एवं माण-मायाकसायाणं पि मिच्छाइट्ठिप्पहुटिं जाव अणियट्ठि ति वत्तव्वं । णवरि जत्थ क्रोधकसाओ तत्थ माण-मायाकसाया वत्तव्वा । लोभकसायस्स क्रोधकसाय-भंगो । णवरि ओघालावे भण्णमाणे दस गुणद्वानाणि, छ संजम, लोभकसाओ च वत्तव्वो ।

वेद, क्रोधकसाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकसायी द्वितीय भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, क्रोधकसाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे मानकसायी और मायाकसायी जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानतकके आलाप कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि कसाय आलाप कहते समय जहाँ ऊपर क्रोधकसाय कहा है, वहाँपर मानकसाय और मायाकसाय कहना चाहिए । लोभकसायके आलाप क्रोधकसायके आलापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि लोभकसायके ओघालाप कहने पर—आदिके दश गुणस्थान, संयम आलाप कहते समय यथाख्यातसंयमके

नं. ३५० क्रोधकसायी द्वितीय भागवतीं अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	सं.	आ.	उ.	
१	१	६	१०	१	१	१	१	२	३	६	१	२	१	१	१	
अनि. द्वि.	सं. प.		प.	म.	पं.	कसं.	म. ४ व. ४ औ. १	०	१	४ मति. अव. मनः.	सामा. के. द. छेदो.	के. द. विना.	शुक्क.	औ. प. क्षा.	सं. आहा.	साका. अना.

अकसायाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि अदीदगुणट्ठाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस चत्तारि दो एगं षाण अदीदपाणो वि अत्थि, खीणसण्णा, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खादविहार-सुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो

विना छह संयम और कषाय आलाप कहते समय लोभकषाय कहना चाहिए ।

अकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, संब्धी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है; दशों प्राण, सयोगिकेवलीके संभवित चार प्राण और दो प्राण, अयोगिकेवलीके संभवित एक प्राण और सिद्ध जीवोंकी अपेक्षासे अतीतप्राणस्थान भी है; क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियत्वस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, पांचों सम्यग्ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम तथा संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान भी है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्कलेख्या तथा अलेख्यास्थान भी है; भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा

१ आ. प्रती “ एग १०-४-२-१ ” इति पाठः ।

नं. ३५१

अकषायी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६प.	१०,४	०	१	१	१	११	०	०	५	१	४	६.६	१	२	१	२	२
अंत.	सं.प.	६अ.	२,१	०	म.	प.	त्र.	म. ४	अपम.	अकषा.	मति.	यथा.		मा. १	म.	औ	सं.	आहा.	साका.
अती	सं.अ.	अती.	अती	क्षणसं.	सि.	ज्ञान.	अका.	व. ४	अपम.	अकषा.	श्रुत.	अनु.		शुक्क.	म.	औ	सं.	आना.	अना.
गु.	अती.	पर्या.	प्राण.					औ. २			अव.			अले.	कृत.	अनु.		अना.	पु. उ.
	जीव.							कार्म. १			मन.								
								अयो.			केव.								

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ('सागार-अणामारेहिं जुगवदु-
वजुत्ता वा ।)

उवसंतकसायप्पहुडि जाव सिद्धा ति ओघ-भंगो ।

एवं कसायमगणा समत्ता ।

पाणाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगा ।

मदि-सुदअण्णाणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ
पज्जंत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ
चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त

सांख्यिक और असंख्यिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक;
साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत्
उपयुक्त भी होते हैं ।

अकषायी जीवोंके उपशान्तकषाय गुणस्थानसे लगाकर सिद्ध जीवोंतकके प्रत्येक
स्थानके आलाप ओघालापके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार कषायमार्गणा समाप्त हुई ।

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए ।

मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और सासादन-
सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच
पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण;
नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण;

१ प्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ३५२

मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२४	६प.	२०,७	४	४	५	६	१३	३	४	२	१	२	द्र. ६	२	२	२	२	२
मि.		६अ.	९,७					आ. द्वि.			कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		५प.	८,६					विना.			कुक्षु.		अच.		अ.	सासा.	असं.	अना.	अना.
		५अ.	७,५																
		४प.	६,४																
		४अ.	४,३																

पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेतिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

चार प्राण तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां^१ पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक,

नं. ३५३

मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
२	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	२	२	द्र. ६	२	२	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९					म. ४		कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४	८					व. ४		कुश्रु.		अच.		अ.	सा.	असं.		अना.
			७					औ. १										
			६					वै. १										
			४															

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वयाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्ता, भावेण छ लेस्ताओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

मदि-सुदअण्णाण-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, चोइस जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेंद्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय; औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासा-धनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदह जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात

नं. ३५४

मति-श्रुत-अज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र.२	२	२	२	२	२
मि.	अप.	५	७					औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४	६					वै.मि.			कुशु.		अच.	शु.	अ.	सा.	असं.	अना.	अना.
			५					कार्म.						मा.६					
			४	३															

छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गद्दीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुठवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेम्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५५} ।

^{३५६}तेसिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गद्दीओ, एइंदियजादि-आदी पंच

प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेश्चिद्रयजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोगद्विकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यार्पं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों

नं. ३५५

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६ प.	१०, ७	४	४	५	६	१३	३	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.		६ अ.	९, ७					अ. द्वि.		कुम.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
		५ प.	८, ६					बिना.		कुशु.		अच.		अ.	असं.	अना.	अना.		
		५ अ.	७, ५																
		४ प.	६, ४																
		४ अ.	४, ३																

नं. ३५६

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९					म. ४		कुम.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
		४	८					व. ४		कुशु.		अच.		अ.	असं.	अना.	अना.		
			७					औ. १											
			६, ४					वे. १											

जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा^{३५७} ।

संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुकु लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३५७

मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द. २	२	१	२	२
मि.	अप.	५	७					ओ. मि.			कुम.	असं	चक्षु	का.	म.	मि.	आहा.	साका.
		४	६					वै मि.			कुश्रु.	अच.	अच.	शु.	अ.	असं.	अना.	अना.
		५	५					कर्म.						मा. ६				
		४	३															

मदि-सुदअण्णाण-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञार्थ, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेदयाएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञार्थ, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग,

नं. ३५८ मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१३	३	४	२	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सासा.	सं.प.	५अ.	७			पं.	त्र.	आ. द्वि.			कुम.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.							बिना.			कुशु.		अच.					अना.	अना.

नं. ३५९ मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	२	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सासा.	सं.प.					पं.	त्र.	म. ४			कुम.	असं.	चक्षु.	मा. ६	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								व ४			कुशु.		अच.						अना.
								औ. १											
								व. १											

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६०} ।

विभंगणाणाणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विभंगज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. ३६० मति श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ	७	४	३	१	१	३	३	४	५	१	२	६. २	१	१	१	२	२
सा.	छं			ति.	पंचे.	म.	व	औ. मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	सासा.	सं.	आहा	साका.
	छं			दे.				वै. मि.			कुश्रु.		अच.	शु.	भा. ६			अना	अना.

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणं, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६१} ।

विभंगणाणि-मिच्छाइद्दीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६२} ।

ब्रह्मकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, एक विभंगावधिज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, ब्रह्मकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३६१

विभंगज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	१	१	२	द्र. ६	२	२	१	१	२
मि.	सं.प.					प.	वस.	म. ४			विभं.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.								व. ४					अच.		अ.	सासा.			अना.
								औ. १											
								वे. १											

नं. ३६२

विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	१	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	सं.प.					प.	वस.	म. ४			विभं.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४					अच.		अ.				अना.
								औ. १											
								वे. १											

विभंगणाणि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणह्राणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६३} ।

आभिणिबोहिय-सुदणाणाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणह्राणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

विभंगह्राणी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आभिनिबोधिक और श्रुतह्राणी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-

नं. ३६३

विभंगह्राणी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	ई का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	१	२	१	१	१	२
सासा.	सं. प.				पं. व.	म. ४ व. ४ औ. १ वै. १			विभं.	असं.	चक्षु. अच.	मा. ६	भ. सा.	सं.	आहा	स का. अना.

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६५} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{३६५} ।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे क्षीणकषाय तकके नौ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां; दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, व्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्स्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३६४

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	४	१	१	१५	३	४	२	७	३	६	१	३	१	२	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७	क्षीणसं.		पं.	व.		अपग.	अकषा.	मति.		के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका-
से	सं.अ.										श्रुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
क्षीण.																ज्ञायो.			

नं. ३६५

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	११	३	४	२	७	३	६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.			क्षीणसं.		पंचे.	व्रस.	व. ४	अपग.	अकषा.	मति.		के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका-
से								औ. १			श्रुत.		विना.			क्षा.			अना.
क्षी.								वै. १								ज्ञायो.			
								आ. १											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वानाण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारु-वज्जुत्ता वा ^{३२६}।

आभिणिबोहिय-सुदणाण-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, खांवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भ्रम्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं,

नं. ३६६

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६	७	४	४	१	१	४	२	४	२	३	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि. म.	जं जं	अ.				पं.	त्रस.	औ.सि. वै. मि. आ.मि. कार्म.	पु. न.		मति. श्रुत.	असं. सामा. छेदो.	के.द. विना.	का. शु. भा. ६	म. म. औप. क्षा. क्षायो.		सं.	आहा. अना.	साका. अना.

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६५} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३६८} ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीनों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ३६७

मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	३प.	१०	४	४	१	२	१३	३	४	२	१	३	द्र. ६	२	३	१	२	२
अवि.	सं.प.	इअ.	७			पंचे.	अस.	आ. द्वि. विना.			मति. श्रुत.	असं.	के.द. विना.	भा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं ३६८

मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	२	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.					पंचे.	अस.	म. ४ व. ४ औ. १ वै. १			मति. श्रुत.	असं.	के.द. विना.	भा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२९} ।

संजदासंजदप्पहुडिं जाव खीणकसाओ चि ताव मूलोघ-भंगो । णवरि आभिणि-बोहिय-सुदणाणाणि वत्तव्वाणि । एवमोहिणाणं पि वत्तव्वं । णवरि ओहिणाणं एकं चैव भाणिदव्वं । णाण-दंसणमग्गणाआ जेण खओवसममस्सिऊण द्विआओ तेण मदि-सुदणाणेषु णिरुद्धेषु दोहि तीहि चउहि वा ओहि-मणपञ्जवणाणेषु णिरुद्धेषु तीहि

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्स्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि ज्ञान आलाप कहते समय आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान ही कहना चाहिए । इसीप्रकार अवधिज्ञानके आलाप जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि यहां पर पूर्वोक्त दो ज्ञानोंके स्थानमें एक अवधिज्ञान ही कहना चाहिए ।

शंका—जब कि मतिज्ञानादि क्षायोपशमिक ज्ञानमार्गणा और चक्षुर्दर्शनादि क्षायोप-शमिक दर्शनमार्गणाएं अपने अपने आवरणीय कर्मोंके क्षयोपशमके आश्रयसे स्थित हैं, तब मति-ज्ञान और श्रुतज्ञान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर दो, तीन अथवा चार ज्ञान; तथा अवधिज्ञान

नं. ३६९

मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	४	१ १	३	२	४	२	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
लि.	सं. अ.					पं. व्र.	औ.मि. वै.मि. कर्म.	पु. नं.		मति. श्रुत.	असं.	के.द. विना. मा. ६	का. शु. क्षायो.	म. औप. क्षायो.		सं.	आहा. अना.	साका. अना.

चउहि वा णणेहि होदव्वमिदि सच्चमेदं, किंतु इयरेसु संतेसु वि ण विवक्खा कया, तेण विवक्खिय-णाण-वदिरित्त-णाणाणमवणयणं कयं ।

मणपज्जवणाणीणं भणमाणे अत्थि सत्त गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, आहारदुगेण विणा णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जवणाणं, परिहारसंजमेण विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, वेदगसम्मत्त-पच्छायद-उवसमतम्मत्तसम्माइट्टिस्सं पढमसमए वि मणपज्जवणाणुवलंभादो। मिच्छत्त-

और मनःपर्ययज्ञान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर तीन अथवा चार ज्ञान होना चाहिए ?

विशेषार्थ— शंकाकारके कहने का यह भाव है कि जब मतिज्ञान आदि चार ज्ञान क्षायोपशमिक होनेके कारण मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञानके साथ अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान हो सकते हैं; तब विवक्षित किसी भी ज्ञानमार्गणके आलाप कहते समय अपने सिवाय शेष ज्ञानोंको भी कहना चाहिए। अर्थात् छद्मस्थ जीवोंके कमसे कम मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ये दो ज्ञान तो होते ही हैं; तथा इनके साथ अवधिज्ञान, अथवा मनःपर्ययज्ञान अथवा दोनों ही ज्ञान हो सकते हैं, इसलिये मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय मति और श्रुत ये दो अथवा मति, श्रुत और अवधि ये तीन अथवा, मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन अथवा, मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए। इसीप्रकार अवधि-ज्ञानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय—क्रमशः मति, श्रुत और अवधि ये तीन तथा मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञान अथवा मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए।

समाधान— आपका यह कहना सत्य है, किन्तु विवक्षित ज्ञानके साथ इतर ज्ञानोंके होने पर भी उनकी विवक्षा नहीं कि गई है; इसलिये विवक्षित ज्ञानसे अतिरिक्त अन्य ज्ञानोंको नहीं गिनाया गया है।

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयतसे लेकर क्षीणकषाय तकके सात गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मनः-पर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके बिना चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, तीन सम्यक्त्व होते हैं; मनःपर्ययज्ञानीके औपशमिकसम्यक्त्व कैसे होता है, इसका समाधान करते हुए आचार्य लिखते हैं कि जो

१ उवसमचरियाहिमुहो वेदगसम्मो अणं विजोयित्ता। अंतोमुहुत्तकालं अधापमत्तो पमत्तो य ॥ तघो तिरयणविहिणा दंसणमोहं समं खु उवसमदि। क. क्ष. २०३, २०४.

पच्छायद-उवसमसम्माइद्धिमि मणपज्जवणाणं ण उवल्लभदे; मिच्छत्तपच्छायदुक्कस्सुव-
समसम्मत्तकालादो वि गहियसंजमपढमसमयादो सच्चजहणमणपज्जवणाणुप्पायण-
संजमकालस्स बहुत्तुवल्लभादो । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-

वेदकसम्यक्त्वसे पीछे द्वितीयोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययज्ञान पाया जाता है । किन्तु मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टि जीवमें मनःपर्ययज्ञान नहीं पाया जाता है, क्योंकि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट उपशमसम्यक्त्वके कालसे भी ग्रहण किये गये संयमके प्रथम समयसे लगाकर सर्व जघन्य मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न करनेवाला संयमकाल बहुत बड़ा है ।

विशेषार्थ—ऊपर मनःपर्ययज्ञानोंके तीनों सम्यक्त्व बतलाये गये हैं । क्षायिक और क्षायोपशमिकसम्यक्त्वके साथ तो मनःपर्ययज्ञान इसलिये होता है कि मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्तिमें जो विशेष संयम हेतु पड़ता है वह विशेष संयम इन दोनों सम्यक्त्वोंमें हो सकता है । अब रही औपशमिकसम्यग्दर्शनकी बात, सो उसके प्रथमोपशमसम्यक्त्व और द्वितीयो-
पशमसम्यक्त्व ऐसे दो भेद हैं । उनमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वको अनादि अथवा सादि मिथ्या-
दृष्टि ही उत्पन्न करता है और उसके रहनेका जघन्य अथवा उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त ही है । यह अन्तर्मुहूर्तकाल, संयमको ग्रहण करनेके पश्चात् मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न करनेके योग्य संयममें विशेषता लानेके लिये जितना काल लगता है उससे छोटा है । इसलिये प्रथमोपशम-
सम्यक्त्वके कालमें मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति न हो सकनेके कारण मनःपर्ययज्ञानके साथ उसके होनेका निषेध किया गया है । द्वितीयोपशमसम्यक्त्व उपशमश्रेणीके अभिमुख विशेष संयमीके ही होता है, इसलिये यहाँपर अलगसे मनःपर्ययज्ञानके योग्य विशेष संयमको उत्पन्न करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है और यही कारण है कि द्वितीयोपशम-
सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है । अथवा जिस संयमीने पहले वेदकसम्यक्त्वके कालमें ही मनःपर्ययज्ञानको ग्रहण कर लिया है उसके भी उपशमश्रेणीके अभिमुख होनेपर द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति हो जाती है, इसलिये भी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें मनःपर्ययज्ञान पाया जा सकता है ।
ऊपर टीकामें 'पढमसमप वि' में जो अपि शब्द आया है उससे यह ध्वनित होता है कि द्वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके द्वितीयादिक समयमें वर्द्धमान चारित्र रहता है, इसलिये वहाँ तो मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो ही सकता है, किन्तु प्रथम समयमें भी संयममें इतनी विशेषता पाई जाती है कि वह मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्तिमें कारण हो सकता है । इस कथनका तात्पर्य यह हुआ कि प्रथमोपशमसम्यक्त्वके अनन्तर या उसके साथ संयमकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उसमें तो मनःपर्ययज्ञान नहीं उत्पन्न हो सकता है । परंतु द्वितीयो-
पशमसम्यक्त्व संयमीके ही होता है, इसलिये उसमें मनःपर्ययज्ञानके उत्पन्न होनेमें कोई विरोध नहीं है । इसप्रकार मनःपर्ययज्ञानके साथ तीनों सम्यक्त्व तो होते हैं, किन्तु औपश-

वजुत्ता वा^{१९०} ।

मणपज्जवणाण-पमत्तसंजदप्पहुडि जाव खीणकसाओ चि ताव मूलोष-भंगो ।
णवरि मणपज्जवणाणं एकं चेव वत्तव्वं । परिहारसुद्धिसंजमो वि णत्थि चि भाणिदव्वं ।

केवलणाणाणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणट्ठाणाणि अदीदगुणट्ठाणं पि अत्थि, दो
जीवसमासा एगो वा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ
अदीदपज्जत्तीओ वि अत्थि, चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाणा वि अत्थि,
खीणसण्णाओ, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियं पि अत्थि,
तसकाओ अकाओ वि अत्थि, सत्त जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेद, अकसाओ,
केवलणाणं, जहाक्खादसुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि

मिकसम्यक्त्वमें द्वितीयोपशमका ही ग्रहण करना चाहिए, प्रथमोपशमका नहीं । सम्यक्त्व
आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तक
प्रत्येक गुणस्थानके आलाप मूल ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि ज्ञान आलाप
कहते समय एक मनःपर्ययज्ञान ही कहना चाहिए । तथा संयम आलाप कहते समय
परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है, ऐसा कहना चाहिए ।

केवलज्ञानी जीवोंके आलाप कहने पर—सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये दो
गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो अथवा एक पर्याप्त
जीवसमास है तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा
अतीतपर्याप्तस्थान भी होता है, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण,
अथवा समुद्रातगत अपर्याप्तकालमें आयु और कायबल ये दो प्राण और अयोगिकेवलीके एक
आयु प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचे-
न्द्रियजाति तथा अतीन्द्रियस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकषायस्थान भी है, सत्य और अनुभय
ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-
काययोग ये सात योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात-

नं. ३७०

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
७	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	१	४	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम. से. क्षीण.	सं.प.			क्षीणसं.	म.	पंचे.	त्रस.	म. ४ व. ४ औ. १	पु.	अकषा.	मनः.	सामा. छेदो. सूक्ष्म. यथा.	के.द. विना.	मा. ३ शुभ.	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

अत्थि, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भव-
सिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो
णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३९२} ।

संजोगि-अजोगि-सिद्धाणमालावा मूलोघो व्व वत्तव्वा ।

एवं णाणमग्गणा समत्ता ।

संजमाणुवादेण संजदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ
पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस सत्त चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ
खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि

विहारशुद्धिसंयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनोंसे रहित भी स्थान है, केवल-
दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं. भावसे शुक्ललेश्या तथा अलेश्यास्थान भी है; भव्यसिद्धिक तथा
भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, क्षायिकसम्यक्त्व,
संज्ञिक और असंज्ञिकसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोग और अनाकारो-
पयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

केवलज्ञानकी अपेक्षा भी सयोगिकेवली अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप
मूल ओघालापके समान कहना चाहिए ।

इसप्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

संयममार्गणाके अनुवादसे संयतोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर
अयोगिकेवली गुणस्थानतक नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास,
छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण;
चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिक-
काययोग और वैक्रियिकमिश्रकाययोग इन दो योगोंके बिना शेष तेरह योग तथा अयोग-

नं. ३७१

केवलज्ञानी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६प.	४	०	१	१	१	७	०	०	१	१	१	द्र.द.	१	१	०	२
सयो.	पर्या.	६अ.	२	संज्ञि.	म.	पं.	त्र.	म. २	अपना.	अकषा.	केव.	यथा.	के.	मा. १	म. क्षा.	अनु.	आहा.	साका.
अयो.	अप.	अतीतप.	२	सिद्धिग.	अती.	अका.	अ. २	अ. २	अपना.	अकषा.	केव.	यथा.	के.	मा. १	म. क्षा.	अनु.	आहा.	साका.
अतीतय.	अतीतिजी.	अतीतप्रा.		सिद्धिग.	अती.	अका.	कर्म. १	अयो.										यु. उ.

अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, पंच संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{३९२} ।

पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जचीओ छ अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि

स्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मतिज्ञानादि पांचों सुज्ञान, सामायिकादि पांचों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्यापं तथा अलेक्ष्यास्थान भी है; भव्यसिद्धिक, औपशमि-कादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

संयममार्गणाकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, लेक्ष्योपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं. ३७२

संयमी जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	१३	३	४	५	५	४	द्र. ६	१	३	१	२	२
प्रम.	सं.प.	६अ.	७	संज्ञि.	म.	पं.	सं.	वै.दि.	संज्ञि.	उक्त.	मति.	सामा.		मा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
से.	सं.अ.		४	संज्ञि.				बिना.	उक्त.	उक्त.	सुत.	लेदो.		सुभ.		क्षा.	अनु.	अना.	अना.
अयो.			२					अयो.		उक्त.	अव.	परि.		अले.		सायो.			सु. व.
			१							मनः.	सूक्ष्म.	यथा.							
										केव.									

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३७३} ।

अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ आहारसण्णा णत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३७४} ।

अपुच्चयरणप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ताव मूलोघ-भंगो ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, भय, मैथुन और परिग्रह ये तीन संज्ञाएं होती हैं किन्तु यहां पर आहारसंज्ञा नहीं है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिकादि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक संयमी जीवोंके आलाप मूल श्लोचालापोंके समान होते हैं ।

नं. ३७३

संयमकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्र.	सं. प.	६अ.	७		म.	पं.	म. ४				मति.	सामा.	के.द.	मा. ३	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.					पं.	व. ४				भुत.	छेदो.	विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
							औ. १				अव.	परि.				क्षायो.			
							आहा. २				मनः.								

नं. ३७४

संयमकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
छ्प्र.	पं.			आहा.	म.	पं.	म. ४				मति.	सामा.	के.द.	मा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
छ्.	छ्.			विना.		पं.	व. ४				भुत.	छेदो.	विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
							औ. १				अव.	परि.				क्षायो.			
											मनः.								

सामाह्यसुद्धिसंजदार्णं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, सामाह्यसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२७५} ।

पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियट्ठि च्चि ताव मूलोघ-भंगो । एवं छेदोवट्ठावण-संजमस्स वि वत्तव्वं ।

परिहारसुद्धिसंजदार्णं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ

सामायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्व-करण और अनिवृत्तिकरण ये चार गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग आहारक-काययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यासिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती सामायिकशुद्धिसंयतोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि संयम आलाप कहते समय एक सामायिकशुद्धिसंयम ही कहना चाहिए । इसीप्रकार छेदोपस्थापना-संयमके भी आलाप जानना चाहिए; किन्तु संयम आलाप कहते समय एक छेदोपस्थापना-संयम ही कहना चाहिए ।

परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये

नं. ३७५

सामायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
४ प्र.	२	६	१०	४	२	१	१	११म.४	३	४	४ मति.	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अप्र.	सं.प.	प.	७		म.	पं.		व. ४			धृत.	सामा.	के. द.	भा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
अपू.	सं.अ.	६					त्रस.	औ. १			अव.		विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
अनि.	अ.							आ. २			अपना.					क्षायो.			

पञ्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग आहाराहारमिस्सा णत्थि, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण मणपञ्जवणाण णत्थि, कारणं आहारदुगं मणपञ्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो एदे जुगवदेव ण उप्पञ्जति । परिहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३९६} ।

पमत्त-अप्पमत्त-परिहारसुद्धिसंजदाणं पुध पुध भण्णमाणे ओष-मंगो । णवरि आहारदुग-मणपञ्जवणाण-उवसमसम्मत्त-सामाह्य-छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजमा च णत्थि । परिहारसुद्धिसंजमो एको चेव संजमट्ठाणे । वेदट्ठाणे पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो ।

दो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग होते हैं, किन्तु यहांपर आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होते हैं । पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं, किन्तु यहांपर मनःपर्ययज्ञान नहीं है; क्योंकि, आहारकद्विक, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयम ये तीनों युगपत् नहीं उत्पन्न होते हैं । ज्ञान आलापके आगे परिहारविशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लक्ष्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके बिना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व; संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत-परिहारविशुद्धिसंयत और अप्रमत्तसंयत-परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप पृथक् पृथक् कहने पर उनके आलाप ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि यहां पर आहारककाययोगद्विक, मनःपर्ययज्ञान, औपशमिकसम्यक्त्व, सामाधिकशुद्धिसंयम और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयम इतने आलाप नहीं होते हैं । संयमस्थान पर एक परिहार-विशुद्धिसंयम ही होता है । तथा वेदस्थानपर एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए ।

१ प्रतिषु 'एदाओ' इति पाठः ।

नं. ३७६

परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	व.
२	१	६	१०	४	१	२	२	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
प्र.	सं.प.				म.	पं.	त्रस.	म. ४	पु.		मति.	परि.	के. द.	भा. ३	म.	क्षा.	सं.	आहा.	सका.
व.								व. ४			श्रुत.		विना.	शुम.	क्षायो.				अना.
								औ. १			अव.								

सुहृमसांपराह्यसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे मूलोघ-भंगो ।

जहाक्खादसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच णाण, जहाक्खाद-सुद्धिसंजमो, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो गेव सण्णिणो गेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३७७} ।

उवसंतकसायप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि ति मूलोघ-भंगो । संजदासंजदाण-

सुहृमसांपराधिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर उनके आलाप मूल ओघाला-पके समान ही जानना चाहिए ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण; क्षीणसंज्ञा, मनुष्यजाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग; अपगतघेद, अकषाय, मतिज्ञानादि पांचों सुज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याणं, भावसे शुक्ललेक्ष्या तथा अलेक्ष्यास्थान भी है; भव्यसिद्धिक, वेदकस-म्यक्त्वके बिना शेष दो सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतकके यथाख्यातविहार-

नं. ३७७

यथाख्यात शुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

शु. जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द. ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.				
४	२	इप.	१०	०	२	२	२	२१	०	०	५ मति.	१	४	३. ६	१	२	१	२	२
उ.	सं.प.	इअ.	४	०	म.	प.	त्र.	म. ४	अप.	अकषा.	अत.	यथा.	मा. १	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.	२
क्षी.	अप.		२	०	क्षी.			व. ४	अप.	अकषा.			शुक्ल.	क्षा.	अनु.	अना.	अना.	अना.	२
स.			२	०	क्षी.			औ. २	अप.	अकषा.			शुक्ल.	क्षा.	अनु.	अना.	अना.	अना.	२
अ.			२	०	क्षी.			का. १	अप.	अकषा.			शुक्ल.	क्षा.	अनु.	अना.	अना.	अना.	२

मोघ-भंगो ।

असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवासिद्धिया अभवासिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हींति अणागारुवजुत्ता वा^{३५८} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा,

शुद्धिसंयत जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं ।

संयतासंयत जीवोंके आलाप ओघालापके समान होते हैं ।

असंयत जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संब्राणं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोग-द्विकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयत, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संब्रिक, असंब्रिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान,

नं. ३७८

असंयत जीवोंके आलाप.

कु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्रि.	आ.	उ.
४	१४	६प.	२०,७	४	४	५	६	१३	३	४	६	१	३	द्र. ह	२	६	२	२	२
मि.		६अ.	९,७					आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	के. द.	मा. ह	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.		५प.	८,६					बिना.			३		बिना.		अ.		असं.	अना.	अना.
स.		५अ.	७,५								ज्ञान.								
अ.		४प.	६,४								३								
		४अ.	४,३																

छ पञ्जतीओ पंच पञ्जतीओ चत्तारि पञ्जतीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण
छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गइओ, एइंदियजादि-आदी पंच
जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ पाण,
असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ
सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३००} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणङ्गाणाणि, सत्त जीवसमासा,
छ अपज्जतीओ पंच अपज्जतीओ चत्तारि अपज्जतीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण
पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-
आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय,

सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां चार पर्याप्तियां; दसों प्राण, नौ
प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति
आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-
रिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों भ्रान्त
और आदिके तीन ज्ञान इस प्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे
छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक,
साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-
दनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास,
छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण,
पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों
जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिभ्रकाययोग, वैक्रियिकमिभ्रकाययोग,
और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुभुत और आदिके

नं. ३७९

असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	वे.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
४	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	६	१	३	३	२	६	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९					म. ४			ज्ञान.	असं.	के.द.	मा. ६	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.		४	८					व. ४			३		बिना.		ज.		असं.		अना.
प्र.			७					औ. १			अज्ञा.								
ज.			६					वै. १			३								
			४																

पंच गाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८०} ।

मिच्छाइद्धिप्पहुडिं जाव असंजदसम्माइद्धिं चि मूलोघ-भंगा ।

एवं संजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण ओघालावा मूलोघ-भंगो ।

चक्खुदंसणीणं मण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, छ जीवसमासा, छ पञ्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ,

तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान; असंथम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे छहों लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तकके असंयत जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार संयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं ।

चक्षुदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त, संज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये छह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है चारों गतियां,

नं. ३८०

असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	४	५ कुम.	१	३	द्र.२	२	५	२	२
मि.	अप.	५ ,,	७				ओ.मि.			कुशु.	असं.	के. द.	का. भ.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४ ,,	६				वै.मि.			मति.		बिना.	शु. अ.	बिना.	असं.	अना.	अना.
अ.			५				कर्म.			श्रुत.		मा. ६					
			४	३						अव.							

चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८१} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वयाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण, चत्तारि सण्णाओ खीण-सण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, चउरिंदियजादि-आदी दो जादीओ, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, चक्खुदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-

चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

उन्हीं चक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंक्षीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संक्षीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संबिक,

नं. ३८१

चक्षुदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	जा.	उ.	
१२	६	६प.	१०,७	४	४	२	१	२५	३	४	७	७	१	६	२	६	२	२
मि.	च. प.	६अ.	९,७		च. व.				केव.		चक्षु.	मा.६	भ.		सं.	आहा.	साका.	
से	च. अ.	५प.	८,६	क्षीणसं.	पं.			उपा.	विना.				अ.		असं.	अना.	अना.	
क्षी.	असं.प.	५अ.																
	असं.अ.																	
	सं. प.																	
	सं. अ.																	

वजुत्ता वा^{१८२} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसक्काओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, चक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, म्भक्खे छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८३} ।

असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं चक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, अलंघ्यपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये तीन जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, चक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३८२

चक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१२	३	६	१०	४	४	२	१	११ म. ४	३	४	७	७	१	द्र. ६	२	६	२	१	२
मि.	च. प.	५	९	८	च.	व.	व. ४	अपना.	अकष्या.	केव.	विना.	चक्षु.	मा. ६	म.	अ.	सं.	आहा.	साका.	अना.
से	असं. प.	८	८	८	पं.	वै.	वै. १	आ. १								असं.			
क्षी.	सं. प.																		

नं. ३८३

चक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	३	६	७	४	४	२	१	४	३	४	५	कुम.	३	१	द्र. २	२	५	२	२
मि.	च. अ.	५	७			च.	त्र.	औ. मि.			कुश्रु.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सा.	असं. अ.	६				पं.		वै. मि.			मति.	सामा.		शु.	अ.	विना.	असं.	अना.	अना.
अ.	सं. अ.							आ. मि.			श्रुत.	छेदी.		मा. ६					
प्र.								कर्म.			अव.								

चक्षुदंसण-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, छ जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, चक्षुदंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८४} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, तिण्णि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त, संज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त और अपर्याप्त ये छह जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद,

नं. ३८४

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	६ च.प.	६ प.	१०,७	४	४	२	१	१३	३	४	३	१	१	द्र.६	२	१	२	२	२
मि.	च. अ.	६ अ.	९,७			च. व.	आ.द्वि.				अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा.६	म. मि.		सं.	आहा.	साका.
	असं. प.	५ प.	८,६			पं.	विना.								अ.		असं.	अना.	अना.
	असं. अ.	५ अ.																	
	सं. प.																		
	सं. अ.																		

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८} ।

३८^६तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, तिण्णि जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये तीन जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रंकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों

नं. ३८५

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	३	६	१०	४	४	२	१	१०	३	४	३	१	१	६	२	१	१	२
मि.	च. प.	५	९		चतु.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका
	असं. प		८		पंचे.		व. ४						ज.		असं.			अना.
	सं. प.						औ. १											
							वे. १											

नं. ३८६

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	३	६अ.	७	४	४	२	१	३	३	४	२	१	१	६	२	२	२
मि.	च. अ.	५अ.	७		च. अ.	औ. मि.				कुम.	असं. वक्षु.	का. म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
	असं. अ.	६			प.	वे. मि.				कुशु.		शु. अ.		असं.	अना.	अना.	
	सं. अ.					कार्म.						मा. ६					

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

चक्खुदंसण-सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाओ ति पूलोघ-भंगो, णवरि चक्खुदंसणं ति भाणिदब्बं ।

“अचक्खुदंसणाणं मण्णमाणे अत्थि बारह गुणद्वाणाणि, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त पाण, सत्त संजम, अचक्खुदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अचक्षुदर्शनी सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि दर्शन आलापमें 'अक्षुदर्शन' ऐसा कहना चाहिए ।

अचक्षुदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय भावि छहों काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक;

नं. ३८७

अचक्षुदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
९	१४	६ प.	१०, ७	४	४	५	६	१५	३	४	७	७	१	ब्र. ६	२	६	२	२	२
मि.		६ अ.	९, ७								केव.		अच.	भा. ६	भ.		सं.	आहा.	साका.
से		५ प.	८, ६						अपना.	अकषा.	विना				अ.		असं.	अना.	अना.
क्षीण.		५ अ.	७, ५																
		४ प.	६, ४																
		४ अ.	४, ३																

छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वारह गुणद्वाराणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, इंद्रियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, अचखुदंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाराणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीण-संज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतधेदस्थान भी है, चारों कषाय अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना सात ज्ञान, सातों संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण,

नं. ३८८

अचक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१२	७	६	१०	४	४	५	६	११ म. ४	३	४	७	७	१	द. ६	२	६	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९					व. ४	अपना.	अकषा.	केव.		अच.	मा. ६	भ.		सं.	आहा.	साका.
सं.		४	<	क्षीणसं.				ओ. १			विना.				अ.		असं.		अना.
क्षी.		४	७					वे. १											
		६	४					आ. १											

पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी ल काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच गण, तिण्णि संजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३८८} ।

अचक्खुदंसण-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोइस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण ल पाण सत्त पाण पंच पाण ल पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी ल काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्ब-भावेहि छ

छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, अपर्याप्तकालभावी चार योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोप-स्थापना ये तीन संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान,

१ प्रतिषु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठो नास्ति ।

नं. ३८९

अचक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	७	६अ.	७	४	४	५	६	४	३	४	५	कुम.	३	१	द्र. २	२	५	२	२
मि.	अ.	५अ.	७					ओ.मि.			कुश्रु.	असं.	अच.	का.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४अ.	६					वै. मि.			मति.	सामा.		शु.	अ.	विना.	असं.	अना.	अना.
अवि.			५					आ.मि.			श्रुत.	छेदो.		भा. ६					
प्रम.			४ ३					कर्म.			अव.								

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२०} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच-जादीओ, पुढविकायादी छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं,

नं ३९०

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१४	६प.	१०,७	४	४	५	६	१३	३	४	३	१	१	द्र. ६	२	१	२	२	२
मि.		६अ.	९,७				आ.दि.				अज्ञा.	असं.	अच.	मा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		५प.	८,६				विना.								अ.		असं.	अना.	अना.
		५अ.	७,५																
		४प.	६,४																
		४अ.	४,३																

नं. ३९१

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संश्लि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	३	१	१	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९				म. ४				अज्ञा.	असं.	अच.	मा. ६	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८				व. ४								अ.		असं.		अना.
			७				औ. १												
			६	४			वै. १												

मिच्छत्तं सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाओ ति ताव मूलोव-भंगो । णवरि अचक्खुदंसणं ति भाणिदब्बं ।

भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञायं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यायं, भावसे छहों लेश्यायं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणरूपाय गुणस्थान तकके अचक्षुदर्शनी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय 'अचक्षुदर्शन, ही कहना चाहिए ।

नं. ३९२

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	२	१	२	द.२	२	१	२	२	२
मि.	अप.	५	७				औ.मि.		कुम.	असं.	अच.	का.	भ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	६				वै.मि.		कुशु.			शु.	अ.		असं.	अना.	अना.
			५				कर्म.					भा.६					
			४	३													

ओहिदंसणीणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, सातों संयम, अवधिदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अवधिदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय तकके नौ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, सातों संयम, अवधिदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. ३२३

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
९	२	६प.	१०	४	४	१	१	१५	३	४	४	७	१	द्र.६	१	३	१	२	२
अवि.	सं.प.	इअ.	७	४		पं.	त्र.		अपर.	अकषा.	मति.		अव.	मा.६	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
से.	संअ.			क्षीणसं.							श्रुत.					ज्ञा.		अना.	अना.
क्षीण.											अव.					क्षायो.			
											मनः.								

अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, ओहिदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अवधिदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अधिरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मणकाययोग ये चार योग, खीवेदके विना पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, अवधिदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३९४

अवधिदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
९	१	३	१०	४	४	२	१	१२म.४	३	४	४	७	१	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.			ज्ञाणस.	पंचे.	त्रस.	व. ४	अ. १	अप्या.	केव.	विना.		अव.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
से.							वै. १	आ. १	अप्या.	केव.	विना.					क्षा.			अना.
क्षीण.																क्षायो.			

नं. ३९५

अवधिदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६अ.	७	४	४	१	१	४	२	४	३	३	१	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि.	सं. अ.					पं. त्र.	औ. मि.	पु. नं.	मति.	असं.	अव.	मा. ६		का. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
प्रम.							वै. मि.	आ. मि. कर्म.	भुत. अव.	सामा. उदो.				शु. मा. ६	क्षा.	क्षायो.	अना.	अना.	

असंजदसम्माइट्टिप्पहुडि जाव खीणकसाओ ति ताव ओहिणाण-भंगो । णवरि ओहिदंसणं ति भाणिदव्वं ।

केवलदंसणस्स केवलणाण-भंगो ।

एवं दंसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण ओघालावो मूलोघ-भंगो । णवरि अजोगिगुणट्ठाणेण विणा तेरह गुणट्ठाणाणि अत्थि, तेण अजोगिजिणं सिद्धे च पडुच्च जे आलावा ते ण भाणिदव्वा ।

“किण्हलेस्सालावे भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,

अवधिदर्शनी जीवोंके असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतकके आलाप अवधिज्ञानके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि दर्शन आलाप कहते समय अवधिज्ञानके स्थान पर अवधिदर्शन कहना चाहिए ।

केवलदर्शनके आलाप केवलज्ञानके समान होते हैं ।

इसप्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेइयामार्गणाके अनुवादसे ओघालाप मूल ओघालापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि अयोगिकेषली गुणस्थानके विना तेरह गुणस्थान ही होते हैं, इसलिये अयोगिकेषलीजिन और सिद्धभगवान्की अपेक्षासे जो आलाप होते हैं; वे नहीं कहना चाहिए ।

कृष्णलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं,

नं. ३९६

कृष्णलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

कु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१४	६प.	२०,७	४	४	५	६	१३	३	४	६	२	३	द. ६	२	६	२	२	२
मि.		६अ.	९,७					आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	के. द.	मा. १म.			सं.	आहा.	साका.
सा.		५प.	८,६					विना.			३		विना.	कृष्ण.	अ.		असं.	अना.	अना.
ज्ञ.		५अ.	७,५								ज्ञान.								
अ.		४प.	६,४								३								
		४अ.	४,३																

चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्चत्तारं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, सत्त जीवसमासा छ पञ्चत्तीओ पंच पञ्चत्तीओ चत्तारि पञ्चत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, देवगई णत्थि; देवाणं पञ्चत्त-काले असुह-ति-लेस्साभावादो । पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो,

चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगदिकके घिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण लेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगति तिर्ध्वगति और मनुष्यगति ये तीन गतियां, यहांपर देवगति नहीं हैं; क्योंकि, देवोंके पर्याप्तकालमें अशुभ तीन लेश्याओंका अभाव है । पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों

नं. ३९७

कृष्णलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	पा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	७	६	१०	४	३	५	६	१०	३	४	६	१	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९	न.				म. ४			ज्ञान.	असं.	के.द.	मा. १	म.		सं.	आहा.	साका.
सा.		४	८	ति.				व. ४			३		(विना.)	कृष्ण.	अ.		असं.		अना.
स.			७	म.				औ. १			अज्ञा.								
अ.			६					दे. १			३								
			४																

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वानाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं वेदगसम्मत्तं च भवदि; छट्ठीदो पुढवीदो किण्हलेस्सा-सम्माइद्विणो मणुसेसु जे आगच्छंति तेसिं वेदगसम्मत्तेण सह किण्हलेस्सा लब्भदि ति । सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और वेदकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्व होते हैं । कृष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि छठी पृथिवीसे जो कृष्णलेश्यावाले अविरतसम्यग्दृष्टि जीव मनुष्योंमें आते हैं, उनके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्वके साथ कृष्णलेश्या पाई जाती है । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३९८

कृष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	४	५	१	१	द्र. २	२	३	२	२	२
मि.	७	५अ.	७				औ. मि.			कुम.	असं.	के. द.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सासा.	७	४अ.	६				वै. मि.			कुश्रु.		विना.	शु.	अ.	सा.	असं.	अना.	अना.
अवि.			५				कार्म.			मति.			भा. १		क्षायो.			
			४							श्रुत.			कृष्ण.					
			३							अव.								

किण्हलेस्सा-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३९} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ,

कृष्णलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग,

नं. ३१९

कृष्णलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	ई. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१४	६प.	१०, ७	४	४	५	६	१३	३	४	३	१	२	द. ६	२	२	२
मि.		६अ.	९, ७					आ. द्वि.			अज्ञा. असं.	चक्षु.	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.
		५प.	८, ६					विना.			अच.	कृष्ण.	अ.		असं.	अना.	साका.
		५अ.	७, ५														अना.
		४प.	६, ४														
		४अ.	४, ३														

छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण

औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे कृष्णलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, असंक्षिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम,

नं. ४००

कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	१	५	६	२०	३	४	३	२	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९		न.		म. ४		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	द्र. ६	२	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८		ति.		व. ४				अच.	कृष्ण.	अ.	असं.			अना.
			७		म.		औ. १										
			६	४			वै. १										

नं. ४०१

कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	अप.	५अ.	७				औ. मि.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	अप.	४अ.	६				वै. मि.		कुष्ण.		अच.	गु.	अ.		असं.	अना.	अना.
			५				कार्म.					मा. १					
			४	३								कृष्ण.					

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

किण्हलेस्सा-सासणसम्माइटीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०१} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो

आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे कृष्णलेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कृष्णलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासा-दनसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाए, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन; द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कृष्णलेइया; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाए, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय,

१ प्रतिषु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठो नास्ति ।

नं. ४०२ कृष्णलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६ प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	द्र.इ	१	१	१	२
सा.	सं. प.	६ अ.	७			पं.	त्र.	आ.दि.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.२	म.	सा.	सं.	आहा.
	सं. अ.							विना.					अच.	कृष्ण.				अना.
																		साका.
																		अना.

दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१४} ।

तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रिधिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४०३

कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	२	१०	३	४	३	२	२	६	१	१	१	२
सा.	सं. प.			न.	पंचे.	त्र.	म. ४		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	भ.	सा.	सं.	आहा.	साका
				म.			व. ४				अच.	कृष्ण.					अना.
				ति.			औ. १										
							वे. १										

नं. ४०४

कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	३	३	४	२	१	२	१	१	१	२
सा.	सं. अ.			ति.	पं. त्र.	औ. मि.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
				म.		वे. मि.		कुक्षु.		अच.	शु.				अना.	अना.
				दे.		कार्म.					मा. १					
											कृष्ण.					

किण्हलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागाहं-वजुत्ता वा ।

किण्हलेस्सा-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण

कृष्णलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भाषसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहनेपर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगादिकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

नं. ४०५

कृष्णलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	हं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म. स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१ १	१०	३ ४	३	१	२	३ ६	१	१	३
सं. प.				न. ति. म.	पं. न.	म. ४ व. ४ औ. १ वै. १		अज्ञा. ३ ज्ञान. मिश्र.	असं.	वक्षु. अच.	मा. १ कृष्ण.	म. सम्य.	सं.	आहा.	साका. अना.

किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी,
तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि
दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०९} ।

द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे कृष्णलेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन
सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने
पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां,
दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग;
तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों
लेक्ष्याएं, भावसे कृष्णलेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक,
आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४०६ कृष्णलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१२ म. ४	३	४	३	१	३	द. द.	१	३	१	२	२
अ.	सं. प.	६अ.	७		न.	पं.	जस.	व. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. १	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.				ति.	म.	जस.	औ. २			श्रुत.		विना.	कृष्ण.		क्षा.		अना.	अना.
								वै. १			अव.					क्षायो.			
								का. १											

नं. ४०७ कृष्णलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१० म. ४	३	४	३	१	३	द. द.	१	३	१	१	२
अवि.	सं. प.				न.	पं.	जस.	व. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. १	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					ति.	म.	जस.	औ. १			श्रुत.		विना.	कृष्ण.		क्षा.		अना.	अना.
								वै. १			अव.					क्षायो.			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{५०८} ।

णीललेस्साए भण्णमाणे ओघादेसालावा किण्हलेस्सा-भंगा । णवरि सव्वत्थ णीललेस्सा वत्तव्वा ।

काउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णत्र पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि

उद्धों कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्स्व, सांख्यिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नीललेश्याके आलाप कहने पर—ओघ और आदेश आलाप कृष्णलेश्याके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि लेश्या आलाप कहते समय सर्वत्र नीललेश्या कहना चाहिए ।

कापोतलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं,

नं. ४०८ कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र. २	१	१	१	२
अ.	सं. अ.				म.	पं.	त्र.	औ.मि.	कर्म.	पुं.	मति.	असं.	के.द.	का.	म.	ज्ञायो.	सं.	आहा.
											श्रुत.	विना.	शु.	मा. १				साका.
											अव.		कृष्ण.					अना.

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५५} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वयाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संश्रिक, असंश्रिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इस प्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संश्रिक,

नं. ४०९

कापोतलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	जा.	उ.
४	१४	६ प.	२०, ७	४	४	५	६	२३	३	४	६	२	३	द्र. ६	२	६	२	२	२
मि.		६ अ.	९, ७					आ. द्वि.			ज्ञान.	असं.	के. द.	मा. १	म.		सं.	आहा.	साका.
सासा.		५ प.	८, ६					विना.			३		विना.	कापो.	अ.		असं.	अना.	अना.
सम्य.		५ अ.	७, ५								अज्ञा.								
अभि		४ प.	६, ४								३								
		४ अ.	४, ३																

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि क्काय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण काउ-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, चत्तारि सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों क्काय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिक और क्षायोपशामिक ये चार सम्यक्त्व; संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४१०

कापोतलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	७	६	१०	४	३	५	६	१०	३	४	६	१	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९		न.			म. ४			ज्ञान.	असं.	के. द.	भा. १	म.		सं.	आहा.	साका.
सासा.		४	८		ति.			व. ४			३		विना.	कापो.	अ.		असं.		अना.
सम्य.			७		म.			औ. १			अज्ञा.								
अवि.			६	४				वे. १			३								

नं. ४११

कापोतलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	५	कुम.	१	३	द्र. २	२	४	२	२
मि.		५अ.	७					औ. मि.			कुश्रु.	असं.	के. द.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
सा.		४अ.	६					वे. मि.			मति.		विना.	शु.	अ.	सा.	असं.	अना.	अना.
अवि.			५					कर्म.			श्रुत.		भा. १	कापो.		क्षायो.			
			४	३							अव.								

काउलेस्सा-मिच्छाद्द्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, चोद्दस जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अप्पाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२} ।

तेसिं चैव पञ्जत्तानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण

कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अन्नान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याप, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों

नं ४१२

कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६प.	१०,७	४	४	५	६	१३	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	२
मि.		६अ.	९,७					आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.
		५प.	८,६					विना.					अच.	कापो.	अ.		असं.	अना.
		५अ.	७,५															
		४प.	६,४															
		४अ.	४,३															

छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा^{४३} ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कापोत-लेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. ४१३

कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	३	५	६	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९		न.			म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. १	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८		ति.			व. ४					अच.	कापो.	अ.		असं.		अना.
			६	४	म.			औ. १											
								वै. १											

नं. ४१४

कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि.	अप.	५	७					औ. मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	६					वै. मि.			कुशु.		अच.	शु.	अ.		असं.	अना.	अना.
			५					कर्म.						भा. १					
			४	३										कापो.					

द्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, भिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४१५} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी,

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कापोतलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन दो योगोंके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कसाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे कापोतलेख्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४१५ कापोतलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	द्वे.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	त्र. ६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प.	द्वे.अ.	७			पं.	त्र.	आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	भ.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.							विना.					अच.	कापो.				अना.	अना.

तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, संण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{१६} ।

“तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, गिरयगई णत्थि । पंचि-दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

चारों वचनयोग; औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं; भावसे कापोत-लेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं; किन्तु नरकगति नहीं है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक,

नं. ४१६ कापोतलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				न.	पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					ति.			व. ४					अच.	कापो.				अना.	अना.
					म.			औ. १											
								वै. १											

नं. ४१७ कापोतलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६अ.	७	४	३	२	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.				ति.	पं.	त्र.	औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					म.			वै.मि.			कुशु.		अच.	शु.				अना.	अना.
					दे.			कर्म.						मा. १					
														का.					

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्टाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; मवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

काउलेस्सा-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास. छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके

नं. ४१८

कापोतलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	२०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.				न.	पंचे.	त्रस.	म. ४			अज्ञा.	असं.	वक्षु.	मा. १	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
					ति.			व. ४			३		अच.	का.					अना.
					म.			ओ. १			ज्ञान.								
								वै. १			मिश्र.								

णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^{१९} ।

तेसिं चेत्र पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२०} ।

तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कापोत-
लेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४१९ कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७		न.	पं.	त्र.	आ.द्वि.			मति.	असं.	के.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.				ति.			विना.			श्रुत.		विना.	का.		क्षा.		अना.	अना.
					म.						अव.					क्षायो.			

नं. ४२० कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.				न.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	असं.	के.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					ति.			व. ४			श्रुत.		विना.	का.		क्षा.		अना.	अना.
					म.			औ. १			अव.					क्षायो.			
								वै. १											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{२२} ।

तेउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

उन्हीं कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्र, बैक्रियिकमिश्र, और कार्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कापोतलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्म-साम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. ४२१ कापोतलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	इअ.	७	४	३	१	१	३	२	४	३	१	३	इ. २	१	२	१	२	२
अत्रि.	सं. अ.				न.	पं.	त्र.	औ.मि.	पु.		मति.	असं.	के.द.	का.	भ.	क्षा.	से.	आहा.	साका.
					ति.			वे.मि.	नं.		श्रुत.		विना.	गु.	क्षायो.			अना.	अना.
					स.			कार्म.			अव.		भा. १	का.					

छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२२} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विशेषार्थ—गोमट्टसार जीवकाण्डके अन्तमें आलाप अधिकारके ऊपर पं. टोड्डरमल्लजी ने जो संदष्टियां दी हैं उनमें इन्द्रियमार्गणाकी अपेक्षा असंज्ञी पंचेन्द्रियके पर्याप्त अवस्थामें चार लेश्याएं, तेजोलेश्याके आलाप बताते हुए तेजोलेश्यामें संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्तके अतिरिक्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास और संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके चार लेश्याएं बतलाई हैं । परंतु जिस आलाप अधिकारके अनुसार पंडितजीने ये संदष्टियां संग्रहीत की हैं उसमें केवल संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए ही असंज्ञियोंके चार लेश्याएं बतलाई हैं । किन्तु इन्द्रियमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके तीन अशुभ लेश्याएं और तेजोलेश्याके आलाप बतलाते हुए संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो ही जीवसमास बतलाये हैं । किन्तु धवलामें सर्वत्र असंज्ञियोंके तेजोलेश्याका अभाव या तेजोलेश्यामें असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासका अभाव ही बतलाया है । इससे इतना तो निश्चित हो जाता है कि गोमट्टसार जीवकाण्डमें संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके जो चार लेश्याएं बतलाई हैं वह कथन धवलाकी मान्यताके विरुद्ध है । परंतु गोमट्टसार जीवकाण्डके मूल आलाप अधिकारमें ही जो दो मान्यताएं पाई जाती हैं उसका कारण क्या होगा, इसका ठीक निर्णय समझमें नहीं आता है । एक बात अवश्य है कि पंडित टोड्डरमल्लजीने सर्वत्र एक ही मान्यता अर्थात् असंज्ञियोंके तेजोलेश्या या तेजोलेश्यामें असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासको स्वीकार कर लिया है, इसलिये उनके सामने सर्वत्र उक्त मान्यताका पोषक ही पाठ रहा हो तो कोई आश्चर्य नहीं । यदि पंडितजीने मूलमें दिये गये संज्ञीमार्गणाके निर्देशके अनुसार ही सर्वत्र सुधार किया होता तो कहीं न कहीं उन्होंने उसका संकेत अवश्य किया होता । जो कुछ भी हो, फिर भी यह प्रश्न विचारणीय है ।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके सात

नं. ४२२

तेजोलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
७	२	६प.	२०	४	३	१	१	१५	३	४	७	५	३	द. ६	२	६	१	२
मि.	सं. प.	६अ.	७	ति.	पं.	त्र.					केव.	सूक्ष्म.	के. द.	मा. १	म.	सं.	आहा.	साका.
से.	सं. अ.			म.							विना.	यथा.	विना.	ते.	अ.		अना.	अना.
अप्र.				दे.							विना.							

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त पाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३३} ।

^{१३४}तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णत्तंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच

गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरक-गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल ज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात-संयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं. भावसे तेजोलेइया; भव्यासिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेइयावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अधिरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास: छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, नपुंसकवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान,

नं. ४२३

तेजोलेइयावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ल.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
७	१	६	१०	४	३	१	१	११ म. ४	३	४	७	५ असं.	३	द. ६	२	६	१	१	२
मि.	सं.प.			ति.	पं.	त्र.	व.	४			केव.	देश.	के.द.	मा.	१	म.	सं.	आहा.	साका.
से				म.			ओ.	१			विना.	सामा.	विना.	ते.	अ.				अना.
अप्र.				दे.			वै.	१				छेदो.							
							आ.	१				परि.							

नं. ४२४

तेजोलेइयावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६अ.	७	४	२	१	१	४	२	४	५	३	३	द. २	२	५	१	२	२
मि.	सं.			दे.	पं.	त्र.	व.	ओ.मि.	पु.		कुम.	असं.	के.द.	का.	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
सासा.	अवि.	प्रम.		म.				वै.मि.	स्त्री.		कुश्रु.	सामा.	विना.	शु.	अ.	विना.		अना.	अना.
								आ.मि.			मति.	छेदो.		मा. १					
								कर्म.			श्रुत.	अव.		ते.					

गाण, तिण्णि संजमं, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वज्जुत्ता होंति अगागारुवज्जुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अगागारुवज्जुत्ता वा^{१२१} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-

असंयम, सामायिक और लेश्येपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक

१ प्रतियु ' असंजमो ' इति पाठः ।

नं. ४२५

तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा	सं.	ग.	इ	क.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	म.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६प.	२०	४	५	१	१	१२	३	४	३	१	२	द. ६	२	१	१	२	२
मि.	मं. प.	६अ.	७	ति	व	व.	म. ४				अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.			म.	दं		व. ४						अच.	ते.	अ.			अना.	अना.
							औ. १												
							कै २												
							का. १												

सीधे, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, णिरयगदी णत्थि; पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोम, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो; सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

^{११}तैसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्ताओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां हैं, किन्तु नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यपं, भावसे तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, सकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये

नं. ४२६

तेजोलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
किं.	सं.प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १ वे. १			ज्ञान.	असं.	चक्षु. अच.	मा. १ ते.	म. अ.	मि	सं.	आहा.	साका. अना

नं. ४२७

तेजोलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	सं.प.				देव.	पं.	त्र.	वे. मि. कर्म.	पु. ली.		कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अच.	मा. १ ते.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

जोग, दो वेद, णवुंमयवेदो णत्थि; चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छन्ति, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-

दो योग; पुरुष और स्त्री ये दो वेद होते हैं, किन्तु नपुंसकवेद नहीं होता है। चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगादिके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने

नं. ४२८

तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा. सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	व.	
१	२	६ प.	१०	४	३	१	१	१२	म. ४	३	४	३	१	२	द. ६	१	१	१	२
सा.	सं. प.	६ अ.	७	ति	पं.	त्र.	व. ४			अज्ञा.	असं.	चञ्चु.	भा. १	म. सा.	सं.	आहा.	सका.		
	सं. अ.			म.	दे		औ. १					अच.	ते.			अना.	अना.		
							वे. २												
							का. १												

चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{४२९} ।

^{४३०}तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग

नं. ४२९ तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	२	४	३	१	२	६	१	१	१	२
सा.	सं. प.			ति	पंचे.	त्र	म. ४ व. ४ औ. १ वै. १	अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	भा. १ ते.	म. १	सा.	सं.	आहा.	साका अना.		

नं. ४३० तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६अ.	७	४	१	१	२	२	४	२	१	२	१	१	२	
सा.	सं. अ.			दे.	पं.त्र.	वै.मि. कर्म.	पु. स्त्री.	कुम. कुश्रु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. १ ते.	म.	सासा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

जोग, णवुंमयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगईए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{२२} ।

ये दो योग, नपुंसकवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे तेजोलेइया; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

तेजोलेइयावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाए, नरक-गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे तेजोलेइया; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४३१

तेजोलेइयावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	४	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	२	२	द्र. ६	१	१	२
सम्य.	वं. प.			ति	वं.	न.	म. ४		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म. सम्य.	सं.	आहा.	साका.	अना
				म		दे.	व. ४	औ. १	ज्ञान.		अच.	ते.					
				वै.			वै. १		मिश्र.								

तेउलेस्सा-असंजदसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४३२} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संबिक,

नं. ४३२

तेजोलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	द्वि.	२०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्वि. ६	१	३	१	२	२
अ.	सं प.	इअ.	७		ति.	पुं	इस.	आ. द्वि.			मति	असं.	के.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	स. अ.				म. दे.	पुं	इस.	विना.			क्षुत.		वना.	ते.		क्षा.		अना.	अना.
																क्षायो.			

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३३} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३४} ।

तेउलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान. असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे तेजोलेख्या: भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक

नं. ४३३ तेजोलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०म. ४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	स.प.			ति.	पं.	त्रस.	व. ४	ओ. १			मति.	असं.	के. द.	भा. १	म.	ओप.	सं.	आहा.	साका.
				म. दे.			वै. १				श्रुत.		विना.	ते.		क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

नं. ४३४ तेजोलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ	७	४	२	१	१	३	१	४	३	१	३	द्र. २	२	३	१	२	२
अ.	सं. अ.			दे.	पं.	त्र	ओ. मि.	वै. मि.			मति.	असं.	के. द.	का.	म.	ओप.	सं.	आहा.	साका.
				म.			कर्म.				श्रुत.		विना.	शु.		क्षा.		अना.	अना.
											अव.			मा. १		क्षायो.			
														ते					

पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३५} ।

^{१३६}तेउलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, दो जीवसमासा, छ पञ्चत्तीओ छ अपञ्चत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि

संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औद्धारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औद्धारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये

नं. ४३५

तेजोलेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द. ६	१	३	१	१	२
दिस.	सं. प.			ति	पं.	त्र.	म. ४			मति	देश.	के. द.	भा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.	अना.
				म.			व. ४	औ. १		श्रुत		विना.	ते.		क्षायो.				
										अव.									

नं. ४३६

तेजोलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	के.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६प	१०	४	२	१	१	११	३	४	४	३	३	द. ६	३	३	१	१	२
दिस.	सं.प.	६अ.	७	म.	पं.	त्र.	म. ४			मति	सामा.	के. द.	भा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.	अना.
	सं.अ.						व. ४	औ. १		श्रुत	छेदो	विना.	ते.		क्षायो.				
								आ. २		अव	परि.								
										मनः									

संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, गव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४७} ।

पम्मलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ,

तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व; संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तविरत गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, अदिके तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों

नं- ४३७

तेजोलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र.	प.			भय.	म.	प.	त्र.	म. ४			मति.	सामा.	के.द.	भा. १	म.	औ.	सं.	आहा.	साका.
	सं.			मै.				ब. ४			भुत.	छंदा.	विना.	ते.		क्षा.			अना.
				पारि.				औ. १			अव.	परि.				क्षायो.			
											मनः.								

पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२८} ।

^{१२९}तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे आत्थि सत्त गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस णाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो,

योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और

नं. ४३८

पञ्चलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.	
७	२	६प.	१०	४	३	१	१	१५	३	४	७	५	३	द्र. ६	२	६	१	२	२
मि.	सं.प.	६अ.	७		ति.	पं.	त्र.				केव.	असं.	के.द.	मा. १	म.	सं.	आहा.	साका.	
से.	सं.अ.				म.						विना.	देश.	विना.	प.	अ.		अना.	अना.	
अप्र.					दे.						सामा.	छेदो.	परि.						

नं. ४३९

पञ्चलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ल.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.	
७	१	६	१०	४	३	१	१	११म.४	३	४	७	५	३	द्र. ६	२	६	१	२	२
मि.	सं.प.				ति.	पं.	त्र.	व. ४			केव.	देश.	के.द.	मा. १	म.	सं.	आहा.	साका.	
से.					म.			औ. १			विना.	सामा.	विना.	प.	अ.			अना.	
अप्र.					दे.			वै. १			विना.	छेदो.	परि.						

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११०} ।

पम्मलेस्सा-मिच्छाईट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग,

नं. ४४०

पञ्चलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६अ.	७	४	२	१	१	४	१	४	५	३	३	२	५	१	२	२
मि.	कं.			दे.	पं.	व.	औ.मि.	पु.		कुम.	असं.	के.द.	का.	म.सम्य.	सं.		आहा.	साका.
सासा.	कं.			म.			वै.मि.			कुश्रु.	सामा.	विना.	शु.	अ.विना.		अना.	अना.	अना.
अवि.							आ.मि.			मति.	छेदो.		भा. १					
प्रम.							कर्म.			श्रुत.			प.					
										अव.								

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११}

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,

तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

नं. ४४१

पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१ १	२२	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२
मि.	सं. प.	६अ.	७		ति. पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा	असं.	चक्षु	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.
	सं. अ.				म. दे.		व. ४					अच.	प. अ.			अना.	अना.
							औ. १										
							वै. २										
							का १										

नं. ४४२

पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१ १	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२
मि.	सं. प.				ति. पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.
					म. दे.		व. ४					अच.	प. अ.				अना.
							औ. १										
							वै. १										

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१११} ।

पम्मलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मसं,

पयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग; पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेस्यापं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेस्यापं,

नं. ४४३

पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६अ	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि	सं.अ			दे.	पं.	व.	वै.मि. कार्म.	पु.	कुम. कुशु.	असं.	चक्षु. अच.	का. शु. मा. १ पं.	म. अ.	मि.	सं.	आहा. अना.	माका. अना.		

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४४} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गइओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४५} ।

भावसे पद्मलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-
पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पद्मलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संक्षार्य, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पद्म-
लेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यवत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाका-
रोपयोगी होते हैं।

नं. ४४३ पद्मलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	३प.	१०	४	३	१	१	१२	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा	सं.प.	६अ.	७	ति.	पं.	त्र.	म. ४				अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	सासा.	सं.	आहा.	पाका.
	सं.अ.			म.			व. ४	ओ. १					अच.	प.				अना.	अना.
				दे.				वे. २											
								का. १											

नं. ४४५ पद्मलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा	सं.प.			ति.	पं.	त्र.	म. ४				अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
				म.			व. ४	ओ. १					अच.	प.					अना.
				दे.				वे. १											
								का. १											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११६} ।

११७ पम्मलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि,

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आविके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४४६ पञ्चलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र.२	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.				दे.	पं.	त्र.	वै.मि.	पु.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								कर्म.			कुशु.		अच.	शु.				अना.	अना.
														मा.१					
														प.					

नं. ४४७ पञ्चलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र.६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं.प.				ति.	पंचे.	त्रस.	म.४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा.१	म.	संय.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व.४			३		अच.	प.					अना.
					दे.			औ.१			ज्ञान.								
								वै.१			मिश्र.								

असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मा-
मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

पम्मलेस्सा-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, वे जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ,
पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण,
असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अहानोंसे
मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे
पञ्चलेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाका-
रोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-
सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों
अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-
जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके
तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे पञ्चलेक्ष्या;
भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने
पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों
प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४४८

पञ्चलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ह.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द.६	१	३	१	२	२
अवि	सं.प.	६अ.	७	ति.	पं.	त्र.	आ.दि	विना.			मति.	असं.	के.द	मा.१	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.			म.							भूत.		विना.	प.		क्षा.		अना.	अना.
				दे.							अव.					सायो.			

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे पञ्च-लेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, ब्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे पञ्चलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक;

नं. ४४९

पञ्चलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	२	६	२०	४	३	१	१	१०म.४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	१
अधि.	सं.प.				ति.	पं.	मं.	व. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.			औ. १			श्रुत.		विना.	प.		क्षा.			अना.
					दे.			वै. १			अव.					क्षायो.			

नं. ४५०

पञ्चलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	३	१	४	३	१	३	द्र. २	२	३	१	२	२
अ.	सं.अ.				दे.	पं.	व.	औ.मि.			मति.	असं.	के.द.	का.	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.			वै.मि.			श्रुत.		विना.	शु.		क्षा.		अना.	अना.
								कार्म.			अव.			भा. १		क्षायो.			
														प					

पम्मलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कषाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; उच्चं च पिंडियाए^१—

लेस्सा य दव्व-भावं कम्मं णोकम्ममिस्सयं दव्वं ।

जीवस्स भावलेस्सा परिणामो अप्पणो जो सो ॥ २२८ ॥

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^२ ।

पम्मलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशधिरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रस काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औद्गारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पञ्चलेश्या होती है । पिंडिका नामके ग्रन्थमें कहा भी है:—

लेश्या दो प्रकारकी है, द्रव्यलेश्या और भावलेश्या । नोकर्मवर्गणाओंसे मिश्रित कर्मवर्गणाओंको द्रव्यलेश्या कहते हैं । तथा जीवका कषाय और योगके निमित्तसे होनेवाला जो आत्मिक परिणाम है, वह भावलेश्या कहलाती है ॥ २२८ ॥

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण,

१ आ प्रतौ ' पिंडियाए ' इति पाठः ।

नं. ४५१

पञ्चलेश्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
देश.	सं. प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	देश.	कं.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व. ४			श्रुत.		विना.	प.		क्षा.			अना.
								ओ. १			अव.					क्षायो.			

पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि
संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२} ।

^{५३}पम्मलेस्सा-अप्पमत्तसंजदारणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठणं, एओ जीवसमासो,
छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-
योग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों
वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धिसंयम ये
तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे पन्नलेश्या; भव्यसिद्धिक,
औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी
होते हैं ।

पन्नलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान,
एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन
संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-

नं. ४५२

पन्नलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम.	सं.प.	६अ.	७	म.	पं.	त्रस.	म. ४	व. ४			केव.	सामा.	के.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.						व. ४	औ. १			विना	छेदो.	विना.	प.		क्षा.			अना.
							आ. २	आ. २			परि.	परि.				क्षायो.			

नं. ४५३

पन्नलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र.	सं.प.			भय	म.	पं.	म. ४	व. ४			केव.	सामा.	के.द.	मा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
				मै.			व. ४	औ. १			विना	छेदो.	विना.	प.		क्षा.			अना.
				परि.							परि.	परि.				क्षायो.			

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सुकलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि अजोगि विणा तेरह गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीआ, दस पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदु-वजुत्ता वा ।

रिक्काययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे पद्मलेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेख्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अयोगिकेवली गुणस्थानके विना आदिके तेरह गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण तथा सयोगिकेवलीकी अपेक्षा चार प्राण और दो प्राण; चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी होता है, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

नं. ४५४

शुक्कलेख्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	२	६ प.	१०	४	३	१	१	१५	३	४	<	७	४	द. ६	२	६	१	२	२
अयो.	सं. प.	६ अ.	७	क्षीणसं.	ति.	पं.	त्र.		अपय.	अकषा.				भा. १	म.		सं.	आहा.	साका.
विना.	सं. अ.		४	क्षीणसं.	म.									शु.	अ.		अनु.	अना.	अना.
			२	क्षीणसं.	द.														तथा.
																			दु. उ.

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, देव-मणुसगदि ति दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद अवगदवेदो वि अत्थि,

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी होता है, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कषाय, तथा अकषायस्थान भी होता है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तविरत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान; एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण और दो प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, पुरुषवेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय तथा

नं. ४५५

शुक्कलेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प. प्रा.	सं. ग.	इं.	का.	यो.	वे क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१३	१	६	१०	४	३	२	१	११म. ४	३	४	८	७	४	४	२	६	२	१	२
अयो.	सं. प.		४	क्षीणसं.	ति. पंचे.	त्र.	व. ४	अप्या.						द्र. ६	२	६	२	१	२
विना				म. ६.			औ. १	अकषा.						भा. १. भ.	सं.	आहा.	साका		
							वै. १							सु. अ.	अनु.	तथा.	अना.		
							आ. १									यु. उ.			

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भवेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१६} ।

^{१७}सुक्कलेस्सा-मिच्छाइहीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद,

अकषायस्थान भी है, विभंगावधि और मनःपर्ययज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेद्यापं, भावसे शुक्लेस्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

शुक्लेस्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग, तीनों वेद,

नं. ४५६

शुक्लेस्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५मि.	१	इअ.	७	४	२	१ १	४	१	४	६	४	४	४. २	२	५	१	२	२
सा.	सं. अ.		२	क्षणसं.	दे.	पं. व.	औ. मि.	पु.	अकषा.	विमं.	असं.		का.	म.	सम्य	सं.	आहा.	साका.
अवि.				मं.			वै. मि.	अपमं.	अकषा.	मनः.	सामा.		शु.	अ.	विना.	अनु.	अना.	अना.
प्रम.							आ. मि.		अकषा.	विना.	छेदी.		मा. १					तथा.
सयो.							कर्म.		अकषा.	विना.	यथा.		शु.					यु. उ.

नं. ४५७

शुक्लेस्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	इप.	१०	४	३	१ १	१ २	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	सं. प.	इअ.	७		ति.	पं. व.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.				म.		व. ४					अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
					दे.		औ. १											
							वै. २											
							का. १											

चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५५८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ,

चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याणं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास; छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकामिश्र और कर्मणकाययोग ये दो योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और

नं. ४५८

शुक्कलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२
मि.	सं. प.				ति. पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु. अच.	मा. १	म. अ.	मि	सं.	आहा.	साका. अना.
					म. दे.		व. ४						शु.					
							औ. १											
							वै. १											

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५९} ।

सुक्कलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिपिण गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । कारणं, देव-मिच्छाइट्ठि-सासणसम्माइट्ठीणं तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणणं अमुणिय-परमत्थाणं तिव्व-लोहाणं संकिलेसेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ फिट्ठिऊण किण्ह-णील-काउलेस्साणं एगदमा भवदि । सम्माइट्ठीणं पुण मणुस्सेसु चेव उप्पज्जमाणणं मंदलोहाणं समुणिदपरमत्थाणं अरहंतभयवंतम्हि छिण्ण-जाइ-जरा-मरणम्हि दिण्णबुद्धीणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ चिरंत-

शुक्ल लेश्याएं, भावसे शुक्ल लेश्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ल लेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, प्रसकाय, औदारिकमिथ्र और आहारककाययोगद्विकके विना शेष बारह योग होते हैं; किन्तु यहां पर औदारिकमिथ्रकाययोग नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले, परमार्थके अज्ञानकार और तीव्र लोभकषायवाले ऐसे मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके मरते समय संक्लेश उत्पन्न हो जानेसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं नष्ट होकर कृष्ण, नील और कापेत लेश्यामेंसे यथासंभव कोई एक लेश्या हो जाती है । किन्तु जो मनुष्योंमें ही उत्पन्न होनेवाले हैं, मंद लोभकषायवाले हैं, परमार्थके जानकार हैं, और जिन्होंने जन्म, जरा और मरणके नष्ट करनेवाले अरहंत भगवन्तमें अपनी बुद्धिको लगाया है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके चिरंतन (पुरानी) तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं मरण करनेके

१ प्रतिष्ठु ' छिण्णबुद्धीणं ' इति पाठः

नं. ४५९

शुक्ल लेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	इअ.	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	ज.			देव.	पं.	ब.	वे. मि. कार्म.	पु.	कुम.	असं.	वष्टु. अच.	का. शु.	मा. १ शु.	म. मि. सं.	आहा. अना.	साका. अना.			

णाओ जाव अंतोमुहुत्तं ताव ण णस्संति । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ

अनन्तर अन्तर्मुहूर्त तक नष्ट नहीं होती है, इसलिए शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है। योग आलापके आगे तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं शुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्या;

नं. ४६० शुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१२	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	२	२	२	२
सा.	सं.प.	६अ.	७		ति.	पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.				म.			व. ४					अच.	शु.				अना.	अना.
					दे.			औ. १											
								वै. २											
								का. १											

नं. ४६१ शुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. १	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व. ४					अच.	शु.					अना.
					दे.			औ. १											
								वै. १											

लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{पर} ।

सुक्कलेस्सा-सम्मामिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया,

भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं शुक्कलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञार्थ, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञार्थ, नरकगतिके घिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे

नं. ४६२

शुक्कलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र.२	१	१	१	२	२
सा.	सं.अ.				दे.	पं.	त्र.	वै.मि.कर्म.	पु.		कुम.कुशु.	असं.	चक्षु.अच.	का.शु.मा.१.शु.	म.	सासा.	सं.	आहा.अना.	साका.अना.

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३} ।

सुकलेस्सा-असंजदसम्माइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५४} ।

शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगदिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४६३

शुक्कलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१	१	६	२०	४	३	१	१	२०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.				ति. पं. म. दे.	त्र. म. ४ व. ४ औ. १ त्रै. १		अज्ञा. ३ ज्ञान. मिश्र.	असं.	चक्षु. अच.	मा. १ शुक्क.	भ.	सम्य.	सं.	आहा.	साका. अना.			

नं. ४६४

शुक्कलेश्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१	२	६प. ६अ.	२०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अवि.	सं. प. सं. अ.				ति. पं. म. दे.	त्र. आ. द्वि. विना.		मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	मा. १ शुक्क.	भ.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.			

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४६५} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

नं. ४६५

शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१०	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.				ति.	प.	म. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. १ म.	औप.	सं.	आहा.	साका.	अमा.
					म.	व.	व. ४			भुत.		विना.	शुक्ल.		क्षा.			
					दे.	व.	औ. १			अव.					ज्ञायो.			
							वे. १											

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६६} ।

सुकलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६७} ।

सुकलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेश्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, उहाँ पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे उहाँ लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुण-

नं. ४६६ शुक्ललेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	२	३	१	४	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि.	सं.अ.	अ.			दे.	पं.	त्र.	औ.मि.पु.	वै.मि.कर्म.		मति.	असं.	के.द.	का.	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.						श्रुत.		विना.	शु.	भा. १	क्षा.		अना.	अना.
											अव.			शुक्र.		क्षायो			

नं. ४६७ शुक्ललेश्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देश.	सं.प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	देश.	के.द.	भा. १	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व. ४			श्रुत.		विना.	शुक्र.		क्षा.			अना.
								औ. १			अव.					क्षायो			

पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि
संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५८} ।

^{५९}सुक्कलेस्सा-अपमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो,
छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां;
दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,
चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह
योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहार-
विशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या; भव्य-
सिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना
शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं. ४६८

शुक्कलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा. सं.	ग.	ई. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	३	१	१	२
प्रम.	सं. प.	६अ.	७		म.	पं.	व.	म. ४			मति.	सामा.	के.द.	मा. १	म.	औप.	साका.
	सं. अ.							व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुक्क.		सा.	अना.
								औ. १			अव.	परि.					
								आ. २			मनः.						

नं. ४६९

शुक्कलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा. सं.	ग.	ई. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	३	१	१	२
अप्र.	पं.			भय.	म.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	सामा.	के.द.	मा. १	म.	औप.	साका.
	सं.			मै.				व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुक्क.		सा.	अना.
	सं. अ.			परि.				औ. १			अव.	परि.					
											मनः.						

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा ।

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ओघ-भंगो; तेसु सुक्कलेस्सा-वदिरिचण्णलेस्साभावादो । अलेस्साणं अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो चेव ।

एवं लेस्सामग्गणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धियाणं भण्णमाणे मिच्छाइड्ढिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ओघ-भंगो । णवरि भवसिद्धिया त्ति वत्तव्वं ।

अभवसिद्धियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, चौदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सभ्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके शुक्ललेश्यावाले जीवोंके आलाप ओघ-आलापके समान ही होते हैं, क्योंकि, इन गुणस्थानोंमें शुक्ललेश्याको छोड़कर अन्य लेश्याओंका अभाव है ।

लेश्यारहित अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आलापोंके ही समान होते हैं ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिक जीवोंके आलाप कहने पर मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि भव्य आलाप कहते समय एक भव्यसिद्धिक आलाप ही कहना चाहिए ।

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छ प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छ प्राण, चार प्राण; चार प्राण और तीन प्राण; चारों संस्कार, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके बिना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०१} ।

छहों लेश्यापं, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अभव्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास; छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४७०

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जा.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१४	६प.	१०,७	४	४	५	६	१३	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	२	२	२
मि.		६अ.	९,७					आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	अ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		५प.	८,६					विना.					अच.				असं.	अना.	जना.
		५अ.	७,५																
		४प.	६,४																
		४अ.	४,३																

नं. ४७१

अभव्यसिद्धिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जा.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ल.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
मि.	पर्या.	५	९					म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	अ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४	८					व. ४					अच.				असं.	अना.	अना.
			७					औ. १											
			६	४				वै. १											

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{५२} ।

णेव-भवसिद्धिय-णेव-अभवसिद्धियाणमोघ-भंगो ।

एवं भवियमग्गणा समत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणट्ठाणाणि अदीद-गुणट्ठाणं पि अत्थि, वे जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ

उन्हीं अभव्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिथ्र, वैक्रियिकमिथ्र, और कार्मणकाय-योग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अन्नान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संबिक, असंबिक; आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक विकल्पोंसे रहित सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अधिरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान तथा अतीत-गुणस्थान भी है, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास-

नं. ४७२

अभव्यसिद्धिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	ड.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	२	२	द्र. २	१	१	२	२	२
मि.	अप.	५अ.	७					औ.मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	अ.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४अ.	६					वै.मि.			कुशु.		अच.	शु.			असं.	अना.	अना.
			५					कार्म.						भा. ६					
			४																
			३																

अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस पाण सत्त पाण चत्तारि दो एक पाण अदीदपाणा वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ सिद्ध-गदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अण्णिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच पाण, सत्त संजम नेव संजमो नेव असंजमो नेव संजमा-संजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भव-सिद्धिया नेव भवसिद्धिया नेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो नेव सण्णिणो नेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारोहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१०३} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि,

स्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां और अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियत्व-स्थान भी है, असकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों ज्ञान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक तथा भव्यासिद्धिक और अभव्यासिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लिक तथा संश्लिक और असंश्लिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं सम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--अविरतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दश, चार, दो और एक प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों

नं. ४७३

सम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
११अवि.	२ सं.प.	६प.	१०७	४	४	१	१	१५	३	४	५	७	४	द्र.इ	१	३	१	२	२
क्षी. अयो.	सं. अ.	६अ.	४	क्षीणसं.	सिद्धग.	पं. अ.	अकाय.	अयोग.	अपग.	अकषा.		अरुम.		मा.इ	म.	आप.	सं. अरु.	आहा. अना.	साका. अना. तथा. यु. उ.
कृती. गुं.	अती. जी.	अती. प.	अती. प्रा.											अलेख्या	अरुम.	क्षा. क्षायो.			

चत्तारि गर्हओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउठ्वियमिस्सेण विणा चौदह जोग अहवा एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भवेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^व ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग के बिना चौदह योग अथवा तीनों मिश्र योग और कर्मणकाययोगके बिना शेष ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं तथा अलेइयास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, स्त्रीज्ञक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, भाहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ—छठवें गुणस्थानकी आहारकसमुद्धात अवस्थामें और तेरहवें गुणस्थानकी केवलिसमुद्धात अवस्थामें पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेपर आहारकमिश्र, औदारिकमिश्र और कर्मणकाय ये तीन योग पर्याप्त अवस्थामें भी बन जाते हैं। इसीप्रकार सयोगकेवलीके दो प्राणोंके संबन्धमें भी समझ लेना चाहिए ।

उन्हीं सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये तीन गुणस्थान; एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण दो प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-

नं. ४७४

सम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.प्रा.	सं.ग.	इं.	का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
११	१	६	२०	४	४	१	१	१४	३	४	५	७	४	द्र. व मा. व म.	३	१	२	२
अवि. से. अयो.	सं. प.	४ २ १	क्षीणसं.	पंचे.	त्र.	वै. मि. विना. अथवा ११म. ४ व. ४ ओ. १ वै. १ आ. १	अपरा. अकषा.						अनु. क्षायो.	आहा. अना.	साका. अना. तथा. पु. उ.			

गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा; आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा^{११५} ।

उवरि असंजदसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि ताव मूलोघ-भंगो; तेसिं सव्वेसिं सम्मत्तसंभवादो ।

जाति, प्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग ये चार योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, मति, श्रुत, अवधि और केवलज्ञान ये चार ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोप-स्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ—यहांपर सम्यक्त्वमार्गणाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए भावसे छहों लेश्याएं बतलाई गई हैं, और गोमट्टसार जीवकाण्डके आलापाधिकारमें सम्यक्त्वमार्ग-णाके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए एक कापोत और तीन शुभ इसप्रकार चार लेश्याएं ही बतलाई हैं । परंतु गोमट्टसारमें ऐसा कथन क्यों किया यह कुछ समझमें नहीं आता, क्योंकि, आगे उसीमें वेदकसम्यक्त्वके अपर्याप्त आलाप बतलाते हुए छहों लेश्याएं कहीं गई हैं । संभव है यह लिपिकारकी भूल है जो बराबर यहां तक चली आई है । अस्तु, धवलका कथन ठीक प्रतीत होता है ।

ऊपर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक प्रत्येक गुण-स्थानवर्ती सम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान होते हैं; क्योंकि, उन सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंके सम्यक्त्व पाया जाता है ।

नं. ४७५

सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	१	६अ.	७	४	४	१ १	४	२	४	४	४	४	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि. प्रम. सयो.	सं.अ.		२	क्षीणसं.		पं.त्र.	औ.मि. वै.मि. आ.मि. कार्म.	पु. न. अपाण.	उकषा. श्रुत. अब. केव.	मति. यथा.	असं. सामा. छेदो. यथा.	का. शु. भा. ६	म. औप. क्षा. यो.	सं. अतु.	आहा. अना. तथा. यु. उ.			

खइयसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणट्ठाणाणि अदीदगुणट्ठाणं वि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पञ्चत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ अदीदपञ्जत्ती वि अत्थि, दस पाण सत्त पाण चत्तारि दो एक पाण अदीदपाणो वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ सिद्धगई वि अत्थि, पंचिदियजादी अर्णिदियत्तं वि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं वि अत्थि, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच पाण, सत्त संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१०९} ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक ग्यारह गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी होता है, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियस्थान भी है, त्रस-काय तथा अकायस्थान भी है, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगत-वेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों ज्ञान, सातों संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयमसे रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्यापं तथा अलेक्ष्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और असाकारो-पयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

नं. ४७६

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
११	२	६५.	१०	४	४	१	१	१५	३	४	५	७	४	६. ६	१	१	१	२	२
अवि.	पं.प.	६अ.	७ ४	क्षीणसं.	सिद्धग.	पं.	व.	अवीन.	अपग.	अकषा.	मति.	अनु.		मा. ६	म.	शा.	सं.	आहा.	साका.
से.	पं.अ.	प.	२ २	अती. प्रा.	अनीन्द्र.		अकाय.				अत.			अले.	अतु.		अनु.	अना.	अना.
अयो.	अती. जी.	अती. प्रा.									मनः.								तथा.
अती. उ.											केव.								यु. उ.

तेसिं चैव पञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणद्वयाणि, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस चत्तारि एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगद-वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्तारं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वयाणि, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद अवगदवेदो वि अत्थि,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक ग्यारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राण और एक प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों सम्यग्ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, श्रीवेदके विना शेष दो वेद तथा

नं. ४७७

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा.	सं.	ग. इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	व.
११	१	६	१०	४	४	१	१	१	४	५ मात.	७	४	द्र. ६	१	१	१	२	२
अव.	सं. प.			क्षीणसं.	पं.	त्र.	व. ४	अपग.	अकषा.	भुत			भा. ६	म. क्षा.		सं. अनु.	आहा.	सका.
से.							औ. १			अव.			अंल.				अना.	अना.
अयो.							कै. १			मनः.								तथा.
							आ. १			कव								युं व

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णकाउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा^{१०८} ।

^{१०९}खइयसम्माइट्ठीणं असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-

अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति, श्रुत, अवधि और केवल-ज्ञान ये चार ज्ञान; असंयम, सामायिक छेदोपस्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल लेइयापं; भव्यसिद्धिक, क्षयिकसम्यक्त्व, संज्ञिक तथा अनुभयस्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,

नं. ४७८

क्षायिकसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
३	१	६अ.	७	४	४	१	१	४	२	४	४	४	४	द्र २ का.	१	२	१	२	२
अवि.	क.			क्षीणसं.		पं.	त्र.	औ.मि. पु. न. आ.मि. कार्म.	उपना.	अकषया.	मति श्रुत अव. केव.	असं. सामा. छेदो. पार.	४	शु. मा. ४ का. तेज. पद्म. शुक्ल.	म. क्षा. अनु.		सं. आहा. अना.	साका. अना. तथा यु.उ.	

नं. ४७९

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	२	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६ मा. ६ म.	१	१	१	२	२
अवि.	सं. प सं. अ.	६अ.	७			पं.	त्र.	आ.द्वि. विना.			मति श्रुत. अव.	असं.	के.द. विना.	मा. ६ म.	म. क्षा.		सं. आहा. अना.	साका. अना.	

जमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्चत्तारं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ पञ्च-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि गाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८०} ।

आहारककाययोगद्विकके बिना शेष तेरह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४८०

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	२०	४	४	१	१	१०म.४ व. ४ औ. १ वै. १	३	४	३	२	३	द्र. ६ मा. ६	१	१	१	१	२
अभि.	सं.प.					पं.	सं.				मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.		म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ४८१

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	द्र २ का. के द. उं. भा. ४ विना. का. तेज. पद्म. शुक्ल.	२	१	१	२	२
अ.	कं. कं.	अ				पं.	न	ओ.मि. वै.मि. कर्म.	पु. न.		मति. श्रुत. अव.	असं.			म.	क्षा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णकाउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{५५} ।

खइयसम्माइट्ठीणं संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतिर्यां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर— एक देशविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक,

नं. ४८१

क्षायिकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	१	२	१	२
अवि.	सं. अ.	अ.			पं. त्र.	औ. मि. वै. मि. कर्म.	पु. न.		मति. क्षुत. अव.	असं.	के. द. विना.	द्र. २ का. शु. मा. ४ का. तेज. पद्म. शुक्ल.	१ म.	२ क्षा.	१ सं.	२ आहा. अना.	२ साका. अना.

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४२} ।

खइयसम्माइट्ठीणं पमत्तसंजदप्पहुडि सिद्धावसाणाणं मूलोघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ खइयसम्मत्तं चैव वत्तव्वं ।

^{४२}वेदगसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सिद्ध जीवों तकके प्रत्येक स्थानवर्ती क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप मूल ओघ आलापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र एक क्षायिकसम्यक्त्व ही कहना चाहिए ।

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये पांच संयम; आदिके

नं. ४८२

क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	६	१	१	१	१	२
हृ	पं				म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १			मति. श्रुत. अव.	देश.	के.द. विना.	भा.३ शुभ.	म.	क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ४८३

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	१०	४	४	१	१	१५	३	४	४	५	३	६	१	१	१	२	२
अवि. से. अप्र.	सं. सं. अ.	प. अ.	६ अ.	७		पं.	त्र.				मति श्रुत. अव. मनः	असं. देश. सामा. छेदो. परि.	के.द. विना.	भा.६	म.	क्षायो	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४४} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ; देवगदि-मणुसगदी । कद-करणिज्जं वेदगसम्माइहिं पडुच्च णिरय-तिरिक्खगईओ लब्भंति । पंचिंदियजादी, तसकाओ,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये पांच संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां होती हैं, क्योंकि, वेदकसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्तकालमें देवगति और मनुष्यगति तो पाई ही जाती हैं, किन्तु कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टिकी अपेक्षासे नरकगति और तिर्यचगति भी पाई जाती हैं। पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार

नं. ४८४

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	४	१	२	२१	३	४	४	५	३	द. ६	१	१	१	१	२
अभि.	५					पं.	त.	म. ४			मति.	असं.	के. द.	मा. ६	म.	क्षायो.	सं.	आहा.	साका-
से.	६							व. ४			श्रुत.	देश.	त्रिना.						अना.
अप्र.								औ. १			अव.	सामा.							
								वै. १			मनः.	छेदो.							
								आ. १				परि.							

चत्वारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्वारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदग-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४८५} ।

वेदगसम्माइद्धि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्वारि सण्णाओ, चत्वारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्वारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४८६} ।

योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक-काययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४८५

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	१	६अ.	७	४	४	१	१	४	२	४	३	३	३	द्र.२	१	१	१	२	२
अवि.	सं.अ.				पं.	त्र.	ओ. मि.	पू.	मति.	असं.	के. द.	के. द.	के. द.	का. शु.	भ. क्षायो.		सं.	आहा.	साका.
प्रम.							आ.मि.	न.	त.	सामा.	अवे.	के. द.	के. द.	मा.६				अना.	अना.

नं. ४८६

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र.६	१	१	१	२	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७		पं.	त्र.	आ.द्वि.	विना.	भुत.	अव.	मति.	असं.	के. द.	मा.६	भ. क्षायो.		सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.										भुत.	अव.	के. द.	विना.				अना.	अना.

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जचीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

^{१०}तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जचीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुष और नपुंसक ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,

नं. ४८७

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१ १	१०	३ ४	३	१	३	द्र. ६	१ १	१ १	१	१	२
अवि.	सं.प.					पं. त्र.	म. ४ व. ४ औ. १ वै. १		मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	भा. ६ म.	क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.	

नं. ४८८

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१ १	३	२ ४	३	१	३	द्र. २	१ १	१ १	१	२	२
अवि.	सं.अ. अ.					पं. त्र.	औ. मि. वै. मि. कर्म.	पु. न.	मति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	का. शु. भा. ६	म. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.	

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेदगसम्माइद्धि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५८९} ।

वेदगसम्माइद्धि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण,

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, सांख्यिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, सांख्यिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग;

नं. ४८९

वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	६	१	१	१	१	२
देश.	सं. प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	देश.	के.द.	मा. ३	म.	ज्ञायो.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व. ४			भुत.		विना.	शुभ.					अना.
								औ. १			अव.								

तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

वेदगसम्माइद्धि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तीन शुभ लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वेदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दर्शों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तीन शुभ लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४९०

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.	
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	१	१	१	२	
प्रम.	सं.प.	६अ.	७	म.	पिं.	त्रस.	म. ४	व. ४			मति.	सामा.	के.द.	मा. ३	म. क्षायो.	सं.	आहा.	साका.	अना.	
	सं.अ.						औ. १	आ. २			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुभ.						
											अव.	परि.								
											मनः.									

नं. ४९१

वेदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	१	१	१	२
अप्र.	सं.प.			भय	म.	पिं.	त्रस.	म. ४			मति.	सामा.	के.द.	मा. ३	म. क्षायो.	सं.	आहा.	साका.	अना.
				मै.				व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुभ.					
				परि				औ. १			अव.	परि.							
											मनः.								

उवसमसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि अट्ट गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्स-आहार-आहार-मिस्सेहि विणा बारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय उवसंत-कसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, परिहारसंजमेण विणा छ संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि अट्ट गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ उवसंतपरिग्गहसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा उपशान्तपरिग्रहसंज्ञा भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन तीन योगोंके बिना शेष बारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा उपशान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके बिना शेष छह संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेद्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक आठ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा उपशान्तपरिग्रहसंज्ञा भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा

नं. ४९२

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
८	२	६प.	१०	४	४	१	१	१२	३	४	४	६	३	द्र. ६	१	१	१	२	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७	सं.		पं.	त्र.	म. ४	अपग.	क.	सति.	परि.	के. द.	मा. ६	म.	ओप.	सं.	आहा.	साका.
से.	सं.अ.			उप.				त्र. ४	उप.	क.	श्रुत.	विना.	विना.					अना.	अना.
उप.								जी. १			अव.								
								कै. २			मनः.								
								का. १											

कसाय उवसंतकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, छ संजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१४} ।

उपशान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना शेष छद्द संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक; औपशमिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अवि-रतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देशगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये हैं योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपश-मिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४९३

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	व.
८	२	६	२०	४	४	१	१	१०	३	४	४	६	३	द्र. ६	१	१	१	१	२
अवि.	पं.			उप.	पं.	व.	म.	व.	अप.	क.	मति.	परि.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
से.	हं.			उप.	पं.	व.	म.	व.	अप.	क.	श्रुत.	विना.	विना.					अना.	अना.
उप.							औ. १	वै. १			अव.								

नं. ४९४

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	व.
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र. २	१	१	१	२	२
अवि.	सं.अ.				दे.	पं.	व.	वै.मि.	पु.		मति.	असं.	के.द.	का.	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
							कर्म.				श्रुत.		विना.	शु.				अना.	अना.
											अव.			मा. ३	शुम.				

उवसमसम्माइट्ठि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

^{१००}तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस

उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये बारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४९५ उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	२	२२	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	१	१	२	२
अवि.	सं. प.	६अ.	७			पं.	त्र.	म. ४		मति.	असं.	के. द.	विना.			औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.							व. ४		श्रुत.								अना.	अना.
								औ. १		अव.									
								वै. २											
								का. १											

नं. ४९६ उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०म. ४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	१	१	१	२	
अवि.	सं. प.					पं.	मं.	व. ४			मति.	असं.	के. द.	विना.			औप.	सं.	आहा.	साका.
							मं.	औ. १			श्रुत.								अना.	अना.
								वै. १			अव.									

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुह्लेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११७} ।

उवसमसम्माइट्ठि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी,

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेश्याएं; भव्य-सिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उपशमसम्यग्दष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर— एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग और

नं. ४९७

उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं. ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	३	१	३	द्र. २	२	१	१	१	२
अर्ध.	सं.	अ.		दे.	पं.	त्र.	वै. मि. पु.	माति. श्रुत. अव.	असं.	के. द. विना.	का. शु. भा. शुभ.	म. औप.		सं.	आहा. अना.	साका. अना.

तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५६} ।

उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, मणपज्जवणाणेण सह उवसम-सेहीदो ओयरिय पमत्तगुणं पडिवण्णस्स उवसमसम्मत्तेण सह मणपज्जवणाणं लब्भदि, ण मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदस्स; तत्थुप्पत्ति-संभवाभावादो । दो संजम, परिहारसंजमो णत्थि । कारणं, ण ताव मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-संजदा

औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उपशमसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान होते हैं । उपशमसम्यग्दष्टिके मनःपर्ययज्ञान होता है इसका कारण यह है कि मनःपर्ययज्ञानके साथ उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसंयत गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके औपशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञान पाया जाता है । किन्तु, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययज्ञान नहीं पाया जाता है; क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यग्दष्टि प्रमत्तसंयतके मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति संभव नहीं है । ज्ञान आलापके आगे सामायिक, और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं; किन्तु परिहारवि-शुद्धिसंयम नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए प्रथमोपशम-सम्यग्दष्टि संयत जीव तो परिहारविशुद्धिसंयमको प्राप्त होते नहीं हैं; क्योंकि, सर्वोत्कृष्ट भी

नं. ४९८

उपशमसम्यग्दष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	व.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द. ६	१	१	१	१	२
देश.	सं. प.				ति.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	देश.	के. द.	मा. ३	म.	जोप.	सं.	आहा.	साका.
					म.			व. ४			भुत.		त्रिना.	शुम.					अना.
					औ.			१			अव.								

परिहारसंजमं पडिवज्जंति; अइट्ट-उवसमसम्मत्तकालभंतरे तदुप्पत्तिणिमित्तगुणाणं संभवा-
भावादो । णो उवसमसेट्ठिं चढमाणा; तत्थ पुव्वमेवमंतोमुहुत्तमत्थि ति उवसंहरिद-
विहारादो । ण तत्तो ओदिण्णाणं पि तस्स संभवो; णट्ठे उवसमसम्मत्तेण विहारस्सा-
संभवादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया,
उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

उवसमसम्माइट्ठि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पाँचैदियजादी, तस-
काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, परिहारसंजमो

प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालके भीतर परिहारविशुद्धिसंयमकी उत्पत्तिके निमित्तभूत विशिष्टसंयम,
तीर्थंकर-चरणमूल-वसाति, प्रत्याख्यानपूर्व-महार्णवपठन आदि गुणोंके होनेकी संभावनाका अभाव
है। और न उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके भी परिहारविशुद्धि-
संयमकी संभावना है; क्योंकि, उपशमश्रेणिपर चढ़नेके पूर्व ही जब अन्तर्मुहूर्तकाल शेष
रहता है तभी परिहारविशुद्धिसंयमी अपने गमनागमनादि विहारको उपसंहरित अर्थात्
संकुचित या बन्द कर लेता है। और उपशमश्रेणीसे उतरे हुए भी द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि
संयत जीवोंके परिहारविशुद्धिसंयमकी संभावना नहीं है; क्योंकि, श्रेणि चढ़नेके पूर्वमें ही
परिहारविशुद्धिसंयमके नष्ट हो जानेपर उपशमसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयमीका
विहार संभव नहीं है। संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं,
भावसे तीन शुभ लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना
शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, ब्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग
और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक
और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं; किन्तु, परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है।

नं. ४९९

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	ग.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	व.
२	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	४	२	३	द्र. ६	१	१	१	२	२
प्रम.	सं.प.				म.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	सामा.	के.द.	भा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुभ.					अना.
								औ. १			मनः.								

णत्थि । उच्चं च—

मणपज्जवपरिहारा उवसमसम्मत्त दोण्णि आहारा ।

एदेसु एकपयदे णत्थि त्ति य सेसयं जाणे' ॥ २२९ ॥

तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५००} ।

कहा भी है—

मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयम, प्रथमोपशमसम्यक्त्व, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इनमेंसे किसी एकके प्रकृत होनेपर शेषके आलाप नहीं होते हैं; ऐसा जानना चाहिए ॥ २२९ ॥

विशेषार्थ— गोमट्टसार जीवकाण्डमें भी यही गाथा पाई जाती है; परंतु उसमें 'उवसमसम्मत्त' के स्थानमें 'पढमुवसम्मत्त' पाठ पाया जाता है जो संगत प्रतीत होता है; क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयम और आहारद्विक इन सबके होनेका विरोध है औपशमिकसम्यक्त्वके साथ नहीं। यद्यपि औपशमिकसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयम और आहारद्विक नहीं होते हैं फिर भी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकी अपेक्षा औपशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञानका होना संभव है, इसलिये गाथामें 'उवसमसम्मत्त' ऐसा सामान्य पद रखनेसे औपशमिकसम्यक्त्वके साथ भी मनःपर्ययज्ञानके होनेका निषेध हो जाता है जो आगम विरुद्ध है। तो भी 'उवसमसम्मत्त' पदका अर्थ प्रथमोपशमसम्यक्त्व कर लेने पर कोई दोष नहीं आता है यही समझकर पाठमें परिवर्तन नहीं किया है।

संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तीन शुभ लेइयापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ मणपज्जव परिहारो पढमुवसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एकपयदे णत्थि त्ति असेसयं जाणे ॥

गो. जी. ७२९.

नं. ५००

उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ठ.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	२	३	द्र.६	१	१	१	१	२
क.	सं.प.			आहा. विना.	म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १			मति. श्रुत. अव. मनः.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	मा.३ शुभ.	म.	औप.	सं.	आहा.	सांका. अना.

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ ति ताव ओघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ उवसमसम्मत्तं भाणियव्वं ।

मिच्छत्त-सासणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ओघ-मिच्छाइड्ढि-सासणसम्माइड्ढि-सम्मा-मिच्छाइड्ढि-भंगो ।

एवं सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

पाधणपदे अवलंबिज्जमाणे सव्वाणुवादाणं मूलोघ-भंगो होदि; तत्थ सव्व-वियप्प-संभवादो । गुणणामे अवलंबिज्जमाणे ण होदि । पाधणपदे अणवलंबिज्जमाणे असंजमादीणं कथं गहणं ? ण; वदिरेगमुहेण संजमादि-परूवणहुं तप्परूवणादो । तेण दोण्णि वि वक्खाणाणि अविरुद्धाणि । एसत्थो सव्वत्थ वत्तव्वो ।

सणियाणुवादेण सण्णीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि

उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र उपशमसम्यक्त्व ही कहना चाहिए ।

मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके आलाप क्रमशः मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके आलापोंके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

प्राधान्य पदके अवलंबन करनेपर सभी अनुवादोंके आलाप मूल ओघआलापके समान होते हैं; क्योंकि, मूल ओघआलापमें विधि प्रतिषेधरूप सभी विकल्प संभव हैं । किन्तु गौणनाम-पदके अवलंबन करनेपर सभी विकल्प संभव नहीं हैं; क्योंकि, इस नामपदकी दृष्टिसे गुण-नामोंके भंगोंके ही आलाप कहे जायेंगे, दूसरोंके नहीं ।

शंका— तो फिर प्राधान्यपदके अवलंबन नहीं करनेपर संयमादिके प्रतिपक्षी असंय-मादिका ग्रहण कैसे किया जा सकता है ?

समाधान— नहीं; क्योंकि, व्यतिरेकद्वारसे संयमादि विकल्पोंकी प्ररूपणाके लिए ही असंयमादि विपक्षी विकल्पोंकी प्ररूपणा की जाती है; तभी विवाक्षित मार्गणाद्वारा समस्त जीवोंका मार्गण हो सकता है, अन्यथा नहीं । इसलिए संयमादि अन्वयरूप और असंयमादि व्यतिरेकरूप दोनों ही व्याख्यान अविरुद्ध हैं । यही अर्थ सभी मार्गणाओंके विषयमें कहना चाहिए ।

संज्ञी मार्गणाके अनुवादसे संज्ञी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ

प्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक: साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सातों संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक,

नं. ५०१

संज्ञी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१२	२	६प.	१०	४	४	१	१	१५	३	४	७	७	३	द्र.६	२	६	१	२	२
मि.	सं.प.	६अ.	७	क्षीणसं.	पं.	त्र.			अपग.	अकषा.	केव. विना.		के.द. विना.	भा.६	भ. अ.		सं.	आहा. अना.	साका. अना.
से.	सं. अ.																		
क्षी.																			

नं. ५०२

संज्ञी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१२	१	६	१०	४	४	२	१	११म.४	३	४	७	७	३	द्र.६	२	६	१	१	२
मि.	सं. प.			क्षीणसं.	पं.	त्र.		व. ४ औ. १ वै. १ आ. १	अपग.	अकषा.	केव. विना.		के.द. विना.	भा.६	भ. अ.		सं.	आहा.	साका. अना.
से.																			
क्षी.																			

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{०३} ।

सण्णि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीव-समास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत, और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान; असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे छहों लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिका सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

नं. ५०३

संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	व.
४	१	६अ	७	४	४	१	१	४	३	४	५ कुम.	३	३	द. २	२	५	१	२	२
मि	७							औ. मि.			कुश्रु.	असं	के. द.	का.	म. सम्य.		सं.	आहा.	साका.
सासा	सं.							वे. मि.			मति	मामा.	बिना.	शु.	अ	बिना.		अना.	अना.
अग्नि.								आ. मि.			श्रुत	छेदो.		मा. ६					
प्रम.								कर्म.			अव.								

असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५८} ।

तेसिं च्चव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चसीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस ओग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५९} ।

द्विकके धिना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५०४

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि.	सं. प.	६अ.	७			पं.	त्र.	आ. द्वि.			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.							विना.					अच.	अ.	अ.			अना.	अना.

नं. ५०५

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	पं.					पं.	त.	म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं.							व. ४					अच.	अ.	अ.			अना.	अना.
								औ. १											
								वै. १											

तेसि चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५०९} ।

^{५०९}(सण्णि'-) सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

उन्हीं संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिथ्र, वैक्रियिकमिथ्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रम्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; वंशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

१ प्रतिश्वनान्यत्र कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्तीति ज्ञेयम् ।

नं. ५०६

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	४	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र.२	२	१	१	२	२
मि.	सं.अ.					पं.	त्र.	ओ.मि. वै.मि. कर्म.			कुम. कुधु.	असं.	चधु. अच.	का. शु. मा.६	म. अं.	मि.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

नं. ५०७

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	२३	३	४	३	१	२	द्र.६	१	१	१	२	२
सा.	सं.प. सं.अ.	६अ.	७			पं.	त्र.	आ.द्वि. विना.			अज्ञा	असं.	चधु. अच.	मा.६	म.	सासा.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५०८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण

द्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, अदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भवसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमाल. छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण. चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय. चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भवसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमाल, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कामणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान,

न. ५०८

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				पं.	त्र.	म. ४	व. ४			अज्ञा.	अस.	चक्षु	मा. ६	भ.	पासा.	सं.	प्राहा.	साका.
							औ. १	वे. १					अच.						अना.

काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०९} ।

(सण्णि-)सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११०} ।

असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं; भव्य-सिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं।

संज्ञी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावने छहों लेश्यापं भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ५०२

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	दं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	८	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र. २	१	१	१	२	२
सा.	पं. अ.	अ		ति	पं.	व.	आ.मि				कम.	असं.	चक्षु.	का.	म.सासा		सं.	आहा.	साका.
				म			वै मि.				कुशु.		अच.	शु.				अना.	अना.
				दे			काम.							भा. ६					

नं. ५१०

संज्ञी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	दं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य	सं. प.						पं. व.	म. ४			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
								द. ४			३		अच.						अना.
								आ. १			अज्ञा.								
								वे. १			मिश्र								

(सण्णि-) असंजदसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हौति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

संज्ञी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक-काययोनादिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं संज्ञी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ५११

संज्ञी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७		पं.	त्र.	आ.दि.	विना.			मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.										भुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
											अव.					क्षायो.			

नं. ५१२

संज्ञी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.				पं.	त्र.	म. ४				मति.	असं.	के.द.	मा. ६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
							व. ४				भुत.		विना.			क्षा.		अना.	अना.
							औ. १				अव.					क्षायो.			
							वै. १												

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्ताओ, सत्त षाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

संजदासंजदप्पहुडि जाव खीणकसाओ ति ताव मूलोघ-भंगो ।

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेस्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग; पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेस्यापं, भावसे छहों लेस्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतकके संज्ञी जीवोंके आलाप मूल ओघ आलापोंके समान होते हैं ।

नं. ५१३

संज्ञी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अधि.	सं.अ.	अ.				पं.	त्र.	औ.मि. वै.मि. कर्म.	पु.	न.	मति. भुत. अव.	असं.	के.द. विना.	का. शु. मा. ६	म.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा. अना.	साका. अना.

असण्णीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, बारह जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंच जादीओ, छ काय, चत्तारि जोग अवच्चमोभवचि-जोगो ओरालिय-ओरालियमिस्सकायजोगा कम्मइयकायजोगो चेदि, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सामारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, छ जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, णव पाण अट्ट पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंच जादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

असंज्ञी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्तके विना शेष बारह जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पांचों जातियां, छहों काय, असत्यमृषावचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये चार योग; तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना शेष दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंज्ञी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमासोंमेंसे एक संज्ञी-पर्याप्तके विना शेष छह पर्याप्त जीवसमास, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पांचों जातियां, छहों काय, अनुभववचनयोग, और औदारिककाययोग ये

नं. ५१४

असंज्ञी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१२	५प.	९,७	४	१	५	६	४	३	४	२	१	२	द. ६	२	१	१	२	२
मि.	सं.प.	५अ.	८,६	ति.				व. अनु. १			कुम.	असं.	चक्षु.	मा. ३	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.	४प.	७,५					औ. २			कुशु.		अच.	अशु.				अना.	अना.
	विना	४अ.	६,४					कर्म. १											
			४,३																

कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेमिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, छ जीवसमासा, पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, पंचिदियजादी, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंज्ञी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-अपर्याप्तके विना शेष छह अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाएं, तिर्यक्कगति, पंचेन्द्रियजाति, छहों काय, औदारिकमित्र और कर्मण नाययोग ये दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५१५

असंज्ञी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	६	५	९	४	१	५	२	३	४	२	१	२	३. ६	२	१	१	१	२
मि.	पर्या.	४	८		ति.		व.अनु.१			कुम.	असं.	चक्षु.	भा. ३	म.	मि.	असं	आहा.	साका.
	सं प.		७				औ. १			कुश्रु.		अच.	अशु.	अ.				अना.
	विना.		६															
			४															

नं. ५१६

असंज्ञी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	६	५अ.	७	४	१	५	२	३	४	२	१	२	३. २	२	१	१	२	२
मि.	अप	४अ.	६		ति.		औ मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	स.	आहा.	साका.
	सं अ.		५				कर्म.			कुश्रु.		अच.	शु.	अ.			अना.	अना.
	विना.		४										भा. ३					
			३										अशु.					

गेव-सण्णि-गेव-असण्णीणं सजोगि-अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो ।

एवं सण्णिमग्गणा समत्ता ।

आहाराणुवादेण आहारीणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्ठाणाणि, चौद्दस जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्ज-त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण) पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, चौद्दस जोग कम्मइयकायजोगो णत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो गेव सण्णिणो गेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंत्ति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित सयोगिकेवली, अयोगिकेवली और सिद्ध भगवान्के आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं ।

इसप्रकार संज्ञी मार्गणा समाप्त हुई ।

आहार मार्गणाके अनुवादसे आहारक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुणस्थान, चौद्दहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; सयोगिकेवलीके चार प्राण और दो प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चौद्दह योग होते हैं; क्योंकि, यहांपर कर्मणकाययोग नहीं होता है । तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अना-कार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

१ प्रतिषु कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ५१७

आहारक जीवोंके सामान्य आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.			
१३	१४	६प.	१०,७	४	४	५	६	१४	३	४	८	७	४	द्र.६	२	६	२	१	२			
मि.		६अ.	९,७	क्षीणसं.				कर्म.	उपय.	अकषा.				भा.६	भ.		सं.	आहा.	साका.			
से.		५प.	८,६					विना.								अ.			असं.		अना.	
सयो.		५अ.	७,५																	अनु.		तथा
		४प.	६,४																			बु. उ.
		४अ.	४,३	४,२																		

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, एगारह जोग, ओरालिय-वेउच्चिय-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगा णत्थि । तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भवेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्टाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

उन्हीं आहारक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--आदिके तेरह गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञा-स्थान भी है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग होते हैं; क्योंकि, यहांपर औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कार्मणकाययोग नहीं होते हैं । तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं आहारक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान; सात अप-र्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण; चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी

नं. ५१८

आहारक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	७	६	१०	४	४	५	६	११प्र.४	३	४	८	७	४	द्र. ६	२	६	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९	क्षीणसं.				व. ४	अप्या.	अकषा.				मा. ६	भ. ६		सं.	आहा.	साका.
से.		४	८					औ. १							अ.		असं.		अना.
पयो.		७	९					वै. १									अनु.		तथा.
		४	४					आ. १											यु. उ.

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ पाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दक्खेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा (सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{१००}) ।

आहारि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोइम जीवममासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अट्ट पाण छ पाण सत्त पाण) पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, वारह जोग, कम्मइयकायजोगो णत्थि । तिण्णि

है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और आहारकमिश्र-काययोग ये तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी हैं, विभंगवधि और मनःपर्ययज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम; चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेइया, भावसे छहों लेइयाएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच संम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभयस्थान भी हैं; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कइवे पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; चार पर्याप्तियां चार अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; नौ प्राण, सात प्राण; आठ प्राण, छह प्राण; सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण चार प्राण; चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये वारह योग होते हैं; किन्तु कर्मणकाययोग नहीं होता है । तीनों

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ५१९

आहारक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	ग.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ	७	४	४	५	६	३	३	४	६	४	४	६	१	५	२	१	२
मि.	उप.	५अ.	७	क्षोणस.			औ.मि.	अपरा.	अकषा.	कम.	असं.			का. म.	मि.	सं.	आहा.	साका.	
सा.	अ.	४अ.	६				वै.मि.	अपरा.	अकषा.	कुश्र.	सामा.			मा. ६ अ.	सासा.	असं.		अना.	
अवि.			५				आ.मि.			मति.	छेदो				औप.	अनु.		तथा.	
प्रम.			४							श्रुत.	यथा.				क्षा.			यु. उ.	
सयो.			३							अव.					क्षायो				
			२							केव.									

वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२०} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि मदीओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२१} ।

वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां; दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२०

आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२४	६प	१०, ७	४	४	५	६	१२	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	१
मि.		६अ.	९, ७					म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	१
		५प.	८, ६					व. ४					अच.		अ.		असं.		साका.
		५अ.	७, ५					औ. २											अना.
		४प.	६, ४					वे. २											
		४अ.	४, ३																

नं. ५२१

आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	४	५	६	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	१
मि.		पर्या.	९					म. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु	भा. ६	म.	मि.	सं.	आहा.	१
		४	८					व. ४					अच.		अ.		असं.		साका.
		७	७					औ. १											अना.
		६	४					वे. १											

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{१२२} ।

^{१२३}आहारि-सासणसम्माइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ,

उन्हीं आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिथ्र और वैक्रियिकमिथ्रकाययोग ये दो योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे छहों लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दसों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों

नं. ५२२

आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५. ६	२	३ ४	२	१	२	द्र. १	२	१	२	१	२
मि.	अप.	५,,	७				औ. मि.		कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	मि.	सं.	आहा.	साका.
		४,,	६				वै. मि.		कुश्रु.	अच.	भा. ६	अ.		असं.			अना.
			५														
			४ ३														

नं. ५२३

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं. का.	यो.	वे. क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१ २	१२	३ ४	३	१	२	द्र. ६	१	१	२	१	२
सा.	सं. प	६अ.	७			पं. व.	म. ४		अज्ञा.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	सं. अ.						व. ४				अच.						अना.
							औ. २										
							वै. २										

पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेष पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११५} ।

तेसिं चेष अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, दो

मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैकियिककाययोगद्विक ये बारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाए. भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संश्लि-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण; चारों संज्ञापं चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैकियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाए, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संश्लि-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और

नं. ५२४

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संश्लि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०म.४	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा.	सं.प.				पं.	त्रस.		व. ४			अज्ञा.	असं.	चक्षु.	मा. ६	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
								ओ. १					अच.					अना.	
								वै. १											

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-
लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२५} ।

आहारि-सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अन्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो,
छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गहओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,
दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणहि मिस्साणि,
असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२६} ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम,
आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे छहों लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, सासादन
सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-
काययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,
संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२५

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. १	१	१	१	१	२
सा.	कं.	अ.			ति.	पं.	त्र.	औ मि.			कुम.	असं.	चक्षु.	का.	म.	सासा.	सं.	आहा.	साका.
	दं.				म.			वै.मि.			कुशु.		अच.	भा. ३					अना.
					दे.														

नं. ५२६

आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	२०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	सं. प.					पं.	त्र.	म. ४			ज्ञान.	असं.	चक्षु.	भा. ६	म.	सम्य.	सं.	आहा.	साका.
								व. ४			३		अच.						अना.
								औ. १			अज्ञा.								
								वै. १			मिश्र.								

आहारि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-जमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२२०} ।

^{२२०}तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण,

नं. ५२७ आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	२	१	१२	३	४	३	१	३	द्र.६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.प.	६अ.	७		पं.	त्र.	म. ४	व. ४	औ. २	वै. २	मति.	असं.	के.द.	मा.६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.										श्रुत.		विना.			क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

नं. ५२८ आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	३	द्र.६	१	३	१	१	२
अवि.	सं.				पं.	त्र.	म. ४	व. ४	औ. १	वै. १	मति.	असं.	के.द.	मा.६	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.										श्रुत.		विना.			क्षा.			अना.
											अव.					क्षायो.			

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-
भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,
दो जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि
दंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

आहारि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-
रिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान;
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं. भव्यसिद्धिक, औपशमिक-
सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-
पयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात
प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और वैक्रियिक-
मिश्रकाययोग ये दो योग, छीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेइया, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक,
औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक
संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-

नं. ५२९

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	ई.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	२	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	१	२
अवि.	सं.अ.	अ.				पं.	त्र.	औ.मि. वै.मि.न.	पु.		मति. श्रुत. अव.	असं.	के.द. विना.	का. भा. ६	भ.	औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुककलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२०} ।

^{५२०}आहारि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अस्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुककलेस्साओ; भवसिद्धिया,

गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और आहारककाययोगद्विक ये ग्यारह योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक,

नं. ५२०

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	२	२	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देश.	सं.प.				ति. प.	त्र.	म. ४				मति.	देश.	के. द.	भा. ३	भ.	औप.	सं.	आहा.	साका.
					म.		व. ४				श्रुत.		विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
							औ. १				अव.					क्षायो.			

नं. ५२१

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	२	२	२	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्र.	सं.प.	६अ.	७		म.	पं.	त्र.	म. ४			मति.	सामा.	के. द.	भा. ३	म.	औप.	सं.	आहा.	साका.
	सं.अ.							व. ४			श्रुत.	छेदो.	विना.	शुभ.		क्षा.			अना.
							औ. १				अव.	परि.				क्षायो.			
							आ. २				मनः.								

तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

एत्थ पज्जत्तापज्जत्ता आलावा वत्तवा । एवं सब्वत्थ ।

आहारि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिणिण सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिणिण वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिणिण संजम, तिणिण दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३२} ।

आहारि-अपुच्चयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ

औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इस आहारक प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप भी कहना चाहिये । इसीप्रकार जहां पर संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास हों वहां भी सामान्य आलापके अतिरिक्त दोनों प्रकारके आलाप और कहना चाहिए ।

आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुण-

नं. ५३२

आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ल.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र.६	१	३	१	१	२
क.	सं.प.			आहा. विना.	म.	प.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १			मति. श्रुत. अव. मनः.	सामा. छेदी. परि.	के.द. विना.	मा.३ शुभ.		भ. औप. क्षा. क्षायो.	सं.	आहा.	साका. अना.

पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३३} ।

^{५५}आहारि-पढम-अणियट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञके विना शेष तीन संज्ञायं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यायं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञायं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और औदारिककाययोग ये नौ योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि दो संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यायं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्य-

नं. ५३३

आहारक अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	४	३	४	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अपू.	सं.प.			आहा. विना.	म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ ओ. १			मति. श्रुत. अव. मनः.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	भा. १ शुक्क.	म.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ५३४

आहारक अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	२	१	१	१	४	३	४	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अनि. प्रम.	कं. सं.			मै. परि.	म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ ओ. १			मति. श्रुत. अव. मनः.	सामा. छेदो.	के.द. विना.	भा. १ शुक्क.	म.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सेस-चदुण्हमणियद्धीणं ओघ-भंगो ।

आहारि-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोहकसाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३५} ।

आहारि-उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

सिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके शेष चार भागोंके आलाप ओघालापके समान होते हैं ।

आहारक सूक्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद्, सूक्ष्म लोभकषाय; आदिके चार ज्ञान, सूक्ष्म साम्परायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक येदो सम्यवत्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक उपशान्तकषाय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तपरिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग,

नं. ५३५

आहारक सूक्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	हा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	१	३	द. ६	१	१	१	१	२
सूक्ष्म.	उं			पिं.	म.	पं.	त.	म. ४ व. ४ औ. १	अपग.	लि मं	मति- श्रुत- अव- मनः.	सूक्ष्म.	के. द. विना.	शुक्क.	म.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका- अना.

जोग, अवगदवेदो, उवसंतलोहकसाओ, चत्तारि णाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२६} ।

आहारि-खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, चत्तारि णाण, जहाकखादविहारसुद्धिसंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२७} ।

अपगतवेद, उपशान्तलोभकषाय, आदिके चार ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, अकषाय, आदिके चार ज्ञान; यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं; भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२६

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
उप.	सं.प.			उप. सं.	म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १	अप्या.	क. उप.	मति. श्रुत. अव. मनः.	यथा.	के.द. विना.	मा. १ शुक्क.	भ.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

नं. ५२७

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
क्षीण.	सं.प.			क्षीणसं.	म.	पं.	त्र.	म. ४ व. ४ औ. १	अप्या.	क. उप.	मति. श्रुत. अव. मनः.	यथा.	के.द. विना.	मा. १ शुक्क.	भ.	औप. क्षा.	सं.	आहा.	साका. अना.

आहारि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणङ्गाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, छ जोग, कम्मइयकायजोगो णत्थि; अवगदवेदो, खीणकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारअणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{५३८} ।

एवं पज्जत्तापज्जत्तालावा वत्तव्वा । एवं सव्वत्थ वत्तव्वं ।

अणाहारीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणङ्गाणाणि अदीदगुणङ्गाणं पि अत्थि, अहु

आहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा कायबल और आयु ये दो प्राण; क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दो वचनयोग, औदारिककाययोग और औदारिकमिश्रकाययोग ये छह योग होते हैं; किन्तु कामणकाययोग नहीं होता है। अपगतवेद, क्षीणकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोसे मुक्त, आहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

इसीप्रकारसे सयोगिकेवलीके पर्याप्त और अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए। इसीप्रकार सर्वत्र कहना चाहिए।

अनाहारक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी हैं, सात अपर्याप्त और अयोगिकेवली गुणस्थानसंबन्धी एक पर्याप्त इसप्रकार आठ जीव-

नं. ५३८

आहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प.	४	०	१	१	१	६	०	०	१	१	२	द्र. ६	१	१	०	१	२
सयो.	प.	६अ.	२	क्षीणसं.	म.	पं.	त्र.	म. २ व. २ ओ. २	अपरा.	अक्षणा.	केव.	यथा.	के.द.	भा. १ शुक्क.	म.	क्षा.	अनु.	आहा.	साका- अना- यु. उ.

जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाण वि अत्थि, चत्तारि सण्णाओ स्त्रीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ सिद्धगई वि अत्थि, पंच जादीओ अदीदजादी वि अत्थि, छ काय अकाओ वि अत्थि, कम्मइयकायजोगो अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ णाणाणि, दो संजम णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३२} ।

समास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है; चारों संज्ञापं तथा स्त्रीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां तथा सिद्धगति भी है, पांचों जातियां तथा अतीतजातिस्थान भी है, छहों काय तथा अकायस्थान भी है, कर्मणकाययोग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावाधि तथा मनःपर्ययज्ञानके बिना शेष छह ज्ञान, असंयम और यथाख्यातसंयम ये दो संयम तथा संयम, असंयम और संयमासंयम इन तीनों से रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, सम्यग्भिध्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

नं. ५३९

अनाहारक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	जा.	इ.
५ मि.	८ अप.	६प.	७	४	४	५	६	१	३	४	६	२	४	द्र.६	२	५	२	१	२
सा.	७	६अ.	७					कर्म.			विभं.	असं.		भा.६	म.	सम्य.	सं.	अना.	साका.
अवि.	अयो.	५,,	६	क्षीणसं.	सिद्धग.	अती.जा.	अकाय.	अयोग.	अपग.	अकषा.	मनः.	यथा.		अले.	अ.	बिना.	असं.		अना.
सयो.	प. १	४,,	५								विना.	अनु.			कं.		अनु.		तथा.
अयो.	अती.	अती.	४ ३																पु. उ.
अ. गु.	जीव.	प.	२ १																

अणाहारि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

^{१०१}अणाहारि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, गिरयगदी णत्थि; पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, कार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेइया, भावसे छहों लेइयापं; भव्यसिद्धिक; अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनाहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं; किन्तु यहांपर नरकगति नहीं है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,

नं. ५४०

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	४	२	१	२	द्र.१	२	२	२	२
मि.	अप.	५	७				कार्म.			कुम.	असं.	चक्षु.	शु.	म.	मि.	अना.	साका.
		४	६							कुशु.		अच.	मा.६	अं.	असं.	अना.	अना.
			५														
			४	३													

नं. ५४१

अनाहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.का.	यो.	वे.क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	४	२	१	२	द्र.१	१	१	१	२
सा.	हं	अ.			ति.	पं.	त्र.	कार्म.		कुम.	असं.	चक्षु.	शु.	म.	सासा.	अना.	साका.
	हं				म.	दे.				कुशु.		अच.	मा.६		सं.	अना.	अना.

असंजमो, दो दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

अणाहारि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, इत्थिवेदेण विणा दोण्णि वेदा, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५४२} ।

अणाहारि-सयोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, दोण्णि पाण, मण-ववि-उस्सासपाणा णत्थि; खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं,

कार्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेस्या, भावसे छहों लेस्यापं; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनाहारक असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, खीवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेस्या, भावसे छहों लेस्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनाहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं; किंतु यहाँपर मनोबल, वचनबल और इवासोच्छ्वास प्राण नहीं हैं। खीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथास्थानविहारशुद्धि-

नं. ५४२

अनाहारक असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	ग.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६अ.	७	४	४	१	१	१	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	१	२
अभि.	अं.					पं.	त्र.	कार्म.	पु.		मति.	असं.	के.द.	शु.	म.	औप.	सं.	अना.	साका.
	अं.								न.		श्रुत.		विना.	भा. ६		क्षा.			धना.
											अव.					क्षायो.			

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, सरीरणिप्पायणत्थं णोकम्मपोग्गलाभावादो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{५४३} ।

^{५४४}अणाहारि-अजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एगो जीवसमासो, छ पञ्चीओ, एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसक्काओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण

संयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे शुक्ल अथवा छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या; भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, सांज्ञिक और असांज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, शरीर-निष्पादनके लिये आने वाली नोकर्म पुद्गलवर्गणाओंके अभाव हो जानेसे अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

विशेषार्थ—ऊपर अनाहारक सयोगिकेवलियोंके लेश्या आलापका कथन करते समय सभी प्रतियोगोंमें ' दब्बेण छ लेस्साओ ' इतना ही पाठ पाया जाता है परंतु पूर्वमें कर्मण-काययोगी सयोगिकेवलीके आलाप बतलाने समय द्रव्यसे शुक्लेश्या अथवा छहों लेश्याएं कहाँ गई हैं, इसलिये यहाँपर भी उसीके अनुसार सुधार कर दिया गया है ।

अनाहारक अयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, एक आयु प्राण; क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन,

१ प्रतिषु ' दब्बेण छ लेस्साओ ' इति पाठः ।

नं. ५४३

अनाहारक सयोगिकेवली जिनके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.	
१	१	६	२	०	१	१	१	१	०	०	१	२	२	द्र.	१	१	१	०	१	२
सयो.	अप.	अप.		क्षीणसं.	म.	पं.	त्र.	कर्म.	अपय.	अकषा.	केव.	यथा.	के.द.	शु.	म.	क्षा.	अनु.	अना.	साका	
														अ.६					अना-	
														भा.१					यु. उ.	
														शु.						

नं. ५४४

अनाहारक अयोगिकेवली जिनके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	संय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	२	०	१	१	२	०	०	०	१	२	१	द्र.	६	१	०	१	२
अयो.	प.	आयु.		क्षीणसं.	म.	पं.	त्र.	अयोग.	अपय.	अकषा.	केव.	यथा.	के.द.	भा.	म.	क्षा.	अनु.	अना.	साका
														अले.					अना-
																			यु. उ.

छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

अणाहारि-सिद्धाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणट्ठाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीदपज्जतीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अदीदजादी, अकाओ, अजोओ, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवल-दंसण, दव्व-भावेहि अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा होति ।

एवं आहारमग्गणा समत्ता ।

तहेव च

संत-परूवणा समत्ता ।

द्रव्यसे छहों लेश्याए, भावसे अलेश्या, भव्यासिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आलाप कहने पर--अतीतगुणस्थान, अतीतजीवसमास, अतीतपर्याप्त, अतीतप्राण, क्षीणसंज्ञा, सिद्धगति, अतीतजाति, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संथम, असंथम और संयमासंथम विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेश्य, भव्यासिद्धिक और अभव्यासिद्धिक विकल्पोंसे रहित, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

इसप्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई । और इसीप्रकार उसके साथ

सत्प्ररूपणा भी समाप्त हुई ।

नं. ५४५

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	हं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
अती. गु.	अती. जी.	अती. प.	अती. प्रा.	संज्ञि.	सिद्धग.	अती. जा.	अकाय.	अजोग.	अपग.	अकषा.	कव.	अतु.	के. द.	अलेश्य.	अतु.	क्ष्वा.	अतु.	अना.	साका. अना. पु. उ.



पारिशिष्ट

आहारपर्याप्ति	२५४	कर्ममंगल	२६
आहारमिश्रकाययोग	२९३, २९४	कल्प्यव्यवहार	९८
आहारसंज्ञा	४१४	कल्प्याकल्प्य	९८
	इ	कल्याणनामधेय	१२१
इन्द्रिय	१३६, १३७, २३२, २६०	कषाय	१४१
इन्द्रियपर्याप्ति	२५५	कापोतलेइया	२८९
इष्टुगति	२९९	काय	१३८, ३०८
इंगिनीमरण	२४	काययोग	२७९, ३०८
	इय	कार्मण	२९५
ईहा	३५४	कार्मणकाय	२९९
	उ	कार्मणकाययोग	२९५
उक्तावग्रह	३५७	कालमंगल	२९
उत्तराध्ययन	९७	कालानुयोग	१५८
उत्पादपूर्व	११४	क्रिया	१८
उत्पादानुच्छेद	[परिशिष्ट भा. १] २८	क्रियाविशाल	१२२
उवीरणोक्त	[परिशिष्ट भा. २] १६	कृतिकर्म	९७
उपकरण	२३६	कृष्णलेइया	३८८
उपक्रम	७२	केवलज्ञान	९५, १९१, ३५८, ३६०, ३८५
उपधिवाक्	११७	केवलदर्शन	३८२
उपयोग	२३६, ४१३	क्रोध	३५०
उपशम	२११	क्रोधकषाय	३४९
उपशमसम्यग्दर्शन	३९५	क्षपण	२१६
उपशमसम्यग्दृष्टि	१७१	क्षायिक	१६१, १७२
उपशान्तकषाय	१८८, १८९	क्षायिकसम्यक्त्व	३९५
उपाध्याय	५०	क्षायिकसम्यग्दृष्टि	१७१
उपासकाध्ययन	१०२	क्षायोपशामिक	१६१, १७२
	ए	क्षीणकषाय	१८९
एकेन्द्रिय	२४८, २६४	क्षीणकषायवीतरागलभस्थ	१९०
एवंभूत	९०	क्षीणसंज्ञा	४१९
	औ	क्षेत्रमंगल	२८
औदयिक	१६१	क्षेत्रज्ञ	१२०
औदारिककाययोग	२८९, ३१६	क्षेत्रानुयोग	१५८
औदारिकमिश्रकाययोग	२९०, ३१६		
औपशामिक	१६१, १७२	ग	
	क	गुण	१७४
कर्ता	११९	गुणनाम	१८
कर्मप्रवाद	१२१	गोमूत्रिकागति	३००
		गौण्यपद	७४
		घ	
		घ्राणनिर्वाप्ति	२३५

च		दर्शन	
चक्षुर्दर्शन	३७९, ३८२	१४५, १४६, १४७, १४८	
चक्षुरिन्द्रिय	२६४	१४९, ३८३, ३८४, ३८५	
चतुरिन्द्रिय	२४४, २४८	१०९	
चतुर्विंशतिस्तव	९६	२०३	
चन्द्रप्रज्ञप्ति	१०९	२०३	
चयनलब्धि	१२४	देशसत्य	११८
चयाचित	२२	द्रव्य	८३, ३८६
च्युत	२२	द्रव्यमन	२५९
चेतन्य	१४५	द्रव्यमल	३२
छ		द्रव्यमंगल	२०, ३२
छात्रस्थ	१८८, १९०	द्रव्यार्थिक	८३
छेदोपस्थापक	३७२	द्रव्यानुयोग	१५८
छेदोपस्थापनशुद्धिसंयम	३७०	द्रव्येन्द्रिय	२३२
ज		द्वीन्द्रिय	२४१, २४८, २६४
जनपदसत्य	११८	द्वीपसागरप्रज्ञप्ति	११०
जन्तु	१२०	घ	
जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति	११०	धारणा	३५४
जलगता	११३	ध्रुवावग्रह	३५७
जाति	१७	न	
जीव	११९	नपुंसक	३४१, ३४२
जीवसमास	१३१	नय	८३
जीवस्थान	७९	नरकगति	२०१, ३०२
ज्ञान	३५३, ३६३, ३८४	नारकगति	२०१
ज्ञानप्रवाद	१४२, १४३, १४६, १४७, ३६४	नाथधर्मकथा	१०१
त		नामपद	७७
तदुभयवक्तव्यता	८२	नाममंगल	१७, १९
तिर्थगति	२०२	नामसत्य	११७
तीर्थकर	५८	निकृतिवाक्	१२७
तेजोलेइया	३८९	निक्षेप	१०
तैजस्काय	२७३	निरतगति	२०१
त्यक्त	२६	निर्वेदनी	१०५
असकाय	२७४	निषिद्धिका	९८
त्रिखण्डधरणीश	५८	नीललेइया	३८९
त्रीन्द्रिय	२४२, २४८, २६४	नैगमनय	८४
द		नोगौण्यपद	७४
दशवैकालिक	९७	प	
		पद्मलेइया	३९०
		परसमयवक्तव्यता	८२
		परिणाम	१८०

परिग्रहसंज्ञा	४१५
परिहारशुद्धिसंयत	३७०, ३७१, ३७२
पर्याप्त	२५४, २६७
पर्याप्ति	२५७
पर्याय	८४
पर्यायार्थिक	८४
पश्चादानुपूर्वी	७३
पाणिमुक्तागति	३००
पारिणामिक	१६१
पुद्गल	११९
पुरुष	३४१
पूर्वगत	११२
पूर्वानुपूर्वी	७३
पैशुन्य	११७
पंचेन्द्रिय	२४६, २४८, २६४
पंचेन्द्रियजाति	२६४
पुंवेद	३४१
पुण्डरीक	९८
प्रतिक्रमण	९७
प्रतिपक्षपद	७६
प्रवाचिार	३३८, ३३९
प्रतीत्यसत्य	११८
प्रत्यक्ष	१३५
प्रत्याख्यान	१२१
प्रत्येकअनन्तकाय	२७३
प्रत्येकशरीर	२६८
प्रथमानुयोग	११२
प्रमत्तसंयत	१७६
प्रमाणपद	७७
प्ररूपणा	४११
प्रहनव्याकरण	१०४
प्राण	२५६, ४१२
प्राणावाय	१२२
प्राणी	११९
प्राधान्यपद	७६
प्रायोपगमन	२३

ब

बादर	२४९, २६७
बादरकर्म	२५३

बाह्यनिर्वृत्ति	२३४
भ	
भक्तप्रत्याख्यान	२४
भव्य	१५०
भव्यनोभागमद्रव्य	२६
भव्यसिद्ध	३९२, ३९४
भाव	२९
भावमन	२५९
भावमल	३२
भावमंगल	२९, ३३
भावलेक्ष्या	४३१
भावसत्य	११८
भावानुयोग	१५८
भावेन्द्रिय	२३६
भाषापर्याप्ति	२५५
भोक्ता	११९

म

मतिज्ञान	३५४
मत्यज्ञान	३५८
मनस्	३०८
मनःपर्यय	९४, ३५८, ३६०
मनःपर्याप्ति	२५५
मनःप्रवाचिार	३३९
मनुष्य	२०३
मनुष्यगति	२०२
मनोयोग	२७९, ३०८
महाकल्प्य	९८
महापुंडरीक	९८
महामंडलीक	५८
महाराज	५७
मान	३५०
मानकषाय	३४९
मानी	१२०
माया	३५०
मायाकषाय	३४९
मायागता	११३
मायी	१२०
मार्गण	१३१

मिथ्यादर्शनवाक्	११७
मिथ्यादृष्टि	१६२, २६२, २७४
मिश्रमंगल	२८
मैथुनसंज्ञा	४१५
मोषमनोयोग	२८०, २८१
मंग	३३
मंगल	३२, ३३, ३४
मंडलीक	५७

य

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत	३७१
यथाख्यातसंयत	३७३
यथातथानुपूर्वी	७३
योग	१४०, २९९
योगी	१२०

र

रतिवाक्	११७
रसननिर्वृत्ति	२३५
राजा	५७
रूपगता	११३
रूपप्रवीचार	३३९
रूपसत्य	११७

ल

लब्धि	२३६
लांगलिका	२००
लेइया	१४९, १५०, ३८६, ४३१
लोकचिन्दुसार	१२२
लोभ	३५०

व

वक्ता	११९
वचस्	३०८
वन्दना	९७
वस्तु	१७४
वाग्गुप्ति	११६
वाग्योग	२७९, ३०८
वायुकायिक	२७३
विक्षेपणी	१०५
विक्रिया	२९१
विग्रहगति	२९९

विद्यानुवाद	१२१
विपाकसूत्र	१०७
विभंगज्ञान	३५८
विष्णु	११९
वीर्यानुप्रवाद	११५
वृत्ति	१३७, १४८
वेद	११९, १४०, १४१
वेदक	३९८
वेदकसम्यग्दृष्टि	१७१
वेदकसम्यक्त्व	३९५
वेदनाकृत्प्रभाभूत	१२५
वैक्रियिक	२९१
वैक्रियिककाययोग	२९१
वैक्रियिकमिश्रकाययोग	२९१, २९२
व्यवहार	८४
व्याख्याप्रज्ञप्ति	१०१, ११०
व्यंजननय	८६
व्यंजनावग्रह	३५५

श

शब्दनय	८७
शब्दप्रवीचार	२३९
शरीरपर्याप्ति	२५५
शरीरी	१२०
शुक्लेइया	३९०
श्रुतज्ञान	९३, ३५७, ३५९
श्रुताज्ञान	३५८
श्राव	२४७

स

सच्चित्तमंगल	२८
सत्ता	१२०
सत्यप्रवाद	११६
सत्यमन	२८१
सत्यमनोयोग	२८०, २८१
सत्यमोषमनोयोग	२८०, २८१
सदनुयोग	१५८
सद्भावस्थापना	२०
समभिरूढ	८९
समयसत्य	११८

समवाय	१०१	सूत्रकृत	९९
समवायद्रव्य	१८	सूर्यप्रहसि	११०
सम्यक्त्व	१५१, ३९५	संकुट	१२०
सम्यग्दर्शन	१५१	संग्रह	८४
सम्यग्दर्शनवाक्	११७	संज्ञ	१५२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१६६	संज्ञी	१५२, २५९
सयोग	१९१, १९२	संयतासंयत	१७३
सयोगकेवली	१९१	संयम	१४४, १७६, ३७४
साधारणशरीर	२६२	संयोगद्रव्य	१८
साधु	५१	संयोजनासत्य	११८
सामायिक	९६	संवृतिसत्य	११८
सामायिकशुद्धिसंयम	३६९, ३७०	संवेदनी	१०५
सामायिकशुद्धिसंयत	३७३	स्त्री	३४०
सासादन	१६३	स्त्रीवेद	३४०, ३४१
सासादनसम्यग्दृष्टि	१६६	स्थलगता	११३
सिद्ध	४६	स्थानांग	१००
सिद्धिगति	२०३	स्थापनामंगल	१९
सुचक्रधर	५८	स्थापनासत्य	११८
सूक्ष्म	२५०, २६७	स्पर्शन	२३७
सूक्ष्मकर्म	२५३	स्पर्शनानुगम	१५८
सूक्ष्मसांपराय	३७३	स्पर्शप्रवीचार	३३८
सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयत	१८६, ३७१	स्वयंभू	१२०
सूत्र	११०	स्वसमयवक्तव्यता	८२

२ अवतरण-गाथा-सूची

क्रम सं.	गाथा	पृ.	अन्यत्र कहाँ	क्रम सं.	गाथा	पृ.	अन्यत्र कहाँ
२१८	आहार-सर्वादिदिय-	४१७	गो. जी. ११९	२२७	तिण्हं दोण्हं दोण्हं	५३४	गो. जी. ५३४
२२२	काऊ काऊ काऊ	४५६	गो. जी. ५२९	२२६	तेऊ तेऊ तेऊ	५३४	गो. जी. ५३५
२२३	किण्हा भमरसवण्णा	५३३	पञ्चसं १, १८३	२२१	दस सण्णीणं पाणा	४१८	गो. जी. १३३
२१७	गुण जीवा पज्जत्ती	४१२	गो. जी. २	२२४	पम्मा पडमसवण्णा	५३३	पञ्चसं १, १८४
२१९	जह पुण्णापुण्णाइं	४१७	गो. जी. ११८	२२०	पंच वि इंदियपाणा	४१७	गो. जी. १३०
२२५	णिम्मूलखंधसाहुव-	५३३	गो. जी. ५०८	२२९	मणपज्जव परिहारा	८२४	गो. जी. ७२९

(अर्धसमता)

३ प्रतियोंके पाठ-भेद

पृष्ठ	पंक्ति	अ	आ	क	स	मुद्रित
४११	४	सण्णि-असण्णीसु	सण्णीसु असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु
४११	६	पण्णत्ती	पज्जत्ती	पण्णत्ती	पज्जत्ती	"
४१२	५	-मापेक्षया	-मापेक्ष्य	"	"	-मापेक्षया
४१२	११	-यस्यैकत्वाभावाच्च यस्य चैकत्वाभावात्	"	"	"	-यस्य चैकत्वाभावात्
४१३	३	-संज्ञायां	"	"	"	-संज्ञाया
४१३	४	लोभोदयस्य	लोभोदय	"	"	लोभोदय-
४१३	७	संज्ञान-	संज्ञाज्ञान-	"	"	स ज्ञान-
४१४	१	-संज्ञानां	"	-संज्ञायां	"	-संज्ञानां
४१४	८	मायाप्रेमयो-	"	"	मायालोभयो-	"
४१४	१०	-प्रभवा	"	"	-प्रभवा	"
४१५	६	इंदिया	"	"	पइंदिया	"
४१६	४	ए	एदे	ए	एदे	"
४१७	३	-गत-	-मल-	-गल-	"	"
४१७	४	-घड-	-गड-	"	"	-घड-
४१८	३	-आणापाणेहि	"	"	-आणापाणपाणेहि	-आणापाणपाणेहि
४१८	८	पज्ज-	अपज्ज-	"	"	"
४१८	११	-पज्जत्तस्स	"	"	"	पज्जत्तयस्स
४१९	३	एदासिं	एदेसिं	एदासिं	"	एदासिं
४२०	३	-विसिद्धे	"	-विसेसे	"	-विसिद्धे
४२०	११	-भावेण	"	"	-भावेहि	"
४२१	२	छण्णं भेदं	छलेस्साभेदं	छ-भेदं	छभेदं	"
४२१	८	सत्त पाण	"	"	सत्त पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
४२२	९	भणदि	भणिदे	"	"	भण्णदे
४२५	४	-त्ताणे	-त्ताणं	"	-त्तोघे	"
४२६	६	-जुत्ता	"	जुत्ता वि होंति	"	-जुत्ता वि अत्थि
		वि अत्थि	"	"	"	"
४२६	७	-णमोघालावे	-णं भण्णमाणे	-णमोघालावे	"	"
		भण्णमाणे	मोघालावे	"	"	"
४३६	८	अपज्ज-	"	"	पज्ज	"
४२८	४	अणाहारिणो	"	अणाहा०	"	आहारिणो
४३०	२	पज्जत्तीओ	"	"	"	अपज्जत्तीओ
४३०	७	-जीवाणं	जीवा ण	-जीवाणं	"	जीवा ण
४३३	१	x	-मोघालावे	"	-मोघे	-मोघालावे

४३३	२	दंसण	"	"	सण्णाओ	"
४३६	३	अत्थि	"	"	णत्थि	"
४३६	१०	-दयाणं सदि	"	"	-दयो णस्सदि	"
४३८	४	-माण-	"	"	-माया-	"
४४३	२	णिव्वत्त-	"	णिच्चत्त	"	"
४४४	४	भवंति	हवंति	भवंति		भणंति
४४४	७	भवंति	हवंति	भवंति		"
४४६	२	अत्थि	णत्थि	"		"
४४७	३	लेव-	णेव-	सेव-		लेव-
४४८	८	करणोत्ति	"	"	सण्णेत्ति	कण्हेत्ति
४५३	३	णाण	"	"	"	अण्णाण
४५८	३	पज्ज०	"	अपज्जत्तीओ		"
४५९	४	काउसुक्क-	"	"		काउ-
४६०	१	काउसुक्क-	"	"		काउ-
४६०	४	पज्ज०	"	"		अपज्जत्तीओ
४७०	२	तदिय-	"	"	एवं तदिय-	"
४७०	३	इंदियाणं	"	"		इंदियाणं
४७१	१	एदो ओदो	"	एदाओ दो		"
४७१	४	पंचिदिय-अपज्जत्ता			पंचिदियतिरिक्ख-अपज्जत्ता	
४७५	८	अणाहारिणो	"	"		आहारिणो
४७६	८	सत्त पाण	"	"	दस पाण सत्त पाण	"
४७८	२	पज्जत्तीओ	"	"		अपज्जत्तीओ
४७८	६	सग्गामित्थाइट्ठीणं	सग्गामिच्छाइट्ठीणं	"	सग्गामिच्छाइट्ठीणं	"
४८१	३	-ज्जमाणं	-ज्जमाणं	उज्जमाणं		-ज्जमाणं
४८२	७	पंचिदियतिरिक्खाणं	पंचिदियति-	पंचिदियतिरिक्ख०		पंचिदिय-तिरिक्खाण
			रिक्खअपज्जत्ताणं			
४८४	७	×	अइयसम्मत्तं	अइयसग्गामिच्छाइट्ठी	अइयसम्मत्तं	"
४८८	७	आहारिणो	"	"	आहारिणो	अणाहारिणो,
४९२	७	णव पाण	"	"		णव पाण सत्त पाण
४९७	४	द्व्वभावेहि	द्व्वभावेण	द्व्वभावेहि		"
४९८	२	असण्णिणीओ	"	"	सण्णिणीओ	"
४९८	७	-काउसुक्कलेस्सावि	-काउसुक्कलेस्साओ	-काउसुक्कले.		काउलेस्साओ
५००	८	सत्त पाण	"	"	सत्त पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
५०२	५	अजोगी	अजोगो	"		"
५०२	७	असण्णिणो	असण्णिणो	असण्णिणो		णेव असण्णिणो
		वि अत्थि	अणुभया वा	वि अत्थि		णेव असण्णिणो वि अत्थि

५०४	४	पंच णाण	पंच णाण	मणपज्जवकेवल-	पंच णाण केवलणा-
		केवलणाणेण	केवलणाणेण	णाणेण विणा	णेण छ णाण
		छ णाण	विणा छ णाण	छ णाण	
५१०	९	पज्ज-	"	"	अपज्ज- अपज्जत्तीओ
५११	६	-लेस्साओ	"	"	-लेस्साहि
५१२	४	सागारु० ह्वीति	"	सागार अणागारेहि	सागारुवजुत्ता ह्वीति
		अणा० वा		जुगवदुवजुत्ता वा ह्वीति।	अणागारुवजुत्ता वा
५१२	५	सम्मत्तसंजदप्पहुडि	"	"	पमत्तसंजदप्पहुडि
५१३	७	वेदोपि	"	"	-वेदे पि
५१५	४	तासिं	तस्सेव	तासिं	"
५१५	५	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५१५	६	x	x	x	चत्तारि कसाय
५१८	८	सागारुवजुत्ता	सागारअणा-	सागार अणा-	सागारुवजुत्ता ह्वीति
		ह्वीति अणागा-	गारेहिं जुग-	गारेहिं अणु-	अणागारुवजुत्ता वा
		रुवजुत्ता वा	वदुवजुत्ता वा	भओ वा ।	
५२८	२	मणुसिणी-उवसंत-	मणुसिणीसु-	उवसंत-,,	"
५३०	६	णेव सण्णिणीओ	"	"	णेव सण्णिणीओ
					णेव असाण्णिणीओ,
५३१	५	देवगदीए	देवगदीणं	देवगदीए	देवगदीए
५३२	६	पदं ण घडदे	पदं घडदे	पदं ण घडदे	"
५३३	१	णीलाघण-	णीलायण-	णीलायण-	णीला पुण
		णीलगुलिय-	णीलगुणिय-	णीलगुलिय-	णीलगुलिय-
५३३	३	पउवसवण्णा	"	"	पउमसवण्णा
५३३	६	बुधिसु	बुधिसु	"	बुधिसु
५३३	७	-लेस्साणं	-लेस्साहं	-लेस्साणं	-लेस्साणं
५३५	१	भावदो	"	"	भावदो
५३९	१	दो गदि	"	"	देवगदी
५४२	७	पज्ज-	"	"	अपज्ज-
५५२	२	आहारिणो	अणाहारिणो	"	आहारिणो
५५२	५	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५५४	७	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५५५	४	प्पण	"	"	अण्णाण
५५५	५	द्वयेण काउ सुक्क	द्वयेण काउसुक्क	द्वयेण काउसुक्क०	द्वयेण काउ-सुक-
		मज्झिमा तेउलेस्सा	मज्झिमा तेउ	मज्झिमा तेउले०	मज्झिमा-तेउलेस्सा
		भावेण	लेस्सा भावेण	भावेण ।	भावेण मज्झिमा
			मज्झिमा तेउ-		तेउलेस्सा।
			लेस्साओ		

५५८	१	द्व्वेण काउसुक- लेस्सा	द्व्वेण काउसुक- मज्झिमा तेउलेस्सा	द्व्वेण काउसुक- मज्झिम- तेउलेस्सा
५५९	६	-याहदिय	"	-माहदिय "
५६०	१	पुणोहिणा	पुणोहीणा	पुणोहिणा पुणोदिणा "
५६१	७	-सुक-उकस्स- जहण-	"	सुक-जहण द्व्वेण काउ-सुक उकस्स-तेउ-जहण-
५६४	६	-पादिंकर-	"	पीदिंकर-
५६८	६-७	एवं देवगदीए सिद्धभंगो	"	एवं देवगदी । सिद्ध- गदीए सिद्धभंगो ।
५६९	३	णेय असंजदा संजदा वि	"	णेव असंजदा णेव संजदासंजदा वि ।
५६९	४	कायव्वा	"	वत्तव्वा "
५६९	९	पुढइ वणप्फइ	पुढविवणप्फइ	पुढइ-वणप्फइ
५७०	५	सण्णिणो	"	असण्णिणो
५७१	६	आहारिणो	"	आहारिणो अणाहारिणो
५७४	१	सण्णिणो	"	असण्णिणो
५७५	९	असंजमोस-	"	असंजमोस-
५८१	२	एवं चउरिंदिय अपज्जत्ताणं	तेसिंचेव अपज्जत्ताणं	"
५८३	७	द्व्वेण छलेस्सा	"	द्व्व-भावेहि छ लेस्सा
५८६	३	पज्जत्तीओ	"	अपज्जत्तीओ "
५९१	१	कायाणुवादेण	"	कायाणुवादेण ओघालावे भणणमाणे
५९१	३	अट्ठावीस वा	"	सोलस वा
५९१	४	चोवीस वा तेतीस वा चउतीस वा	"	तेतीस वा, चउवीस वा
५९१	५	एतालीस	"	वायालीस
५९२	३	णिव्वत्तिपज्जत्त-	"	णिव्वत्तिअपज्जत्त-
५९२	१०	तसकाइया पंचिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । पंचि- दिया दुविहा पंचिंदिया दुविहा सण्णी पज्जत्ता असण्णी सण्णी दुविहा पज्जत्ता अप- ज्जत्ता । असण्णी दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता ।	तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता दुविहा पंचिंदिया दुविहा सण्णी पज्जत्ता अप-सण्णिणो अस- ज्जत्ता सण्णिणो । सण्णि० दुविहा पज्जत्ता अप- णो असण्णिणो दुविहो० पज्ज० ज्जत्ता । असण्णी दुविहो २ अपज्जत्ता असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अप- दुविहो पज्ज० ज्जत्ता । अपज्ज० ।	तसकाइया दुविहा पंचिंदिया अपंचि- दिया । पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो । सण्णि- णो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । असण्णि- णो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता ।
५९८	८	पत्तेयं	पत्तेयं	पत्तेयं "

६००	१	वीण	"	"	प	पदे
६०२	३	तिणिण	"	"		दोणिण
६०३	४	अकसाआ	"	अकसाओ		"
६०४	२	मूलोघम्भुउज्जाव-	"	"	मूलोघम्भुत्तजीव-	"
६०६	२	पज्जत्तीओ	"	"		अपज्जत्तीओ
६०६	"	तिणिणगदी	"	तिरि० गदि		तिरिक्खगदी
६०९	३	आहारिणो	"	"		आहारिणो अणाहारिणो,
६०९	१२	-मुवसाणिय-	"	"	-मेव पाणीय-	"
६१०	३	पदे	"	"	पवं	"
६१०	६	-काइयणिव्वत्ति - पज्जत्ता-	काइयाणं पज्जत्ता-	" ×	"	-काइयणिव्वत्ति- पज्जत्तापज्जत्ताणं
६१०	९	पज्जत्तापज्जत्ताण- मकम्मोदयाणं	"	"		पज्जत्ताणमकम्मोदय- तेउकाइयाणं
६११	२	वणिज्ज-	"	"	तवणिज्ज-	"
६११	"	पज्जत्ताणं	"	पज्जत्तापज्जत्ताणं		पज्जत्ताणं
६१२	२	अणोयवण्णाळावे गुलिवसा ।	"	"	अणोयवण्णा तोवि रूढिवसा	"
६१४	७	भवसिद्धिया	"	"		भवसिद्धिया भवव- सिद्धिया,
६१५	८	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ	"
६२०	१०	तेसिं २	तेसिं	तेसिं २		तेसिं
६२१	१	वणप्फइकाओ त्ति भंगो	वणप्फइ-भंगो	"		"
६२२	३	सत्त पाण	"	सत्त पाण २		सत्त पाण सत्त पाण
६२७	१	-इट्ठिप्पहुडि	-इट्ठिणप्पहुडि	इट्ठिप्पहुडि		"
६२७	३	चउगदिगदाओ	चउगदिगदीओ	चउगदिमदीओ		"
६२७	५	दव्व-भावेहि छ लेस्साओ	"	"	दव्व-भावेहि अलेस्सा	"
६३३	४	इट्ठिदो	"	"	इदि दो	"
६३४	४	-जोगीणं भंगो	-जोगीभंगो	"		जोगि-भंगो
६३४	८	ताजोवि	"	"	ताओ वि	"
६५३	३	सणिणत्तिभ्भु	"	सणिणत्तभ्भु		"
६५४	१	जोगोव उत्ताणं	जोगेव उज्जत्ताणं	जोगेव उत्ताणं	-जोगे वट्टत्ताणं	-जोगे वट्टत्ताणं
६५४	१	छव्वण्णोकरालिय- परमाण्णं	"	"	छव्वण्णोरालिय परमाण्णं	"
६५४	२	परमाण्णाहि सहामिलिदाणं	"	"	परमाण्णाहि सह मिलिदाणं	"

	कालोद्-			कावोद्-	
६५४	७ -केवलि	"	"	"	केवलिस्स
६५८	४ अयोग-	"	"	"	आयु
६५९	२ समणा	सभणा	समणा	समत्तो	समणा
६६०	५ एबंध-	"	"	बंध-	"
६६९	६ विरहाकालोव-	"	"	विरहकालोव-	"
६७२	८ तंजहा णेदव्वा तम्हा णेदव्वा	जं जहा	णेदव्वा	जहा मूलोघो णीदो	जहा मूलोघो णीदो
				तं जहा णेदव्वा	तहा णेदव्वा
६८४	८ सण्णिणो	"	"	"	सण्णिणो असण्णिणो
७००	१ अणियत्तं	अणियट्ठित्तं	अणियट्ठित्तं		अणियत्तं
		पि अत्थि			
७००	२ छ लेस्साओ	"	"	अलेस्साओ	"
७०५	५ आहारिणो	"	"		आहारिणो
		अणाहारिणो			
७१२	१० मुणं मुए	"	"	माण-माया-	"
७१३	३ ×	१०-४-२-१	×		×
७२६	७ -णाणाणं	"	"	-णाणाणि वत्तव्वाणि	"
		वत्तव्वाणं			
७२६	८ तिण्णि	"	"	तेण	"
७२७	१ इयक्केसु सत्तीसु	"	"	इयरेसु संतेसु	"
७२७	२ -विवक्खियाणाण-	"	"	"	विवक्खियाणाण-
७२७	७ -तं पिच्छायद-	"	"	-तं पच्छायद-	-तपच्छायद-
७३०	४ मूलोघोव्व मूलोघोव्व	मूलोघो			मूलोघो व्व
७३३	७ विवट्ठिदो	"	"	एवं छेदोवट्ठावण-	"
		वट्ठावण-			
७५०	१ खीणसण्णाविओ	"	खीणकसाओ		"
७५१	२ किण्ह-णील	किण्हलेस्साओ	किण्ह-णील		किण्हलेस्सा
		काउलेस्साओ			
७५४	२ भावेण	भावेण छ लेस्साओ	"		भावेण किण्हलेस्सा
		वि एवं			
७६३	७ पंखियजादि	"	"	पंच जादीओ	"
७७८	४ ×	पिट्ठियाए	×	पिट्ठियाए	"
७९४	६ तिब्ब लाद्धानं	"	"	तिब्बलोद्धानं	"
८०१	४ अजोगि-केवलि	जोगि-केवलि	अजोगिकेवलि	×	सजोगिकेवलि
८०१	५ अण्णलेस्साणं	"	"		अलेस्साणं
८१६	८ वेदगसम्माइडि-			वेदगसम्माइडि-	
		पपहुडि	"	पमत्त-	"

८२२	७	ओरालिय	”	औयरिय	”	”
८२२	८	तत्थुप्पत्तिहि-	तत्थुप्पत्तिहि-		तत्थुप्पत्ति-	
		भवा-	भवा-	”	संभवा-	”
८२२	९	पाच्छमद्-	”	पच्छागद्		पच्छागद्-
८२३	१	पडिबज्जति	”	”	पडिबज्जति	”
८२३	२	उवसंघडिद्-	उवसंहारिद्-	”		”
८२३	३	तल्लो उदिण्णाणं	”	”	तत्तो ओदिण्णाणं	”
८२४	३	-सेसपज्जाणे	”	”	सेसथं जाणे	”
८२५	९	एसत्था.....			एसत्थो.....	
		वत्तब्बा	”	”	वत्तब्बो	”
८२९	६	सासणसम्मा-	”	”		सण्णिसासणसम्मा-
८३४	४	चत्तारि जोग-	चत्तारि जोग-	चत्तारि जोग-		चत्तारि जोग-
		सब्बजोगो	असंजमो	सब्ब जोगो		असब्बमोसवधि-
			सब्बजोगो			जोगो

४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठ.

पृष्ठ	पंक्ति	प्रति	कहाँसे	कहाँतक
४५५	३	अ.		ओरालियकावजोगो
४६४	३	अ. आ. क.		छ अपज्जत्तीओ,
५०८	७	अ.	मणुस्स-सम्माभिच्छाइट्टीणं	... अण्णागारुवजुत्ता वा ।
५२४	७	आ.	मणुसिणी-विदिय-	... अण्णागारुवजुत्ता वा ।
५२९	१	आ.	द्वेण छ लेस्साओ	... केवलदंसण,
५४३	६	आ.	×	सइयसम्मत्तेण विणा
५४४	१	आ.	तेसिं चेष पज्जत्ताणं	... अण्णागारुवजुत्ता वा ।
५६०	७	क.	एवमित्थिपुरिस-	... मालाओ वत्तब्बो
५६३	१०	अ. आ. क.	पज्जत्तकाले	... पम्मलेस्सा,
५६६	३	अ.	मिच्छाइट्टीण-	... को तत्थ
५७०	९	अ. आ. क.	भावेण	... काउलेस्सा,
५७८	५	अ. क.		तसकाओ,
५८६	३	अ. आ. क.		सत्त पाण,
५९२	५	अ. आ.	तसकाइया	... वियळिदिया ति

६००	५	क.	पइंदियजादि-आदी	अवगद्वेदो वि अत्थि,
६३०	५	अ. आ. क.	तिण्णि अण्णाण	चत्तारि कसाय,
६३६	७	अ. आ. क.	असच्चमोस-	णवरि
६५४	९	अ.	कवाडगद्-	चेव भवदि,
६५६	३	आ.	ओरालियमिस्सकायजोगि	तसक्काओ,
६६२	१	क.	वेउद्वियकायजोगि-	अणागारुवजुत्ता वा ।
६७८	१	अ.	तेसिं चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
६८७	३	अ.	तेसिं चेव अपज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
६९८	५	अ. आ. क.	दो जीवसमासा	-समासो वि अत्थि
७०४	९	अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ,
७०९	७	अ. आ. क.	मणुसगदी	कोधकसाओ,
७१२	४	आ.	कोधकसाय-विदिय-	अणागारुवजुत्ता वा ।
७१२	१०	अ.	लोभकसायस्स	वच्चव्वो
७१४	१	अ. आ. क.	सागार-	-दुवजुत्ता वा ।
७१६	४	अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७१८	६	अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७३६	३	अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ,
७४५	१	अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७५५	४	अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७६४	४	अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ
७६९	२	आ.	तेसिं चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
७७९	३	अ. आ.	तेउलेस्सा-अप-	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८४	१	अ.	सागारुव-	-रुवजुत्ता वा ।
७८४	२	क.	तेसिं चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८५	८	अ. आ. क.	तिण्णि णाणाणि	असंजमो,
८१६	८	अ.	वेदकसम्माइट्ठि-पमत्त	अणागारुवजुत्ता वा ।
८१७	३	अ.	वेदकसम्माइट्ठि-अप्प-	अणागारुवजुत्ता वा ।
			अणाहारि-असंजद्-	अणागारुवजुत्ता वा ।

५ विशेष टिप्पण (पुस्तक १)

पृ० पं०

१५७ २

“ ण च संतमत्थमागमो ण परूवेइ तस्स अत्थावयत्तप्पसंगादो ” में आये हुए ‘ अत्थावयत्तप्पसंगादो ’ का अर्थ ‘ अर्थापदत्व अर्थात् अनर्थकपदत्वका प्रसंग प्राप्त हो जायगा ’ ऐसा किया गया है। जयध्वला अ. प्र. पृ. ५१२ में भी ‘ ण च संतमत्थं ण परूवेदि सुत्तं, तस्स अब्बावयत्तदोसप्पसंगादो ’ इस प्रकारका वाक्य पाया जाता है। जिसमें आये हुए ‘ अब्बावयत्तदोसप्पसंगादो ’ का अर्थ ‘ अव्यापकत्वदोषका प्रसंग प्राप्त हो जायगा ’ होता है। ध्वलाके पाठसे जयध्वलाका पाठ शुद्ध प्रतीत होता है।

(पुस्तक २)

४११ ५

पदासिं विधिं पुध पुध उवसंदरिसणा परूवणा ।

जयध. अ. पृ. ६३१.

४३५ ४

उदीरणाए चेष उदयो उदीरणोदओ त्ति ।

जयध. अ. पृ. ५२६.

इस पंक्तिके अनुसार ‘ उदीरणामें ही होनेवाले उदयको उदीरणोदय कहते हैं ’ ऐसा अर्थ होता है। परन्तु हमने अर्थ करते समय उदीरणोदयका उदीरणा तथा उदय ऐसा अर्थ किया है। इसका कारण यह है कि आठवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें भय प्रकृतिकी उदीरणा व्युच्छित्ति तथा उदय व्युच्छित्ति होती है।

४४८ ८

१ ‘ णिरया किण्हा ’ गो. जी. ४९६. णेरइया णं भंते ! सव्वे समवन्ना ? गोयमा ! णो इण्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चइ—नेरइया नो सव्वे समवन्ना । गोयमा ! णेरइया दुविह पन्नत्ता, तं जहा—पुब्बोववन्नगा य पच्छोववन्नगा य । तत्थ णं जे ते पुब्बोववन्नगा ते णं विसुद्धवन्नतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविस्सुद्धवन्नतरागा । प्रहा. १७. १. ३.



जैन साहित्य उद्धारक फंड

तथा

कारंजा जैन ग्रंथ मालाओंमें

प्रो. हीरालाल जैन द्वारा आधुनिक ढंगसे सुसम्पादित होकर प्रकाशित

जैन साहित्यके अनुपम ग्रंथ

प्रत्येक ग्रंथ सुविस्तृत भूमिका, पाठभेद, टिप्पण व अनुक्रमणिकाओं आदिसे खूब सुगम और उपयोगी बनाया गया है।

१ पट्टखंडागम—(धवलसिद्धान्त) हिन्दी अनुवाद सहित—

भाग १ पुस्तकाकार १०], शाखाकार १५]

भाग २ ,, १०], ,, १२]

यह भगवान् महावीर स्वामीकी द्वादशांग वाणीसे सीधा संबन्ध रखनेवाला, अत्यन्त प्राचीन, जैन सिद्धान्तका खूब गहन और विस्तृत विवेचन करनेवाला सर्वोपरि प्रमाण ग्रंथ है। श्रुतपंचमीकी पूजा इसी ग्रंथकी रचनाके उपलक्ष्यमें प्रचलित हुई।

२ यशोधरचरित—पुष्पदंतकृत अपभ्रंश काव्य... .. ६]

इसमें यशोधर महाराजका अत्यंत रोचक वर्णन सुन्दर काव्यके रूपमें किया गया है। इसका सम्पादन डा. पी. एल. वैद्य द्वारा हुआ है।

३ नागकुमारचरित—पुष्पदंतकृत अपभ्रंश काव्य... .. ६]

इसमें नागकुमारके सुन्दर और शिक्षापूर्ण जीवनचरित द्वारा श्रुतपंचमी विधानकी महिमा बतलाई गई है। यह काव्य अत्यंत उत्कृष्ट और रोचक है।

४ करकंडुचरित—मुनि कनकामरकृत अपभ्रंश काव्य... .. ६]

इसमें करकंडु महाराजका चरित्र वर्णन किया गया है, जिससे जिनपूजाका माहात्म्य प्रगट होता है। इससे धाराशिवकी जैन गुफाओं तथा दक्षिणके शिलाहार राजवंशके इतिहास पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

५ श्रावकधर्मदोहा—हिन्दी अनुवाद सहित... .. २॥]

इसमें श्रावकोंके व्रतों व शीलोंका बड़ाही सुन्दर उपदेश पाया जाता है। इसकी रचना दोहा छंदमें हुई है। प्रत्येक दोहा काव्यकला पूर्ण और मनन करने योग्य है।

६ पाहुडदोहा—हिन्दी अनुवाद सहित... .. २॥]

इसमें दोहा छंदोंद्वारा अध्यात्मरसकी अनुपम गंगवहवाई गई है जो अवगाहन करने योग्य है।